महात्मा गान्धिपरक संस्कृत काव्य

लेखिका
डॉ० कुमुद टण्डन
रिसर्च एसोशिएट, संस्कृत विभाग,
कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उ.प्र.)

भूमिका
डॉ० हरिनारायण दीक्षित

ईस्टर्न बुक लिंकर्स
दिल्ली (भारत)

प्रकाशक ईस्टर्न बुक लिंकर्स
5825, न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर
दिल्ली- 110007

प्रथम संसकरण : 1991

मूल्य : रु. 300.00

मुद्रक : अमर प्रिंटिंग प्रेस (शाम प्रिंटिंग एजेन्सी),
8/25 विजय नगर, दिल्ली-110009

MAHATMA GANDHIPARK SANSKRIT KAVYA

By
Dr. KUMUD TANDON
M.A. (sanskrit, Sociology) Ph. D.
Research Associate, Sanskrit Department
Kumaun University, NAINITAL (U.P)

Foreword by
Dr. HARINARAYAN DIKSHIT

Eastern Book Linkers
DELHI (INDIA)

The Book : MAHATMA GANDHIPARK SANSKRIT KAVYA

The Author : DR. KUMUD TANDON

Frist Edition : 1991

Price : Rs. 300.00

I.S.B.N : 81-85133-51-4

Printed In India

By Hira Lal at Amar Printing Press, 8/25, Vijay Nagar, Delhi-9 and Published by Sham Lal Malhotra for Eastren Book Linkers, 5825, New Chandrawal, Jawahar Nagar, Delhi-110007.

समर्पण

आविर्भाव २ अक्टूबर १८६९ तिरोभाव ३० जनवरी १९४८

सत्य-अहिंसा के पुजारी,
स्वातन्त्र्य-समर के अद्भुत विजेता,
युगपुरुष, राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी,
को सादर-सविनय समर्पित।

—कुमुद टण्डन

भूमिका

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का प्राण है। यह हमारे हितैषी देवगणों के व्यवहार की भाषा है; हमारी जन्मभूमि भारतवर्ष का गौरव है, तथा यहाँ के साहित्यकारों और विद्वानों के विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है। बड़े हर्ष का विषय है कि भारतवर्ष और उसकी संस्कृति के प्रेमी कवि और मनीषी आज भी देववाणी संस्कृत भाषा को अपनी काव्यरचनाओं एवं शास्त्रीय ग्रन्थों का माध्यम बनाकर माँ सरस्वती की उपासना बड़ी निष्ठा से कर रहे हैं।

प्राचीनकाल से वर्तमान तक लगातार उपलब्ध सर्वाधिक समृद्ध संस्कृत साहित्य और इतिहासग्रन्थों का अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि हमारे देश को 'महान् राष्ट्र' के रूप में प्रतिष्ठित करने वाले देशभक्त महापुरुषों की एक लम्बी परम्परा रही है। हम जानते हैं कि मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने राक्षससंस्कृति से आर्यसंस्कृति को सुरक्षित किया; लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण ने अधर्म से धर्म की रक्षा की; चाणक्य, चन्द्रगुप्त और पुष्यमित्र ने शत्रुओं की कुटिल दृष्टि से देश को बचाया, और फिर महाराणा प्रताप, शिवाजी, छत्रसाल, गुरुगोविन्दसिंह, महारानी लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे, चन्द्रशेखर आजाद, सरदार भगतसिंह, सुभाषचन्द्र बोस, महात्मा गान्धी, सरदार वल्लभभाई पटेल, लाला लाजपतराय, विनायक दामोदर सावरकर, बालगंगाधर तिलक, सरोजिनी नायडू, राजेन्द्र प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, लालबहादुर शास्त्री, इन्दिरा गान्धी आदि लोकनायकों ने अथक परिश्रम तथा बलवती राष्ट्रभक्ति-भावना से अनुप्राणित होकर भारत राष्ट्र को, जो दीर्घकाल तक मुगल शासकों और तत्पश्चात् अंग्रेज शासकों के शिकंजे में जकड़ा हुआ था, स्वतन्त्र करने और करवाने में अपना उल्लेखनीय सहयोग दिया।

हमारा गौरवपूर्ण संस्कृत साहित्य साक्षी है कि इन महापुरुषों को अपनी साहित्यसर्जना की साधना का विषय बनाकर हमारे अनेक साहित्यकारों ने, संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाने के साथ-साथ, इन महापुरुषों के प्रेरणाप्रद चरित्र से जनमानस को प्रभावित करने का सफल प्रयास किया है। हम राम, कृष्ण, भीष्म, अर्जुन, भीम, बुद्ध, महावीर, चाणक्य, चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त, अशोक, पुष्यमित्र शुंग आदि के संस्कृति-संरक्षक कार्यकलापों से यदि परिचित हो पाते हैं; अथवा यहाँ का प्रत्येक भारतीय इनकी यशोगाथा का गान करता है, तो उसका श्रेय इनको अपने काव्य का विषय बनाने वाले वाल्मीकि, व्यास, भास, अश्वघोष, कालिदास, भवभूति,

विशारवदत्तादि महाकवियों को ही है। यह देखकर हमें बड़े गर्वपूर्ण हर्ष का अनुभव हो रहा है कि चरित नायकों के प्रेरणाप्रद जीवन को अपने काव्य का आश्रय बनाने की परम्परा का निर्वाह भारतवर्ष के अर्वाचीन संस्कृ साहित्यकार भी कर रहे हैं, जिसके फलस्वरूप महाराणा प्रताप, शिवाजी, महारानी लक्ष्मीबाई आदि से लेकर लालबहादुर शास्त्री तक प्रायः सभी स्वतन्त्रता सेनानियों और देशभक्तों के जीवन से सम्बन्धित काव्य रचनाएँ प्रकाश में आई हैं और निरन्तर आ रही हैं।

हमारे लिए यह हर्ष का विषय है कि हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी के जीवन चरित और उनके जीवन दर्शन को अपनी साहित्य सर्जना का विषय बनाकर संस्कृत भाषा में सत्याग्रह गीता, गान्धी गीता, श्रीमाहात्मगान्धिचरितम्, श्रीगान्धिगौरवम्, गान्धिचरितम् (श्रीसाधुशरण मिश्र—महाकाव्य), श्रीगान्धिचरितम् (ब्रह्मानन्द शुक्ल—खण्डकाव्य), गान्धिगौरवम् (रमेशचन्द्र शुक्ल—खण्डकाव्य) श्रमगीता, गान्धि-गाथा, बापू, गान्धिनस्त्रयो गुरव: शिष्याश्च, चारुचरित चर्चा, सत्याग्रहोदयम्, गान्धिविजय नाटकम् आदि अनेक और अनेक प्रकार के काव्य लिखे गये।

यद्यपि राष्ट्रपिता महात्मागान्धी के अद्भुत व्यक्तित्व से भारतवासी ही नहीं, विश्व के अन्य लोग भी सुपरिचित हैं और भारतवर्ष के इतिहास में भी उनका महनीय जीवन स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है, तथापि संस्कृत साहित्याकार उनके इस व्यक्तित्व से कहाँ तक प्रभावित हुआ है, यह जानने के लिए उनसे सम्बन्धित इन सभी काव्यकृतियों पर समीक्षापरक शोधग्रन्थ का लिखा जाना अत्यन्त आवश्यक था। बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि स्वातन्त्र्यसमर के अद्भुत सेनानियों से प्रभावित डॉक्टर (कुमारी) कुमुद टण्डन, रिसर्च एसोशिएट, संस्कृत विभाग, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल ने महात्मगान्धिपरक उपलब्ध समग्र संस्कृत साहित्य का अध्ययन किया और 'महात्मागान्धी' पर आधारित संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक अध्ययन शीर्षक चुनकर बड़ी परिश्रम से शोधग्रन्थ लिखा और कुमायूँ विश्वविद्यालय नैनीताल की पी एच.डी. (संस्कत) उपाधि प्राप्त की।

आज में पुनः हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ कि डॉ. कुमुद टण्डन का यह शोधग्रन्थ अब 'महात्मा गान्धिपरक संस्कृत काव्य' शीर्षक से प्रकाशित होने जा रहा है। इस शोध प्रबन्ध के प्रचार-प्रसार से देश में संस्कृत-भाषा की प्रतिष्ठा को बल मिलेगा; साहित्यकार देशभक्त चरित नायकों के प्रेरणाप्रद जीवन से जनमानस में जागरण लाएँगे; और महात्मा गान्धी के देशभक्तिपरक विचारों से वर्तमान राष्ट्रनेता लाभान्वित होंगे। मुझे दुख है किआज हमारा देश पुनः अराजकता से ग्रस्त है, सम्प्रदायवाद से पीड़ित है; आतङ्कवादियों से आतङ्कित है; शत्रुओं से शङ्कित है; परमाणु शक्तियों के दुरुपयोग से दुष्प्रभावित है; रिश्वतखोरी; कालाबाजारी, पदलोलुपता, स्वार्थपरता, कर्त्तव्यहीनता आदि दुर्गुणों से दूषित है; राष्ट्रप्रेम, संस्कृति सुरक्षा, महापुरुषों के प्रति श्रद्धा, श्रम, सहिष्णुतादि गुणों से रहित है; तथा यहाँ का जनजीवन अस्तव्यस्त है। अतः मेरा

विचार है कि इन परिस्थितियों में इस ग्रन्थ की प्रासङ्गिकता और अदिक सिद्ध होगी।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस शोधग्रन्थ को पढ़कर राष्ट्रनेता और राष्ट्रनागरिक स्वातन्त्र्यसमर के अद्भुत विजेता लोकनायक, राष्ट्रपिता महात्मागान्धी द्वारा भारत में परिकल्पित किए गए रामराज्य की स्थापन के स्वप्न को साकार करेंगे; उनके द्वारा व्यवहार में अपनाये गये श्रीकृष्ण के गीतासन्देश का जन-जन में पहुँचाएँगे, भगवान् बुद्ध तथा भगवान् महावीर की प्रेरणा से निष्ठापूर्वक अपनाए गये अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह नामक पांच महाव्रतों को अपनाकर तपोभूमि भारत का गौरव बढ़ाएंगे; और अपनी देशभक्ति द्वारा शत्रु को भारत की ओर उन्मुख नहीं होने देंगे।

अतः यह निर्विवाद है कि डॉ. कुमुद टण्डन का यह ग्रन्थ संस्कृत शोधप्रबन्ध ही न रहकर भारतीय संस्कृति और भारतराष्ट्र के प्रेमी व्यक्तियों के लिए प्रेरणास्रोत बनेगा। क्योंकि इस ग्रन्थ की लेखिका ने अपनी सरल भाषा–शैली में महात्मा गान्धी के सम्बन्ध में संस्कृत साहित्यकारों की मान्यताओं को सामान्य जनग्राह्य बनाने का सफल प्रयास किया है।

भारत राष्ट्र और राष्ट्रपिता महात्मागान्धी के प्रति हार्दिक श्रद्धा अभिव्यक्त करता हुआ मैं इस ग्रन्थ का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ; इसे शोधविषय बनाने के पश्चात् इसे ग्रन्थ रूप में प्रकाशित कराके पाठकों को अपने अमूल्य विचारों से सुपरिचित कराने का श्रमसाध्य प्रयास करने के लिए मैं सामान्य नागरिकों में इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार हेतु शुभकामनाएँ अभिव्यक्त करता हूँ; और उनके सर्जनशील उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ। मुझे विश्वास है कि सहृदय विद्वान् पाठक इस ग्रन्थ का स्वागत एवं समादर करेंगे।

दिनाक—
रामनवमी
२४ मार्च, १९९१ ईशवीय

—हरिनारायण दीक्षित
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग,
कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उ.प्र.)

प्रस्तावना

संस्कृत वाङ्मय विश्व का सर्वाधिक प्राचीनतम एवं अपूर्व गौरवशाली, प्रवणशील कान्तासम्मित उपदेश से मण्डित सरल एव कमनीय वाङ्मय है। ज्ञान-विज्ञान, पारलौकिक जगत् एवं कमनीय वाङ्मय है। पारलौकिक जगत् एवं लौकिक जगत्, धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों का, भारतीय सस्कृति एवं सभ्यता, चरित्र-निर्माण, सुन्दर स्वास्थ्य एव सुखी रहने के नियमों आदि का जैसा सजीव चित्रण संस्कृत वाङ्मय में हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। उपनिषद्, पुराण, वेद-वेदाग, रामायण, वेद-वेदाग, रामायण, महाभारत आदि जितने भी प्राचीन ग्रन्थ हैं, सभी संस्कृत भाषा की महनीय उपादेयता के सुपरिचायक हैं। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जिसका संस्कृतवाङ्मय में विचार न हुआ हो। संस्कृत भाषा पूज्यजनों के प्रति समादर के भाव को जागरित करने, विश्व-बन्धुत्व की भावना भरने, अधिकार प्राप्ति के लिए सजग रहने, अपने देश की रक्षा के लिए स्वार्थ का सर्वथा परित्याग कर देने आदि उदात्त भावों को उजागर करने में सर्वथा समद्धशाली है।

भारतीय समाज को उन्नति के पथ पर अग्रसारित करने के लिए राष्ट्रिय भावना किंवा देशानुराग की भावना से अनुप्राणित करना नितान्त जरूरी है और यह भावना भारतीयों में तभी जागरित हो सकती है, जबकि उन्हें संस्कृत भाषा का अधिकाधिक ज्ञान सुलभ हो सके। हमारे लिए यह बड़े सौभाग्य एव प्रसन्नता का विषय है कि यद्यपि सस्कृत वाङ्मय में वेदकाल से ही राष्ट्रिय भावना परक साहित्य की सर्जना होती रही है, लेकिन अर्वाचीन साहित्यकार-जन-जन में इस भावना का सञ्चार करने के लिए, उसके प्रचार हेतु राष्ट्रिय भावना परक कृतियों की सर्जना करने में सतत प्रयत्नशील हैं। ऐसे उत्कृष्ट साहित्य का अध्ययन-मनन भारतीय समाज के लिये निश्चय ही उपादेय है।

भारतीय समाज को उन्नतिशील बनाने और उसमें स्वाधीनता एवं राष्ट्रिय भावना राष्ट्रिय भावना का सञ्चार करने के लिए ऐसे साहित्य को प्रकाश में लाना चाहिए, जिससे समस्त मानव-जाति का कल्याण हो सके। अतः समस्त संस्कृत साहित्य का अध्ययन करने से इस निष्कर्ष पर मैं पहुँची कि राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी पर आधृत साहित्य अतीव आधुनिक एवं व्यावहारिक है।

गान्धी साहित्य के अनुशीलन से यह तथ्य प्रस्फुटित होता है कि महात्मा गान्धी एक महान्, उदारचेता, सादा-जीवन उच्च विचार के धनी, परहित को ही श्रेष्ठ धर्म स्वीकार करने वाले, कर्त्तव्यनिष्ठ, परिश्रम को ही अपना सच्चा मित्र समझने वाले, पराधीनता को सबसे बड़ा दुख मानने वाले और सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य आदि उदात्त भावों के पोषक हैं। अत: उनके विषय में ज्ञान प्राप्त कर उनके चरणचिह्नों का अनुकरण करके व्यक्ति न केवल अपना, अपितु अपने समाज एवं राष्ट्र का कल्याण करने में अवश्यमेव सफल हो सकता है।

गान्धी जी के त्याग, तपस्या, देश के लिए सर्वस्व न्योछावर कर देने की भावना से युक्त जीवन से प्रभावित होकर ही डॉ. बोम्मकण्ठि रामलिगं शास्त्री, प. साधुशरण मिश्र, लोकनाथ शास्त्री, पण्डिता क्षमाराव, मथुराप्रसाद दीक्षित, श्रीनिवास ताडपत्रीकर, पण्डित जयराम शास्त्री, स्वामि भगवदाचार्य, यतीन्द्र विमल चौधुरी, रमेशचन्द्र शुक्ल, श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, द्वारकाप्रसाद त्रिपाठी, ब्रह्मानन्द शुक्ल, यज्ञेश्वर शर्मा शास्त्री, डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर आदि ने गान्धी जी के द्वारा सम्पन्न राजनैतिक, धार्मिक, सत्याग्रह आन्दोलन आदि राष्ट्रिय भावों को प्रकट करने वाले क्रिया-कलापों को आधार बनाकर काव्यों एवं रूपकों की रचना पर संस्कृत साहित्यकी श्रीवृद्धि के साथ ही गान्धी जी के विचारों को जनता एक प्रसारित करने में असीम योगदान दिया है। इसके माध्यम से यह तथ्य प्रस्फुटित होता है कि संस्कृत वाङ्मय में आज भी निरन्तरता, प्रवहणशीलता, उदात्त विचारों एवं गुणों की विद्यमानता में तनिक भी कमी नहीं आने पाई है। उपर्युक्त महाकवियों ने देववाणी के अधिकाधिक प्रचार एवं प्रसार के लिए एवं राष्ट्र प्रेम जागरित करने के लिए जो प्रयास किया है, वह निश्चय ही मुक्तकंठ से सराहनीय है। अतः प्रस्तुत शोध विषय पर कार्य करने का मेरा उद्देश्य न केवल पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त करना है, अपितु साहित्यप्रेमियों का, गान्धी पर आधारित कृतियों की सर्जना कर साहित्य-क्षेत्र में अनुपम योगदान देने वाले महाकवियों से परिचय कराते हुए एवं गान्धी जी के द्वारा किये गए कार्यो का क्रमबद्ध परिचय देते हुए तथा जन-जन में उनके संदेश को पहुंचाते हुए राष्ट्रिय-भावना का संचार करना है।

जन-जन के मन में देशानुराग की भावना जगाना, देववाणी संस्कृत के प्रति आस्था का संचार करना, प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता से अवगत कराना, स्वाभिमान की भावना को भरना, दैहिक, दैविक, भौतिक आदि दुःखों से रहित रामराज्य की कल्पना को साकार करना एवं राष्ट्रिय भावना, अन्तरराष्ट्रिय भावना आदि उत्कृष्ट भावों को जागरित करना ही प्रस्तुत शोध की महनीयता को घोतित करता है।

आलोच्य कृतियों पर शोध का अभाव—

प्रायः यह देखने में आता है कि संस्कृत साहित्य के आलोचक एवं अनुसंधानकर्त्ता प्राचीन कवियों पर ही विशेष ध्यान देते हैं, लेकिन समाज को आधुनिक परिस्थितियों से अवगत कराने एवं उनसे जूझने के लिए, भाषा के विकास एवं उसके प्रति आदर जागरित करने हेतु आधुनिक साहित्कारों की कृतियों का परिशीलन करना भी

आवश्यक है। प्रसन्नता की बात है कि कुछ आलोचकों एवं अनुसन्धायकों ने साहित्य की समृद्धि एवं आधुनिक समाज के उन्नत पथ प्रदर्शन हेतु इन्दिरा गान्धी एवं नेहरू आदि राष्ट्रनेताओं से सम्बन्धित कृतियों का अध्ययन करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। लेकिन गान्धी साहित्य पर आज तक किसी ने भी समग्र रूप से प्रकाश नहीं डाला है।

मुझे गान्धी जी के विषय में किञ्चित जानकारी प्रारम्भिक कक्षाओं में संस्कृत विषय का अध्ययन करने के साथ और गान्दी रचित आत्मकथा पढ़ने से प्राप्त हुई। शोध करने की इच्छा होने पर जब मैंने सस्कृत साहित्य में किये गये शोध कार्यों पर दृक्पात किया तो मैंने पाया कि पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त करने हेतु कु.मीनू पन्त ने "श्रीमद् भगवदाचार्यकृत भारतपारिजातम् का समालोचनात्मक अध्ययन" नामक शीर्षक पर शोधकार्य किया है और प्रोफेसर डॉ. हरिनारायण दीक्षित ने डी.लिट्. की उपादि प्राप्त करने हेतु एवं संस्कृत साहित्य में अभिव्याप्त राष्ट्रिय-भावना को प्रकाश में लाने हेतु "संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना" नामक अपनी अपूर्व कृति में अन्य महापुरुषों एव राष्ट्र नेताओं के साथ गान्धी सम्बन्धी (राष्ट्रिय भावना से ओतप्रोत) काव्य कृतियों का भी परिशीलन कर उसमें परिव्याप्त महात्मा गान्धी के राष्ट्र हितार्थ किये गए कार्यों पर निर्मल प्रकाश डाला है। डॉ. रामजी उपाध्याय ने भी "आधुनिक सस्कृत नाटक" में, श्री मथुरा प्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित गान्धीविजयनाटकम्, यतीन्द्र विमल चौधुरी कृत "भारत जनकम् एवं श्रीमती रमा चौधुरी के "भारततातम् नामक रूपक का जाति सक्षिप्त केवल परिचय दिया है।

उल्लेखनीय है कि डॉ. मीनू पन्त ने गान्धी परक केवल एक ही महाकाव्य का परिशीलन किया है और प्रोफेसर डॉ. दीक्षित ने गान्धीपरक साहित्य का केवल राष्ट्रीय भावना के आलोक में अनुशीलन किया है, एवं डॉ. उपाध्याय ने गान्धीपरक केवल दो तीन लघुकाय कार्य कृतियों का नितान्त संक्षिप्त एवं अपर्याप्त परिचय मात्र दिया है। इससे स्पष्ट है कि गान्धीपरक समस्त काव्य कृतियों पर समग्र दृष्टियों से परिशीलन अभी तक नहीं हुआ था। अतएव अपने शोध निर्देशक डॉ. दीक्षित की ही प्रेरणा से मैंने "महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक अध्ययन" विषय पर सभी दृष्टियों से प्रकाश डालकर उसमें पूर्णता लाने का प्रयास है।

शोध की प्रेरणा—

मैंने प्रारम्भिक कक्षाओं में ही संयुक्त भाषा का अध्ययन करने के साथ ही एवं गान्धी जी के जन्म दिवस २ अक्टूबर को एवं उनके सत्यप्रयासों से प्राप्त स्वतन्त्रता दिवस १५ अगस्त को पुण्यतम तिथि एवं राष्ट्रीय पर्व के रूप में प्रतिवर्ष मनाये जाने कारण गान्धी जी के जीवन वृत्त एवं महान् कार्यों के विषय में जानकारी प्राप्त करन का अवसर प्राप्त किया। तत्पश्चात् संस्कृत से एम.ए. करते समय प्रोफेसर डॉ. हरि नारायण दीक्षित की अनुकम्पा से, श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी-द्वारा विरचित, श्रीगान्धिगौरवम्, नामक महाकाव्य से भी मेरा परिचय हुआ, जिससे मैं अत्यधिक प्रभावित हुई। इसके अलावा उन्होंने मुझे महात्मा गान्धीपरक अन्य कृतियाँ भी पढ़ने के लिए दीं जिससे मेरे मन में

शोध कार्य करने की अभिलाषा हुई।

और जब मैंने अपनी इस प्रबल आकांक्षा को श्रद्धेय गुरुवर प्रोफेसर डॉ॰ हरिनारायण दीक्षित के समक्ष व्यक्त किया तो उन्होंने मुझ "राष्ट्रिपति महात्मागान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य का समालोचनात्मक अध्ययन" नामक शीर्षकित विषय स्वयं ही निर्धारित कर मुझे इसी दिशा में कार्य करने की सत्प्रेरणा दी, साथ ही गान्धी सम्बन्धी काव्य कृतियाँ भी उपलब्ध करायीं। उनकी सदाशयता के परिणामस्वरूप ही मेरी रुचि प्रस्तुत विषय की ओर उत्तरोत्तर बढ़ती गई और मैं इस कार्य हेतु सन्नद्ध हो गई। मेरा यह प्रयास शोध-प्रबन्ध के रूप में प्रस्तुत है।

शोध प्रबन्ध का सारांश—

प्रस्तुत शोध—प्रबन्ध आठ अध्यायों में विभक्त है।

प्रथम अध्याय—में महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य की विधाएं—में सर्वप्रथम महाकाव्यों को प्रस्तुत किया गया है। कालक्रमानुसार सबसे पहले सत्याग्रह गीता त्रिवेणी (सत्याग्रह गीता, उत्तर सत्याग्रही गीता, स्वराज्य विजय.) का कथानक अध्याय के अनुसार प्रस्तुत किया है।

भामह, दण्डी, वेदव्यास, रूद्रट, हेमचन्द्र, कुतन्क, आनन्दवर्धन, विश्वनाथ आदि विद्वानों के महाकाव्य सम्बन्धी मतों में प्रस्तुत त्र्यके लक्षणों के आधार पर सत्याग्रह गीता को महाकाव्य की कसौटी पर कसकर उसे महाकाव्य की श्रेणी में रखे जाने के अनुकूलन स्वीकारा गया है। तत्पश्चात् पण्डिता क्षमाराव का जीवन परिचय प्रस्तुत किया गया है।

गान्धी-गीता में पूर्व निर्दिष्ट लक्षणों के आधार पर महाकाव्य की सगति की गई है और श्रीनिवास ताडपत्रीकर का परिचय दिया गया है। तीसरा स्थान श्रीमहात्मगान्धिचरितम् का है। प्रस्तुत महाकाव्य की भी पहले कथानक (भारत पारिजातम्, पारिजातापहार, पारिजात सौरभम) श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में महाकाव्यत्व को सिद्ध किया गया है और अन्त में श्री भगवदाचार्य का जीवन वृत्तान्त। चतुर्थ महाकाव्य श्रीगान्धिगौरवम् का भी सर्गानुसार कथा का सार प्रस्तुत किया गया है एवं उसमें महाकाव्य के लक्षणों को चरितार्थ करके श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी का जीवन परिचय दिया गया है: अन्तिम महाकाव्यत श्रीगान्धिचरितम् का भी कथानक उसे महकाव्य की कसौटीपर कसकर श्री साधुशरण मिश्र का जीवन वृत्त प्रस्तुत किया गया है।

महाकाव्यों के पश्चात खण्डकाव्यों को लिया गया है। श्रीगान्धिचरतम् का संक्षेप में कथासार, प्रस्तुत काव्य में खण्डकाव्य के लक्षणों को घटित करने का प्रयास किया गया है, इसके पश्चात् प्रस्तुत काव्य के रचयिता श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल के व्यक्तित्व एवं कर्त्तव्य पर प्रकाश डाला गया है। इसी तरह क्रमशः राष्ट्ररत्नम्, गान्धिगौरवम्, गान्धि-गाथा, श्रमगीता का भी विवेचन किया गया है।

गद्य-काव्यों का कथानक बापू का कथानक, गद्य-काव्य विधा का विवेचन, बापू में गद्य-काव्यत्व (आख्यायिका) की संगति कराई गई है, तत्पश्चात् मूल लेखक फ्रिटास का नामोल्लेख करके संस्कृत अनुवादक डॉ॰ किशोरनाथ झा का परिचय प्रस्तुत किया गया है। दूसरे नम्बर पर गान्धिनस्त्रयों गुरवः शिष्याश्च का कथानक देकर उसे भी आख्यायिका के अन्तर्गत रखा गया है और फिर प्रस्तुत पुस्तक के लेखक श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी का परिचयात्मक विवरण दिया गया है। तृतीय गद्य काव्य चारुचरित चर्चा में "महात्मा गान्धी" का कथानक देकर उसे भी आख्यायिका ही मान लिया है साथ ही डॉ॰ रमेशचन्द शुक्ल का नामोल्लेखकर दिया है।

प्रथम अध्याय के अन्तिम भाग में दृश्य काव्यों को लिया गया है। सर्वप्रथम सत्याग्रहोदय: दृश्यानुसार कथानक, नाटक का विवेचन भरतमुनि और विश्वनाथ के आधार पर करने के पश्चात् सत्याग्रहोदयः में "नाटक" नामक रूपक को चरितार्थ करने का प्रयास किया गया है। डॉ॰ बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री का जीवन परिचय प्रस्तुत किया है। अन्तिम काव्य गान्धिविजय नाटकम् का भी कथासार देकर "नाटक" नामक रूपक को उसमें घटित किया गया है, मथुरा प्रसाद दीक्षित का परिचय कराया है।

द्वितीय अध्याय महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य में पात्र योजना-में पात्रों का महत्त्व प्रत्येक विधा के अनुसार बताया गया है। इसके बाद सबसे पहले महाकाव्यों में पात्र-योजना की गई है। इसमें वर्णित पात्र वास्तविक हैं। इन पात्रों में कुछ भारतीय (देश प्रेमी एवं देश द्रोही) एवं कतिपय विदेशी) गान्धी के विरोधी एव गान्धी के मित्र) हैं)। प्रमुख पात्र महात्मा गान्धी की चारित्रिक विशेषताएँ बताकर अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों की उल्लिखित करके देश द्रोही पात्रों को प्रस्तुत किया गया है और फिर विदेशी पात्रों का भी चरित्र-चित्रण किया है और अन्त में कतिपय पात्रों का नामोल्लेक करके पात्रों की उपयोगिता बताई गई है। खण्डकाव्यों में विशेष रूप से महात्मा गान्धी के चरित्र की कतिपय विशेषताएँ देकर अन्य पात्रों से संक्षिप्त परिचय कराया गया है। इसी तरह गद्य-काव्यों और दृश्य काव्यों में भी पात्रों का विवरण देकर समवेत रूप में समीक्षा की गई है।

तृतीय अध्याय-महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य में वर्णन विधान—में सर्वप्रथम वर्णन कौशल का सामान्य परिचय दिया गया है। तत्पश्चात् महाकाव्यों के आधार पर सूर्य, चन्द्रमा, सन्ध्या, नदी, कानन, पर्वत, समुद्र, भारतवर्ष, जयपुर, कलकत्ता, वाराणसी, विहार, लखनऊ आदि का विस्तार से वर्णन करके अन्य भारत के स्थानों एवं विदेश स्थिति स्थानों का नामोल्लेख किया गया है। इसके बाद *खण्डकाव्यों, गद्यकाव्यों और दृश्य काव्यों में वर्णन कौशल करके समीक्षा की गई है।*

चतुर्थ अध्याय का सम्बन्ध भाव-पक्ष से है। सर्वप्रथम भाव पक्ष का महत्त्व और रस विवेचन, तत्पश्चात् महाकाव्यों में अंगीरस (वीररस) का निरूपण सोदाहरण करके अंग रसों को भी यथासम्भव प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ-साथ रसाभास, देवविषयक एवं गुरुविषयक भक्ति भाव, व्यभिचारी भाव, भावोदय, भावशान्ति, भावसन्धि,

भावशबलता आदि भाव पक्ष के अन्य रूपों का भी विवेचन किया गया है। महाकाव्यों के पश्चात् खण्डकाव्यों में अंगीरस का विवेचन करके अन्य अंगों को भी प्रस्तुत किया गया है और गद्य काव्यों एवं दृश्य काव्यों में भी इसी तरह भाव-पक्ष का निर्वाह कुशलता से किया गया है। अन्त में यह सिद्ध किया गया है कि चारों विधाओं में प्रस्तुत भावपक्ष सराहनीय है और यह सहृदयों को आनन्द प्रदान करने में सक्षम है।

पञ्चम अध्याय महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य में कलापक्ष है। इस अध्याय में कलापक्ष का महत्त्व बताकर अलंकारों की उपयोगिता को स्पष्ट किया गया है। महाकाव्यों में अलकार, छन्द, भाषा, शैली, संवाद, वाग्वैदग्ध्य आदि कलापक्ष के विविध अंगों को दर्शाया गया है। इसी तरह अन्य विधाओं में भी कलापक्ष का निरुपण करने के पश्चात् यह भी सिद्ध किया है कि कौन सी विधा में कलापक्ष का निर्वाह कितना हो पाया है साथ ही वह विधा के अनुरूप है या नहीं।

षष्ठ अध्याय में जीवन-प्रस्तुत किया गया है। इसमें समस्त कवियों का सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक, नैतिक, दार्शनिक, राजनैतिक, राष्ट्रिय एवं अन्तरराष्ट्रीय आदि जीवन दर्शन का विवेचन है और अन्त में यह सिद्ध किया गया है कि उनके द्वारा निर्दिष्ट जीवनोपयोगी सिद्धान्तों का पालन व्यक्ति एवं समाज दोनों की सर्वप्रकारेण उन्नति में सहायकहो सकता है।

सप्तम अध्याय—काव्यों में ऐतिहासिकता—पर आधृत है। काव्यों में आई हुई घटनाएँ एव पात्र दोनों ही इतिहास का विषय है। अत सर्वप्रथम महात्मा गान्धी द्वारा अफ्रीका मे किए गए कार्यों को इतिहास के आधार सत्य सिद्ध करके उनके मरणोपरान्त तक की घटनाओं को प्रमाणित किया गया है। तत्पश्चात् काव्यों में आए हुए पात्रों के नामों की ऐतिहासिकता बताकर यह भी स्पष्ट किया गया है कि इतिहास और काव्य में अभूतपूर्व समन्वय है। उसमें रस, अलंकार आदि की सुन्दरता हेतु कल्पना का सहारा भी लिया गया है, लेकिन इससे घटनाओं की वास्तविकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

अष्टम अध्याय उपसंहारात्मक है। इसमें महात्मा गान्धी का व्यक्तित्व बताकर यह संकेत किया गया है कि समस्त आलोच्य कवियों ने राष्ट्र के प्रति उनके अनन्य प्रेम को देखकर राष्ट्रिय भावना से प्रेरित होकर ही महात्मा गान्धी को काव्य का आधार माना है। शोध-प्रबन्ध में ली गई विधाएं संस्कृत साहित्य की अनमोल कृतियाँ हैं। इनका महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्यकाव्य और नाटक में बहुमूल्य स्थान निर्धारित है। अन्त में महात्मा गान्धिपरक साहित्य की उपयोगिता भी बताई है कि वह न केवल संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि में सहायक है अपितु वह उच्च सिद्धान्तों की सफल कुञ्जी भी है।

शोध-प्रबन्ध में अन्त में परिशिष्ट है। प्रथम परिशिष्ट में सूक्तियों का महत्त्व और उपयोगिता बताकर महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्य काव्य एवं दृश्य काव्यों में प्रथम अध्याय में वर्णित क्रमानुसार सूक्तियों का संकलन किया गया है। द्वितीय परिशिष्ट में काव्यों के सम्बन्ध में उपलब्ध पत्रावलियों का संग्रह है और अन्तिम यानि तृतीय परिशिष्ट में आलोच्य एवं सहायक ग्रन्थों को अकारादिक्रम में सूची प्रस्तुत की गई है।

आभार प्रदर्शन—

शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने के पश्चात् मैं स्पष्ट रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि माँ भारती की कृपा दृष्टि और गुरु का निर्देशन ही शोधार्थी के शोध-यात्रा मार्ग को प्रशस्त करते हैं। अतएव सर्वप्रथम मैं वाणी की देवी सरस्वती के प्रति श्रद्धावान हूँ जिनकी अन्तिम अनुकम्पा के फलस्वरूप ही मैं अपना शोध-प्रबन्ध पूर्ण कर पाई हूँ।

मैं माननीय गुरुदेव प्रोफेसर डॉ॰ हरिनारायण दीक्षित (अध्यक्ष संस्कृ विभाग, कुमायूँ विश्वविद्यालय नैनीताल) के प्रति प्रणाम पूर्वक हार्दिक आभाव व्यक्त करती हूँ और अपने को सौभाग्यशालिनी मानती हूँ कि उन्होंने मुझे अपने निर्देशन में शोध-प्रबन्ध लिखने की अनुमति प्रसन्नता पूर्वक दी। यही नहीं, अपने पुस्तकालय से मेरे शोध-कार्य के लिए आवश्यक और उपयोगी पुस्तकें भी बड़ी उदारता पूर्वक दीं। अध्ययन-अध्यापन में अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी मेरी इच्छानुसार उन्होंने मुझे अपने बहुमूल्य सुझाव दिये · अपने दीर्घकालीन अनुभव से लाभान्वित कराया और शोध-यात्रा में आने वाली बाधाओं को पार करने का साहस प्रदान किया। यही उन्हीं की शिष्य वत्सलता का परिणाम है कि मैं अपने शोध-प्रबन्ध रूपी विशाल सागर को अपनी तुच्छ बुद्धि रूपी नौका से पार कर सकी हूँ। जब-जब शोध कार्य में उपस्थित होने वाले विघ्नों से घबराकर मैं निराश हो जाती थी और शोध-कार्य में प्रवृत नहीं हो पाती थी तब-तब आदरणीय गुरुदेव का सदुपदेश ही मुझे आशा प्रदान करता था और उनका प्रेरणादायक उत्तमोत्तम निर्देशन मुझे पुनः अपने कार्य में प्रवृत्त कर देता था। गुरु जी के इस महान् उपकार की मैं सदैव ऋणि रहूँगी क्योंकि उनके निर्देशन के बिना मेरा शोध-प्रबन्ध कदापि पूर्णता को प्राप्त न करता। इतना ही नहीं मेरी प्रार्थना पर आदरणीय गुरुदेव प्रोफेसर डॉ॰ दीक्षि ने शोध-प्रबन्ध के प्रकाशन के अवसर पर भूमिका लिखकर मुझे अनुगृहीत किया। मुझे आशा है कि भविष्य में भी उनका आशीर्वादात्मक निर्देशन मिलता रहेगा।

अपनी अग्रजा डॉ॰ किरण टण्डन (रीडर, संस्कृत विभाग, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) ने मेरी सर्वप्रकारेण सहायता करके मुझे चिन्ता-मुक्त रखा। उनके उपयोगी सुझावों तथा आर्थिक सहयोग के बिना तो शोध-कार्य प्रारम्भ करने में भी मैं असमर्थ थी। अतः मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ और आशा करती हूँ कि भविष्य में भी मेरा मनोबल बढ़ाती रहेंगी।

राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी को मैं अपनी हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित करती हूँ। जिनका राष्ट्रप्रेम और जीवन दर्शन प्रत्येक भारतीय के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

मैं अपनी बड़ी बहन कु॰ सुधा टण्डन (जिला संख्याधिकारी, नैनीताल) के प्रति धन्यवाद व्यक्त करना अपना परम कर्त्तव्य समझती हूँ क्योंकि उनका उदारता पूर्वक किया गया आर्थिक सहयोग और आशीर्वाद न मिलता तो कदाचित् मैं अपना शोध-प्रबन्ध पूर्ण न कर पाती।

मैं अपनी अग्रजा डॉ॰ नीरजा टण्डन (रीडर, हिन्दी विभाग, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल) के प्रति भी हृदय से आभारी हूँ और शोध-कार्य सम्पन्न करने में उनके द्वारा दी जाने वाली हर सम्भव सहायता को याद रखना अपना कर्त्तव्य समझती हूँ।

"प्राणाहुति" नामक काव्य के प्रणेता और "श्रीगान्धिगौरव" नामक काव्य के रचयिता "श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी" के पुत्र—श्री शिवसागर त्रिपाठी, साहित्यरत्न, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, राजस्थान जयपुर) के प्रति श्रद्धापूर्वक कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी के जीवन एवं उनकी कृतियों से सम्बन्धित बहुमूल्य जानकारी उपलब्ध कराई जिससे मैं आलोच्य कवि का जीवन प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकी।

मैं आचार्य मधुकर शास्त्री (अनुसंधान अधिकारी, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, कोटा) की सदैव ऋणी रहूँगी। उन्होंने अत्यधिक व्यस्त रहते हुए मुझे अपने जीवन के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध करवाई और स्वरचित पुस्तक के विषय में भी उपयोगी सुझाव देकर मुझे लाभान्वित किया।

मुझे समय-समय पर विभिन्न स्थानों से आए हुए विद्वानों-प्रोफेसर डॉ॰ शिवशेखर मिश्र (भूतपूर्व अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय), प्रोफेसर डॉ॰ रसिक बिहारी जोशी (अध्यक्ष संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय), प्रो.डॉ॰ प्रभुदयाल अग्निहोत्री (भूतपूर्व कुलपति, जबलपुर विश्वविद्यालय), डॉ॰ सुरेश चन्द्र पाण्डे (प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय), डॉ॰ वाचस्पति उपाध्याय (प्रोफेसर, संस्कृत विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय) आदि के विचार सुनने का सुअवसर प्राप्त होता रहा और उनसे शोध-कार्य को पूर्ण करने की प्रेरणा भी मिलती रही। अतः मैं उनको श्रद्धापूर्वक प्रणाम करती हूँ।

पूज्या माता—श्रीमती रामरानी टण्डन और पूज्य पिता श्री रामबिहारी टण्डन (जो कि अब दिवंगत हैं) के चरणों में भी सादर प्रणाम करती हूँ, जिनका निश्छल वात्सल्य ही मेरी शोधयात्रा का अनुपम पाथेय बना है।

मैं प्रकाशकीय शिक्षण केन्द्र पुस्तकालय, नैनीताल दुर्गालाल साह नगर पुस्तकालय, नैनीताल तथा डी.एस.बी. कैम्पस, नैनीताल लाइब्रेरी के सभी कार्यकर्ताओं की ऋणी हूँ जिन्होंने शोध विषयक पुस्तकें उपलब्ध करवाकर मेरी सहायता की।

देववाणी संस्कृत में महात्मा गान्धिपरक साहित्य सर्जना करने वाले, देश भक्त उन सभी कवियों और लेखकों को मैं सादर नमन करती हूँ जिनकी कृतियों ने मेरे परिश्रम को शोध प्रबन्ध का रूप प्रदान किया।

श्री श्यामलाल मल्होत्रा, प्रोपराइटर, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, ५८२५, न्यू चन्द्रावल, जवाहरनगर, दिल्ली - ११०००७ के प्रति भी मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। जिन्होंने सहर्ष इस शोध प्रबन्ध के प्रकाशन एवं मुद्रण का भार लिया है और अल्प समय में ही इसे आकर्षक ग्रन्थ का रूप प्रदान किया। इस ग्रन्थ में बहुत प्रयत्न करने पर भी मुद्रण सम्बन्धी कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं। मुझे विश्वास है किम हृदय पाठक उन्हें उदारतापूर्वक क्षमा कर

देंगे।

अन्त में अपने इस शोध प्रबन्ध को सुधी मनीषियों एवं साहित्यमर्मज्ञों के कर-कमलों में इस आशा-विश्वास के साथ समर्पित करती हूँ कि उन्हें मेरा यह प्रयास अवश्य पसन्द आएगा।

विनम्र निवेदिका
कुमुद टण्डन
रिसर्च एसोशिएट, संस्कृत विभाग,
कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल।
(उ. प्र.)

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

महात्मा गान्धी पर आधारित काव्य की विधाएं

किसी साहित्यकार के कर्तृत्व का सम्यक् परिचय प्राप्त करने तथा उसका भली भाँति रसास्वादन करने के लिए उसके जीवन वृत्तान्त, व्यक्तित्व तथा तत्कालीन पारिवारिक एवं सामाजिक परिस्थितियों की जानकारी भी अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु दुर्भाग्य से संस्कृत के अधिकाश साहित्यकार अपने जीवन के सम्बन्ध में मौन रहे हैं।

कालिदास, बाण, माघ, दण्डी, भारवि जैसे महाकवि, मम्मट, विश्वनाथ, जगन्नाथ, पतञ्जलि, पाणिनि जैसे महापुरूष इस तथ्य का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। ऐसी स्थिति में श्रुतियों, किंवदन्तियों और साहित्यकारों के निकटस्थ व्यक्तियों से प्राप्त तथ्यों से ही संतोष करना पड़ता है।

मैंने प्रस्तुत अध्याय में जिन काव्य कृतियों को अपने शोध का विषय बनाया है वह महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्य-काव्य एवं नाटक आदि काव्य की लगभग सभी प्रमुख विधाओं के अन्तर्गत आती हैं। इन काव्य कृतियो एव काव्यकारों का विवेचन इस प्रकार है–सत्याग्रह गीता-पण्डिता क्षमाराव, गाधी गीता-श्रीनिवास ताडपत्रीकर, श्रीमहात्मगान्धिचरितम् श्री भगवदाचार्य और श्री गान्धिगौरवम्—श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिचरितम्-श्री साधुशरण मिश्र ये क्रमश· महाकाव्य एवं महाकवि हैं।

श्री गान्धिचरितम्-ब्रह्मानन्द शुक्ल, गान्धि गौरवम्-रमेशचन्द शुक्ल, श्रमगीता-श्रीधर भास्कर वर्णेकर ये खण्डकाव्य एवं कवि हैं।

बापू-किशोरनाथ झा, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च-द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, चारूचरित चर्चा-रमेशचन्द्र शुक्ल ये गद्य-काव्य एवं गद्यकाव्यकार हैं।

सत्याग्रहोदयम्-बोम्मकण्ठी रामलिंगशास्त्री एवं गान्धिविजय नाटकम्-मथुरा प्रसाद दीक्षित । ये नाटक एव नाटककार हैं।

ये सभी कवि उपर्युक्त प्राचीन कवियों की परम्परा में आते हैं जिन्होंने अपना जीवन परिचय अपनी कृतियों में उल्लिखित नहीं किया है। यद्यपि कुछ कवियों के विषय में "आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास" नामक पुस्तक में किञ्चित् परिचय प्राप्त होता है और कुछ कवियों का परिचय शोधच्छात्रों द्वारा लिखित उनके शोध-प्रबन्धो से प्राप्त होता है, किन्तु अधिकाश कवियों के विषय में कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

अतः मैं प्राप्त परिचय के आधार पर क्रमश- काव्य-विधा एवं उन कवियों के जीवन चरित पर सक्षिप्त प्रकाश डालने के लिए सन्नद्ध हूँ।

(क) सत्याग्रह गीता का कथानक

प्रथम अध्याय—

सत्यवादी महात्मा गांधी भारतीय बन्धुओं की सहायता के लिए अफ्रीका जाकर वहां की गोरी सरकार के साथ निर्भयता पूर्वक युद्ध करते हैं। वह भारत की दीनता, दरिद्रता एवं हीनता के प्रति परतन्त्रता को कारण मानते हुए एवं परतन्त्रता को मृत्यु के समान बताते हुए उसके विनाश हेतु कृत सकल्प हो जाने की प्रेरणा देते हैं। देशवासियों को स्वहस्त निर्मित वस्त्र धारण की प्रेरणा देते हैं।

द्वितीय अध्याय—

गांधी जी किसी अन्त्यज वर्ग की महिला की अपत्रावस्था से विक्षुब्ध होकर स्वयं अल्प वस्त्र धारण करने की ठान लेते हैं। वह समाज में धनिक एवं निर्धन जैसी भेदक रेखा नहीं खींचना चाहते हैं। गांधी कृषकोद्धार एवं देश की समुन्नति हेतु विदेशी वस्त्रों को अग्नि को समर्पित करके विदेशी वस्तुओं के प्रति जन-जन के मन में तिरस्कार भाव उत्पन्न करके स्वदेश हित के लिए स्वार्थ का परित्याग करके खादी वस्त्र धारण के प्रति आस्था जगाते हैं।

तृतीय अध्याय—

उन्होंने कृषक वर्ग को कर रूपी अन्याय से मुक्त करवाने के लिए सत्याग्रह किया और उन्हें विजय प्रदान करवायी उनके इस सद्कार्य का प्रभाव समस्त जनता के मन पर अतीव शीघ्रता से पड़ा।

चतुर्थ अध्याय—

गांधी जी ने स्वबान्धवों के क्लेशों को दूर करने के लिए साबरमती आश्रम की स्थापना की उनका कहना था कि किसी भी प्रजा अथवा शासक वर्ग को धर्म पालन द्वारा ही समृद्धिशाली बनाया जा सकता है। अधर्म पालन से समाज का विकास नहीं हो सकता है। इसके अतिरिक्त उन्होंने आत्म रक्षा के लिए अहिंसा को सर्वश्रेष्ठ साधन बताते हुए पलायनवादी होने की अपेक्षा मृत्यु के मुख में चले जाना अधिक श्रेयस्कर माना है।

पञ्चम अध्याय, षष्ठ अध्याय—

तात्कालिक शासक वर्ग द्वारा स्वराज्य प्रदान करने का आश्वासन देने के कारण एवं साम्राज्य के उपकार में ही भारत का कल्याण निहित जानकर गांधी जी ने प्रथम विश्व युद्ध में अंग्रेज सरकार की सहायता करने का निश्चय किया, किन्तु उनके द्वारा बढ़ते हुए अत्याचारों के कारण उन्होंने अंग्रेजों का विरोध करने के लिए अहिंसा का व्रत लिया। यह देखकर उन्होंने भारतीयों पर और अधिक अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिए। उनके अत्याचारों से जनता भडक उठी और उनके राजमहलों को भस्म करना जैसे दुष्कृत्य करने प्रारम्भ कर दिए और डायर नामक दुरात्मा शासक ने जनता पर खूब अत्याचार किए। जलियांवाला बाग काण्ड इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

सप्तम अध्याय, अष्टम अध्याय, नवम अध्याय—

महात्मा गाधी ने देश की दरिद्रता निवारण हेतु लवण कर का विनाश करने का बीड़ा उठाया।

दशम अध्याय—सप्तदश अध्याय—

गांधी जी द्वारा संचालित अहिंसात्मक आन्दोलन में भाग लेने वाले देशभक्त नायकों, वृद्धों, महिलाओं एवं बालक-बालिकाओं पर अंग्रेज शासकों ने जो निर्मम एव नृशंसतापूर्ण आचरण किया वह निश्चय ही हृदय को झक्झोर कर रख देता है।

उन्होंने कृपकोद्धार एव अन्त्यजोद्धार एव विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करके देश को उन्नति के पथ पर ले जाने का प्रयास किया।

अष्टादश अध्याय—

अन्त में दिव्य चरित्र से मण्डित महात्मा गाधी की महिमा चिरकाल तक रहेगी और भारत की स्वतन्त्रता अवश्यम्भावी है एव समस्त प्राणियों का क्लयाण होगा ऐसी कामना की गई है।

उत्तरसत्याग्रह गीता का कथानक

प्रथम अध्याय—

गाधी जी सन् १९३१ में यरवदा जेल से छूटने के बाद कुछ दिन बम्बई में श्रीमती अमृत कौर के अतिथि होकर रहे। तत्पश्चात् कुछ समय साबरमती आश्रम में बिताकर वायसराय से भेंट करने के लिए शिमला गए। वहा वायसराय ने उनको लन्दन में होने वाली आगामी गोल मेज-परिषद् में भाग लेने का निमन्त्रण दिया साथ ही "बहिष्कार-आन्दोलन" को रोक देने का आग्रह किया। गाधी जी ने उनके आमन्त्रण को स्वीकार कर लिया परन्तु उनसे नमक-कर हटाने की याचना की। वायसराय ने इस बात को स्वीकार कर लिया और गाधी-इर्विन समझौता हो गया।

द्वितीय अध्याय—

सन् १९३३ में सम्पन्न हुए कांग्रेस अधिवेशन में गांधी को आगामी गोल-मेज परिषद् में भाग लेने के लिए सर्वसम्मति से प्रतिनिधि नियुक्त किया गया। काग्रेस का उद्देश्य भारत को पूर्ण स्वराज्य दिलाना था। "गोलमेज-परिषद्" में भाग लेने के लिए जाने से पूर्व अनेक लोग आजाद हिन्द मैदान में उनका भाषण सुनने के लिए एकत्रित हुए। समुद्री यात्रा के अवसर पर सरोजिनी एवं मीराभी उनके साथ थे। गांधी जी जब तेरह दिन की यात्रा समाप्त करके वेनिस पहुंचे तब वहा के नागरिकों ने उनका हार्दिक अभिनन्दन किया। और उन्हें सैन्ट पीटर और ईसामसीह की उपमा दी।

तृतीय अध्याय—

अक्टूबर में द्वितीय गोलमेज परिषद् का अधिवेशन प्रारम्भ होने पर : उसमें कुछ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का पत्र लेने वाले, कुछ विरोधी-धनिक एवं ब्रिटिश शासकों के

प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया। गांधी ने भारत के अस्पृश्य जाति के लिए अलग निर्वाचन कार्यक्रम का विरोध किया। गांधी जी स्वतन्त्रता के पश्चात् भी अंग्रेजों के साथ मित्रता बनाये रखना चाहते थे।द्वितीय गोलमेज परिषद् के दौरान गांधी की पूर्ण स्वराज्य की भावना पर तुषारापात हो गया । भारत आगमन से पूर्व गांधी जी ने स्विड्जरलैण्ड में रोम्या रोला का आतिथ्य स्वीकार किया और फिर भारतीयों की सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों पर विचार करने एवं अपने देश-वासियों का बुलावा आने पर भारत लौट आए।

चतुर्थ अध्याय—

बंगाल और यू.पी. में कोई कर नहीं दिया जाएगा। इस संदर्भ में उग्रवादियों ने हत्याकाण्ड जैसे जघन्य अपराध किए। अंग्रेज सरकार ने इसके लिए निर्दोष कांग्रेस के पुरुषों पर सदेह के कारण उन्हें देश निकाला जैसे दण्ड दिए। गांधी भारत लौटते ही शिमला में वायसराय के समक्ष कांग्रेस के अधिकारियों को न्याय दिलाने के लिए गए। प्रस्ताव के अस्वीकृत होने पर उन्होंने अवज्ञा आन्दोलन छेड़ने की ठान ली। इस आन्दोलन में भाग लेने वाले सरदार पटेल के साथ ही अन्य नेताओं को भी अंग्रेज शासक ने पूना के यर्वदा जेल में डाल दिया। साथ ही समपत्ति एव मकान को सत्याग्रह में प्रयुक्त करने वाले और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने वालों को भी दण्डित करने की धमकी दी।

तत्पश्चात् भारत के नवीन वायसराय लार्ड विलिंगटन ने कांग्रेस को समाप्त कर देना चाहा परन्तु सत्याग्रहियों की अपार शक्ति ने ऐसा नहीं होने दिया। उन पर अंग्रेजों के किसी भी दबाव का कोई प्रभाव नहीं पडा उन्होंने भी और अधिक तीव्रता से सत्याग्रह किया।

पञ्चम अध्याय—

यद्यपि कांग्रेस की गतिविधियों पर रोक लगी हुई थी, फिर भी उनका एक संक्षिप्त अधिवेशन दिल्ली में हुआ और उसमें पारित प्रस्ताव शीघ्र ही सरकार की जानकारी में आ गए।

उस समय कांग्रेस अध्यक्ष पण्डित मदन मोहन मालवीय जोकि गिरफ्तार नहीं हुए थे उन्होंने लोगों के मध्य जन्मभूमि के प्रति आस्था जगाने और अंग्रेजों के अत्याचार की सूची प्रेस में देने का कार्य किया।

षष्ठ अध्याय—

सरदार वल्लभ भाई पटेल ने जेल जाने से पूर्व कांग्रेस के अध्यक्षों की एक सूची तैयार की, जिससे कांग्रेस की गतिविधिया विधिपूर्वक चलती रहें। इंग्लैण्ड की समृद्धि बढ़ाने वाली और भारत देश की बरबादी का कारण अंग्रेजी वस्त्रों एवं शराब की बिक्री का बहिष्कार किया और जेल गये। साथ ही उन्होंने कृषकों को भू-कर न देने की प्रेरणा दी। पुलिस ने स्वतन्त्रता-दिवस एवं गांधी व नेहरू के जन्म दिवस के अवसर पर फहराये गये झण्डे को उखाड़ फेंका और उन लोगों को जेल में डाल दिया।

काग्रेस अधिकारियों ने उनके द्वारा सताये गये कैदियों एवं काग्रेस की गतिविधियों पर रोक लगाने वाले कार्यक्रमों की जानकारी लोगों को देने के लिए विज्ञप्ति पत्र छपवाये। अंग्रेज अधिकारियों ने काग्रेस की गतिविधियों की तीव्रता को देखकर उन्हें और भी अधिक प्रताड़ना दी।

सप्तम अध्याय—

गाधी जी के यरवदा जेल में स्थित होने पर उनके द्वारा "गोलमेज-परिषद्" में अस्पृश्य जाति के अलग चुनाव के विरोध में दी गई वार्ता को अस्वीकार करके उसी सन्दर्भ में विचार-विमर्श करने हेतु लार्ड लोधी भारत आए। इसी सन्दर्भ में गाधी ने सेमुअल होर के समक्ष अपना विचार व्यक्त किया किन्तु उनके द्वारा भी असहमति देने पर गाधी ने अनेक लोगों के द्वारा विरोध करने पर भी आमरण-अनशन करने की ठान ली।

उनकी इस प्रतिभा से चिन्तातुर होकर मालवीय आदि नेताओ ने उनसे प्रतिज्ञा भंग करवाने के लिए बम्बई में सभा आयोजित की। गाधी के मित्र एन्ड्रूज, लुन्सवर्ग व पोलक ने लन्दन में उसके इस कार्य का प्रचार किया और ये बताया कि उनकी समाप्ति हमें अत्यधिक क्षति पहुँचायेगी।

स्वयं निम्न वर्ग के राजा द्वारा आमरण-अनशन को रोकने की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया और उसे ईश्वर की इच्छापूर्ति का कारण बताया, लेकिन गाधी की इस प्रार्थना का प्रधान-मन्त्री पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

अष्टम अध्याय—

पण्डित मालवीय ने अम्बेडकर एवं राजेन्द्र प्रसाद की उपस्थिति में सभा आयोजित करके सर्वसम्मति से अस्पृश्यता-निवारण का कार्य किया। उन्होने हरिजन वर्ग के लिए समस्त सार्वजनिक स्थानों, स्कूलों एवं मन्दिरों में प्रवेश की अनुमति प्रदान करवायी और उन्हें उच्च पदों पर आसीन करने के लिए शासन का ध्यान आकृष्ट किया। इसी तरह का प्रस्ताव पूना में रखा गया।

निम्न वर्ग का भविष्य खुशहाल होने की प्रसन्नता में उनके अनशन की समाप्ति पर सरोजिनी ने उनको सन्तरे का रस पिलाया। हरिजनों की स्थिति सुधार-कार्यक्रमों में कस्तूरबा ने भी उनके साथ सहयोग किया।

नवम अध्याय—

छह माह पश्चात् सरकार द्वारा प्रतिबन्धित काग्रेस सभा की अध्यक्षता करने वाले मदन मोहन को कलकत्ता में जेल भेजने पर जनता का उत्साह और भी बढ़ गया। तत्पश्चात् क्रमशः सभा की अध्यक्षता करने वाले कुछ अन्य लोग भी कारागृह गये और यातना सही। साथ ही काग्रेस अधिकारियों ने अपूर्ण स्वतन्त्रता एवं अध्यादेश को अस्वीकार किया और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार एवं भारतीय वस्त्रों के प्रयोग पर बल देते हुए प्रजा को सताने वाले शासन का विरोध किया।

मालवीय जी ने कारागृह से मुक्त होते ही कांग्रेस अधिवेशन के कार्यक्रमों का प्रचार करवाया और पुलिस के कार्यों की जाँच बैठाने हेतु प्रार्थना की, किन्तु सरकार ने मालवीय द्वारा प्रस्तुत कार्य की वास्तविकता से मुँह मोड लिया।

दशम अध्याय—

कारागृह से मुक्त होते ही गान्धी ने हरिजनों की सहायता हेतु आत्म शुद्धीकरण के लिए २१ दिन का उपवास किया। उपवास से पूर्व उन्होंने इस महान् कार्य की निर्विघ्न समाप्ति हेतु अन्य लोगों से प्रार्थना करने के लिए कहा। साथ ही उन्होंने "हरिजन" पत्रिका के माध्यम से लोगों को तनाव रहित होने और अपने उपवास की समाप्ति तक अवज्ञा आन्दोलन न करने की प्रार्थना की। उन्होंने सरकार से इस सन्दर्भ में कारागृह में भेजे गये लोगों को रिहा करने और उनसे सम्मान पूर्वक समझौता करने की याचना की, परन्तु इस याचना के दौरान सरकार ने लोगों को और भी निर्दयता पूर्वक सताना प्रारम्भ कर दिया।

एकादश अध्याय—

महात्मा गाधी ने अपने कारावास के दौरान किसी भी तरह का राजनैतिक विचार न करने और अवज्ञा आन्दोलन को कुछ समय के लिए रोक देने का विचार व्यक्त किया।

द्वादश अध्याय—

कारागृह से मुक्त होने पर गान्धी ने नेहरू के साथ भविष्य में किये जाने वाले राजनैतिक कार्यक्रमों पर वार्तालाप किया। गाधी जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन अस्पृश्यता निवारण में लगा देने का प्रण किया। जब गाधी जी अस्पृश्य वर्ग की सेवा के लिए धन एकत्रित करते हुए पूना पहुँचे तब किसी दुरात्मा ने उनकी हत्या का प्रयास किया, किन्तु सौभाग्यवश वह इस कार्य में असफल रहा। गाधी जी ने प्रस्तुत कार्य पूर्ति के लिए एक सप्ताह का उपवास किया। उन्होंने बिहार में हुए भूकम्प से क्षतिग्रस्त क्षेत्रों की सहायता की। कलकत्ता सरकार की प्रभुसत्ता को अस्वीकार करने के कारण जवाहर लाल नेहरू को कारागृह में भेज दिया गया।

त्रयोदश अध्याय—

गाधी जी पूना में "अखिल भारतीय स्वराज्य परिषद्" में हुई सभा में लोगों से विधान सभाओं में भाग लेने एवं सामूहिक अवज्ञा आन्दोलन के स्थान पर वैयक्तिक अवज्ञा आन्दोलन करने के लिए कहा और साथ ही यह भी कहा कि यह आन्दोलन तभी किया जाए जबकि उन्हें गांधी जी का आदेश मिले। उन्होंने इस आन्दोलन के स्थान पर अस्पृश्यता निवारण और ग्रामीण सुधार कार्यक्रमों पर अधिक बल दिया। इस तरह परिषद् का निर्माण हुआ, परन्तु शीघ्र ही विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण उनका कार्य बीच में ही रूक गया।

चतुर्दश अध्याय—

अप्रैल १९३७ में कांग्रेस के अन्तर्गत एक समाजवादी पार्टी बन जाने पर लोग विधान सभाओं में प्रविष्ट हो रहे थे और गाधी जी हरिजनोद्धार में लगे थे तथा अवज्ञा आन्दोलन

भी अपनी चरम सीमा पर था, तभी यह अफवाह फैल गई कि गांधी कांग्रेस को छोड़ रहे हैं।

पञ्चदश अध्याय—

अवज्ञा आन्दोलन में अवरोध उपस्थित हो जाने पर गाधी जी ने राष्ट्र हित के लिए चरखा कातना, खादी वस्त्र धारण करना और हरिजनोद्धार को अपने जीवन का चरम लक्ष्म मानते हुए उसी में अपना जीवन लगा दिया।

षोडश अध्याय—

कांग्रेस छोड़ने से पूर्व गांधी जी ने ग्रामीण सुधार एवं देश की सस्कृति को स्थापित रखने के लिए "अखिल भारतीय चरखा" और "अखिल भारतीय ग्रामोद्योग" संस्थाओं का सगठन किया। गाधी जी ने ग्रामोद्योग को बढ़ावा देना, राष्ट्रीय सस्कृति की उन्नति, राष्ट्रोन्नति और राष्ट्रीय शैक्षिक व्यवस्था में पूर्ण परिवर्तन जैसे कार्यक्रमों पर बल दिया। उन्होंने मानव मात्र की सेवा के लिए अपना जीवन लगा दिया।

सप्तदश अध्याय—

गाधी जी ने ग्राम एवं ग्रामीण जनता के सुधार के लिए स्वयं उनके मध्य रहना पसन्द किया। उन्होंने अस्पृश्यता-निवारण के लिए अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन लिया और ग्रामों की सफाई का कार्य स्वय करके लोगों को स्वच्छता एव स्वास्थ्य के नियमों का ज्ञान कराया और वहा के लोगों में काफी परिवर्तन किया।

अष्टादश अध्याय—

गाधी जी ने बंगलोर में हिन्दी प्रचार सभा की अध्यक्षता में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने पर बल दिया।

नवदश अध्याय—

सन् १९३७ में गाधी जी ने चरित्रहीनता एवं अन्य पापपूर्ण कृत्यों को सबसे बड़ी अस्पृश्यता स्वीकार किया। उन्होने ईश्वर की सेवा के लिए परिवार एवं ग्राम सेवा पर बल दिया।

विंश अध्याय—

उन्होंने युद्ध में विजय प्राप्ति के लिए सत्य का अवलम्बन लेने को कहा एवं मानव मात्र की सेवा के लिए निर्मल चरित्र पर बल दिया। गाधी जी ने स्वास्थ्य, सम्पन्नता एवं शान्ति के लिए ब्राह्मण, हरिजन वर्ग के मतभेद को पाटने का भी सत्यप्रयास किया और भौतिक विकास की अपेक्षा आध्यात्मिक विकास पर बल दिया।

एकविंश अध्याय—

महात्मा गाधी ने गाँव की उन्नति के लिए अहिंसा पर आश्रित प्रेम के मार्ग का अवलम्बन लेने पर बल दिया और उन्होने बारडोली में ग्रामीण वासियों के सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, ईमानदारी, सर्वधर्मसमानता, व्यवहार की समानता जैसे कार्यक्रमों के प्रति आस्था

जागरित करने का प्रयास किया और उन्होंने स्वतन्त्रता के पश्चात् भी अंग्रेजों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करने पर बल दिया।

द्वाविंश अध्याय—

गांधी जी ने विश्वशान्ति की स्थापना के लिए अहिंसा एंव प्रेम के बल पर अर्जित स्वतन्त्रता प्राप्ति पर बल दिया और हिंसा एव अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग का विरोध किया। उन्होंने मशीनीकरण के स्थान पर पुनर्निमाण पर बल दिया और यह विचार व्यक्त किया कि मशीनों का प्रयोग मानव कल्याण के लिए किया जाना चाहिए न कि विनाश के लिए। उन्होने ऐसी भाषा के प्रयोग पर बल दिया जोकि सर्वसाधारण के लिए उपयुक्त हो और हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना में सहायक सिद्ध हो सके। साथ ही एक ऐसी शिक्षा पद्धति पर जोर दिया जोकि न केवल एक "लिपिक" वर्ग की उत्पत्ति करने वाली हो, अपितु व्यक्ति अपनी मानसिकता में परिवर्तन करके उसके प्रयोग द्वारा अपना कल्याण कर सके।

त्रयोविंश अध्याय—

गाधी जी ने जुलाई १९३७ में हिन्दी प्रचारक सभा में जनता के समक्ष किसी भी प्रचार के लिए शैक्षिक योग्यता की अपेक्षा चरित्र-निर्माण को अधिक महत्वपूर्ण स्वीकार किया। उन्होने हिन्दी एवं उर्दू में दक्षता प्राप्ति हेतु सस्कृत एव पारसी का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक माना। उन्होंने अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को आत्मविश्वास एव निर्भयता पूर्वक सरकार का विरोध करने की प्रेरणा दी। उन्होंने इस बात पर विशेष जोर दिया कि शिक्षा शराब की बिक्री पर आश्रित न होकर आत्म-निर्भर होनी चाहिए और कारागृह को समाप्त करके उनका प्रयोग समाजसुधार एवं शिक्षा के लिए किया जाना चाहिए और उनका ध्यान नगरों की अपेक्षा ग्राम सुधार की ओर अधिक होना चाहिए। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्यों के समक्ष ये विचार रखा कि राष्ट्र के हित के लिए उन्हें सुरुचिपूर्ण सादा-जीवन बिताते हुए अपने मन्त्रिमण्डल एव अन्य लोगों के समक्ष एक आदर्श उपस्थित करना चाहिए उनमें किसी भी तरह की ऊंच-नीच की भावना को प्रश्रय नहीं दिया जाना चाहिए।

चतुर्विंश अध्याय—

गाधी जी का ये विचार था कि मानव के उपचार के लिए भी निर्बल एवं निरपराध पशुओं पर प्रहार नहीं किया जाना चाहिए। और उनके साथ अमानवीय व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने वर्धा के नवभारत स्कूल में छात्र-छात्राओं के मध्य एक ऐसी प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप उपस्थित किया जिसका पालन करके वह अपनी आजीविका उपार्जित करने में समर्थ हो सके। इसके अतिरिक्त उन्होंने लोगों का ध्यान इस ओर भी खींचा कि तात्कालिक शिक्षा पद्धति में अग्रेजी की प्रचुरता के कारण वह शिक्षा सामान्य वर्ग की किसी भी प्रकार से सहायता नहीं कर सकती है अतः ऐसी भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए जिससे सामान्य ज्ञान के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी हो।

पञ्चविंश अध्याय—

हरिपुर में सुभाष की अध्यक्षता में हुए कांग्रेस अधिवेशन में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल के औचित्य के विषय में प्रस्ताव पारित किया गया और यह कहा गया कि वह तब तक रह सकते है जब तक कि सरकार हस्तक्षेप न करे। साम्प्रदायिक संघर्ष को शान्त करने के लिए मन्त्रीमण्डल द्वारा पुलिस और सेना की सहायता लेने पर गाधी जी ने उसका विरोध किया। उनका कहना था कि प्रत्येक समस्या का समाधान सत्य और अहिंसा के बल पर ही करना चाहिए भले ही उसके लिए हमें प्राणों की आहुति देनी पडे।

षड्विंश अध्याय—

कांग्रेस कमेटी के चुनाव में उसके सदस्य आपस में कुर्सी के लिए लडते रहे। उन्होंने कहा कि कांग्रेस के सदस्य सत्य, अहिंसा और निःस्वार्थ भाव से कार्य करें। यदि वे उसकी प्राप्ति के लिए अनुचित मार्ग अपनायेंगे तो कांग्रेस असफल हो जायेगी। उन्होंने सत्य, अहिंसा जैसे आदर्शों पर विश्वास न करने वाले लोगों से कांग्रेस का परित्याग कर देने के लिए कहा। उसी समय सम्भावित विश्व युद्ध के विषय में जानकर उन्होंने किसी भी उद्देश्य पूर्ति के लिए अस्त्र-शस्त्र के स्थान पर अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन लेना श्रेयस्कर माना।

सप्तविंश अध्याय—

राजकोट में राजा एवं दीवान द्वारा प्रजा पर किये जा रहे अन्याय एवं अत्याचारों के विरोध में जनता के आन्दोलन छेड़ने पर राजा ने उसको तरह-तरह से आश्वासन दिया : लेकिन उस पर अमल नहीं किया। तब गाधी जी ने उनकी समस्या का समाधान करने के लिए २१ दिनों का उपवास किया। यद्यपि उस समय उसका कोई वाञ्छित परिणाम नहीं निकला, लेकिन गाधी जी को आशा थी कि निकट भविष्य में उन्हें इसका फल अवश्य मिलेगा और उनका विचार था कि स्वराज्य होने पर भी राजाओं के रहने में कोई हानि नहीं है, लेकिन वह अपनी तानाशाही न दिखाकर प्रजातन्त्रात्मक राज्य करें तभी उनका रहना स्वीकार किया जा सकता है।

अष्टविंश अध्याय—

उपवास आत्मशुद्धि और हिंसा तथा रक्तपात को रोकने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए। ईश्वर के आदेश और अन्तरात्मा की आवाज के बिना किया गया अनशन भूखे मरने के समान है। वह किसी पर दबाव डालने के लिए नहीं, अपितु उनका हृदय परिवर्तन करने के लिए है। यही कारण है कि उनका कोई अनशन असफल नहीं हुआ सिवाय राजकोट के मामले के।

नवविंश अध्याय—

राजकोट का संतोषजनक समाधान होते ही गांधी जी ने अपने उपवास का पारायण किया। उन्होंने राजकोट के सदस्यों को हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना, ऊँच-नीच का

भेद भाव समाप्त कर देना, सत्य-अहिंसा का पालन करना, सम्मिलित मानव सेवा करना, सूत कातना, खादी-वस्त्र धारण की आवाज और शिक्षा का प्रसार जैसे कार्यक्रमों को करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने लक्ष्मी नारायण मन्दिर का उद्घाटन करते हुए उन सदस्यों को धार्मिक भावना जागरित करने की प्रेरणा दी और उन्हें बताया कि हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता के लिए कोई स्थान नहीं है। हिन्दू धर्म में की गई वर्ण-व्यवस्था गुण एवं कर्म पर आधृत है। उसमें अस्पृश्यता का समावेश ही हमारे पतन का कारण बना है।

त्रिंशद् अध्याय—

गांधी जी ने दीर्घ काल से मालिकों द्वारा सताये जा रहे चम्पारन के किसानों को सत्याग्रह के बल पर न्याय दिलवाया।

एकत्रिंशद् अध्याय—

गाधी जी ने १९३२ में वृन्दावन सेवा संघ में भाषण देते हुए राजकोट में हुई अपनी असफलता का कारण अपने द्वारा किये गए क्रोध पूर्ण व्यवहार को बताया और साथ ही उन्होंने कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं से अपेक्षा की कि वे सत्याग्रह का पालन करने वाले हों, चरित्रवान् हों संयमी हों, दुर्गुणों से अपने को मुक्त रख सकें साथ ही सत्य और अहिंसा का पालन करने को दृढ़प्रतिज्ञ हों तथा चरखे को अहिंसा का प्रतीक मानकर ये प्रयास करें कि घर-घर में लोग चरखा चलायें और सूत कातें।

गाधी सम्पूर्ण भारत में पूर्ण मद्य निषेध के पक्षपाती थे, परन्तु पारसी परिवारों में शराब का प्रयोग अनिवार्यत होता था। अतः उन्होंने इसका विरोध किया। गाधी जी ने उन लोगों को समझाया कि जिस प्रकार भारत में आकर उन लोगों ने वहा के रीति-रिवाजों का परित्याग करके यहां के रीति-रिवाजों को अपने जीवन में उतार लिया है उसी प्रकार अपने लघु समुदाय के संकुचित दायरे के हित को त्यागकर सम्पूर्ण भारत के हित को ध्यान में रखते हुए पूर्ण मद्य-निषेध का विरोध नहीं करना चाहिए।

द्वात्रिंशद् अध्याय—

गाधी जी ने साम्प्रदायिक शक्ति के विरुद्ध अहिंसक संघर्ष किया। उन्होंने साम्प्रदायिक एकता एवं सद्भाव के प्रतीक के रूप में सम्मानित झण्डे के प्रति पहले जैसा सम्मान न देखकर सार्वजनिक समारोह, जुलुसों एवं शिक्षण-संस्थाओं में उसके फहराये जाने पर रोक लगा दी और कहा कि यह कार्य तब तक नहीं हो सकता है जब तक कि जन-जन के मन में उसके प्रति निष्ठा जागरित न हो सके। ऐसा ही सिद्धान्त राष्ट्रीय गान के संदर्भ में भी समीचीन प्रतीत होता है। जब तक हमारा राष्ट्र रहेगा, तब तक राष्ट्रीय-ध्वज और राष्ट्रीय गान भी रहेंगे।

सुभाषचन्द्र बोस और उनके कुछ अनुयायी कांग्रेस मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध थे। जो कांग्रेसजन मन्त्रिमण्डल के पक्ष में थे उन्होंने अभद्र एवं हिंसक तरीकों से उनका विरोध किया, जिसकी गांधी जी ने कटु आलोचना की।

त्रय.त्रिंशद् अध्याय—

गाधी जी ने विश्व को विनाश के कगार पर ले जाने वाले युद्ध का विरोध किया और इस सन्दर्भ में हिटलर को एक पत्र भेजा।

चतुः त्रिंशद् अध्याय—

राज्य के राजा लोग अपनी प्रजा पर अत्यधिक अत्याचार करते थे और उसके द्वारा विरोध किये जाने पर वह उन्हें मसल डालते थे। अत गाधी जी का विचार था कि जिस प्रकार भारतीय ब्रिटिश शासक से अपने अधिकारों की प्राप्ति एवं मुक्ति के लिए युद्ध कर सकते हैं, उसी प्रकार वही अधिकार राज्यों की प्रजा को भी मिलना चाहिए।

पञ्चत्रिंशद् अध्याय—

अहिंसावादी होने के कारण गांधी जी हृदय परिवर्तन के द्वारा शत्रु पर भी विजय प्राप्त करना चाहते हैं। वह अपने देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए विश्व के किसी भी देश का अहित करना पसन्द नहीं करते हैं।

षट्त्रिंशद् अध्याय—

विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटेन ने यह घोषणा की कि वह संसार में तानाशाही समाप्त करके प्रजातन्त्र कायम करने के उद्देश्य ये युद्ध कर रहे हैं, परन्तु वास्तव में वह साम्राज्यवाद कायम रखना चाहते थे। इसलिए कांग्रेस ने यह घोषणा की कि जब तक अंग्रेज भारत को पूर्ण स्वराज्य नहीं देते तब तक कांग्रेस उनको किसी प्रकार का सहयोग नहीं देगी।

सप्तत्रिंशद् अध्याय—

गांधी जी ने आत्म सम्मान की रक्षा एवं भारत को प्रजातन्त्रात्मक राज्य पर निर्भर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए ब्रिटिश शासक के साम्राज्यवादी स्तम्भ, स्वार्थ, शक्तिशाली बड़ी सेना, अलग राज्यों की व्यवस्था और साम्प्रदायिक झगड़ों का विरोध किया।

अष्टत्रिंशद् अध्याय—

गाधी जी ने सन् १९४० में अहिंसा एवं चरखे के प्रति अविश्वास रखने वाले अनुशासनहीन कांग्रेसजनों को सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने की अनुमति असफलता एवं विपत्ति की आशंका से प्रदान नहीं की। तथा अन्तरात्मा की आवाज से प्रेरित होकर उस आन्दोलन को अकेले ही छेडने की ठान ली।

नवत्रिंशद् अध्याय—

अक्टूबर में कांग्रेस कार्यकारिणी ने पूना में यह प्रस्ताव रखा कि ब्रिटिश सरकार अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए भारत की सम्पदा और जनशक्ति का उपयोग करना चाहती है और भारत को दास बनाये रखना चाहती है। अतः कांग्रेस युद्ध में अंग्रेजों की सहायता नहीं करेगी। उसे पूर्ण स्वराज्य के अतिरिक्त और कुछ स्वीकार्य नहीं है।

कांग्रेस स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए विधान मण्डलों का त्याग और असहयोग आन्दोलन करेगी। सन् १९४० में उत्साहपूर्वक राष्ट्रीय स्वतन्त्रता सप्ताह मनाया गया।

हिन्दू-मुसलमानों ने आपसी भेदभाव भुलाकर संगठित रूप से आत्मशुद्धि के लिए उपवास और प्रार्थना की ओर स्वदेशी अपनाने का व्रत लिया।

चत्वारिंशद् अध्याय—

गांधी जी ने रामगढ़ में हुए पचपनवें राष्ट्रीय-कांग्रेस अधिवेशन में भाषण देते हुए ग्रामोद्योग के महत्त्व एवं चरखे के प्रति आस्था जागरित करने के लिए प्रकाश डाला। उनका विचार था कि ऐसा किये बिना ग्रामीण सुधार असम्भव है और बार-बार उनके जेल जाते रहने से किसी समस्या का समाधान नहीं हो सकता है।

एक चत्वारिंशद् अध्याय—

मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना एक पृथक् राज्य पाकिस्तान की स्थापना करना चाहते थे। वह मुसलमानों का सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आहार-विहार आदि के सन्दर्भ में हिन्दुओं से भेद बताते हुए उनमें एकता की स्थापना को नितान्त असम्भव मानते हैं, किन्तु महात्मा गांधी स्वराज्यप्राप्ति के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को महत्त्वपूर्ण स्वीकार करते हैं।

द्विचत्वारिंशद् अध्याय—

स्टैफर्ड क्रिप्स का ये विचार था कि जब अंग्रेज भारत को छोड़कर जायेंगे तब भारत के सभी वर्ग के लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक मन्त्रिमण्डल शासन चलायेगा, जोकि वायसराय के प्रति उत्तरदायी होगा।

युद्ध की स्थिति में रक्षा और वित्त विभाग अंग्रेजों के हाथ में रहेगा। युद्ध के पश्चात् देशव्यापी मत संग्रह कराया जायेगा जिसमें विशेष रूप से मुस्लिम, पंजाब, सिन्धु, आसाम, बिहार, उत्तर पश्चिमी प्रान्तों में यदि वहां के ७० प्रतिशत निवासी पाकिस्तान चाहेंगे तो उनका एक अलग राज्य बन जायेगा और यदि भारतीय संघ ब्रिटिश साम्राज्य से अपना नाता तोड़ना चाहे तो ब्रिटेन उपर्युक्त निर्णय से बंधा रहेगा। सर क्रिप्स के प्रस्ताव को किसी भारतीय दल ने स्वीकार नहीं किया।

त्रयः चत्वारिंशद् अध्याय—

८ अगस्त १९४२ को "भारत छोड़ो" आन्दोलन के सन्दर्भ में महात्मा गांधी के साथ अन्य नेताओं एवं कांग्रेस नेताओं को अलग-अलग स्थानों के कारागृह में डाल दिया गया। गांधी जी को कारागृह में भेजने पर महिलाओं की एक सभा में भाषण देती हुई कस्तूरबा को भी बम्बई में बन्दी बनाकर महात्मा गांधी, सरोजिनी नायडू एवं महादेव भाई के समीप ही आगाखाँ महल में भेज दिया गया। एक सप्ताह पश्चात् आगाखाँ में हुई महादेव भाई की मृत्यु से गांधी को गहरा धक्का लगा।

चतुःचत्वारिंशद् अध्याय—

विश्व युद्ध के दौरान बंगाल की स्थिति अत्यधिक शोचनीय हो गई। लोग भूखे मरने लगे। हजारों लोग बेघरबार हो गये। इस स्थिति के परिणाम स्वरूप भारतीयों के मन

में ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई।

पञ्च चत्वारिंशद् अध्याय—

अनेक नेताओ के कारागृह में डाल दिये जाने के पश्चात् भारतीयों ने स्थान-स्थान पर आग लगाना, लूटपाट करना प्रारम्भ कर दिया। परिणामत. ब्रिटिश सरकार ने उन पर भी और अधिक अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। उन्होंने तोड़-फोड़ आदि के मामले में काग्रेस को दोषी ठहराया। इस सन्दर्भ में गाधी जी ने वायसराय के समक्ष पत्र भेजकर काग्रेस सदस्यों को उस घटना से अछूता साबित करने का प्रयास किया, किन्तु उन पर कोई प्रभाव न देखकर गाधी ने आमरण अनशन करने की ठान ली। जिसके कारण उनकी स्थिति अत्यधिक शोचनीय हो गई। परन्तु सौभाग्यशाली वह ईश्वर की महती अनुकम्पा से बच गये।

षट्चत्वारिंशद् अध्याय—

मार्च १९४४में आगाखाँ महल में निवास करते हुए कस्तूरबा की मृत्यु हो जाने के पश्चात् गाधी जी को कारागृह से मुक्ति दे दी गई तथा गाधी जी पाकिस्तान बनाने के सन्दर्भ में जिन्ना से हुई वार्ता में असफल रहे।

सप्तचत्वारिंशद् अध्याय—

महात्मा गाधी जिन्नासे वार्ता समाप्त करके सेवाग्राम गए। वहाँ की जनता ने उनका वहाँ पहुँचने पर हार्दिक स्वागत किया और कस्तूरबा की स्मृति के लिए एकत्रित धन को गाधी को समर्पित कर दिया। गाधी जी ने समस्त प्राप्त धन को स्त्रियों एवं बच्चों की शिक्षा हेतु समर्पित कर दिया। गाधी जी का चौहत्तरवा जन्म-दिवस सरोजिनी एवं अन्य मित्रों की उपस्थिति में अत्यधिक उत्साहपूर्ण मनाया गया, साथ ही तेरह वर्ष से चल रहे सत्याग्रह युद्ध का समापन हुआ।

स्वराज्य विजय

प्रथम अध्याय—

यद्यपि महात्मा गाधी देश की एकता एव अखण्डता को स्वराज्य प्राप्त के लिए महत्त्वपूर्ण स्वीकार करते हुए देश-विभाजन का विरोध नहीं करते हैं, लेकिन जिन्ना के दुराग्रह के कारण उनका यह सद्-विचार अधूरा रह जाता है और वेवेल जिन्ना के मत को प्रधानता देते हुए भारत को (भारत-पाकिस्तान) दो राष्ट्रों में विभक्त करने की ठान ही लेते हैं।

द्वितीय अध्याय—

सन् १९४५ को सेवाग्राम में निवास करते हुए अस्वस्थ्य हो जाने पर भी महात्मा का पूरा ध्यान देश की उन्नति की ओर लगा रहता था। वहाँ पर महात्मा गाधी से मिलने के लिए एक अमरीकी विद्वान् आए। उन्होंने युद्ध की स्थिति में भी स्वधर्मासक्त रहने वाले गाधी की

प्रशंसा की। सेवाग्राम में निवास करते हुए रोम्या रोला की मृत्यु का समाचार सुनकर वह उस पर विश्वास नहीं कर सके।

तृतीय अध्याय—

महात्मा गांधी १९४५ के माघ माह के अन्तिम सप्ताह में स्वतन्त्रता दिवसकी उद्घोषणा करते हैं। अपनी मातृभूमि को परतन्त्रता से मुक्त करवाने के लिए अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करते हैं। वह स्वदेश रक्षक नायकों को सत्य एवं अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन लेने की सलाह देते हैं।

चतुर्थ अध्याय—

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति पर भारत ऋणग्रस्त हो गया। भारत में उनका रहना आपत्तिपूर्ण हो गया। समस्त विश्व में विजय प्राप्त करने की लालसा रखने वाले हिटलर जापान देश के साथ स्वयं ही मृत्यु को प्राप्त हो गये। यदि अंग्रेज भारत को स्वतन्त्र नहीं करते हैं तो इसके लिए शीघ्र किये जाने वाले सत्याग्रह युद्ध की घोषणा की गई।

पञ्चम अध्याय—

महात्मा गांधी ने चैत मास के अन्त में अनुयायियों सहित सेवाग्राम से पुण्यपुरी में जाकर संकटकालीन कार्यों को करने की लोगों को प्रेरणा दी। तथा अन्य कुछ स्थानों का भ्रमण करते हुए उन्होंने अंग्रेज मुख्य मन्त्री चर्चिल को भेजे गये पत्र को स्वदेशवासियों को उपकृत करने के लिए भेजा।

गांधी जी ने समस्त विश्व में शान्ति स्थापना के लिए पूर्ण स्वराज्य की बात कही तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन लेना चाहिए ऐसा विचार किया। उनका कहना था कि शत्रु को भी दण्ड न देने के स्थान पर किया गया क्षमाभाव उसे भी मित्र बनने की प्रेरणा देता है।

षष्ठ अध्याय—

महात्मा गांधी ने भारत राष्ट्र को बन्धन मुक्त करवाने के लिए वेवल से वार्ता की।

सप्तम अध्याय—

राष्ट्र नेताओं को कारागृह से मुक्त करवाने के लिए शिमला में सम्मेलन हुआ।

अष्टम अध्याय—

नेताओं की मुक्ति के साथ ही जापान के हिरोशिमा एवं नागासाकी शहरों में जो बम प्रहार हुआ उसके प्रति गहरा शोक व्यक्त किया गया है।

नवम अध्याय से एक पञ्चाशद् अध्याय तक—

महात्मा गांधी ने अनेक स्थानों में जाकर हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना का प्रयास किया, अन्त्यज वर्ग को समाज में स्थान दिलवाया, और राम नाम के महत्व को जनता को समझाया। देश एवं समाज के हित में कार्य करते हुए कारागृह की यातना सही उनके प्रयासों के बावजूद भारत जिन्ना के दुराग्रह और अंग्रेजों की नीति के कारण दो भागों में विभक्त

होकर स्वतन्त्र हुआ इससे उन्हें गहरा आघात पहुँचा।

द्विपञ्चाशद् अध्याय—

दिल्ली की प्रार्थना सभा में भाषण देते हुए गांधी पर किसी ने बम फेंक कर उनकी हत्या करने का निकृष्ट प्रयास किया, किन्तु वह उस कार्य में असफल रहा।

त्रिपञ्चाशद् अध्याय—

३० जनवरी सन् १९४८ को प्रार्थना सभा में जाते हुए महात्मा गांधी की नाथूराम गोड्से नामक दुरात्मा ने गोली मारकर हत्या कर दी। उनकी मृत्यु का समाचार पाकर न केवल नेहरु आदि भारतवासी अपितु उनके विदेशी मित्र भी हतप्रभ हो गए। उनके ज्येष्ठ पुत्र रामदास ने उनका विधिपूर्वक अन्तिम संस्कार किया।

चतुःपञ्चाशद् अध्याय—

हमारा भारत देश गांधी जैसे महात्मा को पाकर धन्य हो गया। कवि की यह कामना है कि हमारे देशवासी उनके चरणचिन्हों पर चलकर निश्चय ही आशा का दीप प्रज्ज्वलित करके देश को प्रगति के मार्ग पर ले जायेंगे।

(ख) सत्याग्रह गीता का महाकाव्यत्व

(अ) महाकाव्य : सामान्य विश्लेषण—

"महाकाव्य" साहित्य की एक ऐसी कृति है जिसमें जीवन के विविध आयामों का चित्रण अतीव मनोहारी ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। संस्कृत साहित्य में समय-समय पर महाकाव्य के विषय में साहित्यकार अपना-अपना मत प्रस्तुत करते रहे हैं। उन साहित्यकारों के विचारों का अवलोकन करके महाकाव्य के संदर्भ में महर्षि वेदव्यास, भामह, दण्डी रुद्रट, कुन्तक, विश्वनाथ आदि को विशेष रूप से उल्लिखित किया जाता है।

महाकाव्य एक ऐसी रचना है, जोकि सर्गों में उपनिबद्ध होती है। वह उच्च गुणों से मण्डित चरित्रों से युक्त होने के साथ-साथ स्वयं भी महान् होता है। वह अग्राम्य शब्दों से सुशोभित, सुन्दर अभिव्यञ्जना पर आश्रित शब्दों के भण्डार से युक्त होता है। उसमें अलंकारों की सुन्दर समायोजना रहती है और वह सदाश्रित होता है। उसमें मन्त्रणा, दूतप्रेषण, अभियान, युद्ध एवं नायकोत्कर्ष का वर्णन होता है। महाकाव्य के कथानक में मुख, प्रतिमुख आदि पञ्च सन्धियों का समन्वित होना अत्यावश्यक है। किन्तु उसमें दुरुह व्याख्या-जन्य स्थलों का अभाव होना चाहिए। महाकाव्य में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि चतुर्वर्ग का वर्णन होते हुए भी वह अधिकांशतः "अर्थ" के उपदेश से युक्त एवं लोक-स्वभाव से युक्त होता है। उसमें समस्त रसों का पृथक्-पृथक् वर्णन होना चाहिए। महाकाव्य में नायक के वंश एवं वीरता का वर्णन करके अथवा उसका अभ्युदय प्रदर्शित करके किसी अन्य के अभ्युदय का वर्णन करने की अभिलाषा से नायक का वध नहीं किया जाना चाहिए।

स्वयं भामह द्वारा काव्यालंकार में किए गये महाकाव्य के लक्षण का आस्वादन किया जाए—

"सर्गबन्धो महाकाव्यं महतान्च महच्च यत्।
अग्राम्यशब्दमर्थ्यञ्च सालंकारं सदाश्रयम्।।
मन्त्रदूतप्रयाणाजिनायकाभ्युदयैश्च यत्।
पञ्चभिः सन्धिभिर्युक्तं नातिव्याख्येयमृद्धिमत्।।
चतुर्वर्गाभिधाने ऽपि भूयसार्थोपदेशकृत।
युक्तं लोकस्वभावेन रसैश्च सकलैः पृथक्।।
नायकं प्रागुपन्यस्य वंशवीर्यश्रुतादिभिः।
न तस्यैव वधं ब्रूयादन्योत्कर्षाभिधित्सया।।

—भामह, काव्यालंकार, १/१९-२२

भामह के पश्चात् आचार्य दण्डी ने उनके द्वारा प्रस्तुत महाकाव्य की विशेषताओं में से कुछ का परित्याग करके और उसमें कुछ नवीन विशेषताओं को जोडकर महाकाव्य का लक्षण प्रस्तुत किया है।

एक ऐसी काव्य रचना, जोकि सर्गों में उपनिबद्ध होती है, उसे महाकाव्य कहा जाता है। महाकाव्य के प्रारम्भ में आशीर्वादात्मक, नमस्क्रियात्मक एवं वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया जाता है। उसका कथानक (रामायण महाभारत आदि) किसी प्रसिद्ध ऐतिहासिक कथा पर आश्रित होता है अथवा किसी महान् पुरुष के जीवन पर आधृत होता है। उसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चतुर्वर्ग की सिद्धि कराना प्रमुख ध्येय होता है। महाकाव्य नगर, समुद्र, पर्वत, ऋतुओं, चन्द्रोदय एव सूर्योदय, उपवन, जलक्रीड़ा, मधुपान, रतिक्रीड़ा, विप्रलम्भ, विवाह, पुत्रप्राप्ति आदि विविध वर्णनों से युक्त होता है और उसमें मन्त्रणा, दूत, युद्ध तथा नायक का अभ्युदय आदि प्रसंगो का भी समावेश होता है। महाकाव्य में अलंकार विस्तार एवं श्रृंगार, वीर आदि नव रसों एवं रति आदि भावों का समन्वय होता है। उसमें वर्णित सर्ग अधिक विस्तृत नहीं होते हैं। श्रव्य छन्दों से युक्त होते हैं एवं कथा में पञ्च सन्धियों की सुन्दर घटा छाई रहती है। काव्य को सौंदर्य प्रदान करने के लिए सर्ग की समाप्ति पर छन्द परिवर्तन का विधान किया गया है। इस तरह के वर्णन से युक्त काव्य चिरकाल तक अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखते हुए शोभा पाता है।

अब दण्डी के शब्दों में ही महाकाव्य के लक्षण देखिये—

"सर्गबन्धो महाकाव्यमुच्यते तस्य लक्षणम्।
आशीर्नमस्क्रियावस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखम्।।
इतिहासकथोद्भूतमितरद्वा सदाश्रयम्।
चतुर्वर्गफलायत्तं चतुरोदात्तनायकम्।।

नगरार्णवशैलर्तु-चन्द्रार्कोदयवर्णनैः
उद्यान-सलिल-क्रीडा मधुपान-रतोत्सवैः।
मन्त्र-दूत-प्रयाणाजि-नायकाभ्युदयैरपि।।
अलकृतमसंक्षिप्तं-रसभाव-निरन्तरम्।
सर्गै रनतिविस्तीर्णै- श्रव्यवृत्तै सुसन्धिभि-।।
सर्वत्रभिन्न-वृत्तान्तैरुपेत लोकरञ्जकम्।
काव्यं कल्पान्तरस्थायि जायेत सदलकृति।।

—दण्डी, काव्यादर्श, १/१४-१९

महर्षि वेदव्यास ने भामह एवं दण्डी के काव्य-लक्षण में किञ्चित् परिवर्तन करते हुए उनके मतों को अपनाया है।

महाकाव्य एक सर्गबद्ध रचना है। उसके प्रारम्भ में संस्कृत का प्रयोग किया जाना चाहिए। उसका कथानक इतिहास प्रसिद्ध अथवा किसी सज्जन व्यक्ति के जीवन पर आधृत होता है। मन्त्रणा, दौत्य, अभियान एवं युद्ध का विस्तृत वर्णन नहीं होता है। महाकाव्य में शक्वरी, अतिशक्वरी, जगती, अतिजगती, त्रिष्टुप्, पुष्पिताग्रा, अपरवक्त्र आदि अप्रचलित छन्दों का सुन्दरता पूर्वक प्रयोग किया जाता है। सर्गान्त में छन्द परिवर्तन होना चाहिए एवं सर्ग बहुत छोटा नही होना चाहिए। इसके अतिरिक्त महाकाव्य में नगर, समुंद्र, पर्वत, सूर्य, चन्द्रमा, आश्रम, वृक्ष, उपवन, जल, क्रीडा, मधुपान, रतिक्रीडा, दूती, वाग्विदग्धता, अन्धकार, पवन का दोलायमान होना आदि प्रसंगों का भी समायोजन होता है। इसमें विभाव, अनुभाव सञ्चारी भावों रीतियों, वृत्तियों का भी समावेश होता है तथा वाग्वैदग्ध्य की प्रधानता होते हुए भी रस ही प्राण रूप में सर्वत्र परिव्याप्त रहता है। महाकाव्य में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चतुर्वर्ग का भी वर्णन होता है। इस प्रकार का वर्णन करने वाला रचयिता महाकाव्य की श्रेणी में आता है।

इसके पश्चात् "रुद्रट" ने "महाकाव्य" के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। उन्होंने अपनी परिभाषा में संस्कृत के ग्रन्थों के अतिरिक्त प्राकृत एवं अपभ्रंश में रचित ग्रन्थों को भी रखा है। उनके अनुसार महाकाव्य की कथावस्तु उत्पाद्य (कवि कल्पित) एवं अनुत्पाद्य (इतिहास प्रसिद्ध) होती है। उत्पाद्य उसे कहते हैं जहा पर सम्पूर्ण कथावस्तु कवि की कल्पना पर आश्रित होती है और नायक भी वास्तविक जगत् में कल्पना पर ही आश्रित होता है तथा अनुत्पाद्य वह है जिसमें कथावस्तु वास्तविक जगत् अथवा किसी ऐतिहासिक कथा पर अवलम्बित होती है और कवि उसे अपनी लेखनी से कुशलता पूर्वक वर्णित कर देता है। ये प्रबन्ध काव्य महान् होते हैं। उसमें चतुर्वर्ग का विवेचन होता है तथा समस्त रसों एवं पुष्पावचय, जलक्रीडा आदि काव्य स्थानों को समाविष्ट किया जाता है। महाकाव्य के प्रारम्भ में सुन्दर नगरी का वर्णन करने के पश्चात् नायक के वंश की प्रशस्ति होनी चाहिए एवं नायक ऐसा होना चाहिए, जोकि मन्त्रादि शक्तित्रय से सम्पन्न हो, विभिन्न गुणों से अलंकृत हो और विजिगीषु हो। नायक के साथ-साथ कुलीनों में अग्रगण्य

गुणवान् प्रतिनायक का चित्रण भी किया जाना चाहिए। उसमें राज कार्यों का विधिपूर्वक विवेचन किया जाना चाहिए। कथा के प्रसंगानुकूल प्रकृति वर्णन, युवकों के समाज, संगीत पान-गोष्ठी श्रृंगार, मन्त्रणा, शिविर एवं युद्ध का वर्णन होना चाहिए। नायक एवं प्रतिनायक के परस्पर युद्ध का वर्णन करते हुए नायक की विजय और प्रतिनायक की पराजय दिखायी जानी चाहिए। उसमें सन्धियों एवं अवान्तर प्रकरणों की भी सर्गबद्ध रचना होती है। महाकाव्य में अलौकिक अतिप्राकृतिक तत्वों का चित्रण होता है, किन्तु उसमें मनुष्य द्वारा कुलपर्वत एवं सागर के लाँघने का वर्णन नहीं होना चाहिए[२]

आचार्य "हेमचन्द्र" ने काव्यानुशासन के अष्टम अध्याय में महाकाव्य के लक्षणों को तीन भागों-शब्द वैचित्र्य, अर्थ वैचित्र्य एव उभय वैचित्र्य में विभाजित करके शब्दार्थ-वैचित्र्य को प्रधानता दी है-। "पद्य प्राय. संस्कृतप्राकृतापभ्रंशग्राम्यभाषानिबद्धभिन्नान्त्य-वृत्तसर्गाश्वाससन्ध्यवस्कन्धकबन्धं सत्संधि शब्दार्थवैचित्र्योपेतं महाकाव्यम्"।

—हेमचन्द्र काव्यानुशासन, अष्टम अध्याय।

हेमचन्द्र की परिभाषा से यह तथ्य प्रस्फुटित होता है कि महाकाव्य का निर्माण संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में भी होता है। संस्कृत में सर्गबद्ध, प्राकृत में सन्धिबद्ध तथा ग्राम्यभाषा में अवस्कन्धकबन्ध महाकाव्य होते हैं। शब्दवैचित्र्य के अन्तर्गत असंक्षिप्त ग्रन्थत्व, अविषमबन्धत्व, परस्पर सम्बद्ध सर्गों की अत्यन्त विशालता का अभाव, आशीर्नमस्कार वस्तुनिर्देश उपक्रम, कवि प्रशंसा, सज्जन दुर्जन का स्वरूप निर्देश और दुष्कर चित्रालंकारों का ग्रहण आदि विषयों की चर्चा की जानी चाहिए। अर्थवैचित्र्य के अन्तर्गत चतुर्वर्ग फल की प्राप्ति का उपाय, नायक चातुर्य एवं उदात्तता, रस-भाव की समुचित योजना, संधि विधान, नगर, आश्रम, पर्वत, सेना, आवास, मन्त्र, दौत्य, प्रयाण, युद्ध, नायकाभ्युदय वन-विहार, जल-क्रीड़ा, मधुपान रतोत्सव आदि का विवेचन होता है एवं "उभयवैचित्र्य" में रसानुरूप सन्दर्भ अर्थानुरूप छन्द, समस्त लोकरञ्जकता, देश-काल-पात्रों की चेष्टाएं तथा अवान्तर कथाओं की योजना का चित्रण किया जाता है।[३]

आचार्य कुन्तक ने प्रबन्ध वक्रता को कवियों की कीर्ति का प्रमुख कारण बताते हुए उसे महाकाव्य में स्थान दिया है[४]

आनन्दवर्धन ने महाकाव्य के आन्तरिक पक्ष रस को महत्वपूर्ण मानते हुए कुछ मुख्य तत्वों पर प्रकाश डाला है। कथानक में विभाव-भाव, अनुभाव एवं सञ्चारी भाव का औचित्य हो, कथानक में रसानुकूलता लाने के लिए कथा को अभीष्ट रस के अनुरूप बना लेना चाहिए, शास्त्रीय दृष्टि से एवं रसाभिव्यक्ति आदि का ध्यान रखते हुए सन्धियों तथा सन्ध्यंगों की संघटना होनी चाहिए। प्रबन्ध में आरम्भ से अन्त तक अंगीरस का अनुसंधान होना चाहिए एव मध्य में अवसरानुसार रस का ही उद्दीपन एव प्रशमन होना चाहिए, अलकार-योजना रसानुरूप होनी चाहिए[५]

इन आचार्यों के मतों को अपने महाकाव्य के लक्षण में समाहित करते हुए महाकाव्य का स्पष्ट, व्यापक, एवं सागोपाग लक्षण प्रस्तुत करने वाले "साहित्यदर्पणकार" आचार्य विश्वनाथ हैं। उनके अनुसार महाकाव्य का लक्षण देखिये—

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायक· सुर·।
सद्वंश· क्षत्रियो वापि धीरोदात्त गुणान्वित ।।
एकवंशभवाभूपा कुलजा बहवोऽपि वा।
श्रृंगारवीरशान्तानामेकोऽगीं रस इष्यते।।
अंगानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटक सन्धय·।
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्।।
चत्वारस्तस्या वर्गा· स्युस्तेष्वेक च फल भवेत्।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एवं वा।
क्वचिन्निन्दा खलादीना सतां च गुणकीर्तनम्।।
एकवृत्तमयै· पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकै·।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घा सर्गा· अष्टाधिका इह।।
नानावृत्तमयः क्वापि सर्ग, कश्चन दृश्यते।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथाया सूचनं भवेत्।।
सन्ध्यासूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासरा·।
प्रातर्मध्यान्हमृगयाशैलर्तुवनसागराः।।
सभोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वरा·।
रणप्रयाणोपयममन्त्रपुत्रोदयादयः।।
वर्णनीया यथायोग सागोपागा अमीइह।
कवे वृत्तस्य वा नाम्ना नायकस्येतस्य वा।।
नामास्य सर्गोपादेयकथया सर्गनाम तु।

—साहित्यदर्पण, ६/३१५-३२५

महाकाव्य सर्गबद्ध होता है। उसका एक नायक होता है। वह नायक या तो देवता होता है या फिर सद्कुल्पोत्पन्न क्षत्रिय होता है। और वह धीरोदात्त आदि गुणों से मण्डित होता है। उसका अंगीरस श्रृगार, वीर, शान्त में से कोई एक होता है। उसमें रस के समस्त अंगों विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी आदि का और मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण आदि सभी सन्धियों का वर्णन होता है। उसका कथानक इतिहास प्रसिद्ध अथवा किसी सज्जन पुरुष के जीवन चरित पर आधृत होता है। यद्यपि महाकाव्य में पुरुषार्थ चतुष्टय रूप चतुर्वर्ग का वर्णन होता है, किन्तु केवल एक ही वर्ग को फल की प्राप्ति के रूप में चित्रित किया जाता है' महाकाव्य के प्रारम्भ में आशीर्वादात्मक नमस्कारात्मक एवं वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया जाता है। महाकाव्य में दुष्टों की निन्दा एव सज्जन प्रशंसा का भी विधान है। प्रत्येक सर्ग किसी एक छन्द में निबद्ध होता है और सर्ग की

समाप्ति पर उसमें छन्द परिवर्तन किया जाता है। ये सर्ग संख्या में आठ होते हैं और न तो अधिक छोटे होते हैं, न अधिक विस्तृत होते हैं। किसी-किसी महाकाव्य के एक सर्ग में विभिन्न छन्दों की योजना होती है। सर्ग के अन्त में आगामी सर्ग की कथा की सूचना दी जाती है। महाकाव्य में सन्ध्या, चन्द्रमा, सूर्य, रात्रि, प्रदोष, अंधकार, दिन, प्रात:काल, मध्यान्ह, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, उपवन, सागर, सम्भोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह, सामदाम आदि उपायचतुष्टय पुत्रजन्म इत्यादि विषयों का वर्णन किया जाता है। महाकाव्य का नामकरण कवि के नाम पर, नायक के नाम पर अथवा अन्य किसी आधार पर भी किया जा सकता है। उसमें वर्णित विषय वस्तु के आधार पर सर्ग का नाम भी रखा जा सकता है।

उपर्युक्त आचार्यों द्वारा प्रस्तुत महाकाव्य के लक्षणों के आलोक में महाकाव्य के लक्षणों को संक्षेप में निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है—

(अ) सर्गबद्धता—

महाकाव्य सर्गबद्ध होता है। ये सर्ग संख्या में कम से कम आठ और अधिक से अधिक तीस हो सकते हैं। ये सर्ग न अधिक बड़े होते हैं और न अधिक छोटे।

(आ) महाकाव्य का प्रारम्भ—

महाकाव्य में प्रारम्भ में ईश-स्तुति, गुरुवन्दना तथा कथावस्तु के निर्देश के रूप में मंगलाचरण किया जाता है।

(इ) खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा—

महाकाव्य का प्रारम्भ दुष्टनिन्दा एवं सज्जनों की प्रशस्ति से होता है। इसके अतिरिक्त उसमें कवि की प्रशंसा भी हो सकती है।

(ई) ऐतिहासिक कथानक—

महाकाव्य का कथानक प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना अथवा महापुरुष के जीवन चरित्र पर आधृत होता है।

(उ) सन्धि संगठन—

महाकाव्य में नाटक की भाँति ही पञ्च सन्धियों का सन्नियोजन होता है।

(ऊ) छन्द—

महाकाव्य के पूर्ण सर्ग में एक ही छन्द होता है एवं सर्गान्त में छन्द परिवर्तन किया जाता है। किसी-किसी सर्ग में विभिन्न छन्दों की छटा दिखाई देती है।

(ऋ) रस—

महाकाव्य में शृंगार, वीर, अथवा, शान्त रस की प्रधानता होती है अथवा वह अंगीरस के रूप में वर्णित होते हैं तथा अन्य रसों का वर्णन प्रधान रस के सहायक के रूप में होता है।

(लृ) अलंकार—

महाकाव्य में अलंकारों का प्रयोग भी होता है। उसमें दुष्कर चित्रालंकारों की भी सुन्दर समायोजना परिलक्षित होती है।

(ए) नायक एवं प्रतिनायक—

महाकाव्य का नायक धीरोदात्त होता है। वह किसी उच्चवंश से सम्बन्ध रखता है। वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा देवकोटि का भी हो सकता है। इसके साथ ही उसमें कुलीन एवं गुणवान् प्रतिनायक का वर्णन भी होता है।

(ऐ) प्रकृति वर्णन—

महाकाव्य में सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, सन्ध्या, प्रदोष, अन्धकार, मध्यान्ह, प्रभात, समुद्र, पर्वत, वन, नदी, जलाशय, आश्रम, ऋतु आदि प्राकृतिक पदार्थों का वर्णन होता है।

(ओ) राजनैतिक तथा विविध व्यापार वर्णन—

महाकाव्य में मन्त्रणा, दूतप्रेषण, अभियान, रण प्रस्थान, युद्ध, उपायचतुष्टय, दिग्विजय, स्वर्ग, नगर, ग्राम, सम्भोग-विप्रलम्भ, कुमार जन्म, रतिक्रीड़ा, जल क्रीड़ा, पुष्पावचय, मधुपान, गोष्ठी, संगीत, यात्रा, विवाह इत्यादि का भी वर्णन रहता है।

(औ) अलौकिक एवं अति प्राकृतिक तत्त्व—

महाकाव्य में अलौकिक एवं अति प्राकृतिक तत्त्वों का वर्णन तो होता है, किन्तु मनुष्य द्वारा समुद्रों एवं कुलपर्वतों का लयन दिखाकर उसमें अस्वाभाविकता नही लानी चाहिए।

(अं) कथा सूचना—

महाकाव्य में प्रत्येक सर्ग के अन्त में आगामी सर्ग की कथा की सूचना दे देनी चाहिए।

(अः) महाकाव्य का नामकरण—

महाकाव्य का नामकरण किसी प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना पर या सज्जन व्यक्ति के नाम पर किया जाता है।

(क) सर्ग का नामकरण—

सर्ग में वर्णित विषय वस्तु के आधार पर सर्ग का नामकरण भी किया जाता है।

(ख) उद्देश्य—

महाकाव्य का कोई एक महान् उद्देश्य होता है और यह उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप पुरुषार्थ चतुष्टय में से किसी एक की फल-प्राप्ति के रूप में होता है।

(आ) सत्याग्रह गीता में महाकाव्यत्व की संगति

सत्याग्रह गीता का अध्ययन एवं मनन करने से यह तथ्य नितान्त सटीक लगता है कि यह महाकाव्य है। अत यह स्पष्ट करना जरूरी हो जाता है कि हमने किस आधार पर सत्याग्रह गीता को महाकाव्य की श्रेणी में रखा है–

सर्गबद्धता—

सत्याग्रह गीता तीन भागों में उपनिबद्ध एवं सर्गबद्ध महाकाव्य है। इसके प्रथम भाग सत्याग्रह गीता में १८ सर्ग, द्वितीय भाग उत्तरसत्याग्रह गीता में ४७ सर्ग एवं अन्तिम भाग स्वराज्य विजय. में ५४ अध्याय हैं। प्रस्तुत महाकाव्य के सर्गों का आकार भी समीचीन है। यद्यपि कोई-कोई सर्ग केवल ११ एवं १५ पद्यों में ही समा गया है और किसी सर्ग में ८७ एव ११७ पद्य भी हैं लेकिन विषय वस्तु को देखते हुए उन सर्गों के छोटे या बड़े होने से कोई अन्तर नहीं पड़ता है।

महाकाव्य का प्रारम्भ—

यद्यपि महाकाव्य का प्रारम्भ आशीर्वादात्मक एव वस्तुनिर्देशात्मक आदि मंगलाचरण के रूप में होता है, लेकिन कवयित्री ने काव्य का प्रारम्भ इस परम्परागत ढंग से न करके नवीन रूप में करते हुए अपनी विनम्रता का परिचय दिया है–

गम्भीरो विषय क्वायं श्रेष्ठ· सत्याग्रहात्मकः।
कृत्स्ने जगति विख्यात· क्व मे लघुतमा मतिः।।
शब्दागौरवहीनाह युद्धस्यैतस्य गौरवम्।
व्याख्यातुमसमर्थास्मि गुणैर्दिव्यैर्विभूषितम्।।
(सत्याग्रहगीता, १/१-२)

खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा–

पण्डिता क्षमाराव सज्जनों की प्रशंसा और दुर्जनों की निन्दा करने में कुशल हैं। उन्होंने महात्मा गाधी को, अन्य देशवासियों और देश को नुकसान पहुँचाने वाले एवं अपने देश के प्रति विद्वेष रखने वालों की जी भरकर आलोचना की है। उनमें डायर, लार्ड लोधी, मोहम्मद अली जिन्ना आदि हैं। इनके अलावा वह महात्मा गांधी, राजेन्द्र प्रसाद, जवाहर लाल नेहरु, मालवीय, किचल्यू और सत्यपाल जैसे महान् लोगों की प्रशंसा किये बिना भी नहीं रह पाते हैं।

कथानक—

सत्याग्रहगीता का कथानक ऐतिहासिक घटनाओं पर आधृत है। कवयित्री ने महात्मा गांधी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। अतः उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम की घटनाओं को भोगने के साथ-साथ उसमें भाग लेने वाले सेनानियों के प्रयास एवं उनके बलिदान को भी समीप से देखने का सुअवसर प्राप्त किया। इसका प्रमाण उनके प्रस्तुत काव्य से मिलता

है। इसमें महात्मा गाधी का जीवन-वृतान्त एवं उनके द्वारा देश को स्वतन्त्र करवाने के लिए किये गये कार्यकलापों का विवरण भी है। इसके ऐतिहासिक होने में तो कोई सन्देह है ही नहीं। कथा प्रारम्भ अफ्रीका में गाधी द्वारा चलाए गये सत्याग्रह से होता है और अन्त स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् गांधी के मृत्योपरान्त होता है।

नायक एवं प्रतिनायक—

प्रस्तुत महाकाव्य के नायक राष्ट्रपिता महात्मा गाधी हैं। इस महाकाव्य के नायक विलक्षण हैं। वह सत्य, अहिंसा एव सत्याग्रह पालक हैं। कवयित्री ने देश-विदेश आदि में गाधी द्वारा किये गये कार्यों पर सफलता दिखाकर उनकी विजय का दिग्दर्शन करवाया है। साथ ही उन्होंने तत्कालिक अंग्रेज शासक पर गाधी जी की विजय दिखाकर नायकाभ्युदय का भी चित्रण किया है। इसमें गाधी जी का विद्रोह किसी व्यक्ति विशेष से न होकर अग्रेज शासकों के अत्याचार एव उनकी दुर्नीति से है। अत: प्रतिनायक के रूप में अग्रेज शासकों को लिया जा सकता है।

छन्द—

इस महाकाव्य में विभिन्न छन्दो की भरमार नहीं है। कवयित्री ने तीन भाग वाले इस महाकाव्य को अनुष्टुप् छन्द में ही उपनिबद्ध किया है। केवल द्वितीय भाग उत्तरसत्याग्रहगीता के सैंतालीसवें अध्याय के इक्कीसवें यानि अन्तिम पद्य में मालिनी छन्द का प्रयोग किया है।

रस—

प्रस्तुत महाकाव्य में प्रधानता वीर रस की है। इस रस का वर्णन करने में कवयित्री विशेष रूप से कुशल हैं और अन्य रसों का वर्णन उन्होंने काफी कम किया है। कहीं-कहीं रौद्र रस, भयानक रस और करुण रस का भी सुन्दर समायोजन किया गया है।

अलंकार—

कवयित्री का अलंकारों के प्रति विशेष आग्रह नही है। उन्होने इस महाकाव्य में बहुत कम अलंकारों का प्रयोग किया है और जितना भी किया है वह काव्य को संवारता है, आकर्षित बनाता है। वह सहजता से बोधगम्य होता है। उन्होंने अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, दृष्टान्त, विभावना आदि अलंकारों का समुचित प्रयोग करके काव्य को सुन्दर रूप प्रदान किया है।

वर्ण्य विषय—

कवयित्री ने प्राकृतिक वर्णन विस्तार से तो नहीं किया है, किन्तु जितना भी है वह मुक्त कंठ से प्रशंसनीय है। उन्होंने सूर्य, चन्द्रमा एवं साबरमती का उल्लेख करके अपने प्रकृति प्रेम को दर्शाया है। उनके काव्य में कुछ ही स्थल हैं जहाँ पर प्राकृतिक वर्णन मिलता है। उदाहरण के लिए एक स्थल देखिये—"महात्मा गाधी बम्बई में कुछ दिन बिताकर साबरमती के किनारे सत्याग्रह आश्रम में गये। उनके प्रवास से जो नदी सूख सी गई थी वह

इसका नाम "स्वराज्य-विजय" रखा गया है और इनका समग्र नाम "सत्याग्रह काव्यम्" रखा गया है। स्पष्ट है कि महाकाव्य का नामकरण विषयवस्तु के आधार पर रखा गया है जोकि नितान्त उपयुक्त लगता है।

महाकाव्य के नामकरण के अलावा कवयित्री ने इतने सारे अध्यायों में (प्रथम भाग को छोड़कर) सभी का नामकरण किया है। उन नामों से ही काफी विषयवस्तु स्पष्ट हो जाती है। यथा—उत्तरसत्याग्रहगीता में भूमिकरस्यावितरणम् शासनभंगस्य निषेध-, "चम्पारण्ये", कृषीबलोद्बोधनम्", "शान्तिनिकेतनागमनम्", "जिन्नागान्धिसमागमः", "गान्धिजन्मोत्सव प्रस्ताव" और स्वराज्य विजय में देशखण्डन", "सत्याग्रहोपदेश", "शान्ति सन्देशः", "मदुरायात्रा', "कलकत्ता विप्लवः", "अन्तिमप्रायोपवेशनम्", "महात्मनो निर्वाणम् आदि नाम हैं।

उद्देश्य—

सत्याग्रह गीता का प्रमुख उद्देश्य है जन-जन के मन में राष्ट्र के प्रति प्रेम जागरित करना। इस विषय में कवयित्री ने स्वयं भी कहा है कि—

तथापि देशभक्त्याहं जातास्मि विवशीकृता।
अत एवास्मि तद्गातुमुद्यता मन्दधीरपि।।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/३)

अतः पुस्तक का निर्माण भी देशभक्ति भावना से प्रेरित होकर ही किया गया है साथ ही प्रस्तुत महाकाव्य से हमें यह भी शिक्षा मिलती है कि अस्त्र-शस्त्र के स्थान पर सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, शान्तिपूर्वक एवं ईश्वर पर विश्वास रखने से शीघ्र ही अभीष्ट की प्राप्ति होती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि सत्याग्रह-गीता नामक काव्य महाकाव्य की कसौटी पर खरा उतरता है। उसका उद्देश्य भी महान् है और उसमें वीर रस का जैसा सुन्दर निर्वाह हुआ है वह पूर्व के महाकाव्यों में नहीं दिखाई देता है।

अतः सत्याग्रह-गीता को "महाकाव्य" कहने में मुझे कोई सन्देह नहीं होता है।

(ग) सत्याग्रह गीता की रचयित्री का परिचय

रचयित्री की जन्म स्थली—

"सत्याग्रह गीता" नामक काव्य की रचयित्री और आधुनिक संस्कृत साहित्य की लब्ध प्रतिष्ठ दाक्षिणात्य विदुषी का जन्म महाराष्ट्र के अन्तर्गत "पूना" नामक पवित्र तीर्थ स्थान में हुआ था[७]।

रचयित्री के जन्म एवं वंश का विवरण—

सौभाग्यवती पण्डिता क्षमाराव का जन्म ४ जुलाई सन् १८९० को एक विद्वत्परिवार में हुआ था। कवयित्री के पिता का नाम पण्डित शंकर पाण्डुरंग था[८]। इस तथ्य का प्रमाण

स्वयं कवयित्री द्वारा विरचित सत्याग्रह के प्रस्तुत श्लोक से भी प्राप्त होता है—

"दुहिता शंकरस्याहं पण्डितस्य क्षमाभिधा।"
—सत्याग्रह गीता, १/४

पण्डित शंकर पाण्डुरंग अंग्रेजी, संस्कृत, मराठी एवं अन्य अनेक भाषाओं पर अपना समान अधिकार रखते थे[९]। साथ ही उनमें स्वदेश निष्ठा एवं स्वदेशाभिमान की भावना तो कूट-कूटकर भरी हुई थी[१०]। उनकी इन विद्वत्ता एवं राष्ट्रभक्ति का प्रभाव उनकी पुत्री पर पड़ना स्वाभाविक था। उनकी माता "उषा" नाम के अनुरूप ही गुणों से भी अलंकृत थी[११]।

शिक्षा-दीक्षा—

पण्डिता क्षमाराव को हिन्दी, संस्कृत एवं मराठी का ज्ञान तो अपने पूज्य पिता श्री पाण्डुरंग से विरासत में मिला था। उन्हें पिता से प्रेरणा एवं आशीर्वाद प्राप्त हुआ, किन्तु पिता के असामयिक निधन से आपको अध्ययन में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा। पण्डिता क्षमाराव विद्यार्थी जीवन से ही अतीव विदुषी थीं। उन्हें अंग्रेजी एवं संस्कृत विषयों पर तो कमाल हासिल था। उन्हें मैट्रिक तक प्राप्त शिक्षा में अंग्रेजी एवं संस्कृत विषयों पर विशेष योग्यता प्राप्त हुई। शिक्षा के प्रति उनके असीम अनुराग ने उन्हें शिक्षा प्राप्ति हेतु बम्बई के विलसन कॉलेज में प्रवेश लेने को मजबूर कर दिया।[१२]।

वैवाहिक जीवन—

विलसन कॉलेज में प्रवेश लेने के साथ ही पण्डिता क्षमाराव का विवाह गुणसम्पन्न सुयोग्य वर राघवेन्द्र राव एम.डी. के साथ हो गया था। परिणामतः आपके अध्ययन कार्य में बाधा उपस्थित हो गई[१३]।

कार्यक्षेत्र—

पण्डिता क्षमाराव की मातृभाषा मराठी होने के कारण एवं संस्कृत एवं अंग्रेजी में दक्षता होने के कारण उनकी रचनाओं में तीनों ही भाषाओं का प्रभाव देखने को मिलता है[१४]। उन्होंने तीनों ही भाषाओं पर काव्य-सृजन किया है। किन्तु उनके अधिकांश काव्य संस्कृत साहित्य को समृद्धि प्रदान करते हैं। इसकेअतिरिक्त उन्होंने गुजराती भाषा का भी यथोचित ज्ञान प्राप्त किया था। उन्होंने सर्वप्रथम अंग्रेजी भाषा में १९२० से लेकर १९३० तक लघु कथाएं *(Short Stories)* लिखीं किन्तु धीरे-धीरे उनका रुझान संस्कृत भाषा की ओर बढ़ता गया और सन् १९३१ से लेकर मरणोपरान्त आप संस्कृत भाषा को समृद्धिशाली बनाने में लगीं रहीं। सन् १९२६ में पण्डिता क्षमाराव ने राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लेने के लिए गाधी द्वारा स्थापित साबरमती आश्रम में प्रवेश किया, किन्तु गाधी जी ने उन्हें अस्वस्थ देखकर प्रस्तुत कार्य में भाग लेने के लिए मना कर दिया। किन्तु किसी के मन में उत्पन्न सेवा भावना को रोकने की सामर्थ्य किसी में नहीं हो सकती। अतः कवयित्री भी इस तथ्य का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। उन्होंने काव्य-सृजन के माध्यम

से न केवल संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाने में अपूर्व योगदान दिया है, अपितु उसके माध्यम से उन्होंने राष्ट्र को जो सेवा की है वह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है [१५]।

इसके अतिरिक्त सौभाग्यवश आपको विद्यालंकार पण्डित नागण्य शास्त्री गुरु के रूप में मिल गए। उन्होंने आपको न केवल काव्य-सृजन हेतु प्रेरित किया, अपितु उनकी कृतियों में संशोधन एवं परिमार्जन करके उनका महान् उपकार किया [१६]।

पण्डिता क्षमाराव ने संस्कृत की कुल मिलाकर ५० से अधिक कृतियों की रचना की है [१७]। इनमें से केवल १२ कृतियाँ प्रकाशित हैं अन्य कृतियों का प्रकाशन नहीं हो पाया है। इन अप्रकाशित कृतियों में ९ एकांकी, ४ नाटक एवं ३५ लघु कथाएं एव निबन्ध हैं [१८]।

पण्डिता क्षमाराव ने गांधी जी के जीवन से प्रभावित होकर उनके सम्पूर्ण जीवन को तीन भागों में विभक्त काव्य सृजन द्वारा उद्घाटित किया है। उन्होंने अहिंसात्मक आन्दोलन से लेकर सन् १९३१ के गांधी इरविन पैक्ट तक का ब्यौरेवार विवरण "सत्याग्रह-गीता" नामक कृति के द्वारा किया है। द्वितीय भाग "उत्तरसत्याग्रहगीता" का सृजन १९३१ से लेकर १९४४ तक का वर्णन प्रस्तुत किया है और अन्तिम भाग स्वराज्य विजय में भारत की स्वतन्त्रता एवं स्वतन्त्र भारत का स्वरूप चित्रित किया है। इन कृतियों का प्रकाशन क्रमशः १९३२, १९४८, १९४९ में बम्बई से हुआ है। उन्हें इस काव्य कृति के द्वितीय भाग उत्तर सत्याग्रह गीता के लिए १९४४ में मद्रास में आयोजित एक समारोह में की गई प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने के उपलक्ष्य में पुरस्कृत किया गया।

इससे पूर्व सन् १९३८ में उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर अवध संस्कृत कल्याण परिषद् ने आपको मानद उपाधि एवं १९४२ में साहित्य-चन्द्रिका की सम्माननीय उपाधियों से विभूषित किया [१९]।

उन्होंने पद्यात्मक कथाओं को "कथापञ्चकम्" नामक काव्य में उपनिबद्ध किया है औरइसका प्रकाशन सन् १९३४ में बम्बईसे हुआ है [२०] "विचित्र परिषद्" यात्रा नामक काव्य में ऑल इण्डिया आरिएण्टल (All India Oriental) में हुए अपने अनुभवों को उल्लिखित किया है। इसका प्रकाशन भी बम्बई से ही सन् १९३८ को हुआ है [२१]।

अपने पूज्य पिता श्री पाण्डुरंग का जीवन चरित प्रस्तुत करने के लिए आपने अनुष्टुप् छन्द में उपनिबद्ध "शंकरजीवनाख्यानम्" नामक पद्य काव्य की सर्जना की है [२२]। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत काव्य के माध्यम से संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग रखने वाले स्वदेशाभिमान को जागरित करने का प्रयास किया है। अंग्रेजों द्वारा की जाने वाली कुप्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला है, जोकि हमारे मन में अंग्रेजों के प्रति विद्रोह की भावना भरती है [२३]।

सन्१९४४ में आपने मीरा के जीवन वृत्त पर आधृत मीरा लहरी नामक काव्य का सृजन किया। इसको पढ़कर ऐसा लगता है कि जैसे कवयित्री ने स्वयं अपना जीवन

ही लिख डाला है [२४]।

सन् १९४५ में कवयित्री ने "कथामुक्तावली" नामक १५ गद्यात्मक कथाओं का संग्रह की रचना की है [२५]। प्रस्तुत कृति में समाज में परिव्याप्त विभिन्न कुरीतियों की ओर प्रकाश डाला गया है।

कवयित्री की प्रस्तुत कृति को उनके द्वारा विरचित काव्य कृतियों में सर्वाधिक पसंद किया जाता है [२६]।

सन् १९४७ में सन्तकवि तुकाराम के जीवन का अतीव हृदयस्पर्शी वर्णन "श्रीतुकारामचरितम्" नामक महाकाव्य के द्वारा किया गया है। इसका प्रकाशन सन् १९५० में हुआ था [२७]।

सन् १९५४ में कवयित्री ने कलकत्ता एवं गुजरात की ग्रामीण जनता द्वारा किये गये बलिदान की तीन कथाओं का "ग्राम ज्योति" नामक पद्यमय काव्य द्वारा उद्घाटित किया है [२८]। उन्होंने सन्त श्रीरामदास के जीवन चरित को "श्रीरामदासचरितं" नामक महाकाव्य द्वारा अतीव मनोहारी ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत काव्य का प्रकाशन १९५३ में हुआ है [२९]। प्रस्तुत काव्य के माध्यम से पण्डिता क्षमाराव ने यवनों द्वारा देश एवं देशवासियों पर होरहे अत्याचारों एवं उनके द्वारा की गई देश की दुर्दमनीय दशा से विक्षुब्ध होकर श्रीरामदास द्वारा देश की रक्षा हेतु जो व्रत लिया गया उसका वर्णन किया है साथ ही प्रस्तुत काव्य के नायक के प्रसंग में भारत के अनेक स्थानों को उल्लिखित करके पाठक के हृदय में भारतीयता के भाव को जगाया है [३०]।

इसके अतिरिक्त उनकी प्रकाशित कृतियों में "श्री ज्ञानेश्वरचरितम्" नामक महाकाव्य भी है। आठसर्ग वाले इस महाकाव्य में सन्त ज्ञानेश्वर का जीवन चरित है [३१]।

व्यक्तित्व—

पण्डिता क्षमाराव का व्यक्तित्व निराला था। सौन्दर्य की तो मानो वह साक्षात् प्रतिमा थीं। वास्तव में सौन्दर्य उन्हें अपनी माता शोभा गोजरा "उमा" से विरासत में मिला था—

> "शुचिस्मित जुषस्तस्याः सुन्दर्याः शान्तचेतसः।
> उप शोभा विशिष्टत्वाः "उमा" नाम चकार सः।।

वह अपनी माता के ही समान सुकुमार एवं कमल के समान कोमल नेत्रों वाली थीं। स्वदेशाभिमान की भावना तो उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने देश के प्रति उन्हें विशेष लगाव है। वह प्रतिक्षण इस विचार में ही निमग्न रहती है कि देश के हितार्थ वह किस प्रकार प्रयत्न करें। उन्होंने स्वदेशाभिमान की भावना से ही काव्य सृजन भी किया जिसका प्रमाण उनकी कृति से मिलता है।

अवसान—

महान् विदुषी क्षमाराव का अवसान २२ अप्रैल १९५४ को हुआ। उनका देहावसान श्री ज्ञानेश्वर चरितम् नामक काव्य सृजन के एक सप्ताह पश्चात् हुआ [32]। उनकी मृत्यु से संस्कृत साहित्य को जो क्षति पहुँची है, उसका वर्णन किया जाना असम्भव है।

(क) गांधी-गीता का कथानक

प्रथम अध्याय—

महात्मा गांधी ने भारतभूमि को परतन्त्रता से मुक्त करवाने की इच्छा से तत्कालीन शासक वर्ग द्वारा निर्मित नमक कानून के विरोध के लिए समस्त भारतीयों का आह्वान किया और नमक निर्माण के लिए डॉडी मार्च का आयोजन किया। उनके कुछ साथी शस्त्र-युक्त शासक वर्ग के विरोध में शस्त्र-विहीन होकर किये जाने वाले युद्ध की सफलता पर सन्देह करते हैं किन्तु गाधी पूर्णरूपेण आश्वस्त हैं कि नि शस्त्र होकर किये युद्ध में सफलता अवश्यम्भावी है।

द्वितीय अध्याय—

उनका कहना है कि हमारे लिए परतन्त्रता अभिशाप है। अत उससे मुक्ति पाने के लिए हमें अपने प्राणों की आहुति देने को भी तत्पर रहना चाहिए, देशद्रोह नही करना चाहिए। इसके साथ उन्होंने देशवासियों में उत्साह भरने का भी प्रयास किया।

तृतीय अध्याय—

उन्होंने प्रेम एवं सेवा भाव को राष्ट्रधर्म बताते हुए राष्ट्र के प्रति आदर भाव जागरित करने का प्रयास किया और राष्ट्रोद्धार हेतु भ्रातृत्व भाव का सञ्चार भी किया।

चतुर्थ अध्याय—

उन्होंने कार्य को प्रकृति के आधार पर सतोगुण, तमोगुण एव रजोगुण आदि तीन भागों में विभक्त करके सतोगुण की प्रधानता पर बल देते हुए निष्काम कर्म करने पर बल दिया।

पञ्चम अध्याय—

सतोगुण पर आश्रित मनुष्यों के संगठन पर तमोगुण एवं रजोगुण युक्त सैनिक बल भी विजय प्राप्त नहीं कर सकता है।

षष्ठ अध्याय—

ब्रिटिश साम्राज्य के दुश्शासन के परिणाम स्वरूप भारतीय प्रजा को महती हानि हुई।

सप्तम अध्याय—

महात्मा गाधी ने अंग्रेज सरकार के साथ असहयोग करने एवं विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार हेतु समस्त भारतीयों का आह्वान किया।

अष्टम अध्याय—

गाधी जी का कहना है कि अंग्रेजी शासन के साथ हम अपनी वेष-भूषा और भाषा के विषय में भी सचेत नहीं रहते है। हम अपनी सस्कृति को भूलकर उन्हीं की संस्कृति के अनुसार जीवन-यापन करते हुए सुख का अनुभव करते हैं और आपस में भेदभाव रखते हैं। अगर हम अपने देश की उन्नति चाहते हैं तो भेदभाव भूलकर एकजुट होकर कार्य करना चाहिए और जहाँ तक हो सके अपनी संस्कृति के अनुसार ही जीवन-यापन करना चाहिए।

नवम अध्याय—

हमें अपने परिवार, बन्धु-बान्धवों और राष्ट्र की सेवा करनी चाहिए। ऐसा कार्य कदापि नहीं करना चाहिए जोकि राष्ट्र विरोधी हो।

दशम अध्याय—

साथ ही हमें राष्ट्र धर्म का पालन करना चाहिए। आज जितने भी राष्ट्र उन्नति के उच्च शिखर पर हैं वह राष्ट्र धर्म के बल पर ही। समस्त वर्ग के लोगों को समान मानना चाहिए, व्यक्तिगत स्वार्थका परित्याग कर देना चाहिए और शत्रुपक्ष को सलाह देने वाले राष्ट्र रिपु को ही समाप्त कर देना चाहिए तभी हमें परतन्त्रता से मुक्ति मिल सकती है और स्वतन्त्रता की प्राप्ति हो सकती है।

एकादश अध्याय—

अंग्रेज भारत में व्यापार करने के लिए आए थे, किन्तु भारतीयों के आपसी कलह का लाभ उठाकर उन पर शासन करने लगे। फलत भारतीयों के लिए उनके शासन में रहना अतीव कष्टप्रद होने लगा। उनके शासन से छुटकारा दिलवाने के लिए और राष्ट्र के कल्याण को दृष्टिपथ पर रखते हुए ह्यूम नामक राजपुरुष के साथ मिलकर भारतीय नेताओं ने समिति का गठन किया। विवेकानन्द जैसे महान् नेता ने एकता, राष्ट्रीय-भावना और धर्म के प्रति लोगों में आस्था जगाई।

द्वादश अध्याय—

गाधी जी का विचार था कि सभी धर्मों के लोग ईश्वर के प्रति समान रूप से श्रद्धा रखते हैं भले ही उनके नाम पृथक्-पृथक् हों।

अतः सब धर्मों का समान रूप से आदर करते हुए अपने धर्म के प्रति आस्था रखते हुए ईश्वर के द्वारा प्रेरित कार्य को स्वयं को उसका निमित्त मानते हुए प्रसन्नता पूर्वक करना चाहिए क्योंकि उसकी अनुकम्पा से ही कार्य सम्पन्न होता है। साथ ही उनका कहना था कि स्व धर्म का पालन करते हुए राष्ट्र धर्म का पालन भी करना चाहिए। ईश्वर अधिष्ठान लोक-कल्याण के लिए होना चाहिए। उसमें भेद करने से अनवस्था हो सकती है। परधर्म के प्रति असहिष्णु नहीं होना चाहिए। सुख-शान्ति की कामना हो तो द्रोह से बचना चाहिए और अपना एवं दूसरों का कल्याण करने के लिए ईश्वर के प्रति श्रद्धा बनाए रखनी चाहिए।

त्रयोदश अध्याय—

जो अपने सुख की परवाह नहीं करता है, जिसे न तो धनार्जन की चिन्ता है और जो

केवल राष्ट्र एवं प्रजा के हित में ही संलग्न रहता है, परोपकार में ही प्रसन्नता का अनुभव करता है वह निश्चय ही स्तुत्य है।

चतुर्दश अध्याय—

महात्मा गांधी का कहना है कि परतन्त्रता के कारण भारत की जो वैभवशालिता नष्ट प्राय हो गई थी उसे पुनर्जागरित करने के लिए महान् कवि रवीन्द्रनाथ एवं प्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीश आदि तन-मन से प्रयत्नशील हैं। उनके सत्प्रयास से ही राष्ट्र में सुख का वास होगा, शास्त्र एवं कला का विकास होगा और समस्त प्रजा उन्नत होगी। अतः वह सभी नेतृ वर्ग प्रशंसा के पात्र हैं जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से देश को अपनी सेवा प्रदान की है।

पञ्चदश अध्याय—

महान् पुरुष फल की प्राप्ति होने तक अपना कार्य जारी रखते हैं और इसके लिए किसी से सहायता की अपेक्षा नहीं रखते हैं। वह सदैव दूसरा के उपकारार्थ कार्य करते हैं। निश्चय ही ऐसे पुरुष ईश्वर के पुनांश से ही निर्मित होते हैं।

षोडश अध्याय—

राष्ट्र के हित के लिए कर्म-फल के प्रति अनासक्ति होनी चाहिए। उसका कल्याण तभी होगा जबकि हम मृत्यु, क्लेश, निन्दा, राजदण्ड आदि के भय से मुक्त होकर स्थिर बुद्धि से कार्य करेंगे। क्षमा, शान्ति और द्रोह न करने से सुख-समृद्धि प्राप्त होती है। परोपकार में रत रहने वाला अपनी चिन्ता नहीं करता है। वह केवल दैवीय वृत्ति में ही प्रवृत्त होता है जिससे मातृभूमि का कल्याण हो।

सप्तदश अध्याय—

स्वयं भारतमाता ने मानव रूप में उपस्थित होकर भारतभूमि के दासता की जञ्जीरों में जकड़े होने पर खेद प्रकट किया है आशा की है कि लोकमान्य तिलक, लाजपतराय, विपिन चन्द्र पाल आदि के प्रयासों से भारतीयों की विजय होगी और भारत देश परतन्त्रता की जञ्जीरों से अवश्य ही मुक्त हो जायेगा।

अष्टदश अध्याय—

भारतमाता स्वार्थ सिद्ध में तत्पर भारतीयों की कटु आलोचना करते हुए उन्हें राष्ट्रकल्याण के लिए गांधी के मार्ग का अनुकरण करने की प्रेरणा देती है। जिससे प्रेरित होकर वह अपने प्राणों की बाजी लगाने को भी तैयार हो जाता है।

नवदश अध्याय—

अंग्रेज शासक भारतीयों के आपसी कलह को देखकर विचार करता है कि महात्मा गाधी का प्रयास निष्फल हो जायेगा और हम ही चिरकाल तक भारतीयों पर शासन करेंगे।

विंश अध्याय—

द्वितीय युद्ध के पश्चात् महात्मा गाधी "भारत छोड़ो" आन्दोलन के सन्दर्भ में "करेंगे या मरेंगे" का नारा लगाते हुए बन्दी बना लिए गये। इतना होना ही पर्याप्त नहीं था। कारागृह

में रहते हुए ही उनकी सहगामिनी की मृत्यु हो गई जिससे वह व्यथित हो गए।

एकविंश अध्याय—

कारागृह से मुक्त होकर वह पुन: राष्ट्र कार्य में प्रवृत्त हो गए लेकिन जिन्ना गांधी जी से सहमत नहीं थे वह मुसलमानों का हित पाकिस्तान बनाने में ही समझते थे। इसी भावना से हिन्दू-मुस्लिम झगड़े होने लगे और वेवल के स्थान पर माउण्टवेटन वायसराय का पद संभालने के लिए भारत आए।

द्वाविंश अध्याय—

भारतीय नेताओं के काफी प्रयत्न के बावजूद जिन्ना के दुराग्रह एव अंग्रेजों की "फूट डालो" नीति के दुष्परिणाम स्वरूप भारत अनेक टुकड़ों में विभक्त हो गया। यह अतीव दु:ख का विषय है।

त्रयोविंश अध्याय—

भारत विभाजन के सिलसिले में साम्प्रदायिक दंगे होने लगे। साम्प्रदायिक दंगों से विक्षुब्ध होकर गाधी जी ने लोगों को समझाया कि प्रेम एव अहिंसा के बल पर शत्रु पर विजय प्राप्त की जा सकती है और साथ ही उन्होंने साम्प्रदायिक सद्भाव बनाये रखने की आकांक्षा से अनशन प्रारम्भ कर दिया। इसी सन्दर्भ में आप नित्य प्रार्थना सभाएं किया करते थे। तभी किसी दुरात्मा ने उन पर बम फेंककर मारने का प्रयास किया किन्तु असफल रहा। उसके कुछ ही दिन पश्चात् नाथूराम गोड्से नामक एक हिन्दू ने गोली मारकर उनकी हत्या कर दी। यह बात अतीव कष्टदायिनी है। आशा है कि समस्त मानव जाति का कल्याण करने वाले का नाम सदैव अमर रहेगा।

चतुर्विंश अध्याय—

अन्त में कवि ने गाधी जी की मृत्यु पर गहरा शोक व्यक्त किया है और भारत-पाक विभाजन को देश के लिए अतीव हानिकारक स्वीकार किया है। साथ ही यह कामना की है कि हम सभी आपसी भेदभाव का परित्याग करके एक ऐसे समाज की स्थापना करें जिससे समस्त मानव जाति का कल्याण हो एवं उनके मार्ग का अनुकरण करके हमारा भारत राष्ट्र उन्नति के पथ पर बढ़ता हुआ सदा विजय प्राप्त करे।

(ख) गांधी-गीता में महाकाव्यत्व की संगति

गाधी गीता के अध्ययन एवं मनन से यह स्पष्ट होता है कि यह एक महाकाव्य है। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि मैं इसकी महाकाव्यगत विशेषताओं को प्रकाशन में ले आऊं जिससे कि उसके महाकाव्य होने में कोई सन्देह न रह जाए। तो लीजिए प्रस्तुत है गाधी-गीता की कुछ विशेषताएं—

सर्गबद्धता—

गाधी-गीता भी सर्गबद्ध महाकाव्य है। यद्यपि इसको सर्गों में न बाँटकर अध्यायों में बाँटा गया है तथापि स्वरूप तो वही है। गाधी-गीता में २४ अध्याय हैं। ये सभी अध्याय

आकार की दृष्टि से भी उपयुक्त हैं।

महाकाव्य का प्रारम्भ—

गांधी-गीता का प्रारम्भ भी कवि ने मगलाचरण से किया है। यह महाकाव्य भी वस्तुनिर्देशात्मक मगलाचरण से प्रारम्भ होता है। इसमें मगलाचरण कुछ नवीन ढग से किया गया है यथा—

ॐ आतार्य प्रतिबोधिता भगवता गाधी मुखेन स्वय
सद्यः संग्रथिता यथार्थमतिना लोकस्य चोद्दीपिनीम्।
सत्यार्थ प्रतिपादनीं भगवतीं राष्ट्रैक्यसजादिनी
मन्ब त्वामनुसंदधामि विमते गीतेऽनृतद्वेषिणीम्।।

—(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, अधध्यायनम्, पद्य स०-१)

इसके पश्चात् कर्मचन्द्र के पुत्र लोकनायक एव महात्माओ में श्रेष्ठ गाधी की वन्दना की गई है—

कर्मचन्द्रसुतं धीर मोहनं लोकनायकम्।
महात्मानं सता श्रेष्ठं गाधी बन्दे जगद्गुरुम्।। (वही, वही, पद्य स०-२)

खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा—

महाकवि ने गाधी-गीता में राज्य के मद में अन्धे तात्कालिक ब्रिटिश शासकों को, लार्ड कर्जन, महात्मा गांधी की हत्या करने वाले नाथूराम गोड्से को और भारत विभाजन के लिए दुराग्रह करने वाले मोहम्मद अली जिन्ना को जी भर कर आलोचना की है। महात्मा गांधी, दादाभाई नौरोजी, लाजपतराय, मालवीय, जवाहर लाल नेहरु, मोतीलाल नेहरु, सुभाष चन्द्र बोस, स्वामी विवेकानन्द आदि उन्नायकों की देश प्रेम की भावना और उनके बलिदान की अत्यधिक प्रशंसा की है।

कथानक—

गाधी-गीता का कथानक स्वतन्त्रता संग्राम की घटनाओं पर आधृत है। इसमें गाधी द्वारा किये गए डाँडी मार्च से लेकर उनके मरणोपरान्त तक का वर्णन है। परतन्त्रता के क्या-क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं इसका विवेचन करते हुए शीघ्र ही स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किये जाने वाले प्रयासों के विषय में प्रकाश डाला गया है। स्पष्ट है कि प्रस्तुत काव्य-कृति का कथानक महात्मा गाधी के राजनैतिक विचारों पर आधृत है।

नायक एवं प्रतिनायक—

गांधी-गीता के नायक भी महात्मा गांधी हैं। उनमें राष्ट्रप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। उन्हें अपने देश की पराधीनता से और भेदभाव से अतीव कष्ट होता है और वह इस पराधीनता और भेदभाव की खाई को समाप्त करने का यथासम्भव प्रयास करते हैं। वह सत्य अहिंसा के मार्ग पर चलना अधिक श्रेयस्कर मानते हैं। महात्मा गाधी राष्ट्ररिपु को दण्ड देने में भी नहीं हिचकिचाते हैं। इसके अलावा वह अंग्रेजी शासन पर विजय प्राप्त करके

देश को स्वतन्त्रता दिलवाकर उसे उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचाने का सत्यप्रयास करते हैं। इस तरह काव्य में नायकाभ्युदय दिखाकर काव्य को परम्परागत रूप प्रदान किया गया है। इसमें भी प्रतिनायक किसी एक विशेष व्यक्ति को न मानकर तात्कालिक अंग्रेज शासक वर्ग की दुष्प्रणाली और अन्यायो एव अत्याचारों को माना गया है।

छन्द—

छन्द के सम्बन्ध में कवि स्वच्छन्द है। उन्होंने प्रस्तुत महाकाव्य में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग बहुलता से किया है, किन्तु यह नही कहा जा सकता कि कवि को छन्दों का ज्ञान नहीं था या उन्होंने छन्दों के प्रयोग में काव्यशास्त्र की अवहेलना की हो। इसका कारण यह है कि उनके काव्य की विषय वस्तु ही कुछ ऐसी है कि उसमें छन्द प्रदर्शन का अवकाश ही नहीं है। उन्होंने अथध्यानम् में, प्रथम पद्य में शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग किया है। साथ ही उपजाति, इन्द्रवज्रा छन्दो का प्रयोग भी दो-तीन स्थानों पर किया है और सत्रहवें अध्याय के कुछ पद्यों में शालिनीछन्द का प्रयोग करके छन्दो-ज्ञान का परिचय दिया है।

रस—

इस महाकाव्य में वीर रस की प्रधानता है। कहीं-कहीं पर शान्त एव करुण रस भी दृष्टिगोचर होता है।

अलंकार—

ताडपत्रीकर ने अलकारों का प्रयोग बहुत कम किया है। उनके काव्य में उपमा, रूपक, एकावली, अर्थान्तरन्यास एवं दृष्टान्त आदि अलकार बहुत कम स्थानों में प्रयुक्त हुए हैं। किन्तु जितने भी हैं वह काव्य की शोभा बढ़ाने में सक्षम हैं।

वर्ण्य विषय—

वैसे तो महाकवि को प्रकृति वर्णन करने का अवकाश नहीं है फिर भी उन्होंने सूर्योदय, सूर्यास्त, पर्वत, सागर और ब्रह्मपुत्र, गंगा आदि नदियों का उल्लेख करके काव्य को प्रकृति वर्णन से अछूता नहीं रखा है।

अन्य वर्णन—

अन्य वर्णन में कवि काफी कुशल हैं। उन्होंने भारतदेश, बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र, पाकिस्तान आदि विभिन्न स्थानों का उल्लेख किया है और गांधी की यात्राओं, उपदेशों का वर्णन अतीव सुन्दर किया है और गाधी जी की मृत्यु तथा देश का जो आदर्श प्रस्तुत किया है वह निश्चय ही सराहनीय है।

सन्धि संगठन—

प्रस्तुत महाकाव्य में गाधी जी का डाँडी-मार्च के लिए भारतीयों का आह्वान करना, उन्हें एकता एवं स्वतन्त्रता के महत्त्व को समझाना, आपसी भेदभाव एवं कलह को हानिकारक बताना, देश के उन्नायकों का आत्म बलिदान और आपसी कलह एव भारत विभाजन, साम्प्रदायिक दंगों से सफलता में सन्देह होने पर एकता स्थापित करने के प्रयासों में नायकों

के कारागृह जाने से स्वतन्त्रता प्राप्ति की आशा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है और अन्त में देश को स्वतन्त्रता की प्राप्ति होती है। ये क्रमशः मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण सन्धि हैं।

महाकाव्य एवं सर्ग का नामकरण—

प्रस्तुत महाकाव्य में गान्धी द्वारा भारतमाता की मुक्ति के सन्दर्भ में भारतवासियों को उपदेश दिया गया है और उनके समक्ष राष्ट्रनेताओं के बलिदान एवं अंग्रेज शासन वर्ग के अत्याचारों को सहन न करने और अपने अधिकारों के लिए लड़ने की प्रेरणा दी गई है। अतः स्पष्ट है कि जैसे श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध करने का उपदेश दिया था, उस विषय में रचित काव्य "श्रीमद्भगवद्गीता" नाम से अभिज्ञ है वैसे ही उस शैली का अनुकरण करने वाली कृति का नाम "गांधी-गीता" रखा गया है। साथ ही प्रत्येक अध्याय का भी नामकरण उसकी विषय वस्तु के आधार पर किया गया है। प्रथम अध्याय में लवण में कर लगाया जाना और उससे दुःखी होकर गांधी जी का उसके विनाश के लिए तैयार हो जाने के लिए "भारतीयविषादयोग" नाम रखा गया है। द्वितीय अध्याय में परतन्त्रता से उत्पन्न दोषों पर प्रकाश डाला गया है अतः उसका नाम "पारतन्त्र्ययोग" है। इसी तरह तेइसवें अध्याय में गांधी का अवसान और चौबीसवें अध्याय में राष्ट्र की कल्याण कामना है अतः उनका नाम क्रमशः "आपद्योग" और "सर्वमंगल योग" रखा गया है

उद्देश्य—

गांधी-गीता महात्मा गांधी के राजनैतिक विचारों की परिपोषिका है। अतः उसमें राष्ट्र के प्रति प्रेम भाव का अपूर्व सन्निवेश है वह हमें अपने व्यक्तिगत धर्म, जातिगत धर्म, पारिवारिक धर्म का पालन करने की प्रेरणा देती है और उससे भी अधिक वह राष्ट्र धर्म के पालन पर महत्त्व देती है ... भावना जागरित होती है, निष्काम कर्म करने की प्रवृत्ति होती है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर ... गीता को महाकाव्य की श्रेणी में रख सकते हैं।

(ग) गांधी-गीता के रचयिता का परिचय

गांधी-गीता के रचयिता श्रीनिवास ताडपत्रीकर हैं। ताडपत्रीकर दक्षिणात्य महाकवि हैं। आप "भण्डारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना" में रहते हुए संस्कृत भाषा को अपनी सेवाएं प्रदान करते रहे हैं। गांधी-गीता की रचना कवि ने १९३२ ई. में पूर्ण कर ली थी किन्तु उस समय उसमें केवल अट्ठारह अध्याय ही थे। सन् १९४८ में महात्मा गांधी का स्वर्गवास हो जाने पर दादा साहब का सुझाव मानकर उसमें छह अध्याय और जोड़ दिए और इस तरह उन्होंने गायत्री मन्त्र के अक्षरों की भाँति ही चौबीस अध्याय में काव्य का समापन किया। १९४० में "ओरिएण्टल बुक एजेन्सी" से इसका प्रकाशन भी हो गया [33]। उन्होंने प्रस्तुत पुस्तक को राष्ट्रभक्तों के नाम अर्पित कर दिया—

'सर्वेभ्यो राष्ट्रभक्तेभ्यो मया गीतेयमर्प्यते ।
प्रीयता च सदा तेन महात्मा परलोकगः ।।

—श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गांधी-गीता, समर्पण से उद्धृत

काफी प्रयास के बावजूद भी श्री निवास ताडपत्रीकर के जीवन-वृत्तान्त पर जानकारी प्राप्त नहीं कर पायी। अतः यहाँ पर पुस्तक के रचयिता का नाम देकर ही मुझे सन्तोष करना पड़ रहा है।

(क) श्रीमहात्मगान्धिचरितम् का कथानक

प्रस्तुत महाकाव्य भारत पारिजातम्, पारिजातापहार, पारिजात सौरभम् इन तीन नामों से तीन भागों में उपलब्ध होता है। इन तीन भागों का समग्र नाम "श्री महात्मगान्धिचरितम्" है।

प्रस्तुत काव्य का कथानक मैं अलग से प्रस्तुत नहीं कर रही हूं क्योंकि इसमें उल्लिखित घटनाएं अन्य काव्यों में भी वर्णित हैं। जो थोड़ा सा अन्तर है उसका स्पष्टीकरण काव्य विधा के विवेचन से हो जाएगा।

(ख) श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में महाकाव्यत्व की संगति

महाकाव्य की पूर्वोक्त विशेषताओं के आलोक में श्रीमहात्मगान्धिचरितम् का पर्यावलोकन करने से यह तथ्य प्रस्फुटित होता है कि यह एक महाकाव्य है। अतः मैं विद्वद् मण्डलीके परितोष हेतु श्रीमहात्मगान्धि चरितम् की महाकाव्यगत विशेषताओं को प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ—

सर्गबद्धता—

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् तीन भागों में उपनिबद्ध सर्गबद्ध महाकाव्य है। इसके प्रथम भाग भारत-पारिजातम् में २५ सर्ग, द्वितीय भाग पारिजातापहार में २९ सर्ग एवंपारिजात-सौरभम् में २० सर्ग हैं। ये सर्ग आकार के दृष्टिकोण से भी समीचीन प्रतीत होते हैं।

महाकाव्य का प्रारम्भ—

काव्य का प्रारम्भ परम्परागत रूप से आशीर्वादात्मक एवं वन्दनात्मक मंगलाचरण के माध्यम से हुआ है। महाकवि स्वामिश्रीभगवदाचार्य ने सर्वप्रथम जगदम्बा का स्मरण किया है, जिनके नाम से समस्त प्राणियों के दुःखों का विनाश अवश्यम्भावी होता है—

श्रियः शरण्यं सकलापदापगाततिप्रवृद्धातितरंगताडिताः।
समाश्रयन्ते यदिहार्तिनाशनं वदेव पादाब्जरजो ह्युपास्महे।।
जयत्यसत्रं जगदम्बिकाम्बकद्वयी यया सर्वमिदं निरीक्ष्यते।
महाभाजोऽपि कटाक्षिना यया परां समृद्धिं नितरां वितन्वते।।

—भारत पारिजातम् १/१-२

तत्पश्चात् गुरवन्दना करके कवि ने भारतीय परम्परा को अनुप्राणित किया है [३४] और साथ ही दया, अभय, आचार और विचार की शिक्षा से तीनों लोकों को पावन करने

वाले गुणों से मण्डित महात्मा गांधी की अक्षुण्ण विजय कामना की गई है। प्रथम सर्ग में महात्मा गांधी के समीप जाते हुए सुदामा का सुदामापुरी में "जयस्वदेश" अक्षरों से अंकित "साइनबोर्ड" का अवलोकन करना एवं द्वितीय सर्ग में गांधी जी के जन्म से स्वयं को धन्य मानने वाली भारतभूमि के परतन्त्रता का विनाश होने की सम्भावना वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण की सूचना देता है, क्योंकि प्रस्तुत काव्य का उद्देश्य भी स्वतन्त्रता प्राप्ति करवाना है।

खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा—

महाकवि भगवदाचार्य ने खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा का उल्लेख यथास्थान किया है। उन्होंने तात्कालिक शासक वर्ग कर्नल जॉनसन, गिब्सन, ईसडन, आदि अनेक अंग्रेजो की एवं वीरावालों, दासगुप्ता, एवं धर्मेन्द्रसिंह जैसे देशद्रोहियों की निन्दा की है और साथ ही वह महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरु, सेठ तैय्यब अब्बास, महादेव देसाई, रानाडे, कस्तूरबा एवं सरोजिनी आदि देशभक्त नायकों के गुणों पर मोहित होकर उनकी प्रशंसा करने में पीछे नहीं रहे हैं।

कथानक—

"श्रीमहात्मगान्धिचरितम्"का कथानक ऐतिहासिक होने के साथ-साथ जीवन-चरित्र पर भी आधृत है। कवि ने प्रस्तुत काव्य का कथानक महात्मा गांधी की "आत्मकथा" एवं गांधी की दिल्ली डायरी के आधार पर प्रस्तुत किया है। साथ ही कथानक में गम्भीरता का समावेश है। ऐतिहासिकता का प्रमाण उसमें स्वतन्त्रता आन्दोलन से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक किये गये प्रयासों की क्रमबद्ध सारिणी से मिलता है और साथ ही गांधी के जन्म से लेकर मृत्यु तक का क्रमबद्ध ब्योरा और देश की स्वतन्त्रता के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहना, दुःखियों का दुःख दूर करना आदि से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह काव्य विशेष रूप से महात्मा गांधी के चरित्र को लेकर लिखा गया है।

नायक एवं प्रतिनायक—

प्रस्तुत महाकाव्य के नायक राष्ट्रपिता महात्मा गांधी हैं। वह वैश्यकुलोत्पन्न एवं धीरोदात्त नायक हैं। कवि ने काव्यशास्त्रीय लक्षणों का निर्वाह करते हुए सर्वत्र गांधी की विजय दिखाई है। विशेष रूप से उनकी विजय अंग्रेजों पर दिखाकर नायकाभ्युदय का चित्रण किया है। प्रतिनायक के रूप में तत्कालीन अंग्रेज शासक वर्ग का चित्रण किया गया है वैसे तो प्रस्तुत पुस्तक के नायक का विद्रोह केवल उनके द्वारा की गई दुर्नीति से है।

छन्द—इस महाकाव्य में विभिन्न छन्दों का प्रयोग किया गया है। प्रत्येक सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन करके कवि ने महाकाव्य परम्परा को बनाये रखा है। भारत पारिजातम् के प्रथम सर्ग में वंशस्थविल छन्द का प्रयोग किया गया है और सर्गान्त में छः श्लोकों में मालिनी छन्द का। द्वितीय में इन्द्रवज्रा छन्द का प्रयोग किया गया है

और सर्गान्त में छहश्लोकों में मालिनी छन्द का। द्वितीय में इन्द्रवज्रा छन्द का प्रयोग किया गया है और अन्त में एक श्लोक प्रहर्षिणी छन्द में उपनिबद्ध है। इसके अतिरिक्त कुछ सर्गों में अनेक छन्दों का प्रयोग भी किया गया है यथा-पच्चीसवें सर्ग में मञ्जुभाषिणी, अनुष्टुप्, मत्तमयूरम्, उपजाति, शिखरणी आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है और सर्गान्त में छन्द परिवर्तन किया गया है।

रस—

प्रस्तुत महाकाव्य का प्रधान रस वीर रस है। प्रस्तुत रस की योजना में कवि को कौशल प्राप्त है। इसके अतिरिक्त कवि ने यत्र-तत्र करुण, रौद्र, वात्सल्य, वीभत्स आदि रसों का वर्णन करके काव्य को उत्कृष्ट बनाया है।

अलंकार—

श्रीमद् भगवदाचार्य ने अलंकारों का प्रयोग केवल काव्य की सौन्दर्य वृद्धि के लिए किया है पाण्डित्य प्रदर्शन के लिए नहीं। यही कारण है कि उनके काव्य में विशेष रूप से अनुप्रास, यमक, उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, अर्थान्तरन्यास एवं कुछ और अलंकारों के उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं।

वर्ण्य विषय—

महाकवि ने प्रस्तुत महाकाव्य के माध्यम से प्रकृति का जो रूप हमारे समक्ष रखा है वह मन को आनन्दित करता है। कवि ने जिस प्रसंग में सूर्य एवं सन्ध्या का वर्णन किया है वह निश्चय ही सराहनीय है। इसके अतिरिक्त कवि ने षड् ऋतुओं का मानवीकरण करके अतीव आकर्षण एवं मन को लुभाने वाला चित्रण प्रस्तुत किया है। उन्होंने न केवल ऋतुओं का अपितु उसके परिवर्तन के साथ ज्येष्ठ आषाढ़ आदि मासों का चित्रण भी प्रस्तुत किया गया है और यह वर्णन भी मोहन दास के पुतलीबाई के गर्भ में प्रवेश से लेकर उनके जन्म के समय तक का है। कवि ने न केवल भारत की नदियों का वर्णन किया है, अपितु अफ्रीका आदि की नदियों का वर्णन करने से भी वह पीछे नहीं हटे हैं। साथ ही दो स्थलों पर समुद्र-वर्णन भी परिलक्षित होता है एक तो वहां पर जहां पुतलीबाई मोहन दासके जन्म से पूर्व सागर के तट पर भ्रमणार्थ जाया करती थीं और दूसरा स्थल वह है जहां पर गांधी जी नमक कानून भंग करने के संदर्भ में समुद्र के तट पर पहुंचते हैं। कवि के प्राकृतिक वर्णन में जो विशेषताएं परिलक्षित होती हैं वह अन्य किसी कवि के काव्य में देखने को नहीं मिलती है।

अन्य वर्णन—

श्रीमद् भगवदाचार्य ने प्राकृतिक वर्णन के साथ-साथ मानव निर्मित वस्तुओं का वर्णन भी अतीव कुशलता से किया है। उसे पढ़कर सहज में ही यह परिज्ञात हो जाता है कि कवि को अपने भारत-देश का कितना अधिक ज्ञान है। इसके अन्तर्गत भारतदेश वर्णन (१/५-१२), द्वारकापुरी (२/५३-५८), युद्ध यात्रा वर्णन, गांधी जी की विजय का एवं

अन्यायी शासक वर्ग के अत्याचारों एवं युद्ध के कारण फैली हुई भुखमरी एवं अकाल का जो दृश्य उपस्थित किया गया है वह समस्त जनता के मन में उत्साह का सञ्चार करता है, अत्याचारी शासकों के प्रति हमारे मन में विद्रोह की भावना जगाता है और अकालग्रस्त लोगों की स्थिति का अवलोकन तो हमारे मनोमस्तिष्क को झकझोर कर रख देता है।

सन्धि संगठन—

इस महाकाव्य में पाँचों कार्यवस्थाओं एवं पाँचों अर्थप्रकृतियों की संगति की गई है तथा महात्मा गांधी द्वारा भारतीयों की रक्षा करना, एवं भारत की रक्षा हेतु साबरमती आश्रम की स्थापना द्वारा तिनकठिया जैसी दुष्प्रथा का विनाश करने से फल की प्राप्ति में असफलता सी लगना लाहौर एवं अमृतसर में हुए अमानवीय अत्याचारों के कारण फल की प्राप्ति पुनः संदेहास्पद लगना तथा गांधी द्वारा दाण्डी विजय एवं उपवास के निश्चय से फल प्राप्ति की आशा होना एवं गांधी द्वारा किया गया उपवास का निर्णय तथा अन्तमें विभाजन द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त होना क्रमशः मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श एवं निर्वहण सन्धियों के उदाहरण हैं।

महाकाव्य का नामकरण—

श्रीमद् भगवदाचार्य विरचित "महात्मगान्धिचरितम्"[1] तीन भागों में विभक्त है। कवि ने तीनों भागों का नामकरण महात्मा गांधी के जीवन में घटित प्रमुख घटनाओं के आधार पर किया है। प्रथम भाग में गांधी द्वारा किए (स्वदेश एवं देशवासियों की रक्षा-हेतु) प्रयासों का वर्णन है।अत· उसका नाम "भारत-पारिजात" रखा गया है तथा द्वितीय भाग में अंग्रेजों द्वारा गांधी जी का अपहरण कर लेने के कारण इसका नाम "पारिजातापहार" रखा गया है तथा तृतीय भाग में गांधी की प्रशस्ति न केवल भारत देश में, अपितु सम्पूर्ण विश्व में फैली है अतः उसका नाम "पारिजात सौरभम् है", जोकि उचित प्रतीत होता है।

उद्देश्य—

प्रस्तुत महाकाव्य का उद्देश्य जन-जन में अपनी मातृ-भूमि के प्रति आस्था जगाना, राष्ट्रीय-भावना को जागरित करना एवं प्राणी मात्र को व्यावहारिक शिक्षा देना रहा है, साथ ही कवि का उद्देश्य गांधी जी के जीवन के सभी को परिचित कराते हुए स्वयं उनके समान देशभक्त एवं स्वाभिमानी बनने की प्रेरणा देना भी है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि श्रीमहात्मगान्धिचरितम् एक महाकाव्य है। यद्यपि उसमें प्राचीन आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट समस्त लक्षणों को घटित नहीं किया गया है किन्तु जिन लक्षणों को कवि ने अपने काव्यों में वर्णित किया है वह श्री महात्मगान्धिचरितम् को महाकाव्य की श्रेणी में रखने में सर्वथा समर्थ है।

अतः निर्विवाद रूप में श्रीमहात्मगान्धिचरितम् को महाकाव्य माना जाना चाहिए

(ग) श्रीमहात्मगान्धिचरितम् के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म स्थली—

श्री महात्मगान्धिचरितम् के रचयिता श्रीमद् भगवदाचार्य का जन्म पंजाब के स्याल-कोट नामक शहर में हुआ[३५]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का विवरण—

बचपन से सर्वजित इस नाम से पुकारे जाने वाले भगवदाचार्य का जन्म १८८० ई. में कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता गंगादत्त त्रिपाठी थे जोकि पुरोहित का कार्य करते थे। उनकी माता का नाम मारासी देवी था। इसके अतिरिक्त उनके परिवार में राममौलि द्विवेदी और श्रीमती प्रभादेवी नामक नि सन्तान चाचा-चाची थी। ये दोनों काशी में निवास करते थे। उनके एक ज्येष्ठ भ्राता (देवन्द्र त्रिपाठी) भी थे[३६]।

शिक्षा-दीक्षा—

सर्वजित् का विद्याध्ययन ८ वर्ष की अवस्था में प्रारम्भ हुआ था। आप प्रारम्भ में अपने चाचा-चाची के साथ काशी में रहे और फिर अपने भाई के समीप रावलपिण्डी आ गए। यहाँ पर रहते हुए उन्होंने संस्कृत के विद्वान् अपने अग्रज से संस्कृत पढ़नी प्रारम्भ कर दी और विद्यालयों में जाकर हिन्दी का ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने अपने पिताजी से रामायण और हनुमान्-चालीसा पढ़ा और शीघ्र ही उनके अनेक श्लोकों को कण्ठस्थ और आत्मसात कर लिया। स्पष्ट है कि वह प्रत्युत्पन्नमति थे। उन्हें केवल हिन्दी एवं संस्कृत के ज्ञान से ही सन्तुष्टि नहीं हुई, अपितु उन्होंने उर्दू, फारसी भाषा का भी अध्ययन किया और ज्योतिष ग्रन्थों को भी पढ़ा। उनके मन में संस्कृत भाषा के प्रति विशेष अनुराग था। अत: वह काशी चले गये। अपनी हनुमान् भक्ति के कारण वह हनुमान् भक्त के नाम से पुकारे जाने लगे। उन्होंने देश के विभिन्न भागों में रहकर अध्ययन किया। उन्होंने श्री हरिदत्त त्रिवेदी से न्यायदर्शन-वात्स्यायनभाष्य, न्यायकुसुमाञ्जलि, मुक्तावली, सांख्य दर्शन आदि ग्रंथ पढ़े और साथ ही अनेक स्थानों में रहते हुए वेदतीर्थ साहित्याचार्य की उपाधि प्राप्त की। इसी तरह उन्होंने न्याय एवं वेदान्त की पुस्तकें पढ़ीं और अन्यान्य उपाधियाँ भी प्राप्त कीं[३७]।

कार्यक्षेत्र—

सर्वजित् आजीवन अविवाहित रहे। बाल्यकाल में किसी संन्यासी को देखकर उनके मन में वैराग्य-भावना घर कर गई थी और वह घर छोड़कर चले गये थे तथा अपना नाम भी बदल लिया, जिससे उन्हें पहचाना न जा सके। उन्होंने आर्य समाज से नैष्ठिक ब्रह्मचारी की शिक्षा ले ली अपना नाम भवदेव ब्रह्मचारी रख लिया। तत्पश्चात् रामानन्द सम्प्रदाय की वैष्णवी दीक्षा लेकर आप ब्रह्मचारी भगवद्दास इस नाम से पहचाने जाने लगे।

उनका कार्यक्षेत्र विस्तृत है। उन्होंने सामाजिक धार्मिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों को अपने कार्य का आधार बनाया था। वह अनेक विद्यालयों में पढ़ाया करते थे और उनका पाठ्यक्रम भी निर्धारित करते थे। वह विशेष रूप से महात्मा गांधी के

साबरमती आश्रम के बच्चों को पढ़ाया करते थे साथ ही अपनी प्रभूत सम्पत्ति वृद्धो और महिलाओं को शिक्षित करने में लगा देते थे। सामाजिक कार्यों से जो समय बचता था उसमें वह लेखन कार्य करते थे [३८]।

वह रामानन्द सम्प्रदाय को दूषित प्रवृत्तियो को समाज से उखाड फेंकने का सदैव प्रयास करते थे। उन्होने उसे सही दिशा प्रदान करने के लिए कुछ स्रोत ग्रन्थ लिखे और सम्प्रदाय का विरोध करने वालों को शास्त्रार्थ करके पराजित कर दिया और अपना नाम बदलकर भगवदाचार्य रख लिया। उन्होने अहमदाबाद में रहते हुए लोगो को रामायण और श्री भगवद्गीता का तात्पर्य समझाते हुए हिन्दू धर्म के प्रति आस्था जगाई। गाधी जी के सत्याग्रह आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होने उसमें भगा लिया। खादी वस्त्र धारण किया और राष्ट्रीय-ध्वज का सम्मान किया। समय-समय पर काग्रेस का प्रचार भी किया और मेलों आदि में हानिकारक द्रव्यों का सेवन करने के लिए लोगों को प्रेरणा दी और लोकधर्म एवं साधुसर्वस्व नामक मासिक पत्र लेखन से समाज को उपकृत करने का प्रयास किया। तत्वदर्शी नामक पत्र में अन्त्यज स्पर्श के सम्बन्ध में लेख लिखा है [३९]।

उन्होंने नः केवल साहित्यिक रचनाए की, अपितु दार्शनिक, धार्मिक, आत्मपरिचयात्मक और विवेचनात्मक विषयो पर भी अपनी लेखनी चलाकर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया है। उनकी काव्य-सम्पदा विशाल है। उनकी प्रकाशित एव अप्रकाशित काव्य कृतियो की संख्या ८० से भी अधिक है। उनके सम्यक् ग्रन्थो का उल्लेख मैं यहाँ पर कर रही हूँ—शुक्लयजुर्वेदभाष्य, सामवेद भाष्य, वेदान्त दर्शन पर वैदिकभाष्य, वेदान्तदर्शन पर औपनिषद भाष्य, श्रीभगवद्गीता पर भाष्य, रामानन्ददिग्विजय महाकाव्य, श्रीमहात्मगान्धिचरितम् (तीन भागों में) गुजराती महाकाव्य, पत्तकल्पद्रुम, स्वराज्यानुभवः, स्तुति कुसुमाञ्जली, स्वामी भगवदाचार्य (सात भाग), ईस्ट अफ्रीका के उपदेश, आश्रमकष्टकोद्धार, भक्ति भागीरथी, तत्वार्थ पञ्चक, आचार्य वचनामृत, सन्मार्गदीपिका आदि [४०]।

व्यक्तित्व—

उनका व्यक्तित्व निराला था। करुणा की तो वह जीती-जागती मूर्ति ही थे। वह दूसरों की सेवा करना अपना धर्म समझते थे। रामानन्द सम्प्रदाय की सेवा करके उन्होंने अपने सेवा-भाव को ही दर्शाया है। वह अत्यधिक उदार एवं विनम्र थे। उन्हें भारत देश से विशेष अनुराग था और साथ ही राम के प्रति अनन्य भक्ति भाव [४१]।

लोकप्रियता—

वह अपने व्यवहार और कृतियों के माध्यम से लोकप्रिय हो गए। स्वामी श्रीभगवदाचार्य शताब्दी स्मृति ग्रन्थ में उनके सम्बन्ध में उपलब्ध लेखों एव भाषणो से उनकी लोकप्रियता ही परिपुष्ट होती है [४२]।

अवसान—

श्रीमद् भगवदाचार्य के जीवन का पटापेक्ष मंगलवार, ८ नवम्बर १९७७ को हो गया था। वह मरकर भी अमर हो गए हैं। आज भी संस्कृतसाहित्याकाश में सूर्य की भाँति दैदीप्यमान हैं। आशा है कि साहित्य मर्मज्ञ एवं संस्कृत साहित्य के प्रति तनिक भी अनुराग रखने वाले लोग उनके साहित्य का अनुशीलन, परिशीलन करते हुए उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होंगे।

(क) श्रीगान्धिगौरवम् का कथानक

प्रथम सर्ग—

हमारा भारतवर्ष सदा से ही महापुरुषों की जन्मस्थली रहा है। जब-जब मनुष्य की पशुवृत्ति सीमा से बाहर बढ़ जाती है और उसके कारण धर्म का ह्रास होने लगता है तब भगवान् विशिष्ट पुरुष के रूप में अवतार लेते हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी ऐसे ही महापुरुष हैं।

महात्मा गांधी ने २ अक्टूबर १८६९ में काठियाबाड़ के पोरबन्दर नामक स्थान में जन्म लेकर भारत भूमि को पवित्र किया। उनके पिता का नाम कर्मचन्द और माता का नाम पुतलीबाई था। उनके बाबा का नाम उत्तमचन्द्र था। गाधी जी का विवाह १३ वर्ष की अल्पायु में कस्तूरबा के साथ हो गया। उनकी अपनी पत्नी के प्रति विशेष आसक्ति थी। उन्होंने अपनी पत्नी को आदर्श नारी बनाने के प्रयास किए।

गाधी जी ने अपने अध्ययन काल में कभी नकल करने की चेष्टा नहीं की। उनकी एक रम्भा नामक दासी ने उन्हें भय दूर करने के लिए राममन्त्र दिया। "सत्यहरिश्चन्द्र" और "श्रवणकुमार" नाटक से प्रभावित होकर वेसत्यवक्ताऔर सेवा परायण हो गए। संस्कृत भाषा के प्रति विशेष अनुराग होने के कारण वह सदैव उसे राष्ट्रभाषा बनाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे।

कुशाग्र बुद्धि वाले गांधी जी ने अट्ठारह वर्ष की आयु तक भारतवर्ष में अध्ययन करने के पश्चात् मांस, मदिरा और स्त्री संग से दूर रहने की प्रतिज्ञा की तभी उनका उच्च-शिक्षा प्राप्त करने के लिए ४ सितम्बर १९८८ को विलायत गमन सम्भव हो सका।

इंग्लैंड पहुँचकर उन्हें ऐसे परिवार में रहना पड़ा जहाँ मद्य-मासादि के सेवन से परे रह सकना नितान्त असम्भव था। अतः वे एक पृथक् में स्वनिर्मित शाकाहारी भोजन करने लगे। इंग्लैंड की सामाजिक प्रथा के अनुसार उन्हें गोरे पुरुष और महिलाओं के नृत्य में भाग लेने का अवसर प्रायः मिलता था; परन्तु उन्होंने किसी भी स्थिति में अपनी ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा भंग नहीं होने दी। लन्दन में आपने मैट्रीकुलेशन-परीक्षा उत्तीर्ण की और मूल (कानून सम्बन्धी) ग्रन्थों का अध्ययन तथा फ्रैन्च, लैटिन आदि भाषाओं का ज्ञान भी प्राप्त कर वकालत पास की। तत्पश्चात् वैरिस्टरी का प्रमाण पत्र लेकर बारह जून अट्ठारह सौ इक्यानबे ई. में जन्मभूमि को प्रस्थान किया।

द्वितीय सर्ग—

गाधी जी स्वदेश पहुँचकर पूर्व परिचित डॉ. प्राण जीवन मेहता जी के घर में रहे। वहाँ श्री एडविन अर्नाल्ड द्वारा अनूदित गीता और बुद्धचरित काव्य का अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त कवि आत्मज्ञानी राजचन्द्र के संसर्ग का सुअवसर पाकर अत्यधिक प्रभावित हुए और उनके मन में आध्यात्मिक विकास की ओर अभिरुचि जागरित हुई। साथ ही रस्किन के "सर्वोदय" और टालस्टाय के वैकुण्ठ तेरे हृदय में है का प्रभाव उनके मन· पटल पर पूर्णतया अंकित हो गया।

उन्होंने विदेश से लौटकर शुद्धीकरण के लिए किए गए गगास्नान के फलस्वरूप जाति के दो भागों में से एक के द्वारा स्वीकृति प्राप्त न होने के कारण भगिनी और सास के यहाँ कभी जलपान भी नहीं किया।

गाधी जी राजकोट निवासी एक व्यापारी के वकील की हैसियत से दक्षिण अफ्रीका गए। गोरों के द्वारा विरोध होने पर भी सतत प्रयत्नों के फलस्वरूप शासनाज्ञा प्राप्त कर वकालत की शुरुआत की। गाधी जी वहाँ भारतीयों की दुर्दमनीय दशा और उनके साथ होने वाले दुर्व्यवहार से दुःखी होकर सुधार कार्य में तन-मन से जुट गए।

अनेक मित्रों द्वारा ईसाई धर्म ग्रहण करने की प्रेरणा दिये जाने पर भी आप अन्तर्मन की आज्ञा को सर्वोपरि स्थान देते हुए तनिक भी विचलित नहीं हुए। भारतीयों को मताधिकार की स्वतन्त्रता और दासवृत्ति से छुटकारा दिलवाने की ओर भी आपका ध्यान आकर्षित हुआ।

एक बार बालासुन्दरम नामक एक मद्रासी अपने स्वामी से प्रताड़ित होने पर गान्धी जी के समीप आया। तब उन्होंने उसके स्वामी पर फौजदारी का मुकद्दमा चलाकर उसे उसकी (स्वामी) अधीनता से मुक्ति दिलवाकर ख्याति प्राप्त की।

सत्यवक्ता गाधी जी ने कम चुंगी देने वाले अपने मित्र रुस्तम से चुंगी अधिकारी को दोहरा धन दिलवाकर बरी करवाया जिससे प्रभावित होकर उसने कभी असत्याचरण न करने की शपथ ली।

गांधी जी ने "इण्डियन" नेशनल-कांग्रेस के माध्यम से भारतीयों पर लगाए कर से मुक्त कराकर उनकी अनेक विध सेवा की। सन् १८९६ में सेठ अब्दुल्ला को पूर्वोल्लिखित समिति का अध्यक्ष नियुक्त करके फिर भारतवर्ष को प्रस्थान किया। उर्दू, तमिलादि भाषाओं को हृदयंगम करते हुए कलकत्ता और तत्पश्चात् प्रयाग पहुँचकर सगम में स्नान किया।

फिर राजकोट पहुँचकर आपने स्वरचित "हरी-पुस्तिका" के माध्यम से अफ्रीका वृत्तान्त का सर्वत्र प्रचार किया और साथ ही बम्बई जाकर भारतीयों की दुर्दशा बताने के लिए एक सभा आयोजित की। वर्णभेद वाली घटना के वर्णन से गाधी जी भारतीयों के मन पटल पर छा गए।

पवित्र नगरी पूना में आयोजित एक सभा में नेटाल में निर्धारित कार्यप्रणाली का स्वभाषा में उल्लेख किया। मद्रास जाकर बालासुन्दरम के वृत्तान्त की चर्चा करने से वहाँ के लोग आपके अनुकर्त्ता हो गए। प्रचार कार्य में तल्लीन, वचन पालक गाधी जी छः माह भारतवर्ष में ही रहकर नेटाल से एक टेलीग्राम प्राप्त होने पर दो शिशुओं भान्जे और पत्नी सहित सभ्य समाजानुकूल वस्त्रादि लेकर जलपोत में बैठकर नेटाल के लिए चल पड़े।

तृतीय सर्ग—

अनेक मुसीबतों से भरी हुई समुद्री यात्रा पूरी करके गाधी जी नेटाल पहुँचे। अंग्रेज मित्र लाटन के विश्वास से बिना किसी यान के ही अपने गन्तव्य की ओर जाने पर अंग्रेजों ने आपको अनेकश: अपमानित किया किन्तु सौभाग्यवश पुलिस सुपरिण्टेण्डेंट अलेक्जेण्डर और उनकी पत्नी सुदामा ने आपको परिवार सहित सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया।

आपने वकालत त्यागकर जन-जन की सेवा का भार अपने ऊपर ले लिया। डॉक्टरों को रोगियों की परेशानियों से अवगत कराकर उनका महान् उपकार किया। उन्होंने युवक और युवतियों को ब्रह्मचर्य और आत्म संयम की ओर प्रेरित किया।

राजभक्त गाधी जी ने परेशानियों को झेलते हुए अंग्रेजों के साथ युद्ध में हुए घायलों को अपने मित्र बूथ की सहायता से सुरक्षा गृह में पहुँचाकर उनकी सेवा की · और देश को स्वतन्त्र कराने की प्रबल इच्छा के कारण गाधी जी कुछ लोगों को "इण्डियन" नेटाल कांग्रेस का मंत्री और अधिकारी नियुक्त करके और विदाई के अवसर पर प्राप्त स्वरूप धन-दौलत को पत्नी के द्वारा हठ करने पर भी बैंक में सुरक्षित करके सन् १९०१ में स्वदेश लौट आए। उसी वर्ष दिनशावाचा (Dinsbawacha) की अध्यक्षता में कलकत्ता में हुए कांग्रेस अधिवेशन में स्वयं-सेवकों के असहयोग से दु:खी होकर उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में की हुई अपनी सेवा की चर्चा की जिससे भारतीयों को कार्य करने की प्रेरणा मिली।

कांग्रेस सभा में गाधी जी का परिचय गोपाल कृष्ण गोखले से हुआ जिन्होंने आपको देश स्वतन्त्र कराने के लिए प्रोत्साहित किया। वह सदैव परोपकार में ही रत रहते थे। भारत भूमि को परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ी हुई देखकर व्यथित गाधी हिंसात्मक प्रवृत्ति का विनाश करने के लिए सदैव लालायित रहते थे।

कलकत्ता से काशी पहुँचकर आपका आध्यात्मवादिनी एक विदेशी महिला एनी बेसेन्ट से साक्षात्कार हुआ जिससे आप अत्यधिक प्रभावित हुए।

कुछ समय बाद वे राजकोट पहुँचे और बैरिस्टरी प्रारम्भ की फिर बम्बई जाकर काल-ज्वर से पीड़ित अपने पुत्र मणिलाल के प्राणों का खतरा उठाकर भी उसका एलोपैथी (Allopathic) उपचार नहीं होने दिया। उसे प्राकृतिक उपचार द्वारा स्वास्थ्य लाभ कराया।

इन्हीं दिनों दक्षिण-अफ्रीका से बुलावा आने पर आप अकेले ही वहाँ चल दिये।

चतुर्थ सर्ग—

अफ्रीका पहुँचकर गाधी जी वहाँ की अनैतिक अत्याचार से त्रस्त "गिरमिट" कही जाने वाली भारतीय जनता के सुधारार्थ तत्पर हो गए।

गाधी जी के सत्याग्रह आन्दोलन के सिलसिले में बन्दी हो जाने के कारण उनके समाचार पत्र के प्रकाशन का कार्य अवरुद्ध हो गया था। अत- वहाँ से रिहा होने पर उसमें पुन प्रवाह संचरित करने के लिए आप नेटाल चले गये।

अपने हित चिन्तक मित्र पोलाक से प्राप्त रस्किन कृत सर्वोदय के तीन प्रमुख सार तत्वों, परोपकार छोटे बड़े सभी कार्यों को समान महत्त्व प्रदान करना और कठोर परिश्रम आदि को आत्मसात् किया।

उन्होंने वहीं पर अनेक लोगों के निवास योग्य "फिनिक्स" नामक आश्रम को सस्थापित किया और कृषि-योग्य भूमिको प्रचुर धन देकर खरीदा। गाधी जी ने कार्याधिक्य के कारण भारत प्रत्यागमन सदिग्ध जानकर पुत्रो सहित कस्तूरबा को वही बुला लिया।

सबके साथ समता का व्यवहार करने वाले सत्य, अहिंसा के अनुयायी गाधी जी ने अग्रेजों पर अपना विश्वास जमा लिया। परिवार जन सेवा-कार्य में बाधक न बने अत उन्होंने उसका भार आश्रम पर डाल दिया और जुलुओं के साथ युद्ध में आहत हुए लोगो के सेवा कार्य में जुट गए।

भारतीयो को परेशान करने के विचार से अफ्रीकी स्मट्स द्वारा किए गए खूनी-कानून को समाप्त करने के लिए गाधी जी द्वारा सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ करने पर उन्हें कई बार बन्दी बनाया गया। इसी सन्दर्भ में उनके परिवार के सदस्य भी अनेक बार कारागृह गए और अनेक कष्ट झेले।

सन् १९०८ में कारागृह में बन्दी हो जाने पर आप कुछ फलों पर ही जीवित रहे। पारिवारिक सदस्यों के स्वदेश जाने की इच्छासे १९१४ में श्री गोखले से मिलते हुए भारत लौट आए और फिर कुम्भ मेला आदि में सम्मलित होते हुए ऋषिकेष चले गए।

पञ्चम सर्ग—

गाधी जी ने २५ मई सन् १९२५ में अहमदाबाद में स्व स्थापित सत्याग्रह आश्रम का विधिपूर्वक संचालन किया। उन्होने निम्न वर्ण के दूदा नामक "हरिजन" को उस आश्रम में प्रवेश दिलवाकर अस्पृश्यता निवारण का बीड़ा उठाया।

गांधी जी लखनऊ में सम्पन्न हुए काग्रेस अधिवेशन केदौरान चम्पारन में नील की खेती के सम्बन्ध में किसानों के प्रति होने वाले अत्याचारों के विषय में जानकारी प्राप्त करके और उन्हें समाप्त करके अधिकार दिलवाने के लिए वही पर चले गये।

वहां जाकर उन्होंने मजदूरों और मिल-मालिकों के मध्य मधुर सम्बन्धों को स्थापित किया। जब सत्याग्रह अपनी चरम सीमा पर था, तभी महायुद्ध छिड गया। इस युद्ध में परिश्रम करने के कारण उन्हें मन्दाग्नि रोग हो गया।

स्वस्थ्य होते ही उन्होंने खेड़ा जाकर मोहन लाल पण्ड्या अनुसूया और शंकरलाल पारीख के सहयोग से निर्धन जनता को अंग्रेज सरकार द्वारा लगाये गये कर से मुक्त कराकर

उनका महनीय उपकार किया। सत्याग्रह आन्दोलन एवं उपवास का अवलम्बन लेकर तथा राजगोपालाचार्य जी की सहमति प्राप्त कर अंग्रेज सरकार द्वारा पारित रौलेट एक्ट को समाप्त करने का पुनर्प्रयास किया। शान्ति, अहिंसा, आदि के बल पर उन्होंने "सूरत" नामक स्थान में जाकर "मार्शल ला" भी समाप्त करवा दिया।

गांधी जी पंजाब में हो रहे हत्याकाण्ड की सूचना पाकर और मदन मोहन मालवीय जी के निमन्त्रण पर तात्कालिक कमिश्नर से अनुमति प्राप्त कर वहाँ चले गए। गाँव-गाँव विचरण करते हुए और भारतीयों की दुर्दशा का अवलोकन करते हुए अमृतसर पहुँचे और वहाँ जलियाँवाला बाग काण्ड की स्मृति के लिए पाँच लाख रुपये एकत्रित किए और कांग्रेस के कार्यक्षेत्र का विस्तार किया। उन्होंने बेरोजगारी दूर करने कि लिए स्वदेशी वस्त्र निर्माण और उसके उपयोग पर जोर दिया। साथ ही गांधी जी ने पूर्ण स्वराज्य प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा से भाईचारे के व्यवहार का पालन करते हुए अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया।

षष्ठ सर्ग—

महात्मा गांधी ने सन् १९३० में लाहौर में नेहरु जी के सभापतित्व में राजकराधिक्य के कारण नमक आन्दोलन का प्रस्ताव रखा और तात्कालिक वायसराय द्वारा विघ्न उपस्थित करने पर भी आन्दोलन प्रारम्भ करने के लिए ११ मार्च को दाण्डी नामक नगर को निःशस्त्र प्रस्थान करने पर अनेक स्त्रियों ने आपकी नीराजना की। उन्होंने भारत देश को अंग्रेजों की गुलामी से छुटकारा दिलाने के लिए आबाल वृद्ध सभी का इस युद्ध रूपी यज्ञ में आहुति देने के लिए आह्वान किया। नमक आन्दोलन के सम्बन्ध में गांधी जी के कारागृह में बन्दी हो जाने पर सरोजिनी नायडू ने सभापतित्व ग्रहण किया, लेकिन दुर्भाग्यवश उनको बन्दी बना लिया गया। गांधी जी के अनुकर्ताओं के उत्साह को देखकर वायसराय इर्विन ने गांधी जी को उनके साथियों सहित कारागृह से मुक्त कर दिया। तत्पश्चात् आपने दिल्ली में इर्विन से सौहार्द बनाकर उनके साथ ही गोलमेज परिषद् में सम्मिलित होने के लिए लन्दन प्रस्थान किया।

सप्तम सर्ग—

गांधी जी ने लन्दन में "गोलमेज-परिषद्" में एकजुट होकर काम करने वाली और जनता की आवश्यकतानुसार सहायता करने वाली अपनी कांग्रेस की प्रशंसा की और परिषद् द्वारा पारित नियमों की निन्दा की।

वहाँ से बम्बई लौटने पर श्री जवाहर लाल और गफ्फार खाँ को जेल में देखकर तत्कालीन वायसराय विलिंगटन से न्याय की याचना करने पर आप बन्दी बना लिए गये। तब वहाँ गांधी जी के निम्न वर्ग के लोगों के पृथक् निर्वाचन सम्बन्धी नियम को समाप्त कराने के लिए उपवास किया।

कारागृह से मुक्त होने पर साबरमती के सन्त गाधी जी पूना आकर तपस्या में लीन हो गए। उन्होने डरी हुई जनता को अभय प्रदान किया और हरिजनो को सार्वजनिक क्षेत्रों में प्रवेश करने की स्वतन्त्रता प्रदान की।

साथ ही उन्होंने भारत की प्रगति के लिए सस्कृत भाषा को अनिवार्य मानकर विभिन्न विद्यालयों में इसके पठन-पाठन पर जोर दिया।

सन् १९४२ में "भारत-छोड़ो" आन्दोलन के फलस्वरूप स्वतन्त्रता सेनानियों और गांधी जी सहित उनके परिवार को आगाखाँ महल में बन्दी बना लिया गया। वहाँ पर साथ में बन्दी डॉ. सुशीला ने रोगिणी कस्तूरबा की तन-मन से सेवा की लेकिन वह पति-परायण सुहागिन शैव लोग को प्रस्थित हो गई। उनकी मृत्यु से शोकाकुल लोगो को गाधी जी ने चिरन्तन सत्य के उजागर द्वारा शान्त किया।

माता के स्नेही पुत्र देवदास ने उनका अन्तिम संस्कार किया। कस्तूरबा की मृत्यु से डरकर अंग्रेजो द्वारा कारागृह से मुक्त कर दिये जाने पर गाधी जी ने वर्धा जाकर स्वास्थ्य लाभ किया।

अष्टम सर्ग--

महात्मा गाधी के सत्यप्रयासों के फलस्वरूप १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत वर्ष स्वतन्त्र हुआ। यद्यपि गांधी जी समतावादी विचारधारा के पोषक होने के कारण भारत को दो भागों में विभक्त नहीं होने देना चाहते थे, लेकिन जिन्ना की पाकिस्तान बनाने की आतुरता और अति आग्रह देखकर उन्होंने अनिच्छा होते हुए भी जिन्ना को पाकिस्तान बनाने की अनुमति प्रदान की। सारे देश में साम्प्रदायिक दंगे होने लगे। इसी सन्दर्भ में नोआखाली में हुए हिन्दू-मुस्लिम दगेसे दुःखी होकर वहाँ जाकर शान्ति, प्रेम और सद्भाव बनाये रखने के लिए प्रयत्न किया। साम्प्रदायिक दंगे से विक्षुब्ध होकर गाधी जी ने अनशन प्रारम्भ कर दिया। उन दिनों साम्प्रदायिक सद्भाव उत्पन्न करने के लिए नित्य प्रार्थना सभाएं करते थे। ऐसे ही एक दिन ३० जनवरी १९४८ को नाथूराम गोड्से नामक व्यक्ति ने गोली मारकर उनकी हत्या कर दी।

उनकी मृत्यु से जवाहर लाल नेहरु, सरदार बल्लभ भाई पटेल, गोविन्द बल्लभ पन्त और भारत के अन्तिम वायसराय लार्ड माउण्डबेटन अत्यधिक शोकाकुल हो गए। उनके पुत्र देवदास ने अपने पिता का यथोचित अन्त्येष्टि संस्कार किया।

मनस्वी गांधी ने मनसा, वाचा, कर्मणा सत्य और अहिंसा का पालन किया औरभेद-भाव की दीवार को नष्ट करके एकता की भावना का विस्तार किया।

(ख) श्रीगान्धिगौरवम् में महाकाव्य की संगति

सर्गबद्धता--श्री गान्धि गौरवम् आठ सर्गों में विभक्त है। ये सर्ग आकार की दृष्टि से भी उपयुक्त प्रतीत होते हैं।

महाकाव्य का प्रारम्भ—

काव्य का प्रारम्भ परम्परानुसार गुरुवन्दना और तत्पश्चात् वाग्देवी सरस्वती की वन्दना के रूप में मंगलाचरण से हुआ है—

"आदौ स्मरामि गुरु पाद रजांसि चित्ते,
स्थित्वा पुर- स्वकर कम्पिततप्तभागैः।
उष्णं विधाय बहुशीत समृद्धिरीतम्,
ध्यायेऽडिर्युग्ममहमत्र हृदि स्वकीयें"।।
"प्रणम्य भारतीं देवीं, शम्भुरत्न स्वकं गुरुम्
देववाणी समाश्रित्य, लिख्यते "गान्धिगौरवम्।
—(श्री गान्धि गौरवम्, १/१-२)

खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा—

इस महाकाव्य में तात्कालिक शासक वर्ग-विलिंगटन, लार्ड कर्जन के अत्याचारों एवं मुसल्मानों द्वारा हिन्दुओं पर किए गए नृशंसतापूर्ण व्यवहार की कटु आलोचना की गई है और सुपरिण्टेण्डेण्ट अलेक्जेण्डर और उनकी पत्नी को मालवीय, फिरोजशाह मेहता, गोविन्द बल्लभ पन्त, पोलक, महात्मा गाधी एव आत्मज्ञानी राजचन्द्र जैसे महान् लोगों के उदात्त गुणों और उनके द्वारा किये गये कार्यों की प्रशंसा का लोभ भी कवि संवरण नहीं कर पाते हैं। वह भारत के उद्धार के लिए "कांग्रेस" संस्था के निमार्ता ए.ओ.ह्यूम का आभार व्यक्त करते हैं तथा गाधी जी के हत्यारे नाथूराम गोड्से की और भारत विभाजन के पक्षधर जिन्ना की आलोचना करते हैं।

कथानक—

इस महाकाव्य का कथानक महात्मा गाधी विरचित "आत्म-कथा" और श्रीमद् भगवदाचार्य विरचित "श्रीमहात्म गान्धिचरितम् लिया गया है। इससे उसकी ऐतिहासिकता का प्रमाण मिल सकता है। इस काव्य में गाधी द्वारा किये गये स्वतन्त्रता संग्राम का चित्रण है। गांधी जी के जन्म से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् उनके अवमान तक की घटना है और यह त्याग, तपस्या की साक्षात् मूर्ति, स्वतन्त्रता के व्यवस्थापक महात्मा गांधी के आद्योपान्त जीवन का चित्रण है।

नायक एवं प्रतिनायक—

प्रस्तुत काव्य के नायक मोहनदास कर्मचन्द गाधी हैं। वह धीरोदात्त एवं विचारपूर्वक कार्य करने वाले हैं। वह महात्मा इस उपाधि से मण्डित, सत्य, अहिंसा के पुजारी, सेवा-परायण, आत्म-समर्पण, त्याग, तपस्या, समता की भावना से युक्त, विभिन्न भाषाओं के ज्ञाता, दृढ़ निश्चयी, संस्कृति रक्षक, सफल बैरिस्टर आदि उदात्त गुणों से मण्डित हैं। वह सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह के बल पर अंग्रेजी शासन पर विजय प्राप्त करते हैं। उनके द्वारा यातना दिये जाने पर भी डटे रहते हैं और उत्तरोत्तर स्वतन्त्रता प्राप्ति की ओर अग्रसर होते जाते हैं। साथ ही व्यक्ति विशेष महात्मा गांधी का प्रतिपक्षी नहीं हैं। वह न तो

अंग्रेज शासक के विरोधी हैं उन्हें तो केवल उनकी दुष्ट बुद्धि एवं दुराचार से ही घृणा है और वह विरोध भी उनके द्वारा किए जाने वाले अत्याचारों का करते हैं। इस तरह अंग्रेज शासक वर्ग को प्रतिनायक माना जाना चाहिए।

छन्द—

इस महाकाव्य के सभी सर्गों में छन्दों का प्रयोग स्वतन्त्रता पूर्वक किया गया है, लेकिन सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन किया गया है[४३]। इस महाकाव्य के सभी सर्गों में छन्दों का प्रयोग स्वतन्त्रता पूर्वक किया गया है, लेकिन सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन किया गया है[४३]। कवि के सर्वाधिक प्रिय छन्द अनुष्टुप्[४४], इन्द्रवज्रा[४५], उपजाति[४६], मालिनी[४७], शालिनी[४८] वसन्ततिलका[४९] आदि हैं। चतुर्थ सर्ग में अनुष्टुप्, इन्द्रवज्रा, इन्द्रवंशा, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, दोधकवृत्तम्, भुजगप्रयातम, मन्दाक्रान्ता, मालिनी, वंशस्थ, वसन्ततिलका, वियोगिनी, शशिवदना, शालिनी, शिखरणी, सममात्रक, स्रग्धरा आदि १८ छन्दों की भरमार है। छन्द-प्रयोग के लिए कवि व्याकरण के नियमों में परिवर्तन कर लेते हैं।

रस—

प्रस्तुत काव्य का प्रधान रस अथवा अंगी रस धर्म वीर है। इसके अतिरिक्त इस काव्य में करुण, रौद्र, वात्सल्य एवं भयानक आदि रसो का भी सुन्दर एवं प्रभावोत्पादक वर्णन हुआ है। सबमे अधिक अनूठा तो वीर रस का समायोजन है।

अलंकार—

कवि ने इस काव्य में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, अर्थान्तरन्यास, दृष्टान्त, रूपक स्वभावोक्ति, विशेषोक्ति, श्लेष, रूपकातिशयोक्ति[५०] आदि अलंकारों का संक्षिप्त प्रयोग किया है।

वर्ण्य विषय एवं अन्य वर्णन—

इस महाकाव्य में गान्धिचरित को उजागर करना एवं देशानुराग की भावना को जागरित करना प्रमुख ध्येय होने के कारण विभिन्न स्थलो वृत्तान्तों के चित्रण में शिथिलता आ गई है। अतः कवि ने अनेक स्थलों का उल्लेख मात्र किया है और एक स्थल पर जयपुर[५१] नामक नगर का अतीव मनोहारी वर्णन करने का प्रयास किया है। पर्वत[५२], वन[५३] सूर्योदय और सूर्यास्त, प्रभात, सध्या का यथासम्भव उल्लेख करके अपनी वर्णन कुशलता का परिचय दिया है। मधुपान, विवाह, संवाद, तीर्थ-यात्रा आदि के वर्णन से भी काव्य अछूता नहीं रहा है।

सन्धि संगठन—

गाधी जी का अफ्रीका में गोरो द्वारा सतायी गयी भारतीयों की दुर्दमनीय दशा में सुधार करने के लिए वहाँ जाना मुख सन्धि का उदाहरण है। (द्रष्टव्य-श्रीगान्धिगौरवम् २/३९)।

गाधी द्वारा भारत देश की रक्षा के लिए साबरमती आश्रम की स्थापना द्वारा किसानो को तिनकठिया प्रथा से छुटकारा दिलाने के कारण फल प्राप्ति के प्रति कुछ आशा बँधती

है, किन्तु रॉलेट एक्ट के लागू हो जाने से निश्चित फल प्राप्ति असम्भव लगने लगती है। अतः यहाँ पर प्रतिमुख सन्धि है।

अन्त में भारत-विभाजन के साथ स्वतन्त्रता की प्राप्ति होना निर्वहण सन्धि का उदाहरण है। इसके अतिरिक्त कवि ने गर्भ विमर्श आदि सन्धियों का प्रयोग भी यथास्थान किया है।

महाकाव्य एवं सर्ग का नामकरण, कथा की सूचना—

महाकाव्य का नाम काव्य के नायक महात्मा गांधी के नाम के आधार पर ही रखा गया है। जोकि नितान्त सटीक लगता है। प्रत्येक सर्ग की समाप्ति पर अग्रिम सर्ग में होने वाली घटनाओं का संकेत दिया गया है। प्रत्येक सर्ग को विषय और घटनाओं को सुस्पष्ट करने वाले अनेक शीर्षकों में विभक्त किया गया है। उदाहरण के लिए प्रथम सर्ग को ही देखिये—गुरु वन्दना, गांधी के जन्म, बाल्यकाल आदि से सम्बन्धित घटनाओं को "वन्दनं मंगलं बाल्यं" विवाह और ज्ञान प्राप्ति के लिए "विवाह पठनन्तथा उच्च शिक्षा प्राप्ति हेतु "विलायत गत सोऽयं" गांधी जी के जीवन में घटित होने वाले कुछ प्रसंगों को "विशेषवृत्तमेकन्तं" और विलायत में शिक्षा के मध्य आई विषम परिस्थितियों और उनसे छुटकारा मिल जाने के लिए "पठन समय एवं" आदि शीर्षकों में बाँटकर विषय को रोचक और सहज बना दिया है।

उद्देश्य—

यद्यपि प्रस्तुत काव्य में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का यथास्थान वर्णन हुआ है लेकिन कवि को सत्य, अहिंसा, अवज्ञा आन्दोलन, असहयोग आदि के द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति रूप धर्म की प्राप्ति कराना ही अभीष्ट रहा है। साथ ही अपने देशवासियों के मन में देश-प्रेम की भावना जगाना, जन-जन में एकता की भावना भरना भी कवि को अभिष्ट है।

प्रस्तुत विवेचन से यह स्पष्टतः परिलक्षित होता है कि "श्रीगान्धिगौरवम्" भी एक महाकाव्य ही है। इसमें रसादि भाव पक्ष एवं प्राकृतिक वर्णन अत्यधिक संक्षिप्त है,लेकिन नायक के चरित्र और छन्द योजना में जो कौशल दिखाया गया है वह निश्चय ही सराहनीय है। भाव-पक्ष एवं प्राकृतिक वर्णन संक्षिप्त दिखाया गया है वह निश्चय ही सराहनीय है।भाव-पक्ष एवं प्राकृतिक वर्णन संक्षिप्त होते हुए भी अतीव प्रभावोत्पादक एव प्रशंसनीय है।

अतः हम बिना किसी शंका के "श्रीगान्धिगौरवम्"को महाकाव्य कह सकते हैं।

(ग) श्रीगान्धिगौरवम् के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म-स्थली—

श्रीगान्धिगौरवम् के रचयिता श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी का जन्म उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत "नैमिषारण्य" नामक पवित्र तीर्थ स्थान के निकट "हरदोई" जनपद में स्थित "सण्डीला" नामक नगर के बरौनी [१४] नामक मुहल्ले में हुआ था।

रचयिता के जन्म एवं वंश का विवरण—

श्री शिव गोविन्द त्रिपाठी जी का जन्म चैत्र शुक्ला अष्टमी, बुद्धवार, संवत् १९५५ (सन् १९१९) को एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ [५५]। इनके पिता श्री शिवनारायण त्रिपाठी तथा पितामह श्री कालिका प्रसाद त्रिपाठी थे [५६]। कवि के पितामह परम विद्वान् और तपस्वी थे। कर्मकाण्ड ज्योतिष तथा वैद्यक उनका व्यवसाय था। उनको अपने पौत्र को स्वानुरूप देखने की प्रबल आकांक्षा थी [५७]।

शिक्षा-दीक्षा—

कवि की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तत्पश्चात् उन्होंने अपने पिता की अनुमति से संस्कृत का विधिवत् अध्ययन करने हेतु श्री सद्विद्यालय, बाजीगंज मल्लावाँ, जिला हरदोई में प्रवेश ले लिया [५८]।

उन दिनों यह विद्यालय संस्कृत शिक्षा का प्रमुख केन्द्र माना जाता था तथा उसके आचार्य श्री शम्भुरत्न सुकुल संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे [५९]। अतएवं पितामह की सत्प्रेरणा, आशीर्वाद और गुरु के सम्पर्क से कवि का अध्ययन सुचारु रूप से चलने लगा लेकिन इसी बीच उनके पितामह का देहावसान हो गया [६०] जिससे उनके अध्ययन में कुछ बाधा उपस्थित हो गई। इस आघात को धैर्यपूर्वक सहन करके संस्कृत विषय के उत्तरोत्तर ज्ञान प्राप्ति के लिए और भी अधिक उत्साह से जुट गये। उन्होंने संस्कृत साहित्य के साथ ही ज्योतिष तथा आयुर्वेद जैसे दुरुह विषयों का भी अध्ययन किया। त्रिपाठी जी की विद्वता तथा प्रतिभा से प्रभावित होकर उनके सहपाठियों तथा शिक्षकों ने उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की [६१]। त्रिपाठी जी की शिक्षा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय काशी (जो उस समय राजकीय संस्कृत कॉलेज के नाम से जाना जाता था) तथा इलाहाबाद पैडागागिस्ट इन्सटीट्यूट से पूर्ण हुई [६२]।

वैवाहिक जीवन—

त्रिपाठी जी ने भारतीय परम्परानुसार यथा समय विवाह करके ग्रहस्थाश्रम में प्रवेश किया। विश्वस्त सूत्रानुसार उनका वैवाहिक जीवन सुखमय रहा [६३]। उन्होंने दो विवाह किये थे। प्रथम विवाह १६ वर्ष की आयु में विद्यार्थी जीवन में हुआ था और द्वितीय विवाह प्रथम पत्नी की मृत्यु पर्यन्त २५ वर्ष की आयु में शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् हुआ [६४]। प्रथम पत्नी शिवरानी से केवल एक पुत्र श्री शिवाधार त्रिपाठी जी हुए जोकि सम्प्रति व्यापार में संलग्न हैं। द्वितीय पत्नी श्रीमती हरप्यारी से सात पुत्र रत्न और तीन पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं। उनमें से ज्यष्ठ पुत्र डॉ. शिवसागर त्रिपाठी जी हैं जोकि सम्प्रति राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर में संस्कृत विभाग के प्राध्यापक हैं और साथ ही अपने लेखन कार्य से संस्कृत साहित्य को समृद्धिशाली बनाने में तत्पर हैं। दूसरे पुत्र श्री शिव प्रसाद त्रिपाठी "हरदोई" जिले के "सण्डीला" नामक नगर (अपने पिता जी की जन्मभूमि) में "सर्वमंगल चिकित्सालय" में आयुर्वेदाचार्य हैं। तीसरे पुत्र श्री शिवशर्मा त्रिपाठी राजस्थान के "सीकर" स्थान में "राजस्थानप्रशासनिक सेवा" में ए.डी.ए. हैं। चतुर्थ पुत्र शिवशर्मा त्रिपाठी (राजस्थान

वन विभाग) जयपुर में कार्यरत हैं। पञ्चम पुत्र सरोज कुमार त्रिपाठी गृहकार्य (स्वतन्त्र व्यापार) में संलग्न हैं। षष्ठ पुत्र दिनेश कुमार त्रिपाठी भी राजस्थान वन विभाग जयपुर में ही कार्य कर रहे हैं। सप्तम पुत्र राजस्थान के जालौर नामक स्थान में भूमि विकास बैंक की सेवा में हैं। ज्येष्ठ पुत्री शकुन्तला का विवाह नहीं हुआ है। वह "गान्धी ज्ञान-मंदिर" बापू नगर में जयपुर में प्राध्यापिका हैं। द्वितीया पुत्री शैलजा उन्नाव जिले के "बागर-मऊ" नामक स्थान के "सुभाष इण्टर कालेज" के अध्यापक श्री शम्भुनाथ पाण्डेय जी की पत्नी हैं। तृतीय पुत्री सुधा का विवाह "मूक-बधिर-विद्यालय" बरेली के प्राचार्य श्री राम किशोर शुक्ल जी के साथ सम्पन्न हुआ [६५]।

अार्थिक स्थिति—

सरस्वती के सच्चे आराधक श्री गोविन्द त्रिपाठी का जीवन निर्धनता के कारण अभावग्रस्त ही बीता [६६]। किन्तु विद्याव्यसनी एवं सेवा के प्रति प्रगाढ़ रुचि होने के कारण उनका ध्यान धन संचय की ओर विशेष रूप से नहीं गया और उन्होंने यथालाभ संतोष करके जीवन यापन किया।

कार्यक्षेत्र—

त्रिपाठी जी ने अपने अध्ययन काल में संस्कृत के साथ ही आयुर्वेद और ज्योतिष में भी दक्षता प्राप्त कर ली थी [६७] अतः शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उन्होंने "देशबन्धुऔषधालय" की स्थापना करके चिकित्सा को अपना व्यवसाय बनाया और उसमें सफलता भी प्राप्त की [६८] परन्तु विद्यार्थी जीवन से उनकी प्रबल आकांक्षा एक आदर्श शिक्षक बनने की थी। अतएव उन्होंने कुछ समय पश्चात् ही चिकित्साको त्यागकर शिक्षण को अपना व्यवसाय बनाया, जिससे अपनी उपर्युक्त मनोकामना को पूरा करने के साथ ही जीवन यापन का साधन जुटा सकें। उन्होंने हरदोई जनपद के आई.आर. इण्टर कालेज सण्डीला तथा ऑग्ल विद्यालय भगवतनगर (जो अब बी.ए. इण्टर कालेज के नाम से प्रसिद्ध हैं [६९])

आचार्य शास्त्री, मध्यमा, हाईस्कूल और इण्टरमीडिएट आदि कक्षाओं में अध्ययन कार्य किया। अध्ययन और अध्यापन में रत रहते हुए त्रिपाठी जी ने उस सम्पूर्ण क्षेत्र में संस्कृत का यथेष्ट प्रचार एवं प्रसार किया : जिसके कारण वे वहाँ "गुरजी" के नाम से प्रसिद्ध हो गए। इसके अतिरिक्त आप नैमिषारण्य क्षेत्र की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं में सम्बद्ध रहे। अनेक संस्थाओं की तो स्थापना ही आपके द्वारा ही हुई थी [७०]। गांधी शताब्दी वर्ष १९६९ में उन्होंने लेखन कार्य आरम्भ किया [७१]। उन्होंने संस्कृत तथा हिन्दी में अनेक फुटकर लेख, निबन्ध, कविताएं तथा एकांकी नाटकों की रचना की, जो कि जयपुर से प्रकाशित "भारती" नामक संस्कृत पत्रिका और बाजीगंज विद्यालय से प्रकाशित "सुधा" नामक पत्रिका में संग्रहीत हैं। उन्होंने संस्कृत कविताओं का संग्रह "काव्य-संग्रह" माध्यमिक कक्षाओं के लिए "सुर-साहित्य-सरोवर" हिन्दी एवं संस्कृत निबन्धों का संग्रह "निबन्ध-संग्रह" एवं आत्मकथा हिन्दी में रची हैं। और निम्न कक्षोपयोगी "पाठावली" सरल संस्कृत में निबद्ध की हैं और एक हरिजन बालक द्वारा गांधी जी के उपवास को तोड़ने से सम्बन्धित

एक घटना के आधार पर संस्कृत भाषा में एक लघु एकांकी लिखा है, परन्तु इनमें से किसी भी कृति का अभी प्रकाशन नहीं हुआ है, इसके अतिरिक्त उन्होंने धार्मिक एवं कर्मकाण्ड सम्बन्धी पुस्तकों का लेखन भी किया है, परन्तु उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना है—"श्रीगान्धि-गौरवम् महाकाव्य [७२]। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा थी। अतएव उन्होंने उन युग प्रवर्तक के जीवन को आधार मानकर इस ग्रन्थ की सर्जना की। इससे न केवल संस्कृत वांङ्मय की ही अभिवृद्धि हुई, अपितु काव्य की प्रतिभा का सौरभ दूर-दूर फैल गया [७३]।

व्यक्तित्व एवं दिनचर्या—

संस्कृत साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान् और आयुर्वेद ज्योतिष धर्म एवं व्याकरण में अग्रणी श्री त्रिपाठी जी में अहंकार नाम मात्र को भी नहीं था। उनकी बुद्धि विवेक से तथा हृदय सरल प्रेम से विभूषित था। सदैव परोपकार में लगे रहना उनका स्वभाव था [७४]।

त्रिपाठी जी के विचार उच्च और जीवन बहुत सादा था। वह शुद्ध शाकाहारी भोजन करते थे तथा तामसिक पदार्थों के सेवन से दूर रहते थे। उनकी वेशभूषा आडम्बरहीन और व्यवहार विनय सौजन्य एवं विनोद से परिपूर्ण था [७५]।

वह सच्चे ज्ञानी और संवेदनशील सत होने के कारण जहाँ भी जाते थे करुणा की बेल फैलाते थे, प्रेम के पुष्प खिलाते थे और आस्था के दीपक जलाते थे।

संस्कृत साहित्य, ज्योतिष और वैद्यक के अतिरिक्त अध्यात्म, तन्त्र जैसे गहन विषयों में भी प्रतिभा-सम्पन्न उनकी गहरी पैठ थी [७६]। अपनी इन दैवी सम्पदाओं को निःस्वार्थ भाव से बाँटने वाले उदारमना त्रिपाठी जी के समक्ष अनेक जिज्ञासु इन विषयों से सम्बन्धित अनेक समस्याओं को लेकर आते थे और तृप्त होकर लौटते थे और विद्यार्थी तो निरन्तर आपके निवास स्थान पर उपस्थित रहकर अपने पूज्य गुरु के मुँह से निःसृत ज्ञानामृत का पान किया करते थे [७७] त्रिपाठी जी का यह कार्यक्रम प्रातः ४ बजे प्रारम्भ हो जाता था और रात्रि ८.३० बजे तक चलता रहता था। वे अपने शिष्यों को न केवल निःशुल्क शिक्षा देते थे अपितु उनसे पुत्रवत् स्नेह भी करते थे [७८]।

त्रिपाठी जी को भ्रमण करने का व्यसन था। वे नित्य ही कई-कई कोस पैदल घूमते थे। कभी-कभी समीपस्थ तीर्थस्थानों की यात्रा भी किया करते थे। सम्भवतः उनकी धर्मपरायणता, ज्योतिष तथा वैद्यक में रुचि एवं आध्यात्मिक वृत्ति उन्हें प्राकृतिक सुषमा से पूर्ण शान्तिदायक तथा पवित्र स्थानों में भ्रमण के लिए प्रेरित करती थी [७९]।

अवसान—

त्रिपाठी जी के जीवन के नाटक का पटाक्षेप आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा सवत् २०२९ वि. (२७ जून, १९७२) को हो गया था [८०]। परन्तु दूसरों के लिए नवजीवन लाने का प्रयास करने में सम्पूर्ण जीवन को लगा देने वाले त्रिपाठी जी मरकर भी अमर हो गए।

(क) श्री गान्धिचरितम् का कथानक

श्री साधुशरण मिश्र के श्री गान्धिचरितम् का कथानक भी प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है।

(ख) श्री गान्धिचरितम् में महाकाव्यत्व की संगति

श्री गान्धिचरितम् का आद्योपान्त पर्यावलोकन करने से वह महाकाव्य ही लगता है।। महाकाव्य की श्रेणी में रखे जाने के लिए श्री गान्धिचरितम् की महाकाव्यगत विशेषताओं को प्रस्तुत करना भी अनिवार्य है—

सर्गबद्धता—

श्री गान्धिचरितम् १९ सर्गों में उपनिबद्ध महाकाव्य है। ये सर्ग आकार की दृष्टि से न तो बहुत छोटे हैं और न ही बहुत बड़े। कवि ने उन्हें सन्तुलित रखा है।

महाकाव्य का प्रारम्भ—

प्रस्तुत काव्य का प्रारम्भ भी अन्य गान्धी सम्बन्धी महाकाव्यों की भान्ति मंगलाचरण से हुआ है। कवि ने सर्वप्रथम विघ्न विनाशक, मनोकामना पूर्ण करने वाले गणेश जी व. स्मरण किया है—

यस्याङघ्रिस्मरणं विघ्नव्रातध्वान्तदिवाकर.।
हेरम्ब· सिद्धिमदन प्रीतः कामान्स वर्षतात्।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/१)

तत्पश्चात् उन्होंने महात्मा गांधी के चरण कमलों की वन्दना की है और शिव-पार्वती को प्रणाम करके पण्डिता क्षमाराव की भाँति अपनी विनम्रता का भी परिचय दिया है—

नम· परमकल्याणसन्दोहामृतवर्षणे।
श्रीमद्गान्धिपद्द्वन्द्वराजीवाय सुशर्मणे।।
यत्स्नेहका- रुण्यसुधाभिषेको मलीमसं मे हृदयं विशुद्धम्।
चकार तौ साम्बशिवोपमानो प्रेम्णाच भक्त्यपितरौ नतोऽस्मि

--- --- --- --- --- --- --- --- ---

महात्मन; क्वातिमहच्चरित्रमगाधसिन्धुप ममद्वितीय।
क्वाऽहं भृशं मन्दमतिर्न गन्तुं तत्पारमीशोस्य विना कृपाभिः ।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/२-३,४)

काव्य के प्रारम्भ में आशीर्वादात्मक एवं वस्तुनिर्देशात्मक दोनों रूपों में मंगलाचरण किया गया है ।

खलनिन्दा एवं सज्जन प्रशंसा—

श्री साधुशरण मिश्र ने इस काव्य में दुष्ट व्यक्तियो के दुष्टता पूर्ण कार्यों की खूब आलोचना की है और दूसरों के लिए अपना जीवन समर्पित कर देने वाले, अपने सुख की परवाह न करने वाले, राष्ट्र के लिए स्वयं को समर्पित कर देने वाले, सबके साथ मित्रता रखने वाले सज्जन पुरुषों की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। उन्होने क्रिप्स, ओडायर, जार्ज पञ्चम, नाथूराम गोड्से के प्रति कडुवे वचन कहे हैं और महात्मा गाधी, मालवीय, सरोजिनी नायडू, घनश्यामदास बिडला, नारायणसिंह, सुभाष चन्द्र बोस, गोखले, तिलक, जवाहरलाल आदि राष्ट्र नेताओं के कार्यों के प्रति विमोहित होकर उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए उनकी अत्यधिक सराहना की है।

कथानक—

इस महाकाव्य का कथानक महात्मा गाधी की आत्मकथा पर आधारित है। इसमें महात्मा गांधी के जन्म से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किये गए संग्राम का और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् होने वाली गाधी को मरणोपरान्त तक की घटनाओं का विस्तृत ब्यौरा है।

नायक एवं प्रतिनायक—

प्रस्तुत काव्य के नायक मोहनदास कर्मचन्द गाधी हैं। वह भारत राष्ट्र-निर्माता हैं। वह सत्य एवं अहिंसा के पालक हैं। उनमें धीरोदात्त नायक के गुण विद्यमान हैं। उनका कोई शत्रु या मित्र नहीं है। वह सबके प्रति समान भाव रखते हैं। उन्हें अपने भारत राष्ट्र और भारतीय सस्कृति से विशेष अनुराग है। लोक सेवा को वह अपना धर्म समझते हैं। माता-पिता और गुरुजनों के प्रति उनके मन में अपार श्रद्धा है। परतन्त्रता को वह अभिशाप मानते हैं और उनका बाह्य व्यक्तित्व भी निराला है। वह किसी के प्रति द्वेषभाव नहीं रखते हैं। उनके गुणों के कारण ही न केवल भारतवासी अपितु विदेशी भी उनके प्रति आकर्षित होते हैं। उनका कोई प्रतिनायक नहीं है। उनका विरोध या लडाई केवल अन्याय के प्रति है। यद्यपि प्रस्तुत काव्य में नाथूराम गोड्से द्वारा गाधी जी का वध दिखाया गया है लेकिन उसके पीछे प्रतिशोध लेने जैसी कोई भावना नही है। कवि ने उनके अवसान को राम और कृष्ण की परम्परा में लाकर वध का परिहार कर दिया है। स्पष्ट है कि इस वर्णन से काव्य के गुणों में न्यूनता नही आ पाई है।

छन्द—

कवि को छन्दोयोजना में कौशल प्राप्त है। उन्होंने छन्द के वर्णन में स्वच्छन्दता का परिचय दिया है। उन्होने काव्यशास्त्र के नियमों के अनुसार छन्द-वर्णन नहीं किया है। ऐसा लगता है कि छन्दों की शास्त्रीय बद्धता उनके भाव-विस्तार में बाधक बनती है। अतः उन्हें जहां पर जैसा उचित लगा वैसे ही उन्होंने छन्द प्रयोग कर लिया। उनके काव्य में अनुष्टुप्, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, वसन्ततिलका, मालिनी, वशस्थ, द्रुतविलम्बित, शार्दूलविक्रीडित, वियोगिनी आदि छन्दों का प्रयोग करके छन्दोज्ञान का परिचय दिया

है। किसी-किसी सर्ग में तो केवल एक ही छन्द का प्रयोग किया है। यथा-अष्टादश सर्ग में केवल अनुष्टुप् छन्द का ही प्रयोग किया है। सर्ग के अन्त में सर्ग परिवर्तन करके महाकाव्य परम्परा को कायम रखा है। प्रथम सर्ग के अन्त में शार्दूलविक्रीडित, एकोनविंश सर्ग में वसन्ततिलका छन्द का प्रयोग किया है।

रस—

प्रस्तुत महाकाव्य का प्रधान रस वीर है। इसमें धर्म वीर रस की प्रधानता है क्योंकि राष्ट्र प्रेम ही सबसे बड़ा धर्म है। इसके अतिरिक्त काव्य में करुण, रौद्र, भयानक, वात्सल्य एवं भक्ति रस का भी यथास्थान वर्णन हुआ है। उसमें चिन्ता, मोह, शोक आदि व्यभिचारी भावों का वर्णन किया है।

अलंकार—

इस महाकाव्य में अलंकारों का प्रयोग काव्य को सौन्दर्यशाली और आकर्षक बनाने के लिए किया गया है। कवि ने इसमें अलंकारों का उपयुक्त प्रयोग करके काव्य में चार चाँद लगा दिये हैं। उन्हें अलंकार अत्यधिक प्रिय है और यह भावाभिव्यक्ति में सहायक होते है। इसके अलावा उन्होंने अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास, निदर्शना, विरोधाभास, एकावली आदि अलंकारों का प्रयोग भी किया है।

वर्ण्य विषय—

श्री माधुशरण मिश्र प्राकृतिक वर्णन में सिद्धहस्त हैं। उन्होंने प्रकृति का ऐसा सुन्दर वर्णन किया है कि हमारी आँखों के समक्ष उन-उन प्राकृतिक वस्तुओं का चित्र सा बन जाता है और हम प्रकृति की उस गोद में आनन्द पाते हैं। उन्होंने गंगा, यमुना, असी, वरुणा आदि नदियों का, समुद्र का अत्यधिक मनोमुग्धकारी वर्णन किया है। सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय और चन्द्रास्त का भी अतीव मञ्जुल वर्णन किया है। एक स्थान पर तो उन्होंने कालिदास के समान ही एक साथ उदय और अस्त होने वाले चन्द्रमा और सूर्य के माध्यम से जीवन में नियमित रूप से होने वाली परिवर्तनशीलता की ओर संकेत किया है। कुवलयवन और कोयल, भ्रमर, कमल और मन्द-मन्द प्रवाहित होने वाली वायु का चित्रण करके उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि यह प्रकृति के अनन्य उपासक हैं।

अन्य वर्णन—

प्राकृतिक वर्णन के समान कवि विविध वर्णन में भी निपुण है। महात्मा गांधी देशवासियों और प्रवासी भारतीयों की दशा का अवलोकन करने के लिए देश-विदेश में भ्रमण करते हैं। अतः उनकी इस यात्रा का वर्णन करते समय उन-उन देशों का वर्णन होना उचित ही है उन्होंने सुदामापुरी, वाराणसी, कलकत्ता, गुजरात, बिहार, लखनऊ आदि स्थानों का प्रभावोत्पादक और विस्तार से वर्णन किया है। इन स्थानों के अलावा कवि ने मोहनदास के जन्म, जन्म फल, विवाह, गोष्ठियों, यात्रा आदि का चित्रण भी बड़ी ही कुशलता से किया है।

सन्धि संगठन—

इस महाकाव्य में पाँचों अर्थप्रकृतियो और पाँचों अर्थअवस्थाओं सहित पाँचो सन्धियों का संगठन है। महात्मा गाधी का अध्ययन हेतु विदेश गमन करने की बात कहना बीज नामक अर्थप्रकृति है—

चिरादिदं भारतवर्षमीदृशं नितान्तदु:खम् परदासता गतम्।
अथास्य मुक्ति यदि कोऽपि साधयेत् ततोऽस्य तेषा सहयोग ईप्सित ।
(साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ३/६)

महात्मा गाधी का अफ्रीकावासी भारतीयों को गोरों के अत्याचारों से छुटकारा दिलवाने के लिए अफ्रीका जाना और उनके अधिकारों के लिए माँग करना मुख सन्धि का उदाहरण है। महात्मा गांधी भारत के विभिन्न स्थानों का भ्रमण करते हुए भारतीयों के प्रति अंग्रेजों द्वारा किये जा रहे दुर्व्यवहार का अनुभव करते हैं और नेताओं की सहायता से उनका दु ख करने में प्रयत्नशील हो जाते हैं। यहाँ पर प्रतिमुख सन्धि है। गाधी जी भारतीयो को अंग्रेजो के समान अधिकार दिलवाने के लिए आन्दोलन करते हैं तो उन्हें कारागृह में डाल दिया जाना है ये गर्भ सन्धि है और कारागृह से मुक्त होकर महात्मा गाधी का और भी तीव्रता से आन्दोलन करना और स्वराज्य प्राप्ति की माँग करना तथा अंग्रेज शासक द्वारा उनकी ये माँग स्वीकार कर लेना विमर्श सन्धि का उदाहरण है और अन्त में स्वराज्य प्राप्ति पर जवाहर लाल नेहरु का प्रधान मन्त्री पद पर आसीन होना और राजेन्द्र प्रसाद का राष्ट्रपति पद सम्भालते हुए भारत राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करना यहाँ पर निर्वहण सन्धि है।

महाकाव्य का नामकरण और कथा की सूचना—

इस महाकाव्य का नामकरण महात्मा गाधी के जीवन चरित के आधार पर किया गया है। इसमें महात्मा गांधी के बाह्य व्यक्तित्व एवं उनकी चारित्रिक विशेषताओं और उनके द्वारा किए गए स्वतन्त्रता संग्राम का चित्रण है। अतः सिद्ध है कि काव्य महात्मा गाधी के जीवन से सम्बन्ध रखता है और कथावस्तु के आधार पर यह नाम सटीक लगता है। काव्य में पहले सर्ग के अन्त में द्वितीय सर्ग में प्रस्तुत होने वाली कथा की सूचना दी गई है यथा-तृतीय सर्ग में महात्मा गाधी अपनी माता से विदेश गमन की अनुमति लेने जायेंगे इस बात की सूचना द्वितीय सर्ग के अन्त में है—

मातुर्धाम गृहं व्रजन विनयिनामग्रेसरो मोहन·।
कारुण्यामृतवारिधेः सुतजनाभीप्सार्थसिद्धेरसौ।।
किम्वाम्वेह वादिस्यतीति मनसा शका दधान शनै-
राप्नोत् तत् सहसाग्रजः समुदितैर्मित्रै· प्रियैर्भक्तिमान्।।
(साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम् २/१२८)

उद्देश्य—प्रस्तुत महाकाव्य का उद्देश्य तो महान् है ही। परतन्त्रता को राष्ट्र की प्रगति में बाधक बताते हुए स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए कृत संकल्प होना इस काव्य का मुख्य उद्देश्य

है। साथ ही देशवासियों में स्वाभिमान की भावना भरना, राष्ट्र के प्रति भक्ति भावना जगाना, अपने अधिकारों के लिए सजग रहना, भारतीय संस्कृति एवं कला की रक्षा करना, एकता की भावना का विस्तार करना भी इस काव्य का उद्देश्य रहा है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम श्रीगान्धिचरितम् को निर्विवाद रूप से महाकाव्य कह सकते हैं। प्रस्तुत महाकाव्य में वीर रस एवं युद्ध का वर्णन और नगर वर्णन अतीव आनन्ददायक और विलक्षण है। वह आधुनिक संस्कृत साहित्य का और विशेष रूप से गाधी साहित्य का बहुमूल्य महाकाव्य है।

(ग) श्रीगान्धिचरितम् के रचयिता का परिचय

महाकवि की जन्म स्थली—

श्रीगान्धिचरितम् महाकाव्य के रचयिता श्री साधुशरण मिश्र का जन्म हथुआ राज्य में हुआ था।[८१]

महाकवि के जन्म एवं वंश का परिचय—

साधुशरण मिश्र का जन्म गौतम गोत्र में ब्राह्मण परिवार में हुआ था। साधुशरण मिश्र के पिता का नाम जयराम मिश्र था। वह पार्वती सहित शिव के चरण-कमलों का रसामृत पाकर स्वय को धन्य मानते थे। वह हथुआ राज्य के अधीश्वर श्रीकृष्ण प्रतापशाही के प्रधान पण्डित के पद पर आसीन थे। वह प्रकाण्ड विद्वान् थे। वेदशास्त्र में तो वह पारंगत थे, उनकी तर्क शक्ति अपार थी, प्रतिपक्षी को वह मुँहतोड जबाब देते थे। प्रतिपक्षी उनके समक्ष ठीक वैसे ही नही ठहर पाते थे जिस प्रकार सूर्य के समक्ष अधकार नहीं ठहर पाता है। उनकी यश· राशि शरद्कालीन चन्द्रमा की भाँति समस्त संसार में फैल चुकी थी अपने पिता का वर्णन करते हुए स्वय कवि ने लिखा है कि—

उनके परबाबा का नाम शोभा मिश्र था। उनके बाबा का नाम श्री पलक मिश्र था। उनके पिता के दो भाई और थे जिनका नाम श्री त्रिलोकी और रघुवीर था। सभी भाई विद्वान् थे। तत्पश्चात् जयराम शास्त्री के पञ्च महाभूतों के सदृश पाँच पुत्र हुए जिन्होंने स्वाभाविक गुणों से और धर्म के प्रति आस्था रखकर संसार में यश प्राप्त किया। साधुशरण के अलावा उनके चारों भाईयों के नाम क्रमश· भगवती मिश्र, विन्ध्येश्वरी शर्मा, गोपाल मिश्र, राधाबल्लभ मिश्र है। साधुशरण मिश्र अपने भाइयों मे चौथे नम्बर पर हैं लेकिन वह गुणों में सबसे अग्रसर हैं।[८२]

कार्यक्षेत्र—

साधुशरण मिश्र महात्मा-गांधी के युग के रहे हैं। अतः उन्होंने उनके साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। वह एक उच्च श्रेणी के शिक्षक हैं। बिहार संस्कृत समिति के सदस्य रह चुके हैं और नरकटिया गज में स्थित श्री जानकी संस्कृत विद्यालय के प्रधानाचार्य के पद को अलंकृत कर चुके हैं उन्होंने विक्रम सम्वत् २०१९ अर्थात् १९५२ ई. में श्रीगान्धिचरितम् नामक महाकाव्य का प्रकाशन करवाया। प्रस्तुत काव्य के निर्माण में

कवि को सीता-राम के चरण-कमलों की महती कृपा प्राप्त हुई[८३]।

व्यक्तित्व—

साधुशरण मिश्र सादा जीवन व्यतीत करने के पक्षधर रहे हैं। वह विनम्र एवं कृतज्ञ भी हैं। अपना उपकार करने वाले के प्रति वह श्रद्धावनत रहते हैं। काव्य के प्रारम्भ में उन्होंने काव्य के प्रकाशन में सहायता प्रदानकरने वाले बिडला वंश की प्रशस्ति की है[८३]

एकोनविंश सर्ग के अन्त में कहा है कि समस्त विद्वत् समाज आदर पूर्वक काव्य का रसास्वादन करे। इस तरह उन्होंने कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए अपने महान् होने का परिचय दिया है।

वह अभी भी संस्कृत साहित्य की उत्तरोत्तर श्रीवृद्धि में संलग्न हैं। मेरी भगवान् से प्रार्थना है कि वह सौ वर्ष तक जीवित रह कर संस्कृत साहित्य को अन्य कृतियाँ प्रदान करते रहें जिससे कि संस्कृत साहित्य प्रेमियों का मार्ग दर्शन हो और हम प्रतिपल सस्कृत साहित्य के प्रति आस्था बनाए रखें।

(क) श्री गान्धिचरितम् का कथानक

कवि ने सर्वप्रथम यह कामना की है कि गंगा आदि नदियों से पवित्र एव लक्ष्मी आदि के द्वारा गाये गए यशोगान से, वाल्मीकि आदि कवियों द्वारा श्रेष्ठ, ब्राह्मणों द्वारा पूजित अनन्तकाल तक शोभा धारण करने वाला भारतवर्ष हमारा कल्याण करे।

अन्त में कवि ने दिव्योपम गुणों से युक्त गान्धी जी के अमरत्व की कामना की है और साथ ही कवि की यह भी कामना है कि समस्त मानव रामनाम एवं सत्य का पालन करते हुए रामराज्य की स्थापना करके गान्धी जी के स्वप्न को साकार करें।

प्रस्तुत काव्य में अति संक्षेप में मुख्य घटनाओं का उल्लेख है और वह श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी के "श्रीगान्धिगौरवम्' के कथानक से पृथक् नहीं है। अतः उसका प्रस्तुतीकरणअनावश्यक है।

(ख) श्री गान्धिचरितम् में खण्डकाव्यत्व

(अ) खण्डकाव्य : एक सामान्य विवेचन—

खण्डकाव्य कोई अलग विधा नहीं है, अपितु यह महाकाव्य का ही लघु रूप है। जैसे "महाकाव्य" को एक विशाल सागर की संज्ञा दी जा सकती है वैसे ही "खण्डकाव्य" को नदी की संज्ञा देना युक्ति संगत है। तात्पर्य यह है कि महाकाव्य का कथ्य विस्तृत होता है। खण्डकाव्य का कथ्य संक्षिप्त। महाकाव्य में सर्गबद्धता अनिवार्य है जबकि खण्डकाव्य सर्गबद्ध हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता। महाकाव्य रूपी काव्याकाश में ढेर सारे पात्रों का समावेश रहता है जबकि खण्डकाव्य में किसी व्यक्ति विशेष या किसी भाव विशेष का ही चित्रण होता है।

महाकाव्य की भाँति खण्डकाव्य में पुरुषार्थ चतुष्टय का चित्रण न होकर किसी एक को भी प्रारम्भ से अन्त तक चित्रित किया जाता है। खण्डकाव्य की सबसे प्रमुख विशेषता होती है उसका गेयात्मक होना। गेयात्मकता के कारण ही उसे "गीतिकाव्य" भी कहा जा सकता है। उसमें कोई न कोई संदेश अवश्य रहता है। महाकवि कालिदास के "रघुवंश" नामक महाकाव्य और "मेघदूत" नामक खण्डकाव्य के अवलोकन से दोनों काव्यों-महाकाव्य और खण्डकाव्य-का अन्तर स्पष्ट हो जाता है।

आचार्य रुद्रट ने खण्डकाव्य को "लघु काव्य" की संज्ञा दी है। उनका स्पष्ट अभिमत है कि इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से किसी एक की ही प्राप्ति होनी चाहिए और असमग्र अथवा एक ही रस पूर्णरूपेण अभिव्यक्त होना चाहिए[८५]।

खण्डकाव्य के सन्दर्भ में आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में कहा है कि "खण्डकाव्यं भवेत् काव्यस्येकदेशानुसारि च" अर्थात् जीवन के किसी एक भाग का उद्घाटन जिस काव्य में हो उसे खण्डकाव्य कहते हैं।[८६]। डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास में कहा है—"गीतिकाव्य काव्य का वह स्वरूप है, जिसमें काव्यत्व के साथ संगीतात्मकता प्रमुख होती है। इन पद्यों को वाद्यों के साथ गाया जा सकता है। शास्त्रीय दृष्टि से गीतिकाव्य को खण्डकाव्य कहा जाता है। क्योंकि इसमें महाकाव्य के पूरे गुण नहीं होते हैं।

इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में गीतिकाव्य की परिभाषा दी गई है—

"Lyrical poetry, a general term for all poetry which is, or can be,supposedto be, susceptable of being sung to the accompaniment of a Musical-Instrument[८७]

यह परिभाषा खण्डकाव्य में गेयात्मकता की प्रधानता पर बल देती है। खण्डकाव्य का तो ये प्रमुख गुण है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने संस्कृत साहित्य का इतिहास में कहा है कि "गेयता गीतिकाव्य का अनिवार्य उपादान है।"	पृ.सं.-३२२

यद्यपि काव्य का रसमय होना नितान्त अनिवार्य होता है लेकिन गीतिकाव्य अथवा खण्डकाव्य में यह मुख्य है। खण्डकाव्य में हृदय पक्ष मस्तिष्क पक्ष की अपेक्षा अधिक प्रबल होता है। इसमें संक्षिप्तता भी रहती है।

खण्डकाव्य की कुछ प्रमुख विशेषताएं होती हैं जोकि उसे महाकाव्य से अलग करती हैं—

(१) खण्डकाव्य श्रृंगार, नीति और धर्म आदि विषयों को लेकर लिखा जाता है।

(२) इन खण्डकाव्यों में संगीतात्मकता का प्रमुख स्थान है।

(३) इनमें सुख-दुःख, हर्ष-विषाद आदि भावों का चित्रण होता है। इनमें जीवन की मार्मिक अनुभूति रहती है।

(४) इसमें सरस भावों के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग होता है। लालित्य और मधुरता

का सन्निवेश होता है।

(५) खण्डकाव्य में कवि स्वच्छन्द रूप से सुनियोजित छन्द में अपने भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। स्पष्ट है कि खण्डकाव्य में भाव और भाषा का समायोजन रहता है।

(६) खण्डकाव्य में उदात्त भावनाओं और सुकुमार प्रकृति चित्रण होता है। अत: उसमें प्रसाद एवं माधुर्य गुणों का समावेश रहता है।

(७) खण्डकाव्य में कोमल भावों की प्रधानता होने के कारण उसमें शृंगार, वीर, करुण आदि रसों का वर्णन होता है। अद्भुत, भयानक आदि कोमल भावों को तिरोहित करने वाले रसों का उसमें अभाव रहता है।

(८) खण्डकाव्य मर्मस्पर्शी होते हैं। अत उसमें कलापक्ष की अपेक्षा भाव पक्ष अधिक प्रबल होता है।

(९) खण्डकाव्य में रमणी का बाह्य एवं अन्त: सौन्दर्य का प्रभावपूर्ण चित्रण होता है।

(१०) शृंगार प्रधान खण्डकाव्यों में प्रेम और धार्मिक खण्डकाव्यों में भक्ति रस प्रमुख है।

(११) इसमें भावों की अभिव्यक्ति पर कोई बन्धन नहीं होता है। विविध भावों का इसमें सन्नियोजन रहता है।

(१२) प्रकृति के अन्तः और बाह्य दोनों रूपों का इसमें चित्रण होता है।

(१३) खण्डकाव्य में, चाहे वह नैतिक हो अथवा धार्मिक हो या शृंगार प्रधान हो सभी में उदात्त नैतिक आदर्श हैं।

(१४) भाव, भाषा, रस, छन्द, अलंकार और मर्म पर प्रभाव जमाने वाली अनुभूति का समुचित रूप से संयोग होता है।

खण्डकाव्य के पद मुक्तक होते हैं। जिनमें पूर्वापर सम्बन्ध की अपेक्षा नहीं होती है। वह स्वतन्त्र रूप से ही रसास्वादन कराने में सक्षम होते हैं। महाकाव्य में प्रत्येक पद एक दूसरे से जुड़ा रहता है। आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में कहा है कि—"पूर्वापर निरपेक्षेणापि-हियेन रस सचर्वणाक्रियते तदेव मुक्तकम् और इसके अलावा उन्होंने रसपरिपाक को मुक्तक के लिए आवश्यक तत्व स्वीकार किया है।

(आ) श्री गान्धि चरितम् में खण्डकाव्य की संगति

श्री गान्धी चरितम् १११ पद्यों वाला खण्डकाव्य है। प्रस्तुत काव्य का नामकरण उदात्त गुणों से युक्त महात्मा गांधी के चरित के आधार पर किया गया है। यह सर्गों में उपनिबद्ध नहीं है। जबकि महाकाव्य के लिए सर्गबद्धता अनिवार्य है।

श्रीगान्धिचरितम् में एक ओर अपने देश की रक्षा के लिए आत्म समर्पण की भावना है तो दूसरी ओर शोक एवं आत्मग्लानि का भाव उसमें समाहित है। उत्साह भी है और भक्ति भावना भी है। यह प्रसाद गुण काव्य है। इस काव्य का प्रधान रस करुण रस है और

उत्साह का उसमें संयोग है। इसमें अपनी मातृ भाषा, संस्कृति एवं प्राचीन वेदों, वाल्मीकि आदि के प्रति आस्था एवं आदर का भाव सन्निहित है। यह क्रियाशील रहने और विषयों के प्रति अनासक्त रहने की प्रेरणा देता है। इसमें सदाचार का उपदेश दिया गया है और सत्य, अहिंसा एवं सत्याग्रह जैसे श्रेष्ठ धर्मों के पालन पर जोर दिया गया है। यह काव्य जहाँ हमें समानता का व्यवहार करने की शिक्षा देता है वहीं हमें कर्तव्य पथ पर भी ले जाता है।

प्रस्तुत काव्य में अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर किए गए अत्याचारों एवं उन्हें "कुली" एवं "काले" इन निम्न स्तरीय शब्दों से सम्बोधित किये जाने के कारण विक्षोभ प्रगट किया गया है और महात्मा जैसे महान् सत्य, अहिंसा के पालक, श्रम के प्रति आस्था रखने वाले जन्म भूमि के प्रति समर्पित के देश को स्वतन्त्रता दिलवाने के लिए किएगएअथक् प्रयासों का वर्णन किया गया है।

इसमें करुण रस की प्रधानता है और धर्म वीर रस का भी सुन्दर परिपाक हुआ है क्योंकि इसमें देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत काव्य का उद्देश्य देश को दरिद्रता एवं दुःख से छुटकारा दिलाना है। महात्मा गाधी का उन्हें सुख शान्ति प्रदान करने के लिए ईश्वर भक्ति में लीन होना भी इसी बात को पुष्ट करता है। काव्य में राष्ट्रिय भावना की प्रधानता है। प्राचीन वेदों के प्रति आस्था रखना, पाश्चात्य नृत्यादि से विमुख होना, एकता की भावना को बढ़ावा देना, सत्य एवं अहिंसा के मार्ग पर चलना, कारागृह की यातना सहना, देश के हित के लिए अपने प्राणों की परवाह न करना और लड़ते-लड़ते युद्ध भूमि में वीर गति प्राप्त करना आदि राष्ट्रिय भावना के द्योतक हैं।

स्पष्ट है कि यह एक राष्ट्रिय भावना से युक्त काव्य है। यद्यपि यह प्राचीन खण्डकाव्यों की परम्परा से बिल्कुल भिन्न है लेकिन उसके गुणों को दृष्टिपथ पर लाते हुए उसे खण्डकाव्य कहने में कोई संकोच नहीं होता है।

(ग) श्रीगान्धीचरितम् के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म-स्थली—

"श्रीगान्धिचरितम्" के रचयिता श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल का जन्म मुजफ्फर जिले के अन्तर्गत "चरथावल" नामक कस्बे में हुआ था(८८)

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

वसिष्ठ गोत्रीय श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल का जन्म अनुमानतः १९०४ बताया जाता है।(८०)। उनके बाबा का नाम पं. बद्रीदत्त शुक्ल एवं पिता का नाम माईदयालु शुक्ल तथा माता का नाम तुलसी देवी था। ब्राह्मण समाज में शुक्लजी के बाबा एवं दादाजी को अत्यधिक सम्मान प्राप्त था। श्री शुक्ल जी के दो चाचा थे जिनमें से छोटे चाचा का नाम मंगलराम शुक्ल था। बड़े चाचा के नाम के विषय में कोई उल्लेख नहीं मिलता है। शुक्ल जी की एक बड़ी बहिन कु. ब्रह्मा देवी हुई एवं एक अनुज मित्रसेन हुए।

शुक्ल जी के पूर्वजों के पास अथाह सम्पत्ति थी, लेकिन शुक्ल जी उन लौकिक सुखों से सर्वथा विमुख रहे। सन् १९१० में शुक्ल जी के बाबा, पिता-पिता एवं बड़ी बहिन सभी "प्लेग" महामारी से रोगाक्रान्त होकर काल कवलित हो गए। इस दुर्घटना के दौरान ब्रह्मानन्द शुक्ल एवं उनके लघु भ्राता मित्रसेन किसी तरह बच गये। आपके खानदानी ब्राह्मण ने इन छोटे-छोटे बालकों को मेरठ के अनाथाश्रम में छोड दिया। यह समाचार सुनकर शुक्ल जी के मामा देवीदत्त शर्मा दोनों बालकों को अपने पास बेहड़ा, आसा" ग्राम में ले आए और मातृ-विहीन उनका लालन पालन उनकी माता के समान करने लगे। पं. देवीदत्त के अनुज शिवनारायण शर्मा के चार पुत्रों में से प्यारेलाल शर्मा "वैद्यराज" ब्रह्मानन्द शुक्ल से अत्यधिक स्नेह करते थे तथा शुक्ल जी भी उन्हें पिता के समान ही आदर देते थे।

शिक्षा-दीक्षा—

आठ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत संस्कार हो जाने के पश्चात् आपने मुजफ्फर नगर के देवी पार्वती संस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य विद्यावाचस्पति पं. परमानन्द शास्त्री के अन्तेवासी होकर पं. भीमसेन चतुर्वेदी से वेद और कर्मकाण्ड की शिक्षा प्राप्त की। चतुर्वेदी जी के पुत्र सीताराम चतुर्वेदी जी के संस्मरण से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। श्री ब्रह्मानन्द जी पं. भीमसेन जी के अत्यन्त विश्वस्त, आत्मीय एवं प्रिय शिष्य थे। सन् १९१८ में आपने गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज बनारस से प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण की।

इसके पश्चात् शुक्ल जी ने अपने मित्र कुन्दन लाल शर्मा के साथ ही कनखल जाकर वहाँ के भागीरथी संस्कृत पाठशाला में प्रविष्ट होकर प. जगदीश चन्द्र शर्मा के आचार्यत्व में मध्यमा के प्रथम खण्ड की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १९२० में ब्रह्मानन्द शुक्ल पं. वृन्दावन शुक्ल से चार रुपये लेकर व्याकरण, साहित्य एव आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् श्री पं. चन्द्रमणि शास्त्री जी के शिष्य बनने के लिए अमृतसर गए। वह उस समय संस्कृत विद्यालय के प्रधानाचार्य थे। उनकी अध्यापन प्रणाली से शुक्ल जी अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्हीं की छत्रछाया में आपने मध्यमा द्वितीय खण्ड की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा १९२१ ई. में पंजाब विश्वविद्याय की "विशारद परीक्षा" में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। १९२३ ई. में लाहौर के "ओरिएण्टल" कालेज में पढ़ते हुए आपने एक साथ पंजाब विश्वविद्यालय की शास्त्री एवं काशीस्थ राजकीय संस्कृत कालेज की "मध्यमा" परीक्षा उत्तीर्ण की। "ओरिएण्टल" कालेज में आपने महामहोपाध्याय पण्डित शिवदत्त शर्मा दाधीमथ, कवितार्किक चक्रवती पं. नृसिंहदेव शास्त्री, पं. हरिनारायण शास्त्री एवं पं. रामचन्द्र शुक्ल से शिक्षा ग्रहण की। १९४२ ई. में कलकत्ता की प्रथमा तथा मध्यमा की परीक्षा देने जाने पर मार्ग में सामान के चोरी हो जाने पर जिस सेठ ने अपने घर रखा और सहायता दी, उनके प्रति आप आजीवन कृतज्ञ बने रहे।

वैवाहिक जीवन—

ब्रह्मानन्द शुक्ल का विवाह सन् १९२५ में कनखल निवासी पं. गोविन्दराम शास्त्री की पुत्री प्रियम्वदा के साथ हुआ। विवाह के इस शुभ अवसर पर उनके पिता

ब्रह्मानन्द शुक्ल का विवाह सन् १९२५ में कनखल निवासी पं. गोविन्दराम शास्त्री की पुत्री प्रियम्वदा के साथ हुआ। विवाह के इस शुभ अवसर पर उनके पिता तुल्य प्यारे लाल जी शर्मा को अतीव हर्ष हुआ। खुरजा में रहते हुए आपको मात-पुत्र रत्नों की प्राप्ति हुई, जिनमें से दो पुत्र काल-कवलित हो गये।

कार्यक्षेत्र—

ब्रह्मानन्द शुक्ल १९२४ ई. में अम्बाला जिले के डेराबासी कस्बे में रवि संस्कृत एग्लो विद्यालय में प्रधानाचार्य के पद पर नियुक्त हुए। यहाँ पर तीन वर्ष तक अध्ययन करने के पश्चात् आपने कालका (शिमला) के सनातन धर्म संस्कृत विद्यालय में प्रधानाचार्य के पद को अलकृत करते हुए अध्यापन कार्य किया। इसके पश्चात् मुजफ्फर नगर में प्रधानाचार्य के रूप में रहे। उनकी लोकप्रियता एव विद्वत्ता से प्रभावित होकर उनके गुरुवर विद्यावाचस्पति प. परमानन्द जी शास्त्री (खुरजा के राधेकृष्ण संस्कृत कालेज के प्रधानाचार्य) ने उन्हें छात्रों को पथ प्रदर्शित करने के लिए वहीं बुला लिया। अतः आप उनके स्नेह पूर्ण आमन्त्रण को स्वीकार करके वहाँ आ गये और राधेकृष्ण संस्कृत कालेज में सस्कृत-विभागाध्यक्ष के पद को सुशोभित करते हुए छात्रों की समस्याओं का समाधान करते हुए संस्कृत की सेवा में जुट गए। तथा सन् १९३५ से लेकर १० फरवरी १९७० तक आप अध्यापन में निमग्न रहे। उन्होंने अध्यापन करते हुए एम. ए. संस्कृत की परीक्षा उत्तीर्ण की। (९०)।

श्री राधाकृष्ण कॉलेज के प्रति आपके मन में विशेष लगाव था। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि बनारस जैसे अन्य विद्यालयों से अधिक वेतन का आश्वासन देकर आमन्त्रित किये जाने पर भी आप वहाँ नहीं गये।

व्यक्तित्व—

श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वह एक असाधारण विद्वान् थे। वह अपने वाक्-चातुर्य से अपने समीप आने वालों को सहज में ही आकृष्ट कर लेते थे। जहाँ कहीं भी आप भाषण देने जाते थे वहाँ पर उपस्थित विद्वान् आपकी मुक्त कठ से प्रशंसा करते थे। उन्हें दूसरों की उन्नति से अपार आनन्द मिलता था। वह अन्यायपूर्वक उपार्जित किये गये धन के सर्वथा विरोधी थे। स्वावलम्बन एवं राष्ट्र प्रेम की भावना तो उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। इसके अतिरिक्त वह सच्चरित्र, कर्तव्यपरायण, न्यायप्रिय एवं निम्नवर्ग के प्रति प्रेम एवं आदर का भाव रखने वाले एवं प्रसन्नवदन थे।

संस्कृत भाषा के प्रति भी आपको विशेष लगाव था। यही कारण है कि आपने अपने पुत्रों को भी संस्कृत की शिक्षा दिलवायी। आपका स्वास्थ्य भी काफी अच्छा था, किन्तु १९५९ में एक पैर में जूते के काटने और मधुमेह रोग हो जाने के कारण आपका स्वास्थ्य खराब हो गया। १२ वर्षों तक एक पैर की खराब हालत में भी आपका अध्ययन, मनन एवं भगवद्भजन पूर्ववत् चलता रहा।

उनके पारिवारिक गण (पत्नी, प्रियम्बदा शुक्ला, लघुभ्राता मित्रसेन शुक्ल, एव पाँचों पुत्र डॉ. कृष्णकान्त शुक्ल, प्रो. उमाकान्त शुक्ल, डॉ. रमाकान्त शुक्ल, लक्ष्मीकान्त शुक्ल, विष्णु कान्त शुक्ल, पुत्रियाँ, पौत्र-पौत्रिया आदि अनेक लोग) एवं कतिपय मित्र एवं शिष्य आदि के पास उनके विषय में प्रभूत जानकारी उपलब्ध है।

रचनाएं—

शुक्ल जी ने कुछ मौलिक रचनाएं की हैं और कुछ ग्रन्थों का सम्पादन एवं व्याख्या भी की है। उनकी कतिपय रचनायें प्रकाशित हैं एवं कतिपय अप्रकाशित।

कवि ने हिन्दी एवं संस्कृत दोनों भाषाओं में काव्य सृजन किया है। कवि ने उद्बोधन नामक काव्य रचना करके उसमें गीता के आधार पर कृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिये गये उपदेशों के माध्यम से भारतवासियों को अंग्रेजों के साथ जूझने का उपदेश दिया है। उन्होंने प्रस्तुत काव्य की रचना सन् १९४७ में की थी अत: उसकी विषय वस्तु समयानुकूल प्रतीत होती है एवं उसमें राष्ट्रीय भावना का समावेश भी है। प्रस्तुत रचना हिन्दी में है।

उन्होंने हिन्दी भाषा में ही मणिनिग्रह नामक खण्डकाव्य की रचना की है। इसमें उन्होंने नारी की गौरव प्रतिष्ठा का अतीव प्रभावोत्पादक चित्रण किया है। प्रस्तुत कृति में जीवन मूल्यों को सूक्तियों के माध्यम से चित्रित किया गया है।

महात्मा गान्धी के जीवन-चरित को उजागर करने एव जन-जन में राष्ट्रीय भावना का संचार करनेहेतु "गान्धीचरितम्" नामक खण्डकाव्य की रचना सस्कृत भाषा में की है।

इसके अलावा "नेहरुचरितम्" नामक महाकाव्य उनकी मौलिक एवं प्रकाशित कृतियों में सबसे अन्तिम कृति है। प्रस्तुत काव्य की रचना सन् १९६८ में हुई थी। इसमें उन्होंने जवाहरलाल नेहरु के जीवन पर प्रकाश डाला है।

इन मौलिक कृतियों के अतिरिक्त उनेक सम्पादित एवं व्याख्यात ग्रन्थोंमें सावित्र्युपाख्यानम्, मुद्रा राक्षसम्, मृच्छकटिकम्, हर्षचरितम् एवं उत्तरचरितम् आदि हैं। इसके साथ ही उन्होंने "साधु विज्ञान-ज्योति" एवं "विद्यावाचस्पति पं. परमानन्द शास्त्री का जीवन चरित" आदि पत्र-पत्रिकाओं का भी प्रणयन किया है। उनके द्वारा प्रणीत अभिनन्दन पत्रों में मालवीय जी का "अभिनन्दन पत्र" तो ऐतिहासिक महत्व रखता है।

अवसान—

ब्रह्मानन्द शुक्ल जी ने राधाकृष्ण संस्कृत कालेज के प्रधानाचार्य पद को सुशोभित करते हुए ही १० फरवरी १९७० को वसन्त पञ्चमी के दिन देह त्याग किया। डा. रमाकान्त शुक्ल के शोध प्रबन्ध जैनाचार्य रविषेण कृत पद्मपुराण और तुलसीकृत रामायण में इस तथ्य का उल्लेख हुआ है—

"वाग्देवतावतारो वाग्देवीमर्चयित्रित्यम्।
वाग्देवी-पञ्चम्यां वाग्लीनो योऽभवज्जनकः।।"

यद्यपि आज उनका लौकिक शरीर विलीन हो गया है, किन्तु अपनी अनुपम कृतियों के माध्यम से वह पार्थिव शरीर के रूप में आज भी साहित्य प्रेमियों के मध्य विद्यमान हैं और सभी का पथ-प्रदर्शन करने में लगे हुए हैं। भगवान् से प्रार्थना है कि विद्वत्सभा में सदैव उनका नाम आदर से लिया जाता रहे और साहित्य प्रेमी उनके अनुसार साहित्य समाज की सेवा करते हुए अपने जीवन को सफल बनायें और उन्नति के पथ पर बढ़ते हुए सत्कार्यों से अपना नाम अमर करें।

(क) भारत राष्ट्ररत्नम् में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कथानक

प्रस्तुत काव्य में महात्मा गाधी द्वारा किए गए प्रयासों एवं व्यक्तित्व का उल्लेख है। अतः उसका निर्देश आवश्यक है।

(राष्ट्रहितैषी पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री ने सर्वसाधारण के लिए भी बोधगम्य शैली में प्रस्तुत मुक्तककाव्य लिखा है। इसमें उन्होंने अनेक राष्ट्रभक्त नेताओं को अपने काव्य का विषय बनाया है, जिससे समाज उनके जीवन एव कार्यों से प्रेरणा ले सकें। राष्ट्रपिता महात्मा गाधी भी उन्हीं राष्ट्रभक्तों में से एक हैं।)

सर्वप्रथम सत्य को भगवान् मानने वाले धैर्यशाली, सत्याग्रही, गाधी की विजय-कामना की गई है। तत्पश्चात् कहा है कि जो न्यायप्रिय, सत्यनिष्ठ, विवेकी, एकता के पक्ष पाती, अहिंसापालक महात्मा गाधी विकारोत्पादक हेतुओं के द्वारा भी विचलित नहीं हुए, जोकि संसार के प्रति विरक्त भाव रखते हुए देश-प्रेम में आस्था रखते थे, निष्काम कर्मयोगी थे, धर्म-तत्त्वों के ज्ञाता, आडम्बर शून्य, ब्रह्मचर्य पालक एव राम-कृष्ण राणा प्रताप एवं शिवाजी के समतुल्य थे . जो कि समस्त धर्म के महात्माओं के प्रति श्रद्धावान् थे : समस्त जनता भेदभाव त्यागकर जिनकी रामधुन गाया करती थी : अल्पवस्त्रधारी होने के कारण जोकि कृषि प्रधान भारत देश की प्रतिमूर्ति थे : जिनके सम्पर्क से निम्नवर्गीय लोगों ने शिक्षा में उन्नति करके प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति की, जोकि दृढ़ निश्चयी, आस्तिक, जितेन्द्रिय, विषम परिस्थितियों में भी समभाव बनाये रखने वाले थे, जिनके सम्पर्क से अन्य लोग मालिन्य रहते हो गए, जिनका मन सदैव राष्ट्रोन्नति की भावना से ओतप्रोत रहता था, जिन्हें अपने गुणों के बल पर "बापू" यह पदवी प्राप्त हुई, जिन्होंने देशोन्नति एवं स्वराज्य प्राप्ति हेतु चर्खा चलाने एवं श्रम को ही तपस्या एवं यज्ञ के रूप में स्वीकार किया, सभी को अभय प्रदान करने वाले जिनकी समस्त जनता अनुकर्ता थी, जोकि पाप से घृणा करते थे पापी से नहीं, स्वराज्य को समस्त सुखों का आगार मानकर समस्त जनता ने जिनका अनुकरण करते हुए प्राणों की बाजी लगाकर स्वतन्त्रता प्राप्त की और जोकि स्वतन्त्र भारतवर्ष में रामराज्य की स्थापना करना चाहते थे : ऐसे उन यशस्वी, यम-नियमों के पालक अग्रगण्य विद्वान् महात्मा गाधी की कीर्ति समस्त देश में फैले, साथ ही सभी लोग छल-कपट रहित निर्मल बुद्धि से युक्त होवें।

(ख) राष्ट्ररत्नम् में खण्डकाव्य की संगति

राष्टररत्नम् एक मुक्तक खण्डकाव्य है। इस काव्य में [२१] कविताएं हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी इसकी पाँचवीं कविता है। इसमें महात्मा गाधी के राष्ट्रीय भावना परक विचारों का ३१ पद्यों में विवेचन किया गया है। इस काव्य में भारतराष्ट्र के लिए अपना जीवन समर्पित करने वाले देशभक्त नेताओं के विचारों एवं कार्यों का विवेचन है। वह राष्ट्र के लिए रत्न स्वरूप हैं। महात्मा गांधी भी उन्हीं रत्नों में से एक हैं जिन्हें अपनी भारतभूमि के गौरव की रक्षा का सदैव स्मरण रहा।

प्रस्तुत काव्य में एकता की भावना का विस्तार किया गया है, स्वदेशाभिमान की भावना जागरित की गई है। अस्पृश्यता की भावना का विनाश करके सर्वत्र समता की भावना का विकास किया गया है। परतन्त्रता को सबसे बडा अभिशाप स्वीकार और जल्दी से जल्दी स्वतन्त्रता प्राप्ति का प्रयास किया गया है। श्रम को समाज के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया गया है। सत्य को भगवान् स्वरूप मानने वाले सत्याग्रह के नेता महात्मा गांधी की विजय कामना की गई है। साथ ही परिश्रमशीलता, उद्यमपरायणता एव आत्मनिर्भरता जैसे गुणों की प्रशंसा की गई है।

प्रस्तुत मुक्तक काव्य प्रसाद गुण प्रधान है। यह सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य शैली में लिखा गया है। इस काव्य से हमें प्रेरणा मिलती है कि हमें अपने देश की उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचाने और उसे अग्रेजी शासन जैसे किसी भी बाह्य शासन में रहने से बचाने के लिए अहिंसा एवं शान्ति के मार्गका अवलम्बन लेना चाहिए और परिश्रम करना चाहिए तथा एकता के भाव का विस्तार करना चाहिए और सदैव मैत्री के भाव का विकास करना चाहिए।

इस काव्य में राष्ट्रोन्नति के लिए उत्साह एवं प्रेरणा प्रदान करना ही मुख्य ध्येय रहा है अतः उसी के अनुकूल सुन्दर भावों एवं भाषा का प्रयोग किया गया है। अतः यह राष्ट्रीय भावना परक मुक्तक काव्य की कोटि में आने के सर्वथा उपयुक्त है।

(ग) राष्ट्ररत्नम् के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म स्थली—

"राष्ट्ररत्नम्" के रचयिता श्री पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री का जन्म उत्तर प्रदश में मयराष्ट्र मण्डल के अन्तर्गत हस्तिनापर के समीप मोरना नामक गुणि ग्राममें हुआ था [११]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

श्री पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री का जन्म सम्वत् १९७२ (सन् १९१५) को आषाढ़ मास की द्वितीया तिथि को सुप्रतिष्ठित श्रेष्ठ ब्राह्मण परिवार में कौशिक गौत्र में हुआ था। उनके पिता वैद्यराज श्री लक्ष्मीनारायण शर्मा कौशिक गोत्रोत्पन्न पुण्य स्वरूप थे। उनकी माता का नाम "लाडों" था। ये अपने पुत्र को पाँच वर्ष की अवस्था में छोड़कर परलोक सिधार गई [१२]।

शिक्षा-दीक्षा—

कवि की प्रारम्भिक शिक्षा १९२६-२७ को मवाना खेटके में सम्पन्न हुई। आपने चौदह वर्ष की अवस्था में मातृ स्नेह से रहित होकर और पिता के उपेक्षित व्यवहार के कारण घर का परित्याग करके सिकन्दराबाद के गुरुकुल में एक वर्ष बिताकर संस्कृत का अध्ययन करने की प्रबल आकांक्षा हेतु अल्प समय में ही गढ़ मुक्तेश्वर विद्यालय से प्रथमा की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् कवि ने सन् १९३१ में बदरीनाथ तीर्थ स्थानों में भ्रमण करते हुए कुछ महीने ऋषिकेश में व्यतीत करके १९३२ से लेकर १९३६ तक लवपुर, अमृतसर, कर्तारपुर, जालन्धर आदि अनेक स्थानों में सरस्वती उपासिका शीतला मन्दिर संस्कृत महाविद्यालय से क्रमश: विशारद की परीक्षा पास की और फिर वहीं से शास्त्री परीक्षा भी उत्तीर्ण की। सन् १९३७ में पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री ने पद-वाक्य के प्रकाण्ड पण्डित दर्शन केसरी योगिराज आचार्य मुक्तिराम शर्मा के समक्ष संस्कृत साहित्य पर और अधिक जानकारी प्राप्त करने हेतु अपनी महती जिज्ञासा व्यक्त की। उनके इस प्रकार के आग्रह और लगन एवं कुशाग्र बुद्धि से प्रभावित होकर आचार्य मुक्तिराम ने उन्हें निगम-आगम आदि ग्रन्थों का ज्ञान करवाया। लगनशीलता एवं कठोर परिश्रम के बल पर आप संस्कृत साहित्य के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त कर सके[९३]।

कार्यक्षेत्र—

श्री यज्ञेश्वर शास्त्री ने १९३९ के पूर्वार्द्ध में केम्बलपुर समाज में पुरोहित का कार्य किया और उत्तरार्द्ध में आपने राष्ट्रीय-भावना से प्रेरित होकर हैदराबाद के स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लिया। परिणामत: आपको छह माह की कारागृह यातना भोगनी पड़ी। सन् १९४० से लेकर सन् १९५० तक आपने स्वतन्त्र अध्यापन करके जीविकोपार्जन किया। साथ ही आपके मन में समाज सेवा करने की महान् अभिलाषा थी। अतः आपने "मवाना-कलाँ" नामक आर्य-समाज में अवैतनिक पुरोहित का कार्य किया। सन् १९५० से लेकर १९७३-७५ तक आपने मवाना नामक नगर में विद्यमान "नवजीवन-किसान महाविद्यालय" में अध्यापन का कार्य किया [९४]।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व—

श्रीमान् यज्ञेश्वर शास्त्री का व्यक्तित्व निराला है। उनमें सदाचार तो कूट-कूट कर भरा हुआ है। वह अपने व्यवहार से कभी किसी को भी दुःख नहीं पहुँचाते हैं। उनकी वाणी में अपार मधुरता है, जोकि सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपनी ओर सहज में ही आकर्षित कर लेती है। आप अत्यधिक सरल चित्त वाले हैं और समाज की सेवा को अपना धर्म समझते हैं[९५]।

सरस्वती की उपासनामें तल्लीन रहते हुए यज्ञेश्वर शास्त्री ने हिन्दी एवं संस्कृत दोनों ही भाषाओं में काव्य सृजन किया। उन्होंने अतीव मनोहारी एवं ललित पदावली से युक्त "दयानन्द" नामक खण्डकाव्य की रचना की । अपनी इस काव्य कृति से उन्होंने न केवल विद्वत्मण्डली को प्रभावित किया, अपितु काव्य-मर्मज्ञ में भी अपना स्थान बना लिया। अनेक अभिनन्दन पत्रों की रचना करके आपने विद्वानों की सभा में प्रतिष्ठा एवंप्रशस्ति

प्रशस्ति प्राप्त की। इसके अतिरिक्त उन्होंने जन-जन में राष्ट्रीय चेतना का विकास करने हेतु महारानी लक्ष्मीबाई, राष्ट्रवादी दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, महामना मदन मोहन मालवीय, महात्मा गाधी एवं अन्य राष्ट्र नेताओं के जीवन चरित्रों को उजागर करने के लिए राष्ट्ररत्नम् नामक काव्य की सर्जना की [९६]।

वह आज भी संस्कृत साहित्य के विकास में संलग्न हैं। भगवान् उन्हें दीर्घायु दें, जिस से वह साहित्य की सेवा करके समाज को उपकृत करने में समर्थ हो सकें।

(क) गान्धिगौरवम् का कथानक

प्रस्तुत काव्य का कथानक भी अति संक्षिप्त है और उसमें ऐसी किसी बात का उल्लेख नहीं है जिसका उल्लेख करने की आवश्यकता है। गुणवान् एवं उत्कृष्ट चरित्र से मण्डित महात्मा गाधी के सदा-सदा के लिए मौन धारण कर लेने पर सभी को दुःख हुआ।

अन्त में कवि ने यह कामना की है कि जनता के मन को आकर्षित करने वाले, सदाचारोत्कर्ष को बढ़ावा देने वाले, पवित्र विचारों को प्रकाशित करने वाले राष्ट्रपिता गांधी की शुभेच्छा (रामराज्य की कल्पना) को पूर्ण करने के साथ समस्त प्राणियों में सत्य के प्रति आस्था हो, राष्ट्रभक्ति जागरित हो और विश्वबन्धुत्व की भावना का संचार हो

(ख) गान्धिगौरवम् मे खण्डकाव्य की संगति

यह प्रबन्धात्मक खण्डकाव्य है। इसमें १२५ पद्य हैं। इस काव्य में महात्मा गाधी के गौरवपूर्ण एवं राष्ट्र के लिए अत्यधिक बहुमूल्य कार्यों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। महात्मा गाधी द्वारा इंग्लैण्ड में संगीतादि से विमुख रहकर अपने कर्तव्य का अवलम्बन लेना भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का विदेश में रहते हुए भी पालन करना चाहिए ऐसा संकेत दिया है। स्वदेशी वस्तुओं का बहुलता से प्रयोग करना चाहिए, राष्ट्र की सर्वात्मना उन्नति के लिए नारी शिक्षा पर बल देना चाहिए, अंग्रेजी भाषा के प्रयोग और उस पर गर्व करने की अपेक्षा राष्ट्रभाषा का प्रयोग और उस पर ही गर्व करना चाहिए। देश की उन्नति तभी हो सकती है जब कि समाज के लोगों का शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक सर्वांगीण विकास हो सके।

इस काव्य में परतन्त्रता के परिणाम स्वरूप जो भारतीय कला, विद्या, उद्योग आदि का ह्रास हुआ उसके प्रति क्षोभ प्रकट किया गया है और अज्ञानता एवं भूख-प्यास से पीड़ित होना पतन का कारण बताया है और इन बुराईयों से छुटकारा पाने हेतु कुटीर उद्योग पर बल दिया गया है। निःशस्त्र युद्ध की बात कही गई है। प्रत्येक भारतीय को चाहिए कि वह प्रेम, एकता, बन्धुत्व, सत्य, अहिंसा, साहस, उत्साह आदि उदात्त गुणों का अवलम्बन लें। इन गुणों के आश्रय से हमारी उन्नति के मार्ग में कोई बाधा नही आ सकती है। साथ ही शत्रु के

प्रति भी मैत्री एवं सद्भाव रखना चाहिए। इस काव्य में कारागृह की यातना सहते हुए और अन्याय कष्ट सहकर भी अपने उद्देश्य की प्राप्ति में संलग्न रहने और राष्ट्र की सर्वस्वता रक्षा करने की जो बात कही गई है वह राष्ट्र के प्रति भक्ति भाव का ही प्रतीक है। महात्मा गाधी सहित सुभाषचन्द्र बोस, भगतसिंह आदि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जो परिश्रम किया और अदम्य साहस का परिचय दिया तथा अपने प्राण भी न्योछावर कर दिये वह प्रशसा का विषय होने के साथ-साथ देशवासियों के मन में अदम्य साहस एवं उत्साह तथा स्वदेशाभिमान की भावना को जागरित करता है, उसके गौरव को बनाये रखने की प्रेरणा देता है। इसके अलावा इसमें कठोर परिश्रम के महत्त्व को समझाते हुए समस्त कार्यों को समान रूप से महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया गया है, विश्वबन्धुत्व की भावना एवं रामराज्य के स्वप्न को साकार करने की बात कही गई है।

इस काव्य में प्रसाद एव माधुर्य गुण है। यह वीर रस प्रधान काव्य अवश्य है किन्तु इस काव्य की वीरता अन्य काव्यों की अपेक्षा भिन्न है। इसमें अस्त्र-शस्त्रों के बल पर युद्ध करने की बात कही गई है। अत इसमें विकटाक्षरों का प्रयोग नहीं हुआ है। आज के युग में यह काव्य बहुत ही उपयोगी है। इसके अनुकरण से साम्प्रदायिक दगों को समाप्त किया जा सकता है। किसी भी समस्या के समाधान के लिए मन को शान्त रखना चाहिए क्योंकि वैरभाव से समस्या बढती है घटती नहीं है। अत सम्पूर्ण काव्य में राष्ट्रीय भाव ही देखने को मिलता है। यह एक राष्ट्रभाव काव्य है। वैसे भी खण्डकाव्य मर्मस्पर्शी होना चाहिए। इस काव्य से समाज निश्चय ही प्रभावित होगा और इन उदात्त भावों का आश्रय लेकर उन्नति के पथ पर अग्रसर होगा।

इस काव्य में छन्द अलंकार आदि भावों के सर्वथा अनुकूल हैं। स्पष्ट है कि भाव, भाषा का, मन्जुल समायोजन है। अतः हम इसे निर्विवाद रूप से प्रबन्धात्मक खण्डकाव्य कह सकते हैं।

(ग) गान्धिगौरवम् के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म-स्थली—

गान्धिगौरवम् के रचयिता डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल का जन्म धवलपुर नामक स्थान (उत्तर प्रदेश) में हुआ था[९७]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

रमेशचन्द्र शुक्ल का जन्म सन् १९१९ को एक पवित्र "कान्यकुब्ज" ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता श्री गुरुदेव शुक्ल प्रकाण्ड विद्वान् थे और कुलीन स्त्रियों में मुकुट के समान सर्वादरणीय गंगा नाम वाली माता थीं[९८]।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व—

डॉ॰ रमेशचन्द्र शुक्ल को आधुनिक संस्कृत के साहित्यकारों में अत्यधिक सम्मान दिया जाता है। वह प्रखर एव प्रत्युत्पन्न मति विद्वान् हैं। संस्कृत भाषा के प्रति उनका विशेष अनुराग है। वह श्री राम के प्रति आस्था रखते हैं। अपनी काव्य कृतियों की निर्विघ्न समाप्ति के लिए भारत द्वारा पूजनीय रामचन्द्र की चरण धूलि को सिर से लगाकर उन्हें प्रणाम करते हैं। वह अपनी कृतियों के माध्यम से भारतीय जनता का मार्ग प्रशस्त करते हैं जिससे वह समस्त विश्व में अपना एक सम्माननीय स्थान बना सकें। उन्हें किसी के समक्ष नतमस्तक न होना पड़े[९९]।

डॉ॰ रमेशचन्द्र शुक्ल श्री वार्ष्णेय कालेज, अलीगढ (उत्तर प्रदेश) में संस्कृत विभाग के प्राध्यापक के पद पर आसीन रह चुके हैं[१००]।

कवि की समस्त कृतियाँ राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हैं तथा सभी कृतियाँ हमें व्यवहारिक शिक्षा प्रदान करती हैं। उनके द्वारा विरचित एवं सम्पादित कृतियाँ इस प्रकार हैं—प्रबन्ध रत्नाकर, नाट्यसंस्कृति सुधा, गान्धिगौरवम्, लालबहादुरशास्त्रिचरितम्, बंगलादेश, संस्कृत प्रबन्ध प्रभा, विभावना, चारुचरितचर्चा, गीतमहावीरम्, भारत-चरितामृतम्, इन्दिरा यशस्तिलकम्, सुगमरामायणम्, आदि[१०१]।

डॉ॰ रमेशचन्द्र शुक्ल द्वारा विरचित इन कृतियों में अधिकांश लघु काव्य हैं और कुछ गद्य काव्य भी हैं।

यह अतीव सौभाग्य का विषय है कि उन्हें अपनी गान्धिगौरवम् जैसी राष्ट्रीय कृति पर पुरस्कृत किया गया है[१०२]। तथा इसकी रचना एवं प्रकाशन दोनों ही गांधी जन्म शताब्दी (सन् १९६९) के अवसर पर सम्पन्न हुए[१०३]।

वह आज भी संस्कृत साहित्य की सेवा में जुटे हैं। मैं कामना करती हूं कि वह सौ वर्ष तक जीयें और संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि करते हुए हमारा मार्गदर्शन करते रहें।

गान्धि-गाथा का कथानक

पूर्वभाग—

इसके पूर्वभाग में महात्मा गांधी के जीवन से सम्बद्ध घटनाएं हैं।

उत्तरभाग—

उत्तर भाग में उनके कतिपय सिद्धान्तों एव विचारों को प्रस्तुत किया गया है।

(ख) गान्धि-गाथा में खण्डकाव्य की संगति

गान्धि-गाथा मेघदूत की भाँति दो भागों (पूर्व भाग और उत्तर भाग) में विभक्त है। इसके प्रथम भाग में २४७ पद्य हैं और उत्तरभाग में १०९ पद्य हैं। पूर्व भाग में महात्मा गांधी की जीवन की गाथा है और द्वितीय भाग में उनके कतिपय विचारों का गान्धि-वाणी इस नाम से विश्लेषण किया गया है। इस काव्य में महात्मा गांधी के आदर्श विचार, हृदयस्पर्शी जीवन वर्णन का ऐसा समायोजन है कि पाठक उस ओर सहज में ही आकर्षित हो जाता है। इस

काव्य में भारत के परिमण्डल में व्याप्त बुराईयों का और उन्हें समाप्त करने के उपायों का दिग्दर्शन है। महात्मा गांधी सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन में और समाज के मनोमस्तिष्क में छा से गये हैं। इसमें माता-पिता के प्रति सेवा भाव एवं गुरुजनों के प्रति श्रद्धा का आदर्श उपस्थित किया है वह निश्चय ही प्रेरणास्पद है। अच्छाइयों और बुराइयों में भेद का ज्ञान रखते हुए सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी गई है समस्त धर्म ग्रन्थों के प्रति आस्था का भाव जगाकर, समता को भावना स्थापित करके राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भाव की पुष्टि हुई है। विदेश में रहकर अपनी सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा करते हुए उसका गौरव बढ़ाना चाहिए। इस सुविचार का पालन महात्मा गांधी ने मांस, मदिरा एवं नृत्य से विमुख रहकर किया। दादाभाई नौरोजी आदि के द्वारा किये गये कार्यों से राष्ट्राभिमान को बल मिला है। इसमें यह भी कहा गया है कि कर्म से ही कोई छोटा या बड़ा होता है जन्म से नहीं। छोटा व्यक्ति तो वह है जो कि चोरी करता है और मिथ्या भाषण करता है। किसी निम्न जाति में जन्म लेने से व्यक्ति का महत्त्व घट नहीं जाता है। इस काव्य के माध्यम से यह प्रेरणा दी गई है कि सभी को उन्नति के समान अवसर मिलने चाहिए। साथ ही यह भी प्रेरणा मिलती है कि हमें अपने देशवासियों और भारतीय प्रजा की सर्वात्मना रक्षा करनी चाहिए और इसकी रक्षा के लिए सत्य, अहिंसा एवं असहयोग आंदोलन जैसे महान् अस्त्र धारण करने चाहिए। राम के प्रति आस्थावान् होना चाहिए।

प्रस्तुत काव्य में धर्म वीर रस की प्रधानता है। यह प्रसाद गुण पूर्ण काव्य है। इसका महद् उद्देश्य जनता में राष्ट्रीय भावना का संचार करना है। अतः कवि ने इसमें सरल, सुगमता पूर्वक बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया है। अलंकारों का प्रयोग भी अत्यल्प है। इस तरह भाव, भाषा का अनुपम तारतम्य है। यद्यपि इसमें प्राचीन खण्डकाव्यों के गुण तो नहीं है लेकिन उसमें जो मूल संवेदना है वह सराहनीय है और खण्डकाव्य की कोटि में आने के सर्वथा अनुकूल है। स्वयं आचार्य मधुकर शास्त्री ने अपने २८ सितम्बर १९८७ के पत्र में इसे "खण्डकाव्य" विधा का नाम दिया है।

(ग) गान्धि-गाथा के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म-स्थली—

गान्धि-गाथा के रचयिता आचार्य मधुकर शास्त्री का जन्म राजस्थान के अन्तर्गत जयपुर से उत्तर दिशा में जयपुर सीकर मार्ग में १५ मील की दूरी पर रामपुरा (डाबड़ी) नामक एक छोटे से ग्राम में हुआ था[१०४]। उन्हें बचपन में नाथूलाल कहकर पुकारा जाता था।

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

आचार्य मधुकर शास्त्री का जन्म १९२१ ई. को गौड़ ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री घासीराम जोशी एवं पितामह श्री गोपीनाथ शर्मा थे। पितामह जयपुर में ही निवास करते थे और पिता अपने मूल निवास पर रामपुरा (डाबड़ी) में ही। आपके परिवार में ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड (पुरोहिताई) का कार्य होता आया है। इस विषय में उस परिवार को प्रसिद्धि प्राप्त है। पितामह सम्भ्रान्त तपस्वी एवं प्रसिद्ध विद्वान् थे।

उनके पिता भी ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् हैं। स्पष्ट है कि इन दोनों विधाओं में कौशल उन्हें विरासत में मिला है [१०५]।

आचार्य मधुकर शास्त्री की माता का नाम श्रीमती रमासुख बाई था। श्रीमती रमा सुखबाई उन्हें ढाई वर्ष का छोड़कर परलोक सिधार गई थी। माता के देहावसान के पश्चात् उन्हें पिता से अलग करके पितामह के समीप भेज दिया गया। उनकी दादी भी अल्पायु में ही स्वर्ग सिधार गई थी। परिणामत- शास्त्री जी का लालन-पालन उनकी दादी की बहिन ने किया। इधर पिताश्री ने रामपुरा (मूल-निवास स्थान) में रहते हुए दूसरा विवाह कर लिया। उनके विवाहसे आपको पिता के स्नेह से तो वंचित होना ही पड़ा और पैतृक सम्पत्ति पर भी उनका कोई अधिकार नहीं हो पाया [१०६]।

भाई-बहिन—

शास्त्री जी के एक ज्येष्ठ भ्राता है। वह भी पैतृक सम्पत्ति से वंचित रहे। वह भी अलग रहते हुए येन केन प्रकारेण अपनी गृहस्थी की गाड़ी चला रहे हैं। शास्त्री जी भी जितना सम्भव हो सकता है उनकी सहायता करते हैं। शास्त्री जी और ये भाई पहली माता की सन्तानें हैं। दूसरी माता से उत्पन्न एक भाई और बहिनें भी हैं। लेकिन ये लोग शास्त्री जी के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करते हैं। जिस छोटे भाई को उन्होंने निष्काम भाव से पढ़ाया लिखाया और अपने पैरों पर खड़े होने लायक बनाया वह भी कृतघ्न ही निकला। लेकिन शास्त्री जी ने अपने बड़प्पन का परिचय देते हुए उसके प्रति तनिक भी क्रोध भाव नहीं रखा और उसे क्षमा करके "क्षमा बड़न को चाहिए छोटन को उत्पात" वाली कहावत को चरितार्थ कर दिया। समझ में नहीं आता कि लोग ऐसे विद्वान् और परोपकारी व्यक्ति के साथ दुर्व्यवहार क्यों करते हैं [१०७]।

शिक्षा-दीक्षा—

मधुकर शास्त्री जी की प्रारम्भिक शिक्षा अपने दादा के पास जाकर सम्पन्न हुई। उन्होंने व्याकरण शास्त्री की परीक्षा जयपुर से, साहित्य शास्त्री एवं साहित्याचार्य की परीक्षा वाराणसी से, मीमांसाचार्य की परीक्षा जयपुर से एवं साहित्यरत्न की परीक्षा हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से उत्तीर्ण की। उनके सर्वप्रथम गुरुदेव स्व. पण्डित श्री दीनानाथ त्रिवेदी "मधुप" (सुप्रसिद्ध संस्कृत कवि) थे। उन्होंने ही आपकी संस्कृत में कविता सृजन के सतत अभ्यास एवं प्रतिभा से आकर्षित होकर ही उन्हें १३ वर्ष की अवस्था में "नाथूलाल त्रिवेदी" के स्थान पर "मधुकर" यह उपनाम दिया। साथ ही स्व. पण्डित गोपीनाथ शास्त्री (धर्माधिकारी) से भी उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। पद्मविभूषण पण्डित पी. ए. पट्टाभिरामशास्त्री उनके गुरु तो हैं ही साथ ही उन्होंने आपको पुत्र की भाँति स्नेह दिया जिनके अनुग्रह से ही आप उन्नति के पथ पर आसीन हो सके। पट्टाभिरामशास्त्री काशी स्थित विश्वविद्यालय के संस्कृत साहित्य के विभागाध्यक्ष के पद को अलंकृत कर चुके हैं और भारत के विख्यात मनीषी विद्वान् माने जाते हैं। इसके अलावा उन्होंने विद्वत्प्रवर श्री पण्डित चन्द्रशेखर द्विवेदी (वर्तमान पुरशंकराचार्य) को भी अपना गुरु उल्लिखित किया है [१०८]। आज वह "आचार्य मधुकर शास्त्री" इस

नाम से साहित्य सेवा में तल्लीन हैं।

वैवाहिक जीवन—

उनका वैवाहिक जीवन अत्यधिक सुखपूर्ण एवं शान्तिप्रिय है। आपका विवाह श्रीमती केसरीदेवी के साथ हुआ था। वह अत्यधिक सरल, पतिपरायणा, कर्त्तव्यपरायणा, आदर्श गृहणी और पति के लेखन कार्य में सहायता करने वाली हैं। जीवन में अनेक कठिनाईयों के आने पर भी माँ "भारती" की सेवा में जुटे रह सके इसका श्रेय उनकी पत्नी को ही है। उनका दाम्पत्य-जीवन मधुरता से सरावोर है [१०९]।

कार्यक्षेत्र—

शास्त्री जी के पत्रों से ज्ञात होता है कि उन्हें लेखन का शौक बाल्यकाल से ही रहा है। उनकी रचनाएं बाल्यकाल से ही सस्कृत की प्राय- सभी पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। वह सस्कृत साहित्य की सेवा करना ही अपने जीवन का परम लक्ष्य मानते हैं [११०]। वह आजकल राजस्थान सरकार के प्राच्यविद्या शोध-प्रतिष्ठान में प्रभारी अधिकारी के पद पर आसीन हैं और साहित्य सेवा में तल्लीन हैं [१११]।

उन्होंने संस्कृत एव हिन्दी दोनों भाषाओं में काव्य-सृजन किया। आचार्य मधुकर शास्त्री की कृतियों की सख्या २० है। उनमें से कतिपय कृतियाँ मौलिक हैं और कतिपय अनूदित हैं एवं कुछ कृतियाँ सम्पादित भी हैं। इस तरह शास्त्री जी की कृतियों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है—

आचार्य मधुकर शास्त्री की कृतियों का वर्गीकरण—

शास्त्री जी की कृतियों की सर्वप्रथम तीन श्रेणियाँ की जा सकती हैं—

(१) मौलिक (२) अनूदित (३) सम्पादित

उनमें से भी कुछ कृतियाँ प्रकाशित हैं और कुछ अप्रकाशित हैं एवं शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली हैं। श्री महावीर सौरभम् (महाकाव्य), मारुति लहरी, मातृ लहरी, गाधी गाथा (खण्डकाव्य), गान्धिवाणी (खण्डकाव्य), निशाने नवजागरण (सस्कतगद्यनिबद्ध कथा), मार्तण्डमिश्र (सस्कृत निबद्ध कथा) मौलिक एवं प्रकाशित कृतियाँहैं। "पथिक काव्यम् एवं "स्वप्नकाव्यम्" हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि स्व. पं. रामनरेश त्रिपाठी के प्रसिद्ध खण्डकाव्य का सस्कृत में समश्लोकी पद्यानुवाद हैं। ये भी प्रकाशित कृतियां हैं। इन दोनों कृतियों के अनुवाद का कार्य उन्होंने त्रिपाठी के जीवन काल में ही कर लिया था और साथ ही ये दोनों काव्य राजस्थान शास्त्री परीक्षा के पाठ्यग्रन्थ भी रहे हैं। इसके अलावा उनकी मौलिक एवं शीघ्र प्रकाशित होने वाली कृतियाँ राष्ट्रवाणी तरंगिणी और "सुवर्णरश्मयः" (दोनों ही संस्कृत में हैं) आदि गीतिकाव्य, धरात्मजा महाकाव्य आदि हैं। इसके अलावा उनकी दो अनूदित कृतियाँ भी शीघ्र प्रकाशनाधीन हैं। इनमें से एक तो सुप्रसिद्ध प्रकरण ग्रन्थ "मीमासा न्याय प्रकाश" का हिन्दी अनुवाद है उसका नाम है "हिन्दी मीमांसा न्याय प्रकाश" और दूसरे इस्लाम धर्म ग्रन्थ कुरान का "कुरआन-दर्पणः" नाम से संस्कृत पद्यानुवाद है [११२]।

इसके अलावा आपकी प्रहलाद चम्पू, गंगा चम्पू, कीर्तिकाव्यम् आदि तीन सम्पादित कृतियाँ शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली हैं। उन्होंने मासिक एवं त्रैमासिक पत्र पत्रिकाओं "चिन्मयी", ज्ञानयात्रा, "संस्कृत सौरभम्" आदि का भी सम्पादन किया है।

अपनी साहित्य सेवा के उपलक्ष्य में मधुकर शास्त्री राजस्थान शासन की ओर से चार बार योग्यता पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं।

दिनचर्या एवं व्यक्तित्व—

उनकी दिनचर्या प्रातः चार बजे से प्रारम्भ होकर रात्रि के ग्यारह बजे तक चलती है। वह आठ बजे तक आवश्यक शुद्धि आदि करके प्रार्थना करते हैं और फिर चाय पीकर लेखन में जुट जाते हैं। आठ बजे से १० बजे तक स्नान, सन्ध्योपासना आदि सम्पन्न करके भोजन करते हैं और फिर शाम के पाँच बजे तक राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान कोटा में अपनी सेवाएं प्रदान करते हैं। वहाँ से लौटकर अतिथियों का स्वागत सत्कार करते हैं। रात्रिकालीन समस्त कार्यों से निबटकर फिर अध्ययन मनन और साहित्य-सेवा करते हैं। वह केवल ५ घण्टे ही शयन करते हैं[११३]।

उन्होंने बचपन से ही अभावपूर्ण जीवन व्यतीत किया है लेकिन ये अभावग्रस्तता उनकी शिक्षा में बाधक नहीं बनी। उनके अभावपूर्ण जीवन ने उन्हें स्वाभिमानी बना दिया। उन्होंने कभी किसी के आगे सहायता के लिए हाथ नहीं फैलाया। वह एक कर्तव्यनिष्ठ, लगनशील, परिश्रमी, आत्मविश्वासी व्यक्ति रहे हैं। ये गुण ही उनकी अचल सम्पत्ति हैं। इनके बल पर ही वह अपने उद्देश्य की पूर्ति में डटे रहे हैं। वह बाह्य प्रदर्शन को महत्त्वहीन समझते हैं। वह सदैव दूसरों की सहायता करने को तत्पर रहते हैं। वह किसी के प्रति घृणा एवं द्वेषभाव नहीं रखते हैं। वह अत्यधिक व्यस्त रहते हुए प्रश्नकर्ता की समस्याओं का समाधान करते हैं। वह उदारमना एवं सरल स्वभाव वाले हैं। वह कभी-कभी ताम्बूल चबाते हैं विशेष रूप से लेखन करते समय[११४]। उनका परिश्रम एवं लगनशीलता निश्चय ही अनुकरणीय है।

राजकीय महाविद्यालय में संस्कृत के "व्याख्याता" पद पर आसीन "श्रीमती रमा शर्मा" नामक विदुषी महिला "आचार्य मधुकर शास्त्री-व्यक्तित्व एवं कृतित्व" विषय पर शोध-कार्य कर रही है[११५]।

उनके द्वारा की गई साहित्य सेवा निश्चय ही अमूल्य है और मैं आशा करती हूँ कि अपनी इस काव्य प्रतिभा से वह हमें भविष्य में भी लाभान्वित करते रहेंगे। भगवान् से प्रार्थना है कि वह दीर्घकाल तक जीवित रहें।

(क) श्रमगीता का कथानक—

श्रमगीता में व्यक्ति एवं समाज के उत्कर्ष के लिए अतीव रोचक एवं महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है।

चिरकाल से परतन्त्र भारतभूमि के स्वतन्त्र हो जाने पर भी उसकी दीन एवं दारिद्रयपूर्ण दशा का अवलोकन करके, उसके सर्वांगीण विकास के लिए चिन्तातुर होकर डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, राधाकृष्णन्, सरदार वल्लभ भाई पटेल, जवाहर लाल नेहरू,

आलस्य में नहीं, श्रमिक का श्रम उसके अंग से प्रस्फुटित होता है, श्रमकाल में प्राप्त दुःख के अनुभव का स्मरण प्रसन्नता दिलाता है, श्रमवीर से युद्धवीर, दानवीर, दयावीर एवं धर्मवीर किसी की भी तुलना नहीं है, सत्कार्यों में रत रहने वाला सबसे बडा भोगी है। श्रम करने वाला निरोगी होता है, ज्ञान-भक्ति से रहित होते हुए भी साधु है एवं उसके भाग्य का कोई भी पापग्रह स्पर्श नहीं कर सकते हैं।

उच्च पदासीन को भी श्रम का त्याग नहीं करना चाहिए, श्रम से ही व्यक्ति सदा यश रूप में विद्यमान रहते हैं, श्रम से व्यक्ति की जो प्रशंसा होती है वह परम्परागत धन या जाति से नहीं, परिश्रम करने वाला दरिद्र दर्शनीय है आलसी राजा नहीं, श्रमिक ही संसार में सम्पत्ति और यश प्राप्त करता है, अपने कल्याण के साथ दूसरों का कल्याण करने वाला श्रमिक महान् है, श्रम ही श्रेष्ठ धर्म, ईश्वर भक्ति और मोक्ष प्रदायक है, श्रमदान देवताओं में भी दुर्लभ महादान है और श्रमजल स्वर्ग में भी अप्राप्य ब्रह्मवारि है, श्रमयोगी की सभी पूजा करते हैं, श्रमयोगी महायोगी, धार्मिक, ब्रह्मचारी एव शीलवान् है, श्रम करने वाला वृषभ तो वन्दनीय है : लेकिन गुफाशायी आलसी सिंह नहीं, श्रम देवता अन्य देवताओं की अपेक्षा पूजनीय है, लोक-कल्याण के लिए परिश्रम करने वाला भगवान् स्वरूप है, श्रम-विमुख पतित, निर्धन एवं मूर्ख के समान ही शोचनीय है, शारीरिक रूप से दुर्बल की अपेक्षा उत्साह, बल, कर्म से विहीन अधिक दुर्बल है, शास्त्र पण्डित एवं शस्त्र पण्डित दोनों ही श्रम को देवता मानते हैं, चारों आश्रमों के लोग श्रम से ही सुख पाते हैं, श्रम से प्रेम करने वाले को चारों पुरुषार्थों की सिद्धि होती है, पुस्तक से प्राप्त होने वाले ज्ञान की अपेक्षा परिश्रम से प्राप्त ज्ञान अधिक होता है, अपने कल्याण एवं दूसरों के कल्याण हेतु श्रम के प्रति आस्था रखने वाले की ईश्वर सहायता करते हैं, श्रम ही राम, शम्भु, प्रभु, बुद्ध, ईसू पैगम्बर, दाता, नेता, माता-पिता और एकमात्र देवता हैं।

(ख) श्रमगीता में खण्डकाव्य की संगति

श्रमगीता आद्योपान्त राष्ट्रीय-भावना से अनुप्राणित है। इसमें ११८ पद्य हैं। इन पद्यों में श्रम का महत्त्व बताया गया है। यह श्रीमद्भगवद्-गीता की शैली में लिखा गया है। इस काव्य में चिरकाल से परतन्त्र राष्ट्र को पुनर्विकसित करने, कला, साहित्य, समाज के सर्वांगीण विकास के लिए चिन्ता प्रकट की गई है महात्मा गांधी ने कल्याण-कामना के साथ-साथ उत्साह को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बताया है। कवि ने उनके माध्यम से स्वावलम्बी बनने की प्रेरणा दी है। इसमें कहा गया है कि जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने का सबसे बड़ा रहस्य है श्रम के प्रति आस्था रखना और आत्मनिर्भर बनने के लिए तदैव तत्पर रहना। क्योंकि पराश्रित एवं आलसी राष्ट्र भी पतन के गर्त में चला जाता है। साथ ही इसे एक सार्वलौकिक धर्म बताया है। आत्मोद्धार एवं सर्वकल्याण भी श्रम से ही हो सकता है। श्रम पूर्वक जीवन व्यतीत करना गौरव का विषय है। अतः इस काव्य में कहा गया है कि आलस्य न करके कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए इसके माध्यम से परमानन्द संदोह की अनुभूति होती है। श्रम से कभी विमुख नहीं होना चाहिए क्योंकि उससे प्राप्त होने वाला सुख अत्यधिक बहुमूल्य है। इससे जो

सफलता मिलती है वह किसी यज्ञ आदि से नहीं मिल सकती है। इसका परिणाम हम शीघ्र देख सकते हैं अनुभव कर सकते हैं। शरीर श्रम को गोदान आदि समस्त दानों से भी श्रेष्ठ बताया गया है। इससे गृहस्थ जीवन में भी सुख समृद्धि छा जाती है। इस काव्य में बताया गया है कि विश्व को जितनी भी महान् विभूतियाँ हैं वह श्रम के बल पर ही हैं। समाज में सम्मान भी वही पाता है जोकि परिश्रमी होता है। पाता है उस श्रम करने वाले को राम, कृष्ण बुद्ध आदि के समकक्ष बताकर उनकी महत्ता का ही प्रतिपादन किया है। इस काव्य से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए जिससे हम भी अपने समाज के लिए और स्वयं के लिए कुछ कर सकें। यह प्रसाद गुण पूर्ण काव्य है। इससे हमारे मन में वीर रस का संचार होने लगता है। भाषा भावों को प्रकट करने में पूर्णतया समर्थ है। इससे समाज का प्रत्येक व्यक्ति प्रेरणा ले सकता है और विश्व में अपना नाम अमर कर सकता है। श्रम से समाज के साथ-साथ राष्ट्र का भी महान् उपकार होता है। अतः यह राष्ट्रीय भावना परक खण्डकाव्य की कोटि में आने के सर्वथा उपयुक्त है।

(ग) श्रमगीता के रचयिता का परिचय—

श्रमगीता के रचयिता कीर्तिशाली, व्युत्पन्नमति विद्वान्, डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर का जन्म नागपुर के इतवारी विभाग में अपनी मौसी के मकान में हुआ था [११६]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

डॉ. श्रीधर भास्कर का जन्म ३१ जुलाई सन् १९१९ को महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम श्रीधर भास्कर वर्णेकर एवं माता का नाम अन्नपूर्णा था। पिता श्री भास्कर वर्णेकर नागपुर में अत्यधिक कुशलता पूर्वक ठेकेदारी का कार्य किया करते थे। आपके पितामह श्री वामन गोपाल भी पूना में रहते हुए ठेकेदारी का कार्य करते थे। इसी के कारण वह नागपुर आए और फिर वहीं के निवासी होकर रह गए। महाराष्ट्र के सतारा जनपद के वर्णेग्राम का निवासी होने के कारण इस परिवार का उपनाम वर्णे पड़ा [११७]।

भाई-बहिन—

डॉ. श्रीधर भास्कर के सात भाई हुए उनमें से तीन जीवित रहे। सबसे बड़े भाई विश्वनाथ भास्कर वर्णेकर मिडिल पास थे और रत्न परीक्षा का व्यवसाय करते थे। सन् १९७५ में ६४ वर्ष की अवस्था में उनका देहावसान हो गया था। छोटे दोनों भाईयों में से मधुकर भास्कर वर्णेकर ने वर्धा के स्वावलम्बी प्रशिक्षण महाविद्यालय में सेवा कार्य किया और १९८३ में वहाँ से सेवा निवृत होकर अब आप अपने पुत्र के पास बम्बई में निवास करते हुए भारतीय विद्या भवन में सेवारत हैं। सबसे छोटे भाई श्रीकृष्ण भास्कर सी. ए. हैं और आजकल नाईजीरिया में हैं। उनकी एक बहिन वत्सला बाई भी है और वह आन्ध्र प्रदेश में रहती है [११८]।

शिक्षा-दीक्षा—

डॉ. वर्णेकर ने नागपुर से दाजी प्राइमरी स्कूल और नीलसिटी हाईस्कूल में शिक्षा प्राप्त की। सन् १९३० में गांधी जी के साथ सत्याग्रह आन्दोलन में भी भाग लेने के कारण अध्ययन एक वर्ष के लिए बन्द रहा। इस अवधि में उनका परिचय अनेक देशभक्तों से हुआ, उनके व्याख्यान सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इससे उनकी राष्ट्रीय भावना और भी प्रबल हो गई।

सन् १९३१ में डॉ. वर्णेकर ने संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् हनुमन्त शास्त्री से अमरकोश पढ़ा और कुछ ही माह में उसे कण्ठस्थ भी कर लिया। लघुसिद्धान्त कौमुदी के अध्ययन के साथ-साथ १९३२ में उन्होंने कलकत्ता की प्रथमा परीक्षा व्याकरण से उत्तीर्ण की। शास्त्री जी की कृपा से उन्होंने नागपुर के संस्कृत महाविद्यालय में प्रवेश लिया। वहाँ पर उन्होंने संस्कृत के महाकाव्यों का ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने काव्यतीर्थ परीक्षा भी उत्तीर्ण की। सन् १९३६ में आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण नागपुर के अन्यमहाविद्यालय में शिक्षक का कार्य सम्भालते हुए इण्टरमीडिएट की परीक्षा पास की। सन् १९३८ में हैजे के कारण माता-पिता की एक साथ मृत्यु हो जाने से उन्हें अर्थोपार्जन भी करना पड़ा। सन् १९४१ में उन्होंने नागपुर के मौरिस महाविद्यालय से एम.ए. (संस्कृत) की परीक्षा पास की। डॉ. महामहोपाध्याय वा. वि. मिराशी, प. सरस्वती प्रसाद चतुर्वेदी एवं दि. वि. वराडपाण्डे, नारायण दादीजा वाडेगावकर आपके प्रमुख गुरुजनों में से थे[११९]।

वैवाहिक जीवन—

आपका वैवाहिक जीवन भी सम्पन्न एव सुख शान्ति पूर्ण है। उनका विवाह नागपुर के श्री रामकृष्ण गोपाल बरड़े की लाडली पुत्री कमला के साथ हुआ। उनका विवाह सन् १९३४ में हुआ था। श्रीमती कमला अब संस्कृत में एम. ए. हैं। वर्णेकर जी को पाँच सन्तति रत्नों की प्राप्ति हुई। श्रीचन्द्रगुप्त श्रीधर वर्णेकर इलेक्ट्रोनिकल में पीएच. डी. होकर नागपुर विश्वविद्यालय के निदेशक के पद पर आसीन हैं। उनका विवाह प्रतिभा नामक गुणवती से हुआ। वह दो विषयों (संस्कृत एवं हिन्दी) में एम. ए. हैं। उनकी एक पुत्री एवं एक पुत्र भी है।

उनके दूसरे पुत्र अशोक श्रीधर वर्णेकर और पुत्र वधु अलका दोनों सांख्यिकी एवं अर्थशास्त्र में एम. ए. है और अरुणाचल प्रदेश की राजधानी ईटानगर में अध्यापन कर रहे हैं।

तीसरे पुत्र श्रीनिवास श्रीधर वर्णेकर ग्राउण्ड इंजीनियर और उनकी पत्नी वन्दना महाराष्ट्र शासन की सेवा में जूनियर इंजीनियर हैं।

उनकी पुत्री वैजयन्ती एम.बी.बी.एस. एम.डी. और हैदराबाद में सहायक सिविल सर्जन हैं उनके पति श्री शरद चन्द्र वहीं पर एडवोकेट हैं।

दूसरी पुत्री मन्दाकिनी इन्जीनियर आर्किटेक्ट हैं। और उनके पति अरविन्द मोरकर एम.काम., एम. ए. (भाषा विज्ञान पुस्तकालय विज्ञान) हैं एवं महाराष्ट्र

प्राप्त हुआ है[१२३]।

व्यक्तित्व—

डॉ. श्रीधर वर्णेकर सरल चित्त, उदारमना, स्वाभिमानी हैं। स्वार्थ, कपट एव कृत्रिमता उन्हें बिल्कुल पसन्द नहीं है। वह साहित्य की सेवा में मग्न रहते हैं। वह बहुत ही अधिक व्यवहार कुशल हैं। वह अपने व्यवहार से सभी को आकृष्ट कर लेते हैं। उनके समीप आने वाला हर सदस्य उनसे कुछ सीखकर और आशा की एक नई किरण के साथ प्रसन्न मन से विदा होता है। वह अत्यधिक सम्पन्न हैं किन्तु उनमें अहकार लेश मात्र भी नहीं है। वह देव भक्त एवं राष्ट्रभक्त हैं। इनकी भारत के अतिरिक्त अमेरिका, कनाडा, नाइजीरिया आदि देशों में भी लाखों से मित्रता है। वह अत्यधिक परिश्रमी हैं। वह व्यायाम एवं योगासन में भी रुचि रखते हैं और उसका पालन करते हुए स्वस्थ्य रहते हैं[१२४]।

वह उच्चकोटि के साहित्यकार हैं। उनकी प्रतिभा अनुपम है। वह आज भी साहित्य समाज को उपकृत करने में संलग्न हैं । मैं आशा करती हूँ कि वह सौ वर्ष तक जीवित रहकर संस्कृत साहित्य को श्रीशिवराज्योदयम् जैसी कृतियाँ प्रदान करके उसे और भी समृद्धिशाली बनायेंगे और अन्यान्य सामाजिक समस्याओं का समाधान करते हुए भारतीय समाज का कल्याण करेंगे।

(क) बापू का कथानक—

सन् १९७८ में महारानी विक्टोरिया को साम्राज्ञी उद्घोषित करने के उपलक्ष्य में आयोजित राजसभा में विभिन्न प्रान्तों के राजा-महाराजा एवं ब्रिटिश शासन के राज प्रतिनिधि आदि सभी उत्सुकता पूर्व शामिल हुए।

राजादि सभी ब्रिटिश शासन की सुदृढता एव साम्राज्ञी के दृढ़ सरक्षण के प्रति विश्वास पूर्वक राजभक्ति प्रदर्शित करते थे। नि सन्देह अगर प्रस्तुत कथा के नायक मोहन का जन्म नहीं हुआ होता तो भारत में ब्रिटिश शासन का ही बोलबाला होता।

अन्त में कवि ने यह विचार व्यक्त किया है कि सहस्त्रों लोगों के लिए अपने प्राणों की बलि दे देने वाले ऐसे महापुरुषों को गौतम बुद्ध जैसे महात्मा अथवा किमकी श्रेणी में रखा जाए? यह विचार करना कठिन है। 'बापू' के प्रारम्भ एवं अन्त में काव्यों से पृथक् बात कही गई है। मैंने यहाँ पर उसका ही उद्घाटन किया है। बीच की कथा को छोड़ दिया है।

(ख) बापू मे गद्यकाव्यत्व

(अ) गद्यकाव्य : एक विवेचन—

गद्य कवियों की कसौटी है "गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति।" कवि की वास्तविक प्रतिभा का परिचय भी हमें गद्य काव्य में ही मिलता है। गद्य काव्य में भावों को सहजतापूर्वक एवं सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है क्योंकि उसमें पद्यकाव्य का जैसा बन्धन नहीं होता है। वह तो एक बरसाती पानी की तरह होता है। उसमें जब, जिधर और जैसे चाहो अपने भावों को अभिव्यक्त कर दो। पद्य काव्य में तो छन्दोबद्धता होती है

और उससे काव्य में लयात्मकता और आकर्षण का गुण आ जाता है, लेकिन गद्य काव्य में छन्दोबद्धता जैसा कोई तत्त्व नहीं होता है। अतः गद्य काव्य में सौन्दर्य लाने के लिए अधिक प्रयास करना पड़ता है। जिस तरह से पद्य काव्य की उत्पत्ति वेदों से मानी गई है उसी तरह गद्य काव्य की उत्पत्ति भी वेदों से मानी गई है।

भामह ने काव्य-भेद का निरुपण करते हुए सर्वप्रथम काव्य के दो भेद किए हैं निबद्ध और अनिबद्ध। कथा और आख्यायिका को अनिबद्ध काव्य कहा जाता है और दोनों का अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा है कि—

प्रकृतानाकुलश्रव्यशब्दार्थपदवृत्तिना।
गद्येन युक्तोदात्तार्था सोच्छ्वासाख्यायिका मता।।
वृत्तमाख्यायते तस्या नायकेन स्वचेष्टितम्।।
वक्त्रं चापरवक्त्रं च काले भाव्यार्थशंसि च।।
कवेरभिप्रायकृते कथाने कैश्चिदंकिता।
कन्याहरण संग्रामविप्रलम्भोदयान्विता।।
न वक्त्रापरवक्त्राभ्या युक्ता नोच्छ्वासवत्यपि।
संस्कृत सम्कृता चेष्टा कथा अपभ्रंशभाक्कथा।।

(भामह, काव्यालकार, प्रथम परिच्छेद, २५-२८)

दण्डी का कहना है कि कथा और आख्यायिका में कोई भेद नहीं होता है यह तो केवल नाम अलग-अलग है[१२५]।

गद्य काव्य के महान् कवि बाण ने स्वयं इन दोनों गद्य विधाओं की रचना की है और उन्होंने कादम्बरी को कथा एवं हर्षचरित को अख्यायिका कहा है। एक का सम्बन्ध कल्पना से है तो दूसरा वास्तविकता अथवा ऐतिहासिकता पर अवलम्बित है।

अग्निपुराणकार ने गद्यकाव्य के पाँच भेद बताये हैं—

कथा, आख्यायिका, खण्डकाव्य, परिकथा और कथानिका और उनके स्वरूप को भी स्पष्ट किया है[१२६]। पण्डित अम्बिकादत्त व्यास ने गद्य काव्य के नौ भेद किए हैं—कथा, कथानिका, आलाप, कथन, आख्यान, आख्यायिका, खण्डकथा, परिकथा, और संकीर्ण[१२७]।

साहित्य दर्पण में गद्य काव्य के दो भेद किए गये हैं कथा और आख्यायिका[१२८]।

कुछ काव्यशास्त्रियों ने अन्य कथाओं और आख्यान को भी इन्हीं दोनों विधाओं के अन्तर्गत समाहित कर लेना चाहिए ऐसा कहा है।

अतः मैं "बापू" को आख्यायिका विधा के अन्तर्गत मान लेती हूँ और उसी आधार पर उसकी समीक्षा प्रस्तुत करती हूँ।

डॉ. हरिनारायण दीक्षित ने विश्वनाथ सम्मत आख्यायिका की परिभाषा को अपने शब्दों में बड़े अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है—"विश्वनाथ आख्यायिका को बहुत कुछ कथा जैसा ही मानते हैं, उनका कहना है कि इसमें कवि अपने वंश का भी वर्णन [illegible] है [illegible] है। [illegible] पद्य भी [illegible]

को मिल जाते हैं। कथावस्तु का बटवारा आश्वासों में किया जाता है। आश्वास के आरम्भ में किसी न किसी वर्णन के बहाने आर्या, वक्त्र अपवक्त्र छन्दों में से किसी एक छन्द के द्वारा भावी घटना को सूचित कर दिया दाता है[१२९]।

(आ) "बापू" में आख्यायिका नामक गद्य-काव्य की संगित

"बापू" आधुनिक संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट आख्यायिका है। यद्यपि वह बाण के हर्षचरित से साम्य तो नहीं रखती है और उसमें कवि ने अपने वंश का परिचय भी नहीं दिया है सीधे महात्मा गाधी का चरित्र प्रस्तुत कर दिया है, लेकिन फिर भी उसे आख्यायिका के अन्तर्गत रखने में मुझे कोई सकोच नहीं होता है। समय-समय पर कवियों के प्रतिमान बदलते रहते हैं और परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं। कवि उसी आधार पर काव्य निर्माण कर लेता है। "बापू" वैदर्भी शैली में लिखी गई कृति है। प्रस्तुत पुस्तक राष्ट्र प्रेम की पोषिका है। प्रारम्भ से लेकर अन्त तक राष्ट्रीय भावना ही दृष्टिगोचर होती है। इसमें प्रसाद गुण का बाहुल्य है। इसमें कठिन शब्दों और दीर्घ समासों का सर्वथा अभाव है। इस काव्य में महात्मा गाधी की भारत-विजय का वर्णन किया गया है और उन्हें राष्ट्रपिता नाम से सम्मानित किया गया है। महात्मा गाधी सत्य अहिंसा और असहयोग आन्दोलन को उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक एवं महत्वपूर्ण अस्त्र स्वीकार करते हैं। जहाँ पर रौद्र रस का वर्णन है वहाँ पर शैली ओजोगुण युक्त हो गई है[१३०]।

प्रारम्भ में महात्मा गाधी के जन्म एवं वश का वर्णन किया गया है किन्तु वह भी अत्यधिक सरल भाषा में है।

"नगरमेतत् काठियाडनगरस्योपकण्ठ समुद्रतटे सस्थितमिदानीं गुर्जरप्रान्ते वर्तते। स बालः चतुर्षु सोदरेषु कनीयान् तेषु त्रयो भ्रातर एक भगिनी चासीत। अस्य पिता "करमचन्द" अथवा "काबा गांधी" त्यभिधान. माता पुतलीबाई नाम्नी चासीत"[१३१]।

महात्मा गाधी के लिए माता-पिता आदर्श थे। वह बाल्यकाल से ही सत्यवादी बनने की इच्छा रखते थे। महात्मा गाधी ने सर्वप्रथम दक्षिण अफ्रीका वासी भारतीयों के प्रति हो रहे अत्याचारों से दुःखी होकर "कुली बैरिस्टर" के रूप में उन्हें न्याय दिलवाने का प्रयास किया। उन्होंने अपमान भी सहे लेकिन भारतीयों को अधिकार दिलवाने में सफलता प्राप्त की और अपने साहस एव वीरता का परिचय दिया।

वह एक वीर योद्धा थे। यद्यपि उन्हें नि शस्त्र युद्ध करने के कारण अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा लेकिन अपना धैर्य नहीं छोड़ा और अपने कर्तव्य पर अटल रहे।

इस पुस्तक में बाल विवाह, अस्पृश्यता एवं साम्प्रदायिकता के प्रति आक्रोश व्यक्त किया गया है और इन बुराईयों को समाज से उखाड़ फेंकने के लिए अथक प्रयास किया गया है। इस काव्य के नायक महात्मा गाधी को समाज की इन कुरीतियों और दुष्प्रयासों से घृणा है। यही कारण है कि जब भारत को स्वतन्त्रता प्राप्ति होती है तो वह भारत पाक विभाजन के साथ होती है। अतः सारे देश में आनन्दोत्सव मनाया जाता है

लेकिन महात्मा गांधी इस अवसर में भाग नहीं लेते हैं क्योंकि उन्होंने ऐसे समाज की कल्पना कभी नहीं की थी।

इस काव्य में सूक्तियों का प्रयोग भी किया गया है जिससे भाषा और भी आकर्षक बन गई है—"तदाप्रभृति सत्यस्य भाषणं मम व्यसनं सञ्जातम्। सत्यं स्वतः सामर्थ्यशालि भवति कदापि नात्र सन्देहितव्यम्[१३२]।

इस काव्य में नाटकीय सन्धियों का निर्वाह भी यथास्थान हुआ है। यदि इस कथा का नायक महात्मा गांधी पैदा नहीं होता तो ब्रिटिश शासन चिरकाल तक चलता—"अस्याः कथाया कथनायकः नववर्षदेशीयो दुर्बलो बालस्तदानीं यदि नाभविष्यत्। तस्य ब्रिटिशशासनमवश्यमेव सदातनं प्राचलिष्यत्[१३३]। यहाँ पर बीज नामक अर्थ प्रकृति है और अफ्रीका वासी भारतीयों का "कुली बैरिस्टर" बनना ये आरम्भ नामक अर्थ अवस्था है। दक्षिण अफ्रीकावासी भारतीयों को अधिकार दिलवाने के लिए, उनको समाज में उचित स्थान दिलवाने के लिए किया गया महात्मा गांधी का प्रयास मुख सन्धि का उदाहरण है। महात्मा गांधी सहित अन्य नेताओं के प्रयासों से भारत को स्वराज्य की प्राप्ति होना निर्वहण सन्धि का उदाहरण है। इसी तरह महात्मा गांधी का सत्याग्रह आश्रम की स्थापना करना, ब्रिटिश शासन से सन्धि करना, उनके साथ असहयोग करना, नमक कर और काले कानून की समाप्ति के लिए असहयोग आन्दोलन करना, कारागृह की यातना सहना, उनकी रोगाक्रान्त अवस्था के कारण उनका मरणासन्न हो जाने से कार्य पूर्ति में अवरोध उपस्थित हो गया सा लगना और फिर भारत छोड़ो आन्दोलन में एवं ब्रिटिश शासन द्वारा स्वराज्य की उद्घोषणा से सफलता के प्रति पुनः आशावान् होना, अन्ततोगत्वा स्वराज्य प्राप्ति हो जाना आदि प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण आदि सन्धियों सहित अवस्थाओं और अर्थप्रकृतियों का पूर्णरूपेण निर्वाह हुआ है।

अतः जिस प्रकार महाकाव्य और खण्डकाव्य में कुछ काव्यशास्त्रीय नियमों की कमी होने पर भी उसे महाकाव्य एवं खण्डकाव्य की श्रेणी में रख लेते हैं तो "बापू" को भी आख्यायिका नामक गद्य विधा कह सकते हैं। यद्यपि यह उच्छवासों में विभक्त नहीं है और इसमें कवि के जन्म का परिचय भी नहीं है तथापि इसमें वीर रस का और राष्ट्रीय भावना का अद्भुत वर्णन हुआ है। अतः इसे निर्विवाद रूप से "आख्यायिका" कहा जाना चाहिए।

(ग) बापू के रचयिता का परिचय

"बापू" नामक गद्य काव्य के मूल लेखक श्री एस. मो. स्टिन्स हैं। इस पुस्तक का नाम अंग्रेजी में भी "बापू" ही है और यह "नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया" National Book Trust Of India से प्रकाशित है। डॉ. किशोर नाथ झा ने इसका संस्कृत में अनुवाद किया है। आप किशोरनाथ झा संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद में अनुसंधान अधिकारी के पद पर आसीन हैं और उन्होंने 'बापू' नामक संस्कृत गद्य काव्य का प्रकाशन भी इसी विद्यापीठ से करवाया है। यह पुस्तक सन् १९७६ में प्रकाशित हो गयी थी[१३४]।

प्रस्तुत पुस्तक गांधी जी के जीवन वृत्त एवं उनके कार्यकलापों पर आधारित है। यही कारण है कि इसमें राष्ट्रीय भावना का अभूतपूर्व समायोजना परिलक्षित होता है। यद्यपि किशोर नाथ झा ने "बापू" का अंग्रेजी भाषा से अनुवाद किया है, लेकिन उन्होंने संस्कृत के गद्यकाव्य की आत्मा को तिरोहित नहीं होने दिया है। उन्होंने इस काव्य के माध्यम से अपनी सूझ-बूझ, संस्कृत भाषा के प्रति अपना अपार प्रेम उडेला है, महात्मा गांधी के जीवन की आद्योपान्त झाँकी प्रस्तुत करके उनके समान ही राष्ट्रप्रेमी बनने और देश के लिए अपने प्राण तक बलिदान करने में किसी प्रकार का भय न करने की प्रेरणा देकर हमारा जो उपकार किया है उसके लिए वह प्रशंसा के पात्र हैं।

मुझे आशा है कि वह भविष्य में भी इस प्रकार के प्रेरणादायक एवं संस्कृत साहित्य के लिए बहुमूल्य कृतियाँ प्रदान करके हमें विविध विभूतियों के जीवन से परिचित करायेंगे और समाज में हो रहे कार्यों के विषय में जानकारी प्रदान करेंगे। उन्हें दीर्घायु प्राप्त हो।

(क) गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च का कथानक

प्रस्तुत काव्य में सर्वप्रथम गांधी का जन्म, विद्याध्ययन हेतु विलायत गमन, भारतीयों की स्थिति में सुधार का उल्लेख और स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए गांधी ने कष्ट सहा एवं अन्त में भारत को स्वतन्त्र करवाने के पश्चात् एक भारतीय की हत्या का शिकार हुए यह वर्णन है, जोकि पूर्व के काव्य में भी आया है। अतः यहाँ पर विस्तार करना ठीक नहीं है। इसके बाद का वर्णन प्रथक् है, जोकि आपके समक्ष प्रस्तुत है।

गांधी जी ने प्राणीमात्र से प्रगाढ़ सम्बन्ध बताते हुए व्यक्ति के लिए एकाकिनी प्रार्थना को एवं समाज के लिए सामूहिक प्रार्थना को स्वीकार किया और साथ ही उन्होंने शरीर की पुष्टि के हेतु पौष्टिक आहार पर भी बल दिया।

उन्होंने कर्त्तव्यपथ का दर्शन कराने वाली सभ्यता के अन्तर्गत नारी सम्मान एवं विश्व के सञ्चालन में पुरुषके साथ नारी की उपयोगिता को स्वीकार किया। वह स्त्रियों पर कठोर नियन्त्रन करने वाली आधुनिक सभ्यता के विरोधी थे।

देश-प्रेम एवं प्राणीमात्र को स्पर्श करने की भावना को धर्म के अन्य लक्षण के साथ स्वीकार किया है। महात्मा गांधी ने सबके द्वारा धारण करने वाले, प्रत्येक स्थान एवं काल में विद्यमान रहने वाले तत्त्व को धर्म माना है। धर्म से रहित मनुष्य पशु के समान है। अपने धर्म के साथ ही अन्य धर्मों के सम्मान की रक्षा करनी चाहिए ऐसा विचार व्यक्त किया है, साथ ही रामनाम को मानव उपचार के लिए सर्वश्रेष्ठ औषधि स्वीकारा है।

दैहिक, दैविक, भौतिक कष्टों का निवारण आस्था एवं श्रद्धा के बिना असम्भव है। श्रद्धा के बल पर ही इच्छित वस्तु की प्राप्ति और राजनीति में कुशलता प्राप्त होती है। राजनीति इष्ट फल की प्राप्ति में तभी सहायक हो सकती है, जबकि उसमें धर्म एवं नीति का सामञ्जस्य भी हो। इसके पश्चात् समाज में परिव्याप्त बुराईयों का उद्घाटन गांधी की "वानरत्रयी" "गुरुमण्डली" "नपश्येदप्रियम्" "न" "श्रुणुयादप्रियम्" "नब्रूयादप्रियम्" के माध्यम से किया गया है। तत् पश्चात् उनकी शिष्य-मण्डली डॉ. राजेन्द्र प्रसाद,

संस्कृति मानव का आभ्यान्तरिक गुण है। सभ्यता का तात्पर्य है कर्त्तव्य पथ पर बढ़ना। गांधी जी का सभ्यता के सन्दर्भ में विचार था कि समाज की उन्नति स्त्री के बिना नहीं हो सकती है। उनके माध्यम से यह भी कहा गया है कि धर्म का जीवन से गहरा सम्बन्ध है साथ ही समस्त धर्मों का सम्मान भी करना चाहिए। इस गद्य काव्य में कहा गया है कि शिक्षा समाज के लिए तभी उपयोगी हो सकती है जबकि उससे मानव का पूर्णरूपेण विकास हो सके, वह उसकी प्रतिभा का विकास तो करे ही साथ ही उसे अपने लिए और समाज के लिए उपयोगी बनाए और गांधी जी की तरह अहिंसा का मार्ग अपनाना चाहिए, बाह्य परिवर्तन से स्थान पर हृदय परिवर्तन करना चाहिए। हिन्दू, मुस्लिम एकता की स्थापना और अस्पृश्यता निवारण एवं अपने देश की स्वतन्त्रता एवं समृद्धि के लिए महात्मा गांधी और उनके अनुयायियों ने जो प्रयास किया अपने सुख का परित्याग कर दिया वह सब राष्ट्रीय-भावना का ही प्रतीक है। यह काव्य प्रसाद गुण पूर्ण है। इसमें वर्णित आदर्श नियमों पर चलकर हमारा जीवन सफल हो सकता है। इससे उत्साह वर्धन होता है। इसके द्वारा भी वीरता की झलक मिलती है। कहीं-कहीं पर रौद्र रस एवं करुण रसकी अनुभूति होती है। भाषा के सरल होने का कारण है जन-जन को यह बताने के लिए कि यदि वह चाहता है कि वह जीवन में उन्नति करे तो वह इन नियमों का अनुपालन करे, उसमें अपने राष्ट्र के प्रति सम्मान का भाव रहे और वह कभी भी उसकी मान मर्यादा भंग न होने दे। इन गुणों के आधार पर हम इसे भी आख्यायिका कह सकते हैं।

(ग) गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्याश्च के रचयिता का परिचय

रचयिता का जन्म-स्थली—

गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्याश्च के रचयिता श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी का जन्म बूढ़नपुर (उत्तर प्रदेश) में हुआ था।[१३५]

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी शास्त्री का जन्म १६ मई सन् १९३० को एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम पण्डित रामेश्वर प्रसाद त्रिपाठी था। कवि के पिता परम विद्वान् एवं हिन्दू संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा रखने वाले थे[१३६]। कवि पर उनकी इस विचारधारा का प्रभाव परिलक्षित होता है।

वैवाहिक जीवन—

श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी का विवाह १९५० में हुआ था। उनकी पत्नी श्रीमती सिद्धेश्वरी त्रिपाठी ने गृहस्थ धर्म का भली-भाँति निर्वाह करने के साथ-साथ श्री द्वारका प्रसाद को काव्य-कला की उत्तरोत्तर सेवा करने के लिए प्रेरिका का कार्य किया। विवाह के साथ ही कवि ने अपना निवास स्थान शाहटोला रायबरेली को बनाया। आपका वैवाहिक जीवन अधिक सुखमय नहीं रहा। आपको चार पुत्र-रत्नों की प्राप्ति हुई। दुर्भाग्य की बात है कि १४ नवम्बर १९७५ को (देवोत्थान एकादशी की रात को) उनकी पत्नी उनका साथ छोड़कर परधाम गमन कर गई, जिससे उनके जीवन में एक प्रकार का अवरोध उपस्थित हो गया। पत्नी की असामयिक मृत्यु के कारण उन्हें पुत्रों के संरक्षण

का भार अकेले ही उठाना पड़ा। अपनी इस कमी की पूर्ति हेतु उन्होंने स्वयं को काव्य-सर्जन में समर्पित कर दिया [१३७]।

कार्यक्षेत्र—

श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी जी संस्कृत एवं हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। वह दोनों भाषाओं पर समान अधिकार रखते हैं। उनकी कृतियों में गद्य एवं पद्य दोनों ही विधाएँ के रूप परिलक्षित होते हैं। कवि ने भारत-भारतीयता के प्रति स्वाभिमान एवं भारत राष्ट्र के प्रति भक्ति भावना जागरित करने के लिए प्रजातान्त्रिक भारतवर्ष के तीन प्रधान-मन्त्रियों के जीवन चरित्रों को उजागर करने के लिए "भारतगणराज्यस्य प्रधानमन्त्रिणः" नामक गद्य काव्य की रचना की है। कवि ने प्रस्तुत कृति की आवश्यकतानुसार व्यावहारिक शिक्षा देने हेतु एवं प्राचीन भारतीय संस्कृति को कायम रखने हेतु एवं प्राणीमात्र में राष्ट्रीय चेतना का विकास करने हेतु महात्मा गांधी, राजेन्द्र प्रसाद, जवाहर लाल नेहरू एवं आचार्य विनोबा भावे आदि के जीवन चरित्रों को एवं उनके विचारों को जनता तक पहुँचाने के लिए "गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च" की रचना की। प्रस्तुत कृति का प्रकाशन सन् १९७६ में हुआ। उल्लेखनीय बात है कि कवि ने अपनी पत्नी के अवसान से उत्पन्न विषाद को कठिनता से भुलाकर प्रस्तुत कृति को पूर्ण किया तथा उन्होंने १६ निबन्धों से युक्त "अन्तरिक्षनादः" नामक गद्य-काव्य की रचना की है और इसका प्रकाशन सन् १९८० में करवाया है [१३८]।

अतीव हर्ष एवं सौभाग्य का विषय है कि उन्हें अपनी इन समस्त कृतियों के प्रकाशन हेतु शिक्षा एवं समाज कल्याण मन्त्रालय भारत सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई। उन्होंने अपनी इन सभी कृतियों का प्रकाशन प्रेमी प्रकाशन राठौरा से करवाया [१३८]।

इन कृतियों के अतिरिक्त उन्होंने "दिगम्बर" नामक काव्य-संग्रह "अर्चाठ-शिरोमणि", व्याकरण तथा अलंकार एवं तुलसी अंत्याक्षरी आदि संस्कृत ज्ञान प्रकाशिका आदि कृतियों की भी सर्जना की है [१४०]।

श्री त्रिपाठी जी की भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा ने उन्हें काव्य-सृजन रूप दिव्य प्रकाश दिखाया है। उसके माध्यम से आज अपनी समस्याओं रूपी गहन अंधकार को दूर करने में समर्थ हो सके हैं।

वह आज भी साहित्य की श्रीवृद्धि में तल्लीन हैं। भगवान् से प्रार्थना है कि उन्हें दीर्घायु प्राप्त हो, जिससे संस्कृत साहित्य का उत्तरोत्तर विकास हो, वह और भी अधिक समृद्ध एवं सम्पन्न बने। यही मेरी कामना है।

(क) "चारुचरितचर्चा में महात्मा-गांधी" (कथानक)

जब राक्षसवृत्ति बढ़ जाती है, दुर्बलों पर अन्याय होता है, मानव ईर्ष्या-द्वेष और दीनता एवं दासत्व में बँध जाता है, सांसारिक विषयों को जीवन का ध्येय मानकर ईश्वर प्रदत्त शक्ति का दुरुपयोग होता है और जब मानव में मानवता का विनाश होता है तब मानव को इन दुष्प्रवृत्तियों से छुटकारा दिलवाने के लिए आध्यात्मिकता की ओर

अग्रसर करने वाले, पवित्र कर्म में नियोजित करने वाले, कर्त्तव्य-विमुख को कर्त्तव्यपरायणता की ओर ले जाने वाले पृथ्वी पर जन्म लेने वाले महान् पुरुषों में से महात्मा गाधी भी एक हैं।

आगे का कथानक नहीं दिया जा रहा है।

(ख) चारुचरित चर्चा मे "महात्मा गांधी" गद्यकाव्य की संगति

यह एक चरित्रात्मक गद्य काव्य है। इसमें लगभग १०० महापुरुषों और राष्ट्रनेताओ का चरित्राकन है। इसमें एक ओर राष्ट्रनेताओं के कार्यों के विवरण हैं तो दूसरी ओर राष्ट्रकवियो का अपनी कृतियो के माध्यम से की गई राष्ट्र सेवा का वर्णन है। यह गद्यकाव्य राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है। "महात्मा गाधी" भी एक ऐसे महापुरुष और महान् नेता हैं जिनमें समाज में परिव्याप्त समस्याओं और परतन्त्रता को समाप्त कर देने के लिए अत्यधिक उत्साह एव साहस है। वह भारत को स्वतन्त्र एव अच्छाईयों से युक्त देखना चाहते हैं। इसमें बताया गया है कि दीनों पर दया करनी चाहिए अन्याय कभी भी सहन नही करना चाहिए, दोषों से घृणा करनी चाहिए, अहंकार और छल-कपट से सर्वथा दूर रहना चाहिए, न्याय के मार्ग पर चलना चाहिए, भेद-भाव की भावना नहीं रखनी चाहिए, अपनी संस्कृति, सभ्यता एव देश का सम्मान करना चाहिए। राष्ट्र के प्रति प्रेम का भाव होना चाहिए, समाज में किसी को किसी तरह का कोई कष्ट न हो इसके लिए आवश्यक है परतन्त्रता का विनाश और समाज के हर क्षेत्र में विकास करना। उनकी भाषा प्रसाद गुण प्रधान है। कही-कही पर माधुर्य गुण से परिपूर्ण भी है। इसमें उन्होंने पद्य भी लिखे हैं जिससे भाषा और अधिक परिष्कृत एव आकर्षक बन गई है।

तन्निर्दिष्ट पथारुढो भवेत्र प्रियभारतम्।
अस्त्येषा प्रार्थनानम्रा पादयो र्जगतीपदे।।

(रमेशचन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा में महात्मा गाधी पृ० सं० १३७)

इसमें कहा गया है कि महात्मा गाधी के मार्ग का अनुकरण भारत को उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचायेगा। एक स्थान पर रमेश चन्द्र शुक्ल ने आलंकारिक भाषा का प्रयोग किया है किन्तु वहाँ पर भी भाषा को सहजता से व्यक्त कर पाने में सक्षम हैं—

"तस्य तान्युत्कृष्टतमानि स्वार्थशून्यानि निखिल विश्वोपकारिणी वन्दनीयानि कर्माणि वीक्ष्य भारतस्यैव न समग्रस्यापि जगतो जनता कृतयुगस्य कारणमिव, बीजमिव विद्वत्सृष्टेः, एकागारमिव करुणायाः, स्थलदर्शनमिव विदग्धतायाः" एकस्थानमिव मर्यादाणा .... तमवाप्य जातेय जगती सर्वथैव सनाथा।"

(रमेशचन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा में "महात्मा गांधी, पृ०सं०-१३७)

इसके अलावा यह वास्तविक घटनाओं पर आधारित है। वैदर्भी शैली है। इस आधार पर हम इसे भी आख्यायिका के अन्तर्गत रख सकते हैं।

(ग) चारुचरित चर्चा के रचयिता का परिचय

"चारुचरित चर्चा, नामक गद्य-काव्य के रचयिता डॉ० रमेश चन्द्र शुक्ल का परिचय मैं उनके द्वारा विरचित "गाधी-गौरवम्" नामक "खण्डकाव्य"के

साथ प्रस्तुत कर चुकी हूँ। अतः पुन उनका परिचय देने की आवश्यकता नहीं है।

(क) सत्याग्रहोदयः का कथानक

दृश्य—१

सर्वप्रथम वेंकटेश्वर की पूजा के पश्चात् स्वतन्त्र भारत की विजय कामना की गई है।

दृश्य—२

सूत्रधार आदि के माध्यम से यह संकेत दिया है कि महात्मा गाधी सत्य और अहिंसा के बल पर दक्षिण अफ्रीकावासी भारतीयों को अवश्य कष्ट मुक्त करवायेंगे।

दृश्य—३

गाधी जी निष्काम कर्म करने पर बल देते हैं और नाविकाधिप द्वारा किसी वैश्या के गृह में ले जाए जाने पर श्रीराम की कृपा से उस पाप कृत्य से विमुख हो जाते हैं। गाधी जी के इस व्यवहार से नाविकाधिप भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहता है।

दृश्य—४

महात्मा गाधी दक्षिण अफ्रीका वासी भारतीयों का उद्धार करने के लिए विशेष रूप से श्रेष्ठ अब्दुला के अभियोग के सन्दर्भ में दक्षिण अफ्रीका (दर्भाण नगर) आए। वहाँ पर उन्होंने भारतीयों की हीन दशा का अवलोकन किया।

दृश्य—५

रेलगाड़ी द्वारा दर्भाण नगर से प्रिटोरिया जाते हुए यद्यपि उनके पास प्रथम श्रेणी का टिकट है और वह इस कारण दूसरे डिब्बे में जाने को तैयार नहीं होते हैं। अत उनके भारतीय होने के कारण रेल अधिकारी ये बर्दाशत नहीं करता और आरक्षिक से कहकर उन्हें बाहर निकाल देता है।

दृश्य—६

तत्पश्चात् पर्दाकोफ ग्राम के समीप घोड़ागाड़ी से जाते हुए शकट नायक उन्हें अपमानित करता है। इस तरह वहाँ पर भारतीयों पर किये जा रहे अत्याचारों एवं उनके प्रति गोरों के द्वारा किये जाने वाले पशुतुल्य व्यवहार का अनुभव करते हैं साथ ही वह यह भी देखते हैं कि भारतीयों को मार्ग में भ्रमण तक करने की स्वतन्त्रता नहीं है और भारतीयों में एकता की कमी है।

दृश्य—७

महात्मा गाधी इसाईयों के धर्म सम्मेलन में हिन्दू धर्म की महत्ता का प्रतिपादन करते हैं और "सत्य ही ज्ञानका भण्डार है" यह बताते हुए ईश्वर का स्वरूप स्पष्ट करते हैं।

दृश्य—८

महात्मा गाधी ने दक्षिण अफ्रीका में देखा कि भारतीयों को भ्रमण की सुविधा नहीं है, यदि वह ऐसा करते हैं तो उन पर प्रहार किया जाता है। अत. वह उन्हें अधिकार

दिलवाने और मताधिकार दिलवाने के लिए प्रयास करते हैं। महात्मा गाधी दक्षिण अफ्रीका श्रेष्ठि अब्दुल्ला का मुकदमा लड़ने के लिए गए थे किन्तु भारतीयों के अनुरोध पर वह उनकी सेवा के लिए वहीं रुक गए।

दृश्य—९

तत्कालीन अफ्रीका का शासक राबिन्सन गाधी को अपना शत्रु और धूमकेतु मानने लगता है और उनका उत्साह देखकर वह भारतीयों के लिए कठोर नियम लागू कर देता है। वह यह चाहता है कि शीघ्र ही भारतीय यहाँ से चले जाए और नेटाल में अग्रजों का ही राज्य हो।

दृश्य—१०

महात्मा गाधी के अपनी पत्नी एवं पुत्र सहित दर्बाण नगर पहुँचने पर वहाँ की जनता भी उन्हें प्रताड़ित करती है। तब अलक्षेन्द्र की पत्नी उनकी रक्षा करती है और उन्हें रुस्तम के गृह में भेज देती है तभी जन समूह उन्हें मारने की इच्छा से वहीं पहुँच जाता है। तब अलक्षेन्द्र की पत्नी उन्हें रक्षालय में भेजकर उनकी सुरक्षा करती है।

दृश्य—११

महात्मा गाधी स्वयं अफ्रीका के फिनिक्स आश्रम में निवास करते हुए वहाँ के दीन दुखियों एवं अन्त्यज वर्ग की सेवा करते हुए कस्तूरबा को भी उनकी सेवा करने की आज्ञा देते हैं, लेकिन कस्तूरबा के विरोध करने पर उन पर दबाव डालते हैं जिस कारण उन्हें भी उनकी सेवा में जुट जाना पड़ता है। अपनी सेवा के परिणाम स्वरूप उन्हें वहाँ के निवासियों से जो उपहार मिला उसे उन्होंने जनता की सेवा के लिए ही समर्पित कर दिया।

दृश्य—१२

जोहान्सवर्ग के ओल्ड एम्पायर थियेटर में महात्मा गाधी सत्याग्रह की उत्पत्ति किस तरह हुई इस पर प्रकाश डालते हुए बताते हैं कि "सत्याग्रह" के लिए आत्मबल की आवश्यकता होती है। इसका पालन निर्बल नहीं कर सकता है, भीरुता का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है। तत्पश्चात् समस्त सभासद् उनकी विजय कामना करते हैं।

दृश्य—१३, दृश्य—१४

महात्मा गाधी स्मट्स द्वारा भारतीयों को परेशान करने के लिए बनाए गए अनुज्ञापत्र का विरोध करते हैं और सत्य एव अहिंसा के बल पर भारतीयो का उद्धार करते हैं।

दृश्य—१५

अन्त में महात्मा गाधी की विजय कामना के साथ उन्हें प्रणाम करते हुए यह कामना भी की गई है कि सभी एकजुट हो, सभी का मन समान हो।

(ख) सत्याग्रहोदयः में रूपकत्व की संगति

(अ) नाटक : एक विवेचन

काव्य मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं—श्रव्य, दृश्य एवं मिश्र अथवा चम्पू काव्य। श्रव्य काव्य के अन्तर्गत महाकाव्य, खण्डकाव्य एवं कथा, आख्यायिका आदि को लिया जाता है और दृश्य काव्य के अन्तर्गत रूपक और उपरूपक आदि को लिया जाता है। दृश्य काव्य श्रव्य काव्य की अपेक्षा अधिक मनोरंजक एवं प्रभावशाली होता है क्योंकि श्रव्य काव्य को केवल पढ़ा जा सकता है और उसमें वर्णनात्मकता भी बहुत अधिक हो जाती है जबकि दृश्य काव्य में हर बात बिल्कुल नाप-तोल कर कही जाती है और उसे हम सुनने के साथ-साथ देख भी सकते हैं। प्रत्यक्ष दर्शन से हमारे मन पटल पर शीघ्र ही उसका प्रभाव जम जाता है और हम उसमें दर्शायी गई घटना में यथार्थता का आभास भी पाने लगते हैं। यद्यपि उपन्यास स्वयं पढ़ने में आनन्द प्रदान करता है और वह ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ मनोरंजक भी होता है लेकिन उसमें पात्रों से सीधा साक्षात्कार नहीं हो पाता है। उसके मनोभावों का अनुमान लगा सकते हैं प्रत्यक्षीकरण नहीं कर सकते हैं जबकि "सिनेमा" में कथा भी चलती रहती है और प्रत्येक पात्र के हाव-भाव आदि अनेक बातों को हम अपनी आँखों से देख सकते हैं और उसमें स्वयं को भी खोज सकते हैं अतः दृश्य काव्य अधिक महत्त्व रखता है। दृश्य काव्य में काव्य के सर्वाधिक प्रमुख प्रयोजन "सद्यः परनिर्वृत्तये" अर्थात् अमन्दानन्द सन्दोह की सिद्धि भी होती है।

'रूपक को नाट्य, रूप और रूपक इन तीनों नामों से अभिहित किया जाता है। रूपक को "नाट्य" यह नाम इसलिए दिया गया है इसमें नट राम, युधिष्ठिर, कृष्ण, शिवाजी आदि की आंगिक, वाचिक, आहार्य, सात्त्विक आदि चतुर्विध अवस्थाओं का अनुकरण करता है और दर्शक उसे अभिनेता न समझकर उसमें रामादि का ही अनुभव करने लगता है। धनञ्जय ने दशरूपक की सातवीं कारिका में कहा है "अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्"। इसका "रूप" नाम इसलिए है क्योंकि हम इसे अपनी आँखों से देख सकते हैं अर्थात् रूपक हमारी दृगिन्द्रिय का विषय होता है और उसे रूपक नाम इसलिए दिया गया है क्योंकि इसमें नट में नायक का आरोप किया जाता है। दशरूपक में इन दोनों की परिभाषा दी गई है "रूपं दृश्यतोच्यते" "रूपकं तत्समारोपात्।" ये तीनों ही रूपक के ही द्योतक हैं। रूपक में भी काव्य के अन्य भेदों के समान ही रस का विशेष महत्त्व है। रूपक भी १० हैं। इनका उल्लेख भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में किया है, धनञ्जय ने दशरूपक में और विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण में। उन रूपक प्रकारों में "नाटक" नामक रूपक का स्थान सबसे पहला है।

अतः अब मैं पहले "नाटक" की परिभाषा प्रस्तुत करूँगी तत्पश्चात् उसे अपने आलोच्य ग्रन्थ में स्पष्ट करने का प्रयास करूँगी।

भरतमुनि ने नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी है कि "नाटक का कथानक ऐतिहासिक अथवा वास्तविकता के आधार पर आधृत होना चाहिए, उसका नायक लोकप्रिय और धीरोदात्त होना चाहिए, वह राजवंश से सम्बन्धित भी हो सकता है और

दिव्यवंश से भी, वह अनेक विभूतियों से युक्त होता है और नाटक को समृद्ध बनाता है। उसमें राजा का चरित्र होता है। उसमें अनेक रस भाव आदि वर्णन होता है, सुख-दुख दोनों की उत्पत्ति उसमें होती है[१४१]।

आचार्य विश्वनाथ ने परिष्कृत एवं सुन्दर ढंग से नाटक की परिभाषा प्रस्तुत की है—"नाटक रूपक का वह भेद है जिसका कथानक प्रसिद्ध होता है अर्थात् उसका आधार ऐतिहासिक ग्रन्थ होते हैं, उसमें मुख, प्रतिमुख आदि पाँचों सन्धियों का समायोजन होता है, वह नायक के सदृश गुणों से मण्डित अनेक महान् लोगों के चरित्र वर्णन से और भी अधिक शोभादायक हो जाता है, वह सुख-दुख दोनों की अनुभूति करता है (जैसे उत्तररामचरित में राम का सीता को त्यागना दुख की अनुभूति कराता है और दोनो का पुनर्मिलन सुख प्रदान करता है), उसमें विभिन्न रसों का परिपाक होता है, नाटक कम से कम पाँच और अधिक से अधिक दस अंकों में बाँटा जा सकता है। नाटक का नायक प्रसिद्ध कुल का होना चाहिए और उसे धीरोदात्त एवं शक्ति सम्पन्न होना चाहिए। नायक कोई दिव्य अथवा मनुष्य भी हो सकता है और मानव शरीर धारण करने वाला कोई दिव्य हो सकता है। इसका प्रधान शृंगार रस अथवा वीर रस होता है और अन्य सभी रस अगरस के रूप में ही वर्णित होते हैं। निर्वहन सन्धि में अद्भुत वर्णन होना है। किसी एक सिद्धि में चार या पाँच व्यक्ति मुख्य रूप से प्रयत्नशील रहते हैं। इसकी एक विशेषता ये होती है कि इसमें गोपुच्छ की भाँति कहीं पर वृत्त लघु होता है और कहीं पर दीर्घ[१४२]।

आचार्य विश्वनाथ ने नाटक की कुछ मूल विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए यह भी कहा है कि नाटक का नाम ऐसा रखना चाहिए जिसमें उसका आन्तरिक स्वरूप स्पष्ट हो जाये। हम यह समझ लें कि इस नाटक में किसको आधार बनाया गया है और उसमें किस कार्य की सिद्धि होगी[१४३]।

अब मैं विस्तार में न जाकर "सत्याग्रहोदय" में नाटकत्व की संगति प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ।

(आ) सत्याग्रहोदयः मे नाटकत्व की संगति

१. सत्याग्रहोदयः के प्रारम्भ में सूत्रधार और नटी नाटक की मंगलपूर्ण समाप्ति के लिए नान्दी गायन करते हैं—

श्रीकान्तः शंखचक्राभयवद दराकोल्लसच्चारु मूर्तिः
सप्ताद्रिक्षेत्र वासशुचिदचिदधिपतिःशाश्वतोधर्मगोप्ता।
व्यक्ताव्यक्त स्वरूपः परममुनिनुतो योगविद्या प्रकाश-
भक्ताभीष्टप्रदायी स भवतु भवतां श्रेयसे श्रीनिवासः।।

(बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय-दृश्य-११)

२. प्रस्तुत नाटक का नामकरण मोहनदास कर्मचन्द गांधी द्वारा दक्षिण अफ्रीका में उनके स्वानुभूत अंग्रेजों के दुर्व्यवहार का और उस विपत्ति से मुक्त होने के लिए किए गए प्रयासों का वर्णन है। कथा भी ऐतिहासिक है।

३. "सत्याग्रहोदय" नाटक की कथा से ली गई है। अफ्रीका में उनके स्वानुभूत अंग्रेजों के दुर्व्यवहार का और उस विपत्ति से मुक्त होने के लिए किए गए प्रयासों का वर्णन है। कथा भी ऐतिहासिक है।

४ इससे हमें प्रेरणा मिलती है कि हमें हर परिस्थिति में अपने मन पर नियन्त्रण रखना चाहिए, अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कष्ट भी सह लेने चाहिए : सत्य को ही सबसे बड़ा समझना चाहिए, परतन्त्रता को अभिशाप मानते हुए सदैव उससे मुक्त होने की बात सोचनी चाहिए।

५. इस नाटक में १५ दृश्य हैं। इसकी कथावस्तु में कहीं भी प्रवाह अवरुद्ध नहीं हुआ है। जैसे-जैसे आगे बढ़ते जाओ वैसे-वैसे उसकी रोचकता भी बढ़ती जाती है।

६. इसमें वीर रस की प्रधानता है अत सात्वती वृत्ति का प्रयोग किया गया है।

७. इस नाटक में विदूषक आदि की कल्पना नहीं कि गई हैं क्योंकि इसमें एक तो हास्य रस का अभाव है और मनोविनोद के लिए अवकाश भी नहीं है।

८ भाषा प्रसाद गुण पूर्ण और वैदर्भी शैली से युक्त है। उसमें कहीं-कहीं पर अंग्रेजी का प्रयोग भी किया गया है।

९. सभी पात्र वास्तविक हैं। उसमें नाटक के अनुसार कवि ने जो कल्पना का सहारा लिया है उससे मूल कथ्य तिरोहित नहीं होने पाया है अपितु उससे नाटक और भी प्रभावोत्पादक हो गया है।

१०. इसमें पाँचो सन्धियों का निर्वाह भी भली-भाँति हुआ है। मैं यहाँ पर सन्धियों के कुछ अंगों द्वारा इसको स्पष्ट कर रही हूँ—सत्याग्रहोदय के द्वितीय दृश्य से लेकर चतुर्थ दृश्य तक मुख सन्धि है। प्रारम्भ में नटी और सूत्रधार द्वारा संकेत करना कि अब हमारे भय का कोई कारण नहीं है क्योंकि अब महात्मा गाधी के दक्षिण अफ्रीका जाने से समस्त कष्ट दूर हो जायेंगे, यहाँ पर "बीज" नामक अर्थ प्रकृति है। मुखसन्धि के "उपक्षेप" परिकर विलोभन अगों का उल्लेख इस प्रकार है—

उपक्षेप—

अभयं सर्वभूतेभ्यो दातुं गान्धिरवातरत्
तत् कुतोनाम भीरुत्वमहिंसाया मतिं कुरु।।
(सत्याग्रहोदयः, दृश्य-२)

परिकर—

अहिंसैव परा शान्तिरहिंसैव शुस्यापदम्
अहिंसाममालंव्य लोक सर्वं सुखी भवेत।।
(वही, वह)

विलोभन—

यानिच लोकोत्तराणिअपदानानि दक्षिणाफ्रिकाया जगदेकवीर

असहाय शूरः गान्धि· चकार न तानि स्तोतु पारयाम ।।

(वही, वही)

और दृश्य-१४ और दृश्य-१५ में निर्वहण सन्धि है। "स्मट्स । त्व तु न प्रेमभाजनम् में निर्णय नामक निर्वहण सन्ध्यंग है और—

"नित्यं सत्याग्रही हृष्ट. स्पृश्यते न निराशया
पराजयं न जानाति नूनं सत्याग्रह व्रती
विश्रामो नाम नास्त्येव सत्याग्रह पारणे
कार्योयत्नस्तत्र तेन यत्राधर्मो विजृंभते।"

यहाँ पर प्रसाद नामक सन्धि अंग है। निर्वहण सन्धि का आनन्द नामक अंग—"बहो कालादत्रोपित्वा, अत्रत्यान् भारतीयानुद्धृत्य———मातृभूमि "(सत्याग्रहोदय· दृश्य-१४) है"

अंग का उदाहरण देखिये—"भ्रातर· महत् खलु विषादस्थानमेतद यदहमत्रभवत् उत्सृज्य यामि। युष्माकमेवाय विजय । (सत्याग्रहोदय दृश्य-१४)

कवि ने १५ वें दृश्य में "भरत वाक्य" के द्वारा काव्य संहार और प्रशस्ति नामक सन्धि अंग का निर्देश भी किया है।

इस विवेचन के आधार पर हम "सत्याग्रहोदय" को आधुनिक सम्स्कृत साहित्य का उत्कृष्ट "नाटक" कह सकते हैं। इसमें भारत-भारतीयता के प्रति अनुराग जगाया गया है और अहिंसा को विजय के लिए सर्वोत्कृष्ट साधन स्वीकार किया गया है।

(ग) सत्याग्रहोदयः के रचयिता का परिचय

रचयिता की जन्म-स्थली—

"सत्याग्रहोदय" नामक रूपक के रचयिता डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री का जन्म आन्ध्र प्रदेश के भाग्यनगर नामक स्थान में हुआ था[१४४]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का विवरण—

रचयिता के जन्म के विषय में तो मुझे कोई संकेत नहीं मिला। रामलिंग शास्त्री का जन्म एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम राम एव माता का नाम रत्नाम्बा था[१४५]।

वैवाहिक जीवन

शास्त्री जी का दाम्पत्य जीवन मधुरता से पूर्ण है। उनका विवाह सद्गुणों से मण्डित त्रिपुरा सुन्दरी कन्या से हुआ था[१४६]।

व्यक्तित्व—

शास्त्री जी अत्यधिक विनम्र स्वभाव के लगते हैं। उनकी इस विनम्रता के विषय में अनुमान उनके द्वारा पुस्तक के प्रारम्भ में प्रस्तुत "विज्ञापना" से लगाया जा सकता है। वह प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में सहायता करने वाले विद्वानो के प्रति कृतज्ञतापूर्वक अभिवादन करते हैं और कहते हैं कि मैं इस कृति को विद्वानों के परितोष के लिए ही

प्रस्तुत कर रहा हूँ[१४७]।

शिक्षा-दीक्षा—

डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री संस्कृत एवं दर्शन विषयों से एम.ए. एवं पी.एच.डी. हैं[१४८]।

कार्यक्षेत्र—

वह एक शिक्षक भी हैं और कवि भी। वह उसमानिया विश्वविद्यालय में संस्कृत के रीडर के पद पर आसीन रह चुके हैं। उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार ने सन् १९६६ में पुरस्कार से सम्मानित किया था[१४९]। उन्होंने "सत्याग्रहोदय" के अतिरिक्त अन्य कृतियों का भी निर्माण किया है ये सभी कृतियाँ एक साथ प्रकाशित हैं। प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन १५ अक्टूबर १९६९ को महात्मा गाधी शताब्दी महोत्सव के अवसर पर हुआ था[१५०]।

डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री ने "सत्याग्रहोदय" रूपक के अतिरिक्त शुनःशेप. (सात दृश्यों में) दशग्रीवप्रमथनम्, मयानुशासनम् (५ दृश्यों में) सुग्रीवसख्यम् (६ दृश्यों में), कालिदासेन संभाषणम् मातृगुप्त नामक रूपकों का निर्माण किया है, जवाहर लाल नेहरू श्रद्धाञ्जलि नामक लघु कविता, गेयाञ्जलि- (१) निद्रे, (२) वर्तमानेव मेऽस्तु, (३) कविते !, (४) कथमिन तरानि सागरम् ? (५) वाचामयै नमः, (६) उदेति हृदये, (७) दृष्टोऽसि हन्त परमेश आदि शीर्षकों में बाटकर मुक्तक काव्य का निर्माण किया है, संस्कृतीकरण में १९ कविताएं हैं[१५१]।

डॉ. बोम्मकण्ठी शास्त्री ने ये कृतियाँ हमें प्रदान करके हमारा महान् उपकार किया है उन्होंने प्राचीन एवं आधुनिक दोनों ही विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है। वह दीर्घजीवी हों और इसी तरह अन्यान्य विषयों पर अपना कौशल प्रदर्शित करते रहें।

(क) गान्धि विजय नाटकम् का कथानक

प्रथमोऽङ्कः—

कवि ने अपना परिचय देते हुए भारतमाता के द्वारा ही स्वयं को परतन्त्रता की जन्जीरों में जकड़ा हुआ देखकर अत्यन्त खेद प्रकट किया है। तिलक भारत को परतन्त्रता से मुक्त करवाने के लिए ईंट का जवाब पत्थर से देने को भी तत्पर हैं और मालवीय जी भारतीयों को विदेशी वस्त्रों का परित्याग करके स्वदेशी वस्त्र धारण करने की प्रेरणा देते हैं। महात्मा गाधी भारतीयों को दासता से मुक्त करवाने के लिए अफ्रीका जाते हैं। गाधी वहाँ पर कर की चोरी करने वाले अपने मित्र अब्दुल्ला की वकालत करके उसे मुक्त करवाते हैं और सत्याचरण करने वाले गाधी से प्रभावित होकर कलेक्टर एवं पादरी उन्हें अपना मित्र स्वीकार करते हैं और भविष्य में उन्हें अपना सहयोग प्रदान करने का आश्वासन देते हैं।

महादेव के मुख से गोरों द्वारा चम्पारन में नील की खेती करने वाले भारतीयों पर किए गए जा रहे अत्याचारों एवं नृशंसतापूर्ण आचरण को सुनकर गाधी न्यायालय में जाकर उनकी वकालत करके उन्हें तीन पौन्ड कर से एवं अंगुलि अंकदान से मुक्त करवाते हैं।

अफ्रीका निवासी भारतीय गाधी जी के इस व्यवहार से प्रसन्न होकर उनके भारत गमन के अवसर पर उन्हें उपहार देते हैं : किन्तु वह उनके द्वारा समर्पित आभूषणादि को कस्तूरबा के न चाहते हुए भी भारतीयों की सेवा के लिए समर्पित कर देते हैं।

द्वितीयों ऽकः—

चम्पारन में निलहे गोरो द्वारा कृषकों को सताया जाता हुआ देखकर उन्हें नील की खेती से छुटकारा दिलवाते हैं एवं भारतीयों के लिए शिक्षालयों में प्रवेश निषिद्ध जानकर गाधी भारतीयो को न्याय दिलवाने का प्रयास करते हैं और गोरो को भारत छोड़ने के लिए मजबूर कर देते हैं। मालवीय जी गाधी जी का सहयोग एव सहमति पाकर गोरो का विरोध करने के लिए विदेशी वस्त्रों को अग्नि को समर्पित कर देते हैं।

मालवीय जी जलियाँवाला बाग में हुए नृशसता पूर्ण नर-संहार की कडी आलोचना करते हैं। डायर आदि अग्रेज अधिकारी जवाहर लाल नेहरू, राजेन्द्र प्रसाद, मालवीय आदि के विरोध से आश्चर्यान्वित हो जाते हैं।

महात्मा गाधी नमक का निर्माण करके अग्रेजो द्वारा लगाए गए नमक कानून को भग्न करवाते हैं एव पटेल आदि अनेक लोग गाधी निर्मित नमक को राष्ट्र हित के लिए अधिक से अधिक धन देकर खरीद लेते हैं।

नमक कर न देने के कारण और नमक की चोरी के कारण जवाहर लाल नेहरू आदि अनेक भारतीयो को कारागृह की यातना सहनी पडती है।

अग्रेजो द्वारा जर्मन युद्ध मे भारतीयो की सहायता की आकाक्षा करने पर जवाहर लाल नेहरू उनसे लवण कर का विनाश एवं स्वराज्य-दान की याचना करते हैं।

जवाहर लाल नेहरू आदि भारतीय नेता भारत-विभाजन का विरोध करते हैं परन्तु जिन्ना विभाजन का ही पक्ष लेते हैं। अत. माउन्टबेटन भारत को दो टुकड़ों में बाँटने के साथ ही स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं।

अन्त में कवि गाधी एवं जवाहर लाल नेहरू के माध्यम से भारतवासियों की मगल कामना करते हैं।

(ख) गान्धिविजय नाटकम् मे नाटकत्व की संगति

१. नाटक के प्रारम्भ में सूत्रधार ने नान्दी पाठ किया है और महात्मा गाधी की चरण वन्दना करके उनकी सर्वतोमुखी विजय-कामना की है—

> यत्त्वत्पादयुगस्य भाः प्रभवति स्वर्गे च भूमण्डले,
> तत्साम्याय न चारुण· प्रतिगतोऽनूरुत्वदोषाकुल·
> गुञ्जा स्वेऽसितता विलोक्य वपुषि प्राप्तु मनो नो
> चण्डातोहयभारकस्तिति जने दुष्कीर्तितो व्यधाच नाव्रजत्
> सत्या शान्ता शुभादान्ता सर्वलोकहितैषिणी।
> सता महात्मना वाणी जयतात्सर्वतोमुखी।।
> (मथुरा प्रसाद दीक्षित, गान्धिविजयनाटकम् प्रथमोऽङ्क· १/२)

नान्दी पाठ करके भारतीय नाट्य परम्परा को कायम रखा है।

२. इसमें दो अंक हैं। इसमें महात्मा गांधी और तिलक, राजेन्द्र प्रसाद आदि द्वारा भारत की स्वतन्त्रता के लिए किए गये प्रयासों का वर्णन है। भारतमाता को स्त्री पात्र के रूप में उद्भावना करके काव्य को दिव्यरूप प्रदान किया है। विदेशी वस्त्रों की होली जलाकर, नमक कानून का विरोध करके भारत भारतीयता और राष्ट्रीय-भावना का ही सञ्चार किया है।

३. इसमें सरस संस्कृत का प्रयोग किया गया है इसमें नीच पात्रों द्वारा प्राकृत के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग करवाया गया है।

४. नाट्योक्तियों का भी प्रयोग किया गया है—यथा जवनिका, सकरुण, आकाशभाषित। एक उदाहरण देखिए—

> सकरुणम्—कौरवाणां रणक्षेत्रे गीताया पार्थसन्निधौ।
> धर्मग्लानिविनाशे प्राक् प्रतिज्ञा क्व च स्थिता।।
>
> (वही, वही, प्रथमोऽङ्कः,३)

५ इसमें पाँचों सन्धियों का निर्वाह हुआ है। माउण्टबेटन द्वारा विभाजन के साथ स्वराज्य की उद्घोषणा करना निर्वहण सन्धि का उदाहरण है।

अन्त में भरत वाक्य द्वारा कामना की गई है कि समस्त प्राणिवर्ग स्वस्थ्य हो, और पृथ्वी शस्य श्यामला हो, विद्वान् लोग नवीन वस्तुओं का निर्माण करें और सारी प्रजा शिक्षित हो और प्राचीन काल की तरह भारतवर्ष में विद्वानों का साम्राज्य हो—

> "सर्वे सन्तु निरामयाश्च कुशलाः सन्त्वे सस्यद्धरा,
> शान्ताशान्तिविवर्धनैकनिपुणा दक्षा दृढ़ा स्युर्नराः।
> विद्वांसो नवनव्य वस्तुनिवहं निर्मापयन्तो भृशं
> भूयासुः पुनरेव भारत बुधाः सर्वस्व शिक्षाप्रदाः।।
>
> (वही, द्वितीऽङ्क, १६)

इन विशेषताओं के आधार पर हम "गान्धिविजय नाटकम्" को भी "नाटक" नामक रूपक कह सकते हैं।

(ग) गान्धिविजय नाटकम् के रचयिता का परिचय

गांधी विजय नाटक के रचयिता मथुरा प्रसाद दीक्षित का जन्म उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत हरदोई जिले के भगवन्त नगर ग्राम में हुआ था [१५२]।

रचयिता के जन्म एवं वंश का परिचय—

मथुरा प्रसाद दीक्षित का जन्म १८७८ में हुआ था। उनके पिता का नाम बदरीनाथ एवं माता का नाम कुन्तीदेवी था। उनके पितामह का नाम श्री हलधर था, जो कि उच्चकोटि के आयुर्वेदाचार्य थे [१५३]।

शिक्षा-दीक्षा--

मथुरा प्रसाद दीक्षित विद्यार्थी जीवन से ही अत्यधिक प्रखर बुद्धि वाले थे। उनमें किसी भी विषय को सहज में ही एवं शीघ्र ग्रहण कर लेने की योग्यता थी। वह आत्माभिव्यक्ति में भी अत्यधिक कुशल थे। विद्यार्थी जीवन से ही उनका रुझान शास्त्रार्थ में रहा है [१५४]। इसके अतिरिक्त उनकी शिक्षा-दीक्षा के सन्दर्भ में कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

वैवाहिक जीवन--

मथुरा प्रसाद दीक्षित का विवाह यथासमय सुशील एवं गुणवती कन्या गौरादेवी के साथ हो गया था। मथुरा प्रसाद दीक्षित के तीन पुत्रों में से सदाशिव दीक्षित अत्यधिक प्रखर बुद्धि वाले थे। आधुनिक संस्कृत नाटककारों में उनका नाम आदर से लिया जाता है उनके द्वारा विरचित "सरस्वती" नामक एकाकी रूपक है। इसके अतिरिक्त उनको नव पौत्र प्राप्ति भी हुई [१५५]।

रचनाएं--

कवि ने साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर लेखनी चलाई है। उन्हें जितना कमाल श्रव्य काव्य पर हासिल है उतना ही कमाल दृश्य काव्य पर भी। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके द्वारा विरचित कृतियाँ हैं। उनके द्वारा विरचित कृतियों को दो भागों में बाँटा जा सकता है--(१) प्रकाशित (२) अप्रकाशित।

निर्णय रत्नाकर, काशी शास्त्रार्थ, नारायण-बलिनिर्णय, कुतर्कतरूकुठार, जैनरहस्य कलिदूतमुखमर्दन, कुण्डगोल निर्णय, जैन रहस्य, मन्दिर प्रवेश निर्णय, आदर्श लघु कौमुदी, वर्णसकर जाति निर्णय, पाणिनीय सिद्धान्त कौमुदी, मातृ दर्शन समास, चिन्तामणि केलि कुतूहल, प्राकृत प्रकाश, पालिप्राकृत व्याकरण कविता रहस्य, गौरी व्याकरण, पृथ्वीराज रासोकी टीका (प्रसाद), रोगिमृत्यु विज्ञान आदि अप्रकाशित कृतियाँ हैं [१५६]।

इनमें से कुछ कृतियो का उल्लेख स्वयं मथुरा प्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित "श्रीगान्धिविजयनाटकम्" के प्रारम्भ में भी मिलता है [१५७]।

मथुरा प्रसाद दीक्षित को अपनी पृथ्वीराज रासो नामक काव्य कृति के विद्वत्तापूर्ण गवेषणात्मक उपलब्धि पर महामहोपाध्याय" इस सम्मानित उपाधि से विभूषित किया गया है [१५८]। उन्होंने स्वयं गान्धि विजय नाटकम् के साधनों" के अन्तर्गत अपने लिए "महामहोपाध्याय" इस उपाधि का प्रयोग किया है [१५९]।

इसके अलावा उनके द्वारा विरचित कुछ रूपक भी प्रकाशित हैं--

सर्वप्रथम कवि ने अपने देश के भावी कर्णधारों में आत्मगौरव, साहस, वीरता सहनशीलता आदि राष्ट्र के कल्याण में उपकारक गुणों को जागरित करने और उन्हें विकसित करने के लिए मेवाड़ के प्रतापी राजा महाराणा प्रताप की मातृभूमि की रक्षा के लिए तत्कालीन मुगल सम्राट अकबर के साथ हुए घोर संघर्ष एवं शौर्य कथाको सात अकों वाले "वीरप्रतापनाटकम्" की रचना के माध्यम से उद्घाटित किया है [१६०]।

प्रस्तुत नाटक कृति की रचना सन् १९३५ में हुई और उसका प्रकाशन १९६५ में हुआ था[१६१]।

जन-जन के मन में राष्ट्रीय भावना जागरित करने के लिए कवि ने अंग्रेजों के भारत देश में आगमन और भारत भूमि को अपने अधीन करके भारतदेश वासियों पर किये गये शोषण एवं उनसे मुक्ति पाने के लिए तिलक, खुदीराम, गांधी के द्वारा किये गये प्रयासों एवं अन्त में अंग्रेजों द्वारा भारतभूमि को गाधी के सशक्त हाथों में सौंप दिये जाने का वर्णन "भारतविजयनाटकम्" नामक नाटक के माध्यम से किया गया है। प्रस्तुत नाटक काव्य कृति की रचना स्वतन्त्रता से पूर्व सन् १९३७ में हो चुकी थी, किन्तु प्रकाशन १९४८ में सरकार द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहायता से हुआ[१६२]।

कवि ने अपने आश्रयदाता सोलन नरेश की धर्मपत्नी की इच्छानुसार जगदम्बा भवानी दुर्गा के उपासक राजकुमार सुदर्शन की चरित-गाथा को आधार बनाकर "भक्त सुदर्शन" नामक नाटक की रचना की[१६३]।

उन्होंने शंकर के प्रतिपक्षियों के मतों के विलोडन की चर्चा हेतु "शंकर-विजय" नामक रूपक की रचना की है[१६४]।

प्रख्यात हिन्दी सम्राट दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान ने अपने देश की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए मोहम्मद गोरी का जिस वीरता एवं स्वाभिमान के साथ मुकाबला किया है और भारतीयता की शान को बनाये रखने वाले अमर शहीदों के बलिदान का वर्णन उन शहीदों के प्रति आदर भाव भरता है और प्राणी मात्र में राष्ट्रीय-चेतना जगाता है। इसी कथा पर उन्होंने पृथ्वीराज विजय नाटकम् की रचना की है। इसका प्रकाशन सन् १९६० में हुआ था[१६५]।

इसके अलावा मथुरा प्रसाद दीक्षित ने गाधी सहित तिलक, मालवीय, राजेन्द्र प्रसाद के द्वारा भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु ज प्रयास किया गया है उनका अतीव रोचक वर्णन-गान्धिविजय नाटकम् में किया गया है[१६६]।

उनका अन्तिम प्रकाशित नाटक "भूभारोद्धरण" है। गान्धारी के शाप के अनुसार कृष्ण का मरण दिखाया गया है[१६७]।

इन रूपकों के अतिरिक्त मथुरा प्रसाद दीक्षित ने जानकीपरिणय, युधिष्ठिर राज्य, कौरवौचित्य-भ्रष्टाचार-साम्राज्य आदि प्रकाशित रूपक एवं भगवद् नखशिख वर्णन-शतक नारद शिव वर्णन आदि काव्य ग्रन्थ लिखे हैं[१६८]।

।

संदर्भ

(१) सर्गबन्धो महाकाव्यमारब्धं संस्कृतेन यत्।
तादात्म्यमजहत्तत्र सतत्समं नाति दुष्यति।
इतिहासकथोद्भूतमितरद्वा सदाश्रयम्।
मन्त्रदूतप्रयाणाजिनियतं नातिविस्तरम्।
शक्वर्यातिजगत्यातिशक्वर्या त्रिष्टुभा तथा।।
पुष्पिता ग्रादिभिर्व्वक्रा भिजनैश्चारूभिः समैः।
मुक्ता तु भिन्न वृत्तान्ता नाति सक्षिप्त सर्गकम्।।
अतिशक्वरिकाष्टिभ्यामेकसंकीर्णकैः परः।
मात्रयाप्यपरः सर्गः प्रशस्त्येषु च पश्चिमः।।
कल्पोऽतिनिन्दित स्तस्मिन्विशेषानादरः सता।
नगरार्णवशैलार्त्तुचन्द्रार्काश्रम पादपैः।।
उद्यान सलिल क्रीडामधुपानरतोत्सवै ।
दूतीवचन विन्यासैरसतीचरिताद्भुतैः
तमसामरूताप्यन्यैविभावैरति निर्भरैः।
सर्ववृत्तिप्रवतञ्च सभाव प्रभावितम्।।
सर्वरीति रसैः पुष्टं पुष्टंगुण विभूषणै।
अत एवं महाकाव्यं तत्कर्त्ता च महाकविः।।
वाग्वैदग्ध्य प्रधानेपि रस एवात्र जीवितम्।
पृथक् प्रयत्न निर्वर्त्यं वाग्वकिम्नि रसाद्वपुः।।
चतुर्वर्गफलं विश्वग्व्याख्यातं नायकाख्यया।
समानवृत्तिनिर्व्यूढः कौशिकीवृत्ति कोमलः।।

—महर्षि वेदव्यास, अग्निपुराण,/३३७/२४-३४

(२) रूद्रट, काव्यालंकार, १६/२-१९, ३७-३८
(३) हेमचन्द्र, काव्यानुशासन, अष्टम अध्याय।
(४) कुन्तक, वक्रोक्ति जीवितम्, ४/११, २६
(५) आनन्दवर्धन, ध्वन्यालोक, तृतीय उद्योत १०-१४
(६) पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, १/१-३
(७) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास,

. पृ.स.-१४३

(८) (क) वही, वही, पृ.स.- १४४

(ख) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.-१७१

(ग) स्व. पाण्डेय एवं व्यास, संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पृ.सं.-२७३

(घ) डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, पृ.सं.- ५१३

(ङ) डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय, संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ.स.- २६३

(९) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एव रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.सं. १४४

(१०) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.- १४०

(११) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एव रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास- पृ.स.- १४४

(१२) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एव डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास पृ.सं.- १४४

(१३) वही, वही।

(१४) (क) वही, वही।

(ख) प्राच्य प्रतीच्य समुपास्य शास्त्रं
गद्यं च पद्य तनुतेऽनवद्यम्।
कथा-प्रबन्धे रूचिमादधाना
"क्षमा" क्षमेवाक्षयमोदमूर्तिः।।

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी-संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, पृ.सं.- ५/३

(१५) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, . पृ.सं.- १४४

(१६) वही, वही, पृ.सं.- १४५

(१७) डॉ. कपिल देव द्विवेदी, संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, पृ.सं.- . ५१३

(१८) (क) वही, वही, पृ.सं.-५१३-५१४

(ख) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल . . इतिहास, पृ.सं.-१४५

(१९) (क) डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय, संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, . पृ.सं.-२६३

(ख) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.-१६८

(ग) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४४-४५

(२०) (क) डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय, संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ.स.- २६३

(ख) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.सं.-१४४-१४५

(२१) वही, वही, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४४-४५

(२२) (क) वही, वही, सस्कृत साहित्य का सरल इतिरास, पृ.स.- १४४-४५

(ख) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, सस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.स.- १६९

(ग) स्व. पाण्डेय एवं व्यास, सस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पृ.स.-२७३

(२३) (क) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.स.- १७०

(ख) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४७

(२४) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, सस्कृत साहित्य सरल इतिहास, पृ.स.-१४५-४६

(२५) (क) वही, वही, पृ.सं.- १५२

(२६) (क) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, सस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४६

(ख) स्व. पाण्डेय एव व्यास, सस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पृ.स.-२७३

(२७) (क) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एव डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४६

(ख) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, सस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.स.- १७१

(२८) (क) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एव डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४७

(ख) डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय, संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ.सं.- २६३

(२९) (क) वही, वही, पृ.स.- २६३

(ख) डॉ. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.स.-१७४

(३०) (क) वही, वही, पृ.सं.-१७४

(३१) डॉ. देवीचन्द्र शर्मा एवं डॉ. रणजीत शर्मा, संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, पृ.स.-१४५-१४६

(३२) (क) वही, वही, पृ.स.- १४६

(ख) स्व. पाण्डेय एवं व्यास, संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, पृ.स.-२६३

(५६) (क) वही, वही, वही।

(ख) श्री शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.-२

(५७) श्री गान्धिगौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत पृ.सं.-।

(५८) "गृहे चैव समाप्य शुद्ध पठनं पित्रोरनुज्ञाश्रितः।

बाजीगंज सदाश्रमं शुभमतिः नैपुण्यमाप्तुं गतः

गीर्वाण्यां गुरूशम्भु रत्न निकटे पूर्णा सदिच्छा व्यधात"।।

जयपुर की "भारती" नामक पत्रिका में श्री शिव सागर त्रिपाठी द्वारा विरचित "श्री गान्धिगौरवम् के कवि का पद्यबद्ध जीवन-श्री शिव सागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.-२

(५९) (क) वही, वही, वही।

(ख) श्री गान्धि गौरवम्, कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत, पृ.सं.-।

(६०) वही, वही, वही।

(६१) (क) आयुर्वेद विचार सार निपुणः कौशल्यमापाशु स."

—श्री शिव सागर त्रिपाठी, पत्र स.-२

(ख) श्री गान्धि गौरवम्, कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धत, पृ.स.-१

(६२) वही, वही, पृ.सं.-२

(६३) डॉ. शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.- १।

(६४) डॉ. शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.- २

(६५) वही, पत्र सं.- ।

(६६) वही, पत्र सं.- ।

(६७) (क) आयुर्वेद विचारसार निपुणाः कौशल्यमापाऽऽशुः सः।

पैत्र्याप्यसने स निरतः ख्यातःसुवैद्यस्तथा ।।

श्री शिवसागर त्रिपाठी द्वारा विरचित श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी का पद्यबद्ध जीवन, पृ.सं.-२

(ख) श्री गान्धिगौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत पृ.सं.-।

(६८) वही, पृ.सं.-।

(६९) (क) वही, पृ.सं.-२

(ख) डॉ. शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.-१

(७०) श्री गान्धि गौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति", शीर्षक से उद्धृत पृ.सं.-२

(७१) डॉ. शिवसागर त्रिपाठी, द्वारा प्रेषित पत्र सं.-१

(७२) वही, पत्र सं.-२

(७३) श्री गान्धि गौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृ. पृ.सं.-४

(७४) श्री गान्धि गौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत, पृ.सं.-२

(७५) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी पद्यबद्ध जीवन्।

(ख) शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.-१

(७६) (क) गान्धि गौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति"। पृ.सं.-३

(ख) शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र सं.-२

(७७) (क) श्रीगान्धिगौरवम्, "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत।

(ख) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी का पद्यबद्ध जीवन।

(७८) श्री शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र स.-२

(७९) (क) श्री शिवसागर त्रिपाठी द्वारा प्रेषित पत्र मं.- ।

(ख) गान्धि गौरवम् "कीर्तिर्यस्य स जीवति" शीर्षक से उद्धृत, पृ.सं.-३

(८०) वही, वही, वही ।

(८१) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम् वंश परिचय , पृ.सं.- १

(८२) वही, वही, पृ.स.-३-५

(८३) साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, मुखपृष्ठ से उद्धृत

(८४) वही, वही, श्री विडलावशस्य प्रशस्ति., पृ.सं.-१-१५

(८५) रूद्रट, काव्यालंकार, षोडशोऽध्यायः/२,६

(८६) विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, परिच्छेद ७/३२१

(८७) बृहत् साहित्यिक निबन्ध के गीतिकाव्य विधा से साभार उद्धृत, पृ.स.-५५०

(८८) (क) श्रीमती सावित्री देवी, आचार्य ब्रह्मानन्द शुक्लकृत "नेहरूचरितम्" एवं गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्रीकृत, नेहरू यशः सौरभम् का तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन। पृ.सं.-६८

(ख) श्री गान्धि चरितम् "प्रणेतृ परिचय" पृ.सं.- १

(८९) (क) श्रीमती सावित्री देवी कृत शोध-प्रबन्ध, महाकवि परिचय से उद्धृत।

(ख) श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्री गान्धिचरितम् "प्रणेतृ परिचय" पृ.सं.-१

(ग) रमेश चन्द्र शुक्ल, संस्कृत विभावनम्, सरस्वती के वरदपुत्र शुक्ल जी नामक शीर्षक से उद्धृत।

(९०) डा. रमेश चन्द्र शुक्ल "संस्कृत वैभवम्" प्रथम खण्ड ४-५, श्रीमती सावित्री देवी कपिल के शोधप्रबन्ध से उद्धृत। पृ.सं.-७०

(९१) पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम् "ग्रन्थकर्तुः परिचय. से उद्धृतः। पृ.सं. १-४

(९२) वही, वही।

(९३) वही, वही, पृ.सं.-२

(९४) वही, वही, पृ.सं.-२

(९५) वही, वही, पृ.सं.-२-३

(९६) वही, वही, पृ.सं.-३

(९७) डा. रमेशचन्द्र शुक्ल, भारतचरितामृतम्, जिल्द भाग से साभार उद्धृत।

(९८) वही, वही।
(९९) वही, वही।
(१००) डा॰ हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ॰सं॰-३४०
(१०१) (क) भरतचरितामृतम्।
(ख) डा॰ हरिनारायण दीक्षित, सम्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना। पृ॰सं॰-३४०-३४८
(१०२) भरतचरितामृतम्।
(१०३) डा॰ हरिनारायण दीक्षित, सस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ॰स॰-३४०
(१०४) आचार्य मधुकर शास्त्री द्वारा प्रेषित पत्र से उद्धृत, दिनाक २८ सितम्बर, १९८७
(१०५) वही, दिनाक ५ जनवरी, १९८८।
(१०६) मधुकर शास्त्री द्वारा प्रेषित पत्र से उद्धृत, दिनाक २८ सितम्बर, १९८७
(१०७) वही, दिनांक ३० दिसम्बर, १९८७
(१०८) वही, दिनांक २८ सितम्बर, १९८७
(१०९) वही, दिनाक ५ जनवरी, १९८८
(११०) वही, दिनांक २० सितम्बर, १९८७
(१११) वही, वही।
(११२) वही, वही।
(११३) वही, दिनांक ३० दिसम्बर, १९८७
(११४) (क) वही, दिनाक ३० दिसम्बर, १९८७
(ख) वही, दिनाक ५ जनवरी, १९८८
(११५) वही, वही।
(११६) सुरेन्द्र शर्मा मधुर, महाकवि डा॰ श्रीधर भास्कर वर्णेकर कृत श्री शिवराज्योदयम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन, पृ॰सं॰।
(११७) वही, वही, पृ॰सं॰-१-२
(११८) वही, वही, पृ॰सं॰-२
(११९) वही, वही, पृ॰सं॰-३-४
(१२०) वही, वही, पृ॰सं॰-५
(१२१) वही, वही, पृ॰सं॰-५-६
(१२२) वही, वही, पृ॰सं॰-६-८
(१२३) वही, वही, पृ॰सं॰-१०
(१२४) वही, वही, पृ॰सं॰-१०-१२
(१२५) दण्डी, काव्यादर्श, १/२३-२८
(१२६) महर्षि वेदव्यास, अग्निपुराण, ३३७/१२-२१
(१२७) डा॰ कृष्ण कुमार, पण्डित अम्बिकादत्त व्यास, एक अध्ययन, पृ॰सं॰

(१२८) आचार्य विश्वनाथ, साहित्य दर्पण ६/३३२-३३५

(१२९) (क) डा. हरिनारायण दीक्षित, तिलकमञ्जरी एक समीक्षात्मक अध्ययन, . . पृ.सं.- ३४

(ख) विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, परिच्छेद ६, कारिका ७३ का पूर्वार्ध।

(१३०) किशोर नाथ झा, बापू, पृ.सं.-३२

(१३१) वही, वही, पृ.सं.-१-२

(१३२) किशोर नाथ झा, बापू, पृ.सं.-८

(१३३) वही, वही, पृ.सं.-२

(१३४) (क) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना . . . . पृ.सं.-३८६

(ख) "बापू" मुखपृष्ठ से उद्धृत।

(१३५) (क) डा . हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय-भावना, पृ.सं.-३६६

(ख) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्यारच, जिल्द भाग से उद्धृत।

(१३६) वही, वही।

(१३७) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्यारच, जिल्द भाग से उद्धृत।

(१३८) (क) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, . . पृ.सं.-३६८

(ख) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्यारच, जिल्द भाग से उद्धृत।

(१३९) (क) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, ... पृ.सं.-३६६-३६८

(ख) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरुव-शिष्यारच जिल्द भाग से उद्धृत।

(१४०) वही, वही।

(१४१) "प्रख्यात वस्तु विषयं प्रख्यातोदात्तनायकं चैव।
राजर्षिवंश चरितं तथैव दिव्याश्रयोपेतम्।।
नानाविभूतिसंयुतमृद्धि विलासादिभिर्गुणैश्चैव।
अङ्कप्रवेशकाढ्यं भवति हि तन्नाटकं नाम।।
नृपतीनांयच्चरितं नानारस भावसंभृतं बहुधा।
सुखदुःखो त्पत्तिकृतं भवति हि तन्नाटकं नाम।।

(भरतमुनि, नाट्यशास्त्र, १८/१०-१२)

(१४२) नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात् पञ्चसन्धिसमन्वितम्।
विलासद्दयादिगुणवद्युक्तं नानाविभूतिभिः ।।
सुखदुःख समुद्भूति नानारस निरन्तरम्।
पञ्चादिका दशपरास्तत्राका परिकीर्तिता।।
प्रख्यातवंशो राजर्षिर्धीरोदात्तः प्रतापवान्।
दिव्यो ऽथ दिव्यादिव्यो वा गुणवान्नायको मतः।।
एक एव भवेदंगी श्रृंगारो वीर एव वा।
अंगमन्ये रसाः सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः।।
चत्वारः पञ्च वा मुख्याः कार्यव्यापृतपुरूषाः।
गोपुच्छाग्रसमाग्रं तु बन्धनं तस्य कीर्तितम्।।
(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, षष्ठ परिच्छेद कारिका-७-१२)

(१४३) आचार्य विश्वनाथ, साहित्यदर्पण, षष्ठ परिच्छेद, कारिका-१३

(१४४) डा. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय , दृश्य-२

(१४५) वहीं, वहीं।

(१४६) वही, वही।

(१४७) वही, वही, विज्ञापन।

(१४८) वही, वही, मुखपृष्ठ से उद्धृत।

(१४९) वही, वही, मुखपृष्ठ से उद्धृत।

(१५०) वही, वही, "विज्ञापन" से उद्धृत।

(१५१) वही, वही, पृ.सं. १-६३

(१५२) रामजी, उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.स.-९४९

(१५३) वही, वही। पृ.सं.-९४९

(१५४) वही, वही। पृ.सं.-९५०

(१५५) वही, वही। पृ.सं.-९५०

(१५६) रामजी उपाध्याय, संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९४८

(१५७) मथुरा प्रसाद दीक्षित, श्री गान्धि विजय नाटकम्, प्रथमोऽङ्कः पृ.सं.।

(१५८) रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९४८

(१५९) मथुरा प्रसाद दीक्षित, श्रीगान्धिविजय नाटकम्, प्रथमोऽङ्क., पृ.स.।

(१६०) (क) रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९४९
(ख) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.-१८२

(१६१) (क) वही, वही।
(ख) रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९४८-९४९

(१६२) (क) वही, वही, पृ.सं.-९४८, ९५६

(ख) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.-१८४

(१६३) रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९४८-९५७

(१६४) वही, वही, पृ.सं.-९४८, ९४९

(१६५) (क) वही, वही, पृ.सं.-९६१

(ख) डा. हरिनारायण दीक्षित, संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, पृ.सं.-१८८-८९।

(१६६) (क) वही, वही, पृ.सं.-१८९

(ख) रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ.सं.-९६५-६६

(१६७) वही, वही, पृ.स.-९६७-६८

(१६८) वही, वही, पृ.सं.-९४८

द्वितीय अध्याय

महात्मा गान्धी पर आधारित काव्य में पात्र-योजना

"पात्र" साहित्य की अन्य विधाओं के समान ही महाकाव्य के भी मेरुदण्ड हैं, जिनके माध्यम से कवि मानव और मानव जीवन के विविध रूपों को उद्‌घाटित करता है। कवि की कल्पना उसकी तत्त्वग्राहिणी दृष्टि के आधार पर निर्मित पात्र वास्तविक जगत् के व्यक्तियों की भाँति गुणों-अवगुणों सहित काव्य जगत् के रंगमंच पर अवतरित होकर काव्य साहित्य को जीवन्त बनाने में अपना योगदान देते हैं। पात्र केवल समाज में बिखरे हुए प्राणियों का चित्रण मात्र ही नहीं है, अपितु कवि के उसी समाज का सदस्य होने के कारण उसका उनसे निजीपन भी जुड़ा हुआ है। अतः काव्यकार अपनी दृष्टि और संवेदना के आधार पर जिन पात्रों की सृष्टि करता है, वे एक ओर परिवार, व्यक्ति, सामाजिक परिवेश, राजव्यवस्था इत्यादि को उभारते हैं और दूसरी ओर समाज में परिव्याप्त समस्याओं को सामने लाकर जीवन जगत् को सजीव बनाकर प्रस्तुत करते हैं। पात्रों की काव्यात्मक अनुकूलता, सहजता, जीवन्तता, भावनात्मक सहृदयता, अन्तर्द्वन्द्व, बौद्धिकता, कलात्मक परिपूर्णता इत्यादि विशेषताएँ कृति को उत्कृष्ट बनाती हैं।

संगीतकार की सफलता उसके आह्लादक गीत पर, रंगमंच की सफलता उसकी साज सज्जा पर, अभिनेता की सफलता अभिनय पर, जीवन की सफलता सुनियोजित कार्यविधि पर, वक्ता की सफलता उसकी सम्प्रेषणीयता पर निर्भर करती है। वैसे ही काव्य की सफलता उसमें सुसंगठित ढंग से चयन किये गये पात्रों पर अवलम्बित होती है।

कवि को अपने काव्य में सुनियोजित पात्रों का प्रयोग करना चाहिए, जिससे उसका चरित्रांकन करने में सरलता हो सके, क्योंकि पात्रों की संख्या अधिक हो जाने से प्रत्येक पात्र के चरित्र पर सुस्पष्टतया प्रकाश डालना असम्भव नहीं तो कठिन तो है ही। पात्रों का महत्त्व इसलिए भी होता है कि वह कथानक को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यद्यपि काव्य में कथानक का प्रस्तुतीकरण कवि अपनी से तरफ करता है : लेकिन इससे पाठक पर शीघ्र प्रभाव जमा लेने वाले पात्रों का महत्त्व घटता नहीं है, क्योंकि पात्र के माध्यम से ही कवि अपना संदेश पाठकों तक सम्प्रेषित करने में सक्षम हो पाता है और अपने मन्तव्य को प्रस्तुत कर पाता है।

"पात्र" शब्द पा धातु में "ष्ट्रन"[१] प्रत्यय जुड़कर बना है। इसका तात्पर्य है कि वह उपयुक्त या जीवन्त "प्राणी" पात्र कहलाता है जो कथा के विस्तार में सफलता हासिल करता है।

काव्य में (महाकाव्य, खण्डकाव्य, गद्यकाव्य, नाटक) में पात्रों की संयोजना के बिना पूर्णता नहीं आ पाती है। काव्य में किसी व्यक्ति के जीवन से सम्बद्ध समस्त घटनाओं, परिस्थितियों, स्वभाव आदि का समावेश रहता है। उसका व्यक्तित्व एक बगीचे में प्रस्फुटित होने वाले रंग-बिरंगे विविध नाम और आकृति वाले पुष्पों के समान ही होता है। जैसे—एक मधुमक्खी विभिन्न पुष्पों के पराग का संचयन कर उसे मधु रूप में परिणत कर आनन्द का विषय बन जाती है, वैसे ही कवि विविध पात्रों की सुनिश्चित संयोजना कर काव्य को सफल बनाता है।

कवि के समक्ष यह प्रश्न अति जटिल हो जाता है कि काव्य में प्रयुक्त कैसे पात्र के चरित्र को सर्वाधिक महत्ता दे, जोकि पाठकों के मनः पटल पर अपना प्रभाव जमा सके और जिससे प्रेरित होकर उन्हें भी वैसा ही उत्कृष्ट बनने की अभिलाषा जागरित हो और साथ ही वे उसे अपने ही बीच का सदस्य समझें, उसके सुख-दुख को अपना ही सुख-दुख समझकर उससे तादात्म्य स्थापित कर सकें। वास्तव में पाठक ऐसी स्थिति में भाव-विभोर होकर अपने को भूल जाए और अपने को ही उस काव्य का नायक या पात्र समझ बैठे तभी काव्य सार्थक हो सकता है।

कथानक के अनुरूप ही पात्रों का चरित्रांकन अधिक प्रशंसा पाता है। यदि काव्य में ढेर सारे पात्रों के चरित्र को उभारने या प्रकाशित करने का प्रयास किया जायेगा तो कवि किसी भी पात्र के विषय में कि वह किस कोटि का है? किन विचारों से अनुप्राणित है? उसका जीवन के प्रति कैसा दृष्टिकोण है? वह आदर्श पात्र है या सामान्य वर्ग का है? उसके विचारों और व्यवहार में कितना साम्य है? मध्यम वर्गीय परिवार का है या उत्तम वर्गीय? समाज में उसकी प्रतिष्ठा है या नहीं आदि निश्चित धारणा बना पाना अति कठिन होगा। साथ ही मुख्य पात्र का चरित्र तिरोहित होने की सम्भावना भी बढ़ जायेगी और गौण पात्र का चरित्र अधिक प्रभावशाली बन जायेगा। फलतः काव्य की रोचकता, जिज्ञासा शान्त नहीं तो कम तो हो ही जायेगी।

अतः कवि का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह ऐसे पात्रों के चरित्रांकन पर अधिक बल दे जिससे कथानक तो आकर्षक हो ही वह पात्र के चरित्र पर पूरा-पूरा प्रकाश डालने में भी सफल हो सके।

अत: कथानक की संक्षिप्तता और काव्य में प्रवाह लाने के लिए सर्वस्व समर्पित करने वाले, कृतज्ञ, श्रेष्ठ कुलोत्पन्न, धनवान् सौन्दर्यशाली, युवक, उत्साही, प्रेम में कुशल, व्यवहार कुशल, वाक् कुशल, सदाचारी[२] आदि गुणों की बहुलता से युक्त व्यक्ति को ही काव्य का नायक बनाया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त ऐसे पात्रों का चरित्रांकन भी

काव्य में होना अनिवार्य है, जोकि नायक के चरित्र को ही और अधिक उज्ज्वल और अधिक उत्कृष्ट और सफल बनाने में अपना योगदान दे सकें।

महाकाव्य में एक पात्र प्रधान या चरित्र नायक की भूमिका निभाता है तथा साथ ही उसमें अन्य अनेक पात्रों का चरित्रांकन होता है। इनमें से कुछ पात्र ऐसे होते हैं जोकि नायक की सहायता करते हैं और साथ ही कुछ विरोधी पात्र भी होते हैं किन्तु प्रधानता नायक की होती है। इसलिए उसके चरित्र पर विस्तार से प्रकाश डाला जाता है अन्य पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने में कवि अपनी कुशलता का परिचय दे ही देता है।

इसके स्थान पर खण्डकाव्य में प्रारम्भ से अन्त तक प्रधान पात्र ही छाया रहता है उसमें अन्य पात्रों का चरित्रांकन असम्भव होता है और अगर होता भी है तो अत्यल्प। क्योंकि महाकाव्य की अपेक्षा खण्डकाव्य का कलेवर छोटा होता है।

गद्य-काव्य में भी जहाँ मुख्य पात्र का चरित्र अधिक उभारा जाता है वहीं अन्य पात्रों के चरित्रांकन पर भी पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है। उसमें मुख्य पात्र के साथ मिलकर अन्य पात्र भी मुख्य ध्येय की प्राप्ति में अपना सहयोग देते हैं। कुछ प्रत्यक्ष रूप में तो कुछ अप्रत्यक्ष रूप में। साथ ही काव्य का घटनाक्रम कुछ ऐसा होता है कि प्रधान पात्र को अनेक लोगों से सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है और वह ये जानकारी हासिल कर पाता है कि कैसे लोगों का सम्पर्क उसके लिए लाभप्रद है और किस तरह के लोगों से उसे सावधान रहना चाहिए।

इस विषय में मुझे कहना है कि इतना होते हुए भी उपर्युक्त काव्य विधाओं में पात्रों का महत्त्व केवल इतना है कि वे कथानक में प्रवाह लाते हैं, क्योंकि ये सभी श्रव्य काव्य विधा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

पात्रों का सर्वाधिक महत्त्व रूपक में परिलक्षित होता है। इसका कारण यह है कि कवि जहाँ श्रव्य काव्य में पात्रों के चरित्र को अपने शब्दों में प्रस्तुत करता है वहीं दृश्य काव्य में पात्र स्वयं उपस्थित होकर अपना चरित्र प्रस्तुत कर पाते हैं। अतः रूपक में पात्रों के चरित्रांकन पर विशेष रूप से ध्यान देना कवि का प्रमुख ध्येय हो जाता है।

मैंने प्रस्तुत अध्याय में इन्हीं विधाओं पर आधृत काव्य कृतियों में परिव्याप्त चरित्र पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। उन सभी में काव्य-विधाओं की सीमा के आधार पर कवियों ने पात्रों को उभारा है और वह सराहनीय भी है। सभी कवियों ने महात्मा गांधी को प्रधान पात्र के रूप में चित्रित किया है। इन कृतियों के माध्यम से हमें महात्मा गांधी के आद्योपान्त जीवन एवं उनकी उपलब्धियों के विषय में जानकारी प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होता है।

इससे पूर्व के अध्याय में मैं यह उल्लेख कर चुकी हूं कि कौन सी कृति किस काव्य विधा के अन्तर्गत आती है। अतः उसी क्रम से मैं इस अध्याय में चरित्र-चित्रण प्रस्तुत कर रही हूं।

महाकाव्य में पात्र योजना—

महात्मा गांधी पर आधारित जिन महाकाव्यों पर मैं पात्र योजना प्रस्तुत करने जा रही हूँ उनमें सभी कवियों का मुख्य ध्येय गांधी जी के जीवन एवं उनके द्वारा निर्दिष्ट जीवनोपयोगी कथनों पर प्रकाश डालना रहा है। साथ ही उनकी सम्पूर्ण जीवन-झाँकी से सत्य, अहिंसा, प्रेम आदि मानव मूल्यों के प्रति जनता को आकृष्ट करना, जन-जन में देश प्रेम की भावना, राष्ट्रीय भावना, रामराज्य के स्वप्न को साकार करना, अपने कर्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति सजग रहने की भावना को जगाना है। निःसन्देह कहा जा सकता है कि उन सभी का उद्देश्य राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन एवं कार्यों से समस्त जनता को अवगत कराते हुए उनके मार्ग का अनुसरण करने की प्रेरणा देना है, जिससे वे गांधी की आकांक्षाओं को साकार कर सकें।

यही कारण है कि उन्होंने केवल महात्मा गांधी के विविध पक्षों का उद्घाटन अत्यधिक निपुणता से किया है और अन्य पात्रों को प्रसंगवश लिया है। उनमें से कुछ पात्रों के चरित्र पर तो संक्षेप में प्रकाश डाल भी दिया है, किन्तु कुछ पात्रों का केवल नामोल्लेख मात्र किया है। अन्य पात्रों के चरित्र से महात्मा गान्धी के चरित्र को ही अधिक उज्ज्वल और अधिक प्रेरणा का स्रोत बनाया है। अन्य पात्रों के चरित्र चित्रण से उनका चरित्र स्वर्ण की भाँति निखर उठा है। वे या तो गांधी जी के प्रेरणा स्रोत बनते हैं और या फिर उनके साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलते हैं। अथवा उनका विरोध करते हैं। जिनके व्यवहार से उन्हें चुनौती का सामना करना पड़ता है और उसमें वह खरे उतरते हैं, सफलता प्राप्त करते हैं।

महाकाव्य में आये सभी पात्र इसी भू-लोक के हैं और वास्तविक पात्र हैं। महाकाव्यों की कथा भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम की कहानी है। अतः उनमें स्वतन्त्रता-सेनानियों की वीर गाथा का वर्णन होना भी स्वाभाविक ही है। उनमें महात्मा गान्धी के साथ जिन पात्रों को प्रस्तुत किया गया है उनमें से अधिकांश तो उनके साथ कदम से कदम मिलाकर चलने वाले स्वतन्त्रता सेनानी हैं और कतिपय पात्र उनके मित्र हैं या निकट सम्बन्धी भी हैं।

सभी महाकाव्यों में भारतीय एवं विदेशी दोनों तरह के पात्र हैं (विदेशी पात्रों में अंग्रेज शासकों को लिया जा सकता है)। इन काव्यों में पुरुष पात्रों की संख्या भी स्त्री पात्रों की अपेक्षा अधिक है।

मैं गांधी विषयक सभी काव्यों में वर्णित सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ—

महात्मा गांधी—

भारतवर्ष का ऐसा कौन व्यक्ति होगा जोकि अपने राष्ट्रपिता "महात्मा गांधी" के नाम से परिचित न हो। उन्हें इस संसार से गये हुए चालीस वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, लेकिन हम आज भी उनका स्मरण करके गर्व महसूस करते हैं। भारत के स्वतन्त्रता सेनानियों ने उनको

एक महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। महात्मा गाधी का जन्म वैष्णव सम्प्रदाय को मानने वाले वैश्य परिवार में उत्तमचन्द्र गाधी के पुत्र कर्मचन्द गाधी (राजकोट के दीवान) के घर पर हुआ था। आपका बचपन में नाम मोहनदास कर्मचन्द गाधी था। बाद में अपने गुणों के कारण "महात्मा" यह उपनाम प्राप्त हुआ[३] और फिर भारत देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के कारण, भारत की राष्ट्ररूप में कल्पना करने के कारण उन्हें "राष्ट्रपिता" की उपाधि दी गई। अधुना उन्हें राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के नाम से ही याद किया जाता है। उनके पूर्वजों द्वारा गन्ध का व्यापार करने के कारण उनका गाधी यह उपनाम पड़ा और तब से उनके वंशजों को "गाधी" के नाम से ही सम्बोधित किया जाने लगा[४]। वह भारत राष्ट्र निर्माता होने के साथ-साथ गान्धिविषयक सभी महाकाव्यों के नायक भी हैं। उन्हें निर्विवाद रूप से नायक मानने का मुख्य कारण यह है कि उनमें नायक के समस्त लक्षण पूर्ण रूप से घटित होते हैं। काव्यशास्त्र में निर्देश है कि महाकाव्य का नायक धीरोदात्त होना चाहिए। धीरोदात्त नायक को आत्मप्रशसक नहीं होना चाहिए, उसमें क्षमा करने का गुण होना चाहिए, उसमें गाम्भीर्य और विषम परिस्थियों में समभाव बनाये रखने की सामर्थ्य होनी चाहिए। अर्थात् हर्ष और शोक दोनों ही स्थितियाँ उसे विचलित न कर पाए, वह कार्य की सफलता तक उसके प्रति प्रत्यनशील रहे[५]।

यद्यपि किसी व्यक्ति का चरित्र चित्रण करते समय उसके गुणों और अवगुणों पर ध्यान जाता है और हम गुणों के आधिक्य अथवा उत्कृष्ट गुणों के आधार पर उत्तम पुरुष कहते हैं किन्तु कभी-कभी उसका बाह्य व्यक्तित्व भी हमें आकृष्ट करता है। बाह्य व्यक्तित्व उतना महत्त्व तो नहीं रखता जितना कि उसका आन्तरिक व्यक्तित्व भी उत्कृष्ट होता है तो उससे उसके व्यक्तित्व में चार चाँद लग जाते हैं। अत में सर्वप्रथम महात्मा गांधी के बाह्य व्यक्तित्व पर संक्षेप में प्रकाश डाल रही हूँ—

विशाल मस्तक वाले, खिले हुए कमल के सदृश नेत्र वाले, दीर्घ कान, शँख के समान (सौभाग्य की सूचक) ग्रीवा वाले, उन्नत वक्ष स्थल वाले, घुटनों तक लम्बी भुजाओं वाले, स्नेहमयी दृष्टि वाले, मधुर वाणी से सबको अपनी ओर आकृष्ट करने वाले थे[६]। और वह खद्दर की धोती और कुर्ता पहनते थे, अपने अनोखे व्यक्तित्व से वह सभी को अपनी ओर आकृष्ट कर लेते थे[७]। इस तरह उनका व्यक्तित्व निराला था।

साधुशरण मिश्र ने "श्रीगान्धिचरितम्" में महात्मा गाधी की जन्म कुण्डली का प्रारूप निर्देश किया है उनके निर्देशानुसार जन्म कुण्डली को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

उन्होंने इन ग्रहों की स्थिति इस प्रकार बताई है—कि लग्न स्थान में तुलाराशि होने से बुध, मंगल और शुक्र ये तीनों ग्रह एक ही स्थान पर यानि प्रथम स्थान पर अवस्थित हैं, शनि लग्न स्थान से दूसरे स्थान पर अवस्थित है, केतु चतुर्थ स्थान में, बृहस्पति सातवें में, राहु दशम स्थान में और चन्द्रमा ग्यारहवें यानि लाभाश में, सूर्य बारहवें स्थान पर अवस्थित है[८]। इन ग्रहों की स्थिति के अनुसार उनका समग्र रूप से फलादेश भी किया है उनका पृथक्-पृथक् परिणाम नहीं बताया है। उन्होंने इन ग्रहों का जो परिणाम बताया है उसका संक्षिप्त सार इस प्रकार है—

पुतलीबाई ने देवी माया की भाँति बुद्ध भगवान् रूपी महात्मा गांधी को उत्पन्न किया। मंगल के केन्द्र में स्थित होने के कारण वह भाग्यशाली थे[९]। वह श्यामल कान्ति युक्त सुन्दर मुख वाले, घुटनों तक लम्बी भुजाओं वाले, ऊँची नाक वाले, कमल के समान नेत्रों वाले, विशाल वक्षःस्थल वाले और सुन्दर अवयवों से युक्त थे। उनके दिव्य स्वरूप के अवलोकन से यह आभास मिल रहा है कि वह निश्चय ही लोकरक्षा का कार्य करेंगे, वह दिव्य गुणों का आधार सत्यव्रतधारी तपस्वी होंगे, वह इस भूमण्डल में लोकोपकार से भूवासियों का उद्धार ठीक वैसे ही करेंगे जैसे कि आकाश में उदित होने वाला चन्द्रमा अपनी किरणों से अन्धकार को नष्ट करके आनन्द प्रदान करता है, सत्यव्रतधारी "महात्मा" इस उपाधि से विभूषित वह शत्रु और मित्र दोनों की समान रूपेण सेवा करेंगे, वह दीन दुःखियों के लिए कल्पवृक्ष की भाँति इच्छित फल प्रदान करने वाले होंगे। वह चारों विद्याओं (आन्वीक्षिकी त्रयी, दण्डनीतिश्च) और वेदाग के रहस्य को जानने वाले होंगे जिससे उनका हृदय ज्ञान के प्रकाश से आनन्द पूर्ण हो जाएगा। वह ज्ञान के भण्डार, दया के सागर, संसार के लिए आभूषण स्वरूप होंगे। मित्र और शत्रु दोनों के प्रति समभाव रखने वाले होंगे, अपने तपोबल से अहिंसा के मार्ग का अवलम्बन लेंगे और वह "राम" नामक दिव्यास्त्र के बल पर शीघ्र ही भारत को स्वतन्त्रता दिलवायेंगे। इस प्रकार उस सौन्दर्य की खान "मोहन" नाम वाले महात्मा के प्रति समस्त प्राणी आकृष्ट हो जाते हैं। उनके विषय में और क्या कहा जाए, वह भगवान् स्वरूप हैं। निश्चय ही उनके मार्ग का अनुकरण करने वाले समाज का कल्याण होगा[१०]।

महाकाव्यों के अध्ययन से स्पष्टतः परिलक्षित होता है कि वह धीरोदात्त नायक हैं। वह उदात्त गुणों से मण्डित हैं। श्रीसाधुशरण मिश्र द्वारा रचित "श्रीगान्धिचरितम्" के प्रस्तुत पद्यों में गांधी चरित्र की झाँकी मिलती है—

सत्यव्रतं सत्यमभूद यदीयं सर्वेष्वहिंसात्मकमेकरूपम्।
यज्ज्ञानराशिः सवितेव लोकप्रकाशकोऽसौ जयतान्महात्मा।।
न यस्य शत्रुर्न च मित्रमेव सर्वत्र विशुद्धबुद्धेः।
लोकोपकार व्रतिनो न तस्यततोऽतिरिक्तं किमपि स्वभिष्टम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/६-७)

स्पष्ट है कि उनमें नायक होने के समस्त गुण विद्यमान हैं। उनकी चारित्रिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(क) सत्य और अहिंसा के पुजारी—

गान्धी जी सत्य और अहिंसा के अनुयायी थे। वह सदैव सत्य बोलते थे [११]। और देसा सत्य जोकि प्रिय हो, अप्रिय सत्य से वह सदा दूर रहते थे [१२]। वह सत्य का पालन न केवल वाणी से अपितु मन से भी करते थे। सत्य पालन हेतु वह अपने गुरु की आज्ञा की अवहेलना करने में भी नहीं हिचकिचाते थे [१३]। और सत्य वचन का पालन करते हुए दूसरे लोगों को भी वैसा ही करने की प्रेरणा देते थे। सत्य का अवलम्बन लेकर ही वह जीवन के हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सके [१४]। और सदैव सुख का अनुभव करते रहे [१५] उनकी जिह्वा कभी भी असत्य का स्पर्श नहीं करती थी और न ही उनके मुखारविन्द से कभी क्रोध का दर्शन होता था [१६]। सत्य बोलने की आदत उनमें बाल्यकाल से ही पड़ चुकी थी। वह ये स्वीकार करते थे कि सत्य धर्म वृक्ष की मूलधारा है अत इसकी सेवा करनी चाहिए[१७]। क्योंकि इसके द्वारा ही अपना और संसार का कल्याण हो सकता है। अत सत्य से बढ़कर और कोई वस्तु नहीं हो सकती है। वह यह भी मानते थे कि ईश्वर ही सत्य है और फिर वह यह मानने लगे कि सत्य ही ईश्वर है [१८]। सत्य उनके जीवन का एक विशेष पहलू था जिसका पालन वह हर परिस्थिति में करते थे।

उन्होंने विद्याध्ययन के अवसर पर लन्दन में एक वृद्धा द्वारा आमन्त्रित होने पर अपने विवाह के विषय में पत्र द्वारा सूचना भेजकर अपने सत्यवक्ता होने का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया [१९] साथ ही उन्होंने चुंगी न देने वाले अपने मित्र रुस्तम द्वारा चुंगी अधिकारी को अधिक धन दिलवाकर सत्यवादिता को बनाये रखा [२०]।

गाधी जी का मानना था कि सत्य का दीपक ही हमें हमारे अन्धकारमय कष्टों से छुटकारा दिलवा सकता है। [२१]। उन्होंने सत्यव्रत से कभी विचलित न होने और प्राणियों को कष्ट न पहुँचाने का संकल्प किया। सत्य के पालन हेतु तो वह अपने प्राण तक देने को तैयार रहते थे। झूठी-प्रशंसा तो वह अपने स्वामी की भी नहीं करते थे [२२]। इस प्रकार सत्य का पालन करके उन्होंने इस संसार को अपने यश से धवलित कर दिया। उनके सत्य पालन की अविरल धारा से तो लगता है मानो सत्य ने उनके रूप में शरीर धारण कर लिया हो [२३]।

अहिंसा उनका परम धर्म है। वह मनसा, वाचा, कर्मणा तीनों ही रूपों में किसी को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहते थे। यही कारण है कि वह किसी के प्रति भी चाहे वह शत्रु ही क्यों न हो, हिंसा और द्वेष-भाव नहीं रखते थे [२४]। वह केवल किसी का मन दुखाने अथवा पीड़ा पहुँचाने का ही विरोध नहीं करते थे, अपितु जीवों की हत्या नहीं करनी चाहिए, ऐसा भी विचार रखते थे। वह देशवासियों को सुखी देखने के लिए अहिंसा को दैवीय अस्त्र स्वीकार करते थे [२५]। वह जिस प्रकार सत्कर्म को अपना धर्म मानते थे उसी प्रकार बुराई के साथ असहयोग करना भी धर्म मानते थे। वह मन से किसी का भी अहित नहीं चाहते थे [२६]। और विषम से विषम परिस्थितियों में भी कटु बात नहीं बोलते थे और परोपकार में रत रहते हुए अहिंसा व्रत का पालन करते थे क्योंकि वह यह विचार रखते थे कि सद्व्यवहार से शत्रु को भी वश में किया जा सकता है। हिंसा से हिंसा का नाश नहीं हो

सकता अहिंसा ही उसका विनाश करने में समर्थ होती है ऐसा गांधी जी स्वीकार करते थे। इसी आधार पर उन्होंने अंग्रेजों से युद्ध किया और सफल हुए [२७]। उनका स्पष्ट अभिमत था कि अहिंसा राष्ट्र एवं समाज शुद्धि का एकमात्र साधन है। वह युद्ध न करने का हर सम्भव प्रयास करते थे और जितनी शीघ्रता से हो सके अहिंसा के बल पर ही अंग्रेजों का निष्कासन करना चाहते थे [२८]। सत्य और अहिंसा के बल पर ही वह "नमक आन्दोलन", "मजदूरों को कर से मुक्ति", "खूनी-कानून" की समाप्ति और स्वतन्त्रता प्राप्ति में सफलता प्राप्त कर पाये। वह ये मानते थे कि स्वतन्त्रता केवल सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलकर ही हो सकती है [२९]। उन्होंने बैरिस्टरी के क्षेत्र में भी जो सफलता प्राप्त की उसमें ये दोनों अस्त्र कामयाब सिद्ध हुए [३०]।

इसके अलावा वह जैसा कि मैंने पहले भी कहा है कि वह अन्याय का सदा विरोध करते थे। इस हेतु वह सत्याग्रह का पालन भी करते थे। यही कारण है कि सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह आदि को उनके त्रिनेत्र स्वीकारा गया है [३१]।

(ख) मातृ भक्त—

महात्मा गाधी अपनी माता का अत्यधिक सम्मान करते थे। उनके प्रति आदर भाव के कारण ही वह कभी भी झूठ का आश्रय नहीं लेते थे। किसी भी कार्य को करने के लिए उनकी आज्ञा को सर्वोपरि स्थान देते थे। माता द्वारा वकालत पढ़ने के लिए विदेश गमन की अनुमति प्राप्त करके और उनको श्रद्धा पूर्वक प्रणाम करके ही आप वहाँ जा सके [३२]। वह विलायत में रहते हुए भी माता के आदेशों का पालन करते थे। क्योंकि वह किसी भी तरह से अपनी माता को दुःखी करना नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने माता के समक्ष की गई (माँस, मदिरा एवं स्त्री संग से दूर रहने की) प्रतिज्ञा का यथाशक्ति पालन किया [३३] और ईसाई मित्र द्वारा पहनाई गई कंठी को तोड़ने की प्रेरणा दिये जाने पर उसका कोई महत्त्व न होते हुए भी उन्होंने उसकी बात स्वीकार नहीं की [३४]।

विदेश से लौटते समय उन्होंने कामना की थी कि भारत पहुँचकर वह सर्वप्रथम अपनी माता को प्रणाम करके उनका आशीर्वाद लेंगे और अपनी उपस्थिति से उन्हें प्रसन्नता प्रदान करेंगे तथा अपने मन में संचित अनेक विचारों और अनुभवों का उनके समक्ष वर्णन करेंगे, किन्तु वहाँ पहुँचकर उनकी आशाओं पर तुषारपात हो गया, क्योंकि वहाँ पहुँचते ही उन्हें माता के परलोक सिधारने का दुःखद समाचार मिला। अतः वह माता की स्नेहमयी मूर्ति का स्मरण करके विदेश गमन को व्यर्थ मानने लगे [३५]।

(ग) त्यागी—

गांधी जी समस्त मानव के कल्याण के समक्ष व्यक्तिगत स्वार्थ का किञ्चित्‌भी ध्यान नहीं रखते थे। लोगों द्वारा प्रदत्त धन का भी वह अपने लिए बिल्कुल भी उपयोग नहीं करते थे। इसी भावना से अनुप्राणित होकर उन्होंने गृहस्थ्य जीवन को सेवा कार्य में बाधा जानकर घर का परित्याग कर दिया और आश्रम का निर्माण करके उसी को अपना निवास स्थान बनाया, बाद में उसे भी बन्धन का कारण जानकर छोड़ दिया। साथ ही इसी भावना से

उन्होंने अफ्रीका से भारत-प्रत्यागमन के समय विदाई के अवसर पर प्राप्त धन का त्याग कर दिया और बम्बई में कराये गये बीमा को भी कुछ ही किश्तों के पश्चात् छोड़ दिया[३६]।

(घ) देश प्रेम—

महात्मा गांधी परतन्त्रता को मृत्यु के समान मानते हुए[३७] उसे परतन्त्रता की बेड़ियों से मुक्त करवाने के लिए चिन्तायुक्त दिखाई देते हैं। वह देश प्रेमियों में आदर स्वरूप हैं। उन्हें अपने प्राणों से भी अधिक देश का सुख प्रिय है। अत: वह देश को विपत्त नहीं होने देना चाहते हैं और भारत देश को उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचाने हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन देश की सेवा में लगा देते हैं[३८], अपने प्राणों की बाजी लगा देते हैं[३९]। उन्हें अपनी मातृभूमि से इतना अधिक प्यार है कि वह उसकी स्वतन्त्रता हेतु अथक प्रयास करने को तैयार हैं। वह भारत की परतन्त्रतायुक्त दशा का स्मरण करते हुए अतीव दुःखी हो जाते हैं[४०]। और कहते हैं कि ऐसे जीवन से कोई लाभ नहीं है[४१]। साथ ही उन्होंने एक स्थल पर और कहा है कि "इस स्वतन्त्रता युद्ध में कारागृह की यातना भोगनी पड़ सकती है अथवा हमें मारा जा सकता है, किन्तु जब तक उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती है हमें पीछे नहीं हटना है[४२]"। हमें अपने मातृभूमि की सेवा अपनी माता के समान करनी चाहिए[४३]। अतः वह प्रतिक्षण इस विचार में ही निमग्न रहते थे कि कैसे भारत देश स्वतन्त्र हो क्योंकि समस्त मानव समाज के लिए स्वतन्त्रता से अधिक और कुछ प्रिय नहीं हो सकता है। उनका हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग[४४], खादी वस्त्र धारण का आग्रह, चर्खा कातना, देशवासियों को नमक कर से मुक्ति दिलवाना आदि देश प्रेम का ही परिचायक है। इसके अतिरिक्त युद्ध में अंग्रेजों की सहायता करना, युद्ध में हुए घायलों की सेवा का कार्य इसी आशा में किया कि उनका देश स्वतन्त्र होगा[४५]। साथ ही उन्होंने संस्कृत को राष्ट्र भाषा बनाने[४६] के लिए प्रयत्न किया तथा संस्कृत को स्वतन्त्रता प्राप्ति में सहायक जानकर अनेक पाठशालाओं की स्थापना करके उनमें संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया। उनका यह स्पष्ट अभिमत था कि जिसको अपनी माता, मातृभाषा और मातृभूमि पर अभिमान नहीं है वह निश्चय ही मनुष्य रूप में पशु है। इस तरह वह जो कुछ भी करते हैं अपने देश के कल्याण के लिए ही[४७] तथा अपने देश के कल्याणार्थ अपने जीवन को समर्पित कर देने वाली महान् विभूतियों की प्रशंसा करना भी उनके देश प्रेम का ही परिचायक है[४८]।

(ङ) सेवापरायण—

महात्मा गांधी दूसरों की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहते थे। वह युद्ध में हुए घायलों की नर्स की भाँति सेवा करते थे और उन्हें पैदल ही सुरक्षा स्थान तक पहुँचाने का [illegible] देते[४९]। माता-पिता की सेवा करना वह अपना पहला धर्म समझते थे। पिता की सेवा करने के लिए तो वह अपने स्वार्थ को भी तिलाञ्जलि दे देते थे[५०]। और देश की रक्षा तो उनके लिए सर्वोपरि थी ही। यही कारण है कि वह नेटाल स्थित भारतीयों की सेवा का कार्य पूर्ण करके भारत देश आकर उसकी सेवा करना चाहते हैं[५१]।

(च) स्वाभिमानी—

गांधी जी में स्वाभिमान की भावना तो कूट-कूट कर भरी हुई थी। वह आत्माभिमानी होने के साथ-साथ ही देशाभिमानी भी थे। वह ऐसा कोई कार्य नहीं करते थे जिससे उनकी आत्मा को या देश को कोई ठेस पहुँचे। उन्होंने आत्म सम्मान की रक्षा के लिए ही विदेश गमन के कारण जाति से बहिष्कृत हो जाने के कारण अपनी सास और भगिनी के गृह में कभी जलपान भी नहीं किया। वह मान को सबसे बड़ा धन मानते थे तथा प्राण भले ही चले जाएं किन्तु वह अपने मान की रक्षा अवश्यमेव करते थे [५२]। उन्होंने एक बार पगड़ी पहनकर सेठ अब्दुल्ला के साथ अंग्रेज की कचहरी में प्रवेश किया। तब जज उन पर क्रोधित हुआ किन्तु वह इस अपमान को सहन नहीं कर सके और वैसे ही बाहर आ गए, क्योंकि वह स्वभाव से सरल होते हुए भी मानी थे और मदमत्त लोगों के मान को समाप्त करने वाले थे [५३]। आत्म सम्मान की रक्षा के लिए वह अन्यायपूर्ण आज्ञा का उल्लंघन करने में भी नहीं हिचकिचाते थे [५४]।

(छ) अस्पृश्यता निवारण—

अस्पृश्यता मानव के लिए अभिशाप है। अतः महात्मा गांधी अस्पृश्यता निवारण के लिए प्राण देने में भी नहीं हिचकिचाते थे। उन्हें अन्त्यजोद्धार करना स्वतन्त्रता से भी अधिक प्रिय था [५५]। अपने ही समान प्राणी के प्रति घृणा करना अथवा उन्हें अपने से निम्न मानना वह सर्वथा अनुचित मानते हैं और इस भावना को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए साबरमती आश्रम के किनारे सत्याग्रह आश्रम की स्थापना करते हैं [५६]। अस्पृश्यता का विचार पाप का उत्पत्ति स्थान है [५७] अतः अपने ही समान प्राणी के प्रति ऐसी भावना रखना कहाँ तक उचित है। इस भावना से अनुप्राणित महात्मा गांधी ने अछूत कहे जाने वाले अन्त्यज वर्ग के लिए न केवल आश्रमों की स्थापना की, अपितु उन्हें "हरिजन" यह सम्बोधन दिया और उन्हें आश्रमों में प्रवेश दिलवाकर उनका उद्धार किया। जब उन्होंने अन्त्यज वर्ग के दादूभाई, उसकी स्त्री और पुत्री लक्ष्मी को आश्रम में प्रवेश की अनुमति दी तो धनिकों ने उनको सहायता देने से इन्कार कर दिया तब उन्होंने अन्त्यजों के मोहल्ले में रहना तक स्वीकार कर लिया [५८]। अन्त्यजों का बहिष्कार करना भारत का ही तिरस्कार है। अतः उनका उद्धार करना वह अपना सबसे महनीय धर्म मानते हैं। क्योंकि अस्पृश्यता निवारण में ही देश का हित निहित है। अतः उन्होंने उनका आश्रमों में, विद्यालयों में, मन्दिरों और अन्यान्य सार्वजनिक स्थलों में प्रवेश दिलवाकर उन्हें अन्य लोगों के समान अधिकार दिलवाये [५९]।

(ज) निडर—

गांधी जी अत्यधिक साहसी और निर्भीक थे। अपनी इस विशिष्टता के बल पर ही अंग्रेज की कचहरी में उसके द्वारा डराये और धमकाये जाने पर, क्रोधित होने पर भी उन्होंने अपनी पगड़ी नहीं उतारी और समाचार पत्रों के माध्यम से अवाञ्छित मेहमान [६०] के रूप में प्रसिद्ध हो गए। उनकी निडरता का सबसे महान् उदाहरण तो हमारे समक्ष यह है कि उन्होंने अस्त्र-शस्त्रों के बल पर युद्ध करने वाले अंग्रेज शासन का सामना सत्य, अहिंसा

और सत्याग्रह के बल पर किया। अवज्ञा आन्दोलन और असहयोग आन्दोलन भी उनकी निडरता के ही परिचायक हैं। वह एक बहादुर सिपाही थे। उन्हें मृत्यु का भी कोई भय नहीं था[६१]।

(झ) क्षमावान—

क्षमावादी होने के कारण ही उन्हें शत्रु एवं मित्र दोनों के बीच लोकप्रियता प्राप्त है। उनका इस बात पर अटल विश्वास है कि जिसके पास क्षमा रूपी धनुष है उसका दुष्ट मनुष्य किञ्चित् बिगाड़ नहीं कर सकता है[६२]। क्षमा प्राणियों का महान् अस्त्र है। वह स्वयं पर प्रहार करने वाले को भी क्षमा कर देते हैं[६३]। क्षमा के आगार वह श्रेष्ठ पुरुष हैं[६४]।

(ञ) ईश्वर में विश्वास—

गांधी जी ईश्वर के प्रति दृढ़ आस्थावान् हैं। वह मानते हैं कि ईश्वर की अनन्य उपासना से ही अपना और संसार का कल्याण होता है अतः वह प्रतिदिन प्रातः काल ईश्वर का ध्यान करते हैं[६५]। रामनाम में उनका अटूट विश्वास है। वह राम-नाम को रोग के उपशमन हेतु दिव्यौषधि स्वीकार करते हैं[६६]। यह विश्वास ही उनका मानव मात्र के प्रति विश्वास जगाता है[६७]। उससे आनन्द प्राप्त होता है। यही कारण है कि उन्होंने अपनी रोगाक्रान्त पत्नी को राम-नाम के महत्त्व को समझाकर उसका नाम जपने को कहा और स्वयं भी अन्तिम समय तक राम नाम का ही स्मरण किया[६८]। स्पष्ट है कि वह ईश्वर को अपना सहायक मानते हैं[६९]। उन्होंने कारागृह जाने पर भी खेद नहीं किया क्योंकि उन्हें ईश्वरेच्छा में विश्वास था। उनका मानना था कि होनी को कोई टाल नहीं सकता। अतः वह जैसे भी रखे उसमें चिन्ता का कोई कारण नहीं है[७०]।

(ट) आत्म विश्वास—

आत्म विश्वास ही महात्मा गांधी की सफलता की कुञ्जी है। वह किसी भी कार्य को करने से पूर्व अन्तरात्मा की आवाज को अत्यधिक महत्त्व देते हैं। यदि उनकी आत्मा किसी कार्य को करने की गवाही नहीं देती तो वह कार्य आप कदापि नहीं करते हैं। वह राजाज्ञा भंग अन्तःकरण की प्रेरणा से ही करते हैं किसी का अपमान करने की भावना से नहीं[७१]।

(ठ) समतावादी—

गांधी जी समस्त मानव को एक ही ईश्वर की सन्तान मानते हुए हिन्दू मुस्लिम, ईसाई, अमीर, गरीब, ब्राह्मण में कई भेद नहीं मानते हैं। वह हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य एकता की स्थापना करना ही अपने जीवन का मूल उद्देश्य मानते हैं[७२]। उनका विचार है कि सभी को प्रेम और भाई चारे का व्यवहार करते हुए आपस में सद्भाव बनाये रखना चाहिए। वह ऊँच नीच के भेदभाव से परे होकर सभी वर्ग के लोगों को समान अधिकार दिलवाना चाहते हैं क्योंकि समान अवसर एवं अधिकार प्राप्त करके ही वे अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास करके आदर्श समाज की स्थापना कर सकते हैं। अतः वह अस्पृश्यता, छुआछूत आदि असमभाव बनाने वाली दुर्भावनाओं के विरोधी हैं और समभाव के ही पक्षपाती रहे हैं

[७३]। वह अपने और पराये में भी भेद नहीं करते हैं, समस्त प्राणियों को अपने समान ही समझते हैं [७४], सदैव उनका हित ही चाहते हैं। यही कारण है कि जब नमक कानून भंग करने के लिए नौका में बैठते हुए गांधी के चरणों का प्रक्षालन मल्लाह इस आशा से करता है कि उनसे उसकी आजीविका पर कोई व्याघात नहीं होगा। दुःखियों को पुकार सुनते ही दौड़ पड़ना और कस्तूरबा के शव को चन्दन की लकड़ियों से न जलाना गरीबों के प्रति उनकी हितकारी भावना का ही द्योतक है [७५]। साथ ही वह स्त्रियों को भी पुरुषों के समान मानते हुए उन्हें भी युद्ध में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और उन्हें शिक्षित बनाना चाहते हैं जिससे की राष्ट्र का उद्धार हो सके [७६]।

(ड) प्रतिज्ञा पालक—

वह प्रतिज्ञा पालक भी हैं। वह किसी को दिए गए वचन का अक्षरशः पालन करते हैं। यही कारण है कि मदिरा, मांस और स्त्री संग के अनेक अनुकूल अवसर आने पर भी वह माता को दिए गए वचन का पालन सहजता से कर पाते हैं। उनका विचार है कि प्रतिज्ञा पालन का यथा सम्भव प्रयास करना चाहिए भले ही उसकी पूर्ति में प्राणों से हाथ ही क्यों न धोना पड़े [७७]। उन्होंने अन्त्यज वर्ग की एक महिला को दीन-हीन दशा में देखकर अल्प वस्त्र धारण किया [७८]।

(ढ) संयमी अथवा आत्मनियन्ता—

वह एक सदाचारी पुरुष हैं। मांस, मदिरा एवं स्त्री संग से दूर रहना [७९], सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह आदि का पालन उनकी सदाचारिता का द्योतन करता है। अपने इसी गुण के आधार पर यदि उन्हें यति-मुनि की श्रेणी में रखा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनका अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण था इस गुण के कारण उन्हें इन्द्रियजित भी कहा जा सकता है। वह सुख-दुःख, बिछोह-मिलन, विषम से विषम परिस्थितियों में अपने मन में किसी प्रकार का विकार नहीं आने देते हैं। शत्रु द्वारा अपमानित किए जाने पर भी वह सदा प्रसन्न ही रहते हैं। काम भाव पर तो उन्होंने पूर्ण रूपेण नियन्त्रण कर रखा था। अनेक बार दिन में केवल एक ही बार भोजन करना और उसमें भी फलों पर निर्भर रहना और साथ ही अपनी बात का समर्थन प्राप्त करने के लिए बारह दिन से पच्चीस दिन का उपवास करना तो उनके लिए सामान्य बात थी। ब्रह्मचर्य का पालन उनके संयम का ज्वलन्त उदाहरण है ही [८०]।

(ण) प्रजावत्सल—

गांधी जी को भारतीय प्रजा से विशेष अनुराग था। वह जहाँ कहीं भी प्रजा को चिन्तामग्न या विपत्तिग्रस्त देखते थे तो उनका हृदय हाहाकार कर उठता था और वह उन्हें विपत्तियों से छुटकारा दिलवाने के लिए हर सम्भव प्रयास करते थे [८१]। वह दक्षिण अफ्रीका भी अपने भाई-बन्धुओं के कल्याणार्थ ही गये [८२]। उन्हें भूख प्यास से पीड़ित ग्रामीण जनता की दीन-हीन दशा देखकर अत्यधिक क्लेश होता था [८३]। वह दिन-रात दीन जनों के कल्याण

के लिए ही विचार करते हुए उनका कष्ट दूर करने के लिए अनेक नगरों और ग्रामों में जाकर सभाएँ किया करते थे[८४]। वह प्रजा के सुख को अपना सुख और प्रजा के दुःख को अपना मानते थे और प्रजा की सेवा अपनी सन्तान की भाँति करते थे इसीलिए वह विश्वबन्धु कहलाये[८५] तथा वह हरिजनों को भी समाज का ही एक अंग मानते हुए उन्हें भी सुख सुविधायें प्राप्त करवाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे[८६]।

(त) आत्मसमर्पण की भावना—

अपने देश एवं भारतीय प्रजा के सुख एवं कल्याण हेतु वह अपना तन, मन, धन एवं व्यक्तिगत सुख को समर्पित करने में किंचित् भी क्षोभ का अनुभव नहीं करते थे। वह समाज के कल्याण एवं उसमें परिव्याप्त दूषित समस्याओं के निराकरण के लिए अपने प्राण तक न्यौछावर करने को तत्पर रहते थे उन्होंने देश को स्वतन्त्रता दिलवाने के लिए और उसकी उत्तरोत्तर उन्नति हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन ही देश के नाम समर्पित कर दिया। यहाँ तक कि उन्होंने बैरिस्टरी को भी समाज सुधार कार्यक्रमों में बाधक मानकर छोड़ दिया[८७]।

(थ) गुणग्राही—

गांधी जी सदैव ही दूसरे लोगों की अच्छी बातों को शीघ्र ही ग्रहण कर लेते थे। वह दूसरों के गुणों की प्रशंसा किए बिना भी नहीं रह पाते थे[८८]। फिरोजशाह मेहता के भाषण को सुनकर उन्होंने उनकी मुक्त कंठ से सराहना की[८९]। इसके अतिरिक्त "सत्य-हरिशचन्द्र" और "श्रवण कुमार" नाटकों से उन्होंने सत्य और सेवा-परायण जैसे उदात्त गुणों को ग्रहण किया तथा रस्किन कृत सर्वोदय से सभी कार्यों के प्रति समान दृष्टिकोण, श्रम का महत्त्व और परोपकार जैसे गुणों को आत्मसात किया[९०]। अपने इन्हीं विशिष्ट गुणों के आधार पर जिनकी सम्पूर्ण भारत वर्ष में पूजा जाता है और देश-विदेश में उनका सम्मान होता है[९१]।

(द) स्वातन्त्र्योपासक एवं कर्त्तव्यनिष्ठ—

वह स्वतन्त्रता को इस पृथ्वी तल का सर्वाधिक महान् सुख मानते हैं[९२]। तभी तो वह अपने प्राणों की बाजी लगाने में भी नहीं हिचकिचाते हैं वह भारत की स्वतन्त्रता हेतु अपने प्राण देना अधिक प्रशंसनीय मानते हैं[९३]। वह देशवासियों से भी यही आशा करते हैं कि वे देश की मुक्ति हेतु प्रबल प्रयास करेंगे[९४]। वह हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना होने पर और महासभा के भंग हो जाने पर स्थिति में भी स्वतन्त्रता प्राप्त करना महत्वपूर्ण मानते हैं[९५]। वह ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें रोग से मुक्ति प्रदान करके कार्य करने की शक्ति प्रदान करे[९६]। उनका कहना है कि हमें परतन्त्रारूपी कठिन बन्धन से छुटकारा मिले और हम स्वतन्त्रता प्राप्त करें[९७]।

वह कर्त्तव्य पालक भी हैं। कर्त्तव्य पालन को वह आज्ञा पालन से भी अधिक महत्त्व देते हैं। उन्हें तो अपने पारिवारिक जनों के नष्ट होने की भी परवाह नहीं है। वह इस स्वातन्त्र्य समर रूपी यज्ञ की बलिवेदी पर अपने प्राण न्यौछावर करने के लिए प्रयत्नशील हैं[९८]।

उनमें कर्त्तव्यपालन के प्रति जागरूकता बाल्यकाल से ही थी। वह अपने माता-पिता की सेवा को अपना कर्त्तव्य मानते हैं और फिर वह देश की सेवा को तथा देश की सेवा के

लिए दीन-दुखियों की सेवा को अपना सबसे प्रथम कर्तव्य स्वीकार करते हैं। समय-समय पर किये गये आन्दोलन उनके कर्तव्यनिष्ठ होने का ही प्रमाण हैं[९९]।

(थ) लोकप्रिय नेता—

इस पृथ्वी पर गांधी के अतिरिक्त और कोई ऐसा नायक नहीं है, जिसका समस्त संसार उसके प्रेम के वशीभूत होकर अनुयायी हो जाये[१००]। वह न केवल देशवासियों के लिए ही अपितु विदेशियों के लिए भी प्रेरणा-स्तम्भ हैं। उनकी लोकप्रियता का प्रमाण है उनकी मृत्यु के अवसर पर अनेक लोगों द्वारा व्यक्त उद्‌गार[१०१] उनके गुणों के समक्ष सभी नतमस्तक होकर उन्हें श्रद्धापूर्वक प्रणाम करते हैं।

(न) विभिन्न भाषाओं के ज्ञाता—

गाधी जी को यद्यपि अपनी मातृभाषा गुजराती से विशेष अनुराग है, लेकिन इसके अतिरिक्त उन्हें राष्ट्रभाषा हिन्दी, संस्कृत एवं फ्रेञ्च, लैटिन, उर्दू आदि भाषाओं की यथेष्ट जानकारी है। विविध भाषाओं का ज्ञान होने के कारण ही वह विविध वर्गों की समस्याओं को समझकर उनका निराकरण करके कीर्तिमान स्थापित कर सके[१०२]।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि गाधी जी जहाँ एक ओर आज्ञाकारी, मातृ-पितृ भक्त हैं, वहीं दूसरी ओर उनमें समस्त भारतीय प्रजा के कष्टों को दूर करने के लिए प्रयत्नशील रहना, उत्साह, प्रत्येक कार्य को करने के लिए तत्पर रहना जो देश और देशवासियों के लिए लाभप्रद हो तथा सेवा-परायणता, आत्म नियन्त्रण, सत्य, अहिंसा का मनसा, वाचा, कर्मणा परिपालन आदि विशेषताएं हैं जो कि प्रत्येक सहृदय मानव को अपनी ओर अनायास ही आकृष्ट कर लेती हैं। प्रत्येक सामाजिक के लिए उनका चरित्र निश्चय ही अनुकरणीय है। उन गुणों का आश्रय लेने वाला व्यक्ति समाज में शीघ्र ही अपना एक उच्च स्थान बनाने में सफल हो सकता है। आशा है कि उनका चरित्र प्रेरणा का स्त्रोत बनेगा और भूवासियों का उचित मार्गदर्शन करेगा।

यद्यपि प्रमुख पात्र होने के कारण प्रत्येक काव्य में गांधी का चरित्र ही अधिक चित्रित किया गया है और वह अपने उदात्त गुणों से पाठक को अपनी ओर आकृष्ट करके उन गुणों का परिपालन करते हुए वैसा ही महान् पुरुष बनने की प्रेरणा देने वाले हैं, लेकिन अन्य पात्र भी जिनका वर्णन कथा की आवश्यकता हेतु किया गया है वह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। अतः मैं अपने शोध प्रवन्ध में गृहीत महाकाव्यों में वर्णित अन्य पात्रों का चरित्राकन प्रस्तुत कर रही हूँ।

अबुल कलाम आजाद—

मौलाना अबुलकलाम आजाद भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस महासभा के समाध्यक्ष हैं। वह मुसलमान होते हुए भी हिन्दुओं के शुभचिन्तक हैं। उन्होंने गांधी जी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। वह गाधी से अत्यधिक स्नेह रखते हैं। गाधी की मृत्यु से उनको अतीव दुःख हुआ और इस घटना से उन्हें यह सन्देह होने लगा कि यदि हिन्दू-मुसलमान आपस

आपस में लड़ने लगें तो इससे देश का अत्यधिक नुकसान होगा [१०३] यह भाव दर्शाते हैं कि उन्हें अपनी मातृभूमि से कितना अधिक प्यार है। उन्होंने गांधी सहित कारागृह की यातना सही। वह गांधी के मित्र, विद्वान्, धर्मात्मा एवं उदारमना भी हैं [१०४]। इस प्रकार वह भी उत्कृष्ट चरित्रवान् हैं।

गोपाल कृष्ण गोखले—

श्री गोपालकृष्ण गोखले मनस्वी, दयालु स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी एवं गुणों के प्रशंसक हैं [१०५]। उनमें देश के प्रति भक्तिभाव कूट-कूट कर भरा हुआ है। देश को स्वतन्त्र करवाने के लिए अत्यधिक प्रयत्नशील रहना उनकी इसी भावना से अनुप्राणित है। इसके अतिरिक्त वह अविलासी प्रकृति के भी हैं। लोगों द्वारा प्राप्त धन का व्यक्तिगत कार्यों में प्रयोग न करना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है [१०६]।

इस पृथ्वी तल पर स्थित सम्माननीय विद्वानों में गोपालकृष्ण गोखले का नाम सबसे पहले लिया जाता है [१०७]।

जवाहरलाल नेहरू—

यह मोतीलाल नेहरू के पुत्र थे। उन्हें अपने पिता के ही समान देश के लिए समर्पित होने के कारण प्रसिद्धि प्राप्त थी [१०८]। वह भारत देश को परन्तत्रता से मुक्त करवाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। उन्हें देशवासियों को अशिक्षित देखकर अत्यधिक दुख होता था [१०९] साथ ही उनके हृदय में गांधी जैसे महान् उदारचेता के प्रति जो सम्मान एवं आदरभाव है वह निश्चय ही प्रशंसा का विषय है। वह भारतीय राष्ट्रीय महासभा के अध्यक्ष थे [११०]। वह भी गांधी के समान अहिंसा के मार्ग पर चलते थे। उन्हें भारतमाता एवं भारतवासियों से असीम अनुराग था। उन्होंने देशभक्ति भावना से प्रेरित होकर ही ऐश्वर्य सुख नहीं भोगा। वह समस्त संसार के बन्धु और शान्तिप्रिय थे। [१११]। महात्मा गाधी उन्हें भारत के प्रधानमंत्री के पद के सर्वथा उपयुक्त मानते थे [११२]। उनको महात्मा गाधी पर विशेष आस्था थी।उनकी मृत्यु के समाचार से नेहरू जी को ऐसा लगा कि जैसे न केवल उनके राष्ट्रपिता ही गए हों अपितु उनके गुरु अथवा मित्र उनसे बिछुड़े गए हों वह इतने अधिक शोकाकुलहो गएकि वह भावुकतावशकहउठतेहैं कि 'गान्धिरुत्क्रान्तजीवितम्' [११३]। उन्होंने महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए अवज्ञा आन्दोलनों में और असहयोग आन्दोलनों में अनेक बार भाग लिया और कारागृह की यातना सही [११४]।

मदन मोहन मालवीय—

पण्डित मदन मोहन मालवीय को भारत देश की दीन-हीन दशा को देखकर अत्यधिक व्यथा होती थी। अतः उन्होंने भारतीयों की दशा में सुधार करने के लिए काशी में विद्यापीठ की स्थापना की [११५] वह महामनस्वी एवं वाक् कुशल थे [११६]। उन्होंने कांग्रेस के वार्षिकोत्सव के अवसर पर कांग्रेस की अध्यक्षता करने के कारण कारागृह की यातना भी सही [११७] उन्हें महात्मा गांधी से विशेष प्यार था तभी तो वह ब्रिटिश प्रधानमंत्री से उन्हें कारागृह से मुक्त करने की याचना करते हैं [११८] उन्होंने भारत देश को परतन्त्रता के पाश से मुक्त करवाने के लिए महात्मा गाधी के साथ स्वतन्त्रता आन्दोलन किया [११९]।

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद—

अपने नाम को सार्थक करने वाले अर्थात् नाम के अनुरूप ही गुणवान् एवं अत्यधिक बुद्धिमान् थे। वह शान्तिमूर्ति एवं त्यागशील थे [१२०]। वह अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा के प्रख्यात सदस्यों की गिनती किये जाने पर याद किये जाते हैं। अन्य नेताओं सहित उन्होंने भी कारागृह की यातना सही [१२१]। वह महान् पुरुष तप-पूत, ज्ञान का अद्वितीय भण्डार, समुद्र की भाँति गम्भीर, विवेकशील, अपने और पराये में भेद न करने वाले समस्त भूमण्डल के बन्धु थे। मन, वाणी और कर्म से सत्य के प्रति आस्था रखते थे, समस्त प्राणियों को अच्छी शिक्षा देते थे, मनीषियों में आदर स्वरूप थे, नीतिकुशल थे [१२२]। वह प्रजा की सहायता करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। [१२३]। वह भारत वर्ष के सुयोग्य प्रथम राष्ट्रपति के पद पर आसीन थे [१२४]।

सरदार वल्लभ भाई पटेल—

वह प्रजा के हित चिन्तक हैं। उन्हें "लौहपुरुष' इस नाम से जाना जाता है। वह समस्त जनता के प्रिय हैं, शत्रु और मित्र के प्रति समान भाव रखते हैं : परोपकार परायण हैं और रक्षाविभाग के गृहमन्त्री होने योग्य हैं [१२५]। उन्हें अपने देश से अत्यधिक प्यार और भक्ति है १२६। वह राजाओं और धनिकों पर अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं और बाढ़ पीड़ित गुजरात की प्रजा की सहायता करना अपना धर्म समझते हैं [१२७]। वह स्पष्ट वक्ता हैं एवं वञ्चना करना नहीं जानते हैं और साथ ही वह मुस्लिम लीग के अनुयायियों पर विश्वास नहीं करते हैं [१२८]। वह अत्यधिक साहसी और महात्मा गांधी के अनुकर्ता हैं [१२९]। महात्मा गाधी उन्हें अपना दाहिना हाथ मानते थे [१३०]। वह महात्मा गाधी के प्रति श्रद्धा रखते थे। उनकी मृत्यु से इन्हें अत्यधिक कष्ट हुआ [१३१]।

जय प्रकाश नारायण--

जय प्रकाश नारायण भी स्वतन्त्रता सेनानी हैं। वह विद्वान् एवं विदेशियों के शासन को सहन नहीं कर पाते हैं। स्वतन्त्रता संग्राम में उनके जोश को देखकर उन्हें पकड़ने के लिए सरकार पुरस्कार की घोषणा करती है। यद्यपि महात्मा गांधी उनके सिद्धान्तों का विरोध करते हैं लेकिन उनकी देश प्रेम की भावना से प्रभावित हुए बिना भी नहीं रह पाते हैं [१३२]।

घनश्याम दास विडला—

यह भी एक सच्चे देशभक्त हैं। वह वीर, धैर्यवान् एवं महान् बुद्धिशाली हैं। वह याचकों के लिए कल्पवृक्ष हैं [१३३]। वह अत्यधिक धनवान्, राजनीति में कुशल, वाक्पटु और स्वदेश सेवा का व्रत धारण करने वाले, महात्मा गांधी के पीछे-पीछे चलने वाले हैं। उन्होंने अपना सम्पूर्ण धन देश के हितार्थ महात्मा गाधी को उसी प्रकार समर्पित कर दिया जैसे भामा ने महाराणाप्रताप को किया था और ऐसा करके उन्होंने भारतीय संस्कृति की रक्षा की। उनका यश चन्द्रमा की भाँति इस भूमण्डल में परिव्याप्त है [१३४]।

राजगोपालाचार्य—

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य अपने साहस, उत्साह, वीरता एवं देश सेवा के कारण "विहार केसरी" इन नाम से जाने जाते हैं।[१३५] वह भी सत्य एवं अहिंसा के पालक हैं और महात्मा गांधी के प्रति भक्ति भाव रखते हैं[१३६] वह हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य के कारण यह मान लेते हैं कि भारतवर्ष की मुक्ति राष्ट्र के विभाजन से ही सम्भव है और वह यह मानते हैं कि ऐसा करने से सौमनस्य आ सकता है। अतः वह इसी सन्दर्भ में गाधी जी को जिन्ना से वार्तालाप करने की सलाह देते हैं[१३७]।

श्री अब्बास—

वह एक देशभक्त नायक हैं। वह महात्मा गाधी के साथ नमक आन्दोलन में भाग लेते हैं। वह प्रजा का कल्याण चाहते हैं और इसके लिए वह कष्ट सहन करने को भी तत्पर रहते हैं। महात्मा गांधी के कारागृह चले जाने पर वह नमक-कारखाने को अपने अधिकार में लेने के लिए धरासना को प्रस्थान करते हैं। प्रस्थान करते ही उन्हें पकड लिया गया और उनसे यह कार्य न करने को कहा गया किन्तु बुद्धिमान्, उदारविचार सम्पन्न श्री अब्बास अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहे और कारागृह की यातना सही[१३८]। इस तरह वह एक वीर सिपाही हैं और अपने देश के कल्याण के लिए अग्रेज सिपाहियों द्वारा प्रदान किए गए कष्टों को कोई महत्व नहीं देते।

फिरोजशाह—

फिरोजशाह मेहता एक कुशल वक्ता थे[१३९]। उनकी इस विशिष्टता के कारण महात्मा गांधी ने उन्हें "हिमालय" इस उपाधि से विभूषित किया[१४०]। वह एक कुशल वैरिस्टर भी थे और विवेकवान भी थे[१४१]। दादा भाई नौरोजी के साथ फिरोजशाह पर भी महासभा के नेतृत्व का भार था[१४२]। साथ ही वह भी गाधी के समान राजद्रोही और हिंसा एवं अस्तेय से घृणा करते थे[१४३]।

बालगंगाधर तिलक—

वह महात्मा गाधी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाले सेनानी थे। महात्मा गाधी ने उन्हें "सागर" इस उपाधि से विभूषित किया[१४४]। वह "अजातशत्रु" इस नाम को सार्थक करने वाले थे। वह महाराष्ट्र के बम्बई नामक स्थान में प्रधान अमात्य के पद पर आसीन रहकर शान्ति और सौहार्द बनाये रखने का प्रयास करते थे। उनका मानना था कि परतन्त्रता के विनाश के लिए सौहार्द होना बहुत जरूरी है[१४५]। अपने साहस पूर्ण कार्यों के कारण उन्हें "नाद-गम्भीर केसरी" की उपमा दी गई है[१४६]। उन्हें अपने भारत देश से अत्यधिक प्रेम था। उसकी स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु वह अथक् प्रयास करते थे।

सुभाषचन्द्र बोस—

निस्वार्थ भाव से देश की सेवा करने वाले सुभाषचन्द्र बोस बंगाल में पैदा हुए थे। वह प्राणी मात्र के प्रति समानदृष्टि रखने वाले थे। उन्होंने चित्तरञ्जन दास के साथ कारागृह

की यातना भी सही [१४७]। वह दो बार कांग्रेस के सभापति पद पर भी रहे। वह एक वीर सिपाही थे। उनका साहस अतुलनीय है। वह सिपाहियों का पहरा होते हुए भी काबुल पहुँच गये और वहाँ से जापान जाकर भारतोद्धार की भावना से सेना का गठन किया, जिसका उद्देश्य हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना करना था [१४८]।

बंकिमचन्द्र—

बंगाल के ही बंकिमचन्द्र ने राष्ट्रीय गीत "वन्दे मातरं" का निर्माण किया जिससे हमें स्वतन्त्रता प्राप्ति का सन्देश मिलता है [१४९]।

दादाभाई नौरोजी—

उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस महासभा का नेतृत्व किया। वह एक देशभक्त सेवक थे। उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु अहिंसा के मार्गका अवलम्बन लिया और देश की स्वतन्त्रता एवं समृद्धि के लिए विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का व्रत लिया और समस्त प्रजा को भी ऐसा करने की प्रेरणा दी [१५०]।

अब्दुल गफ्फार खाँ—

वह परतन्त्रता के विनाश को जन्मसिद्ध अधिकार मानने वाले महात्मा गांधी के साथ स्वतन्त्रता में भाग लेने वाले स्वातन्त्र्योपासक, देशभक्त सेनानी हैं। उन्होंने भी कारागृह की यातना सही। महात्मा गांधी उन्हें निरपराध मानते हुए वायसराय से उनकी मुक्ति की याचना करते हैं [१५१]।

जमनालाल बजाज—

वह महात्मा गांधी के मित्र थे। वह धनाढ्य, उदार एवं देश सेवापरायण थे। महात्मा गांधी वर्धा में उनके ही गृह में रहे [१५२]।

विवेकानन्द—

बंगाल में उत्पन्न विवेकानन्द नामक महान् पुरुष राष्ट्रोद्धार प्रवर्तक थे। वह सूर्य के समान तेजवान् एवं एकता की भावना और स्वाभिमान की भावना के भी पोषक थे। उन्हें इस बात से क्लेश होता था कि अज्ञानान्धकार में निमग्न प्रजा ही न तो अपने हित में परिश्रम करती है और नेतृ वर्ग भी अपना स्वार्थ सिद्ध करता है जोकि राष्ट्र के हित में नहीं है। अतः वह प्रयास करते हैं जिससे कि एकता, राष्ट्रियभावना का विस्तार हो और धर्म के प्रति प्रीति जागरित हो, उत्साह वर्धन हो [१५३]।

रवीन्द्र नाथ टैगोर—

रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्वप्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने "विश्व भारती" नामक संस्था की स्थापना की थी। वह "गुरुदेव" इस नाम से जाने जाते थे [१५४]।

किशोर लाल मशरुवाला—

वह अनन्य देशभक्त हैं। गाधी जी की उन पर विशेष कृपा है। गांधी जी उनका अत्यधिक सम्मान करते हैं। शासक द्वारा उन पर लगाए गए दोष का गाधी जी विरोध करते हैं। वह

अहिंसा पालक हैं और महात्मा गाधी के कारागृह चले जाने पर उन्होंने "हरिजन" नामक पत्र का सम्पादन किया। वह गुणवान् हैं [१५५]।

विनोबा भावे—

महात्मा गांधी के अनुकर्त्ता, प्रिय शिष्य, बुद्धिशाली विनोबा भावे ने भी अनेक बार कारागृह की यातना सही। वह सत्य रूपी ईश्वर के उपासक धर्मप्रिय एवं त्यागवान् थे [१५६]। इस तरह वह भी गुणवान् एवं देशभक्त नेता थे।

महादेव देसाई—

महादेव देसाई के प्रति महात्मा गांधी को विशेष अनुराग था। वह महात्मा गाधी के अनन्य भक्त थे। गाधी जी के साथ निवास करने के लिए वह उपने पिता से आज्ञा ले लेते हैं। महात्मा गांधी द्वारा चलाए जा रहे "हरिजन" नामक पत्र में वह लेख भी लिखते हैं। उनमें कृतज्ञता, कुशलता, विश्वसनीयता आदि विशिष्ट गुणों का समायोग है। वह भी स्वतन्त्रता सेनानियों सहित अनेक बार कारागृह गए [१५७]।

मीनरहरिभाई—

वह भी एक सच्चे देशभक्त हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति की आशा में वह अपने कष्टों की भी परवाह नहीं करते हैं। धारासना जाने वाली सेना का नेतृत्व करते ही राज सिपाही उन्हें पकड़ लेते हैं और उन पर प्रहार करते हैं लेकिन उन्होंने सब कुछ हँसते-हँसते सहन कर लिया और समस्त सेना को राष्ट्रध्वज की रक्षा की सलाह दी [१५८]।

गोविन्द रानाडे—

वह न्यायाधीश थे। उन्होंने सरकारी नौकरी करते हुए कांग्रेस में भाग लिया। वह स्पष्टवादी एवं निर्भीक थे। वह ऐसा कार्य कभी नहीं करते थे जोकि अनुचित हो [१५९]। इस तरह वह देशभक्त भारतीय पुरुष थे। उन्होंने सदैव अपने देश के कल्याण की ही बात सोची।

जे॰बी॰ कृपलानी—

वह महात्मा गांधी के समान ही अहिंसोपासक थे [१६०]। वह मातृभूमि की रक्षा का सर्वोत्तम उपाय यह मानते हैं कि धर्म और जाति का भेदभाव न रहे, सभी लोग कुटिल प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख न हों और महात्मा गाधी के बताए हुए मार्ग का अवलम्बन लें [१६१]। उन्हें महात्मा गाधी से भी अत्यधिक प्यार था। उन्हें उनकी मृत्यु से भारत की उन्नति में बाधा सी लगने लगती है [१६२]। वह भारत के कल्याण के विषय में ही विचार निमग्न रहते थे।

जयकृष्ण भण साली—

वह भी महात्मा गांधी के भक्त थे। वह गुजरात, बिहार, आसाम, आदि स्थानों में अंग्रेजों द्वारा पीड़ित जनता का दुःख दूर करने के लिए सत्याग्रह करते हैं और दुखी मन से तीव्र तपस्या के पश्चात् सफलता प्राप्त करते हैं [१६३]। उनमें लगनशीलता, दृढ निश्चय, सहनशक्ति आदि प्रशंसनीय विशेषताएं थीं।

कस्तूरबा—

कस्तूरबा गाधी जी की सहधर्मिणी, अनुगामिनी, पतिसेवी, आज्ञाकारिणी, देश-भक्त स्त्री हैं और गाधी जी के प्रति अत्यधिक श्रद्धा और भक्ति रखने वाली [१६४], नारी कुल के लिए आभूषण स्वरूपा [१६५], गाधी जी के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वाली जागरुक नारी हैं। देश को स्वाधीनता दिलवाने के लिए प्रयत्नशील गाधी जी को कारागृह ले जाये जाने पर आप प्रसन्न मन से पुष्पमाला अर्पित करके विदाई देती हैं [१६६], साथ ही वह अत्यधिक संयमी, विनम्र, प्रसन्नवदना और अपने कार्य के प्रति जागरुक रहने के लिए सैदव स्त्रियों को प्रेरित करती हैं [१६७]। इसके अलावा वह अन्य सभी विषयों में पति से साम्य रखती हैं, उनका सहयोग करती हैं, परन्तु उन्हें गाधी जी के सदृश अन्त्यज सेवा नागवार गुजरती है [१६८]। उन्हें महात्मा गाधी से इतना अधिक प्यार था कि उन्होंने मृत्यु के समय भी "बापूजी" इस नाम का उच्चारण किया [१६९]। उनकी मृत्यु से महात्मा गाधी को अधिक दुःख हुआ [१७०]। उन्हें अपनी जन्मभूमि से अत्यधिक प्यार था। यही कारण है कि वह राजकोट की जनता का दुःख दूर करने के लिए वहाँ जाना चाहती हैं और अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करती हैं [१७१]।

डॉ॰ सुशीला—

यह एक ऐसी भारतीय महिला हैं जिनके मन में भारत देश के प्रति असीम अनुराग है। वह भारत देश को परतन्त्रता की जजीरों से मुक्त करवाने के लिए गाधी जी के साथ ही स्वतन्त्रता सग्राम में कूद पडती हैं और कारागृह की यातनाओं को सहन करती है, इस तथ्य से उनकी सहनशीलता की झलक मिलती है। वह एक कुशल चिकित्सिका भी हैं। वह सेवापरायण नारी हैं। आगाखाँ महल में गाधी परिवार सहित बन्दी सुशीला कस्तूरबा की रुग्णावस्था में उनकी सेवा-शुश्रूषा करती हैं [१७२]।

सरोजिनी नायडू—

"भारत-कोकिला" सरोजिनी नायडू अत्यधिक सहृदय गांधी जी के प्रति समादर का भाव रखने वाली और अपने देश के प्रति अनुराग रखने वाली नारी हैं। वह भारत की स्वतन्त्रता दिलवाने के लिए अत्यधिक प्रयत्नशील दिखाई देती हैं और नमक-कर के विनाश और नमक निर्माण आन्दोलन के सन्दर्भ में गाधी जी के बन्दी बना लिये जाने पर वह सेना का प्रतिनिधित्व करती हैं [१७३]। उन्होंने भी कांग्रेस महासभा के सभापति पद को सम्हाला [१७४]। कोमल स्वभाव वाली सरोजिनी नायडू भूख और प्यास की परवाह न करके नमक निर्माण कार्य में डटी और दुष्ट शासकों द्वारा बन्दी बना ली गईं [१७५]। वाग्देवी कही जाने वाली वह स्त्री कुल का रत्न थीं [१७६]।

प्रभावती—

श्रीमती प्रभावती जय प्रकाश नारायण की पत्नी हैं और उनमें भी स्वदेश प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। वह महात्मा गांधी के साथ आन्दोलनों में भाग लेने के कारण अनेक बार कारागृह जा चुकी हैं। वह महात्मा गांधी से अत्यधिक प्यार करती हैं यही कारण है कि

महात्मा गाधी से वियुक्त होने की कल्पना से ही वह दुखी हो जाती है[१७७]। वह अत्यधिक विनम्र एवं सरल स्वभाव वाली है[१७८]। वह सेवापरायण भी हैं। उन्होंने आगाखाँ महल में रुग्ण कस्तूरबा की सेवा की[१७९]।

मनु गांधी—

मनु गांधी महात्मा गाधी के वंश में ही उत्पन्न हुई हैं। वह भी सेवाभाव से परिपूर्ण हैं। वह महात्मा गाधी के प्रति तो इतनी श्रद्धा भक्ति रखती हैं कि जीवित रहने तक उनके चरण कमलों का सामीप्य नहीं छोड़ना चाहती हैं। साथ ही वह देश सेविका भी हैं। महात्मा गाधी सहित उन्हें भी कारागृह की यातना सहनी पड़ती है[१८०]।

मणि देवी—

यह बालिका बल्लभ भाई की पुत्री हैं और पिता के सदृश इन्हें भी अपने देश से विशेष अनुराग है। प्रजा के प्रति हो रहे असन्तोष व्यवहार से उनको देश सेवा की प्रेरणा मिलती है। वह भी प्रजा की सहायता के लिए बा के साथ राजकोट जाती हैं और मध्य मार्ग में ही राजाज्ञा से पकड़ ली जाती है[१८१]।

मृदुला साराभाई—

अम्बालाल साराभाई की पुत्री मृदुला साराभाई बा के पकड़े जाने का समाचार सुनकर राजकोट जाती हैं और कारागृह की यातना भोगती है[१८२] वह वीर एवं देश प्रेमी महिला हैं तभी तो वह कारागृह की यातना से नहीं घबराती हैं प्रजा का दुख दूर करने के लिए चल पड़ती है।

इन देश प्रेमी नेताओं एवं महिलाओं के पश्चात् कुछ भारतीय किन्तु देश द्रोही पात्रों का चरित्र प्रस्तुत कर रही हूँ—

दास गुप्ता—

यह उत्कल सरकार के मुख्यमंत्री हैं। वह भारतीय होते हुए अंग्रेजों की गुलामी करना पसन्द करते हैं। वह महासभा के सिद्धान्तों का विरोध करने के लिए उस जिले के सभी जिलाधीशों के पास पत्र भेजते हैं और समाचार पत्रों के माध्यम से विरुद्ध प्रचार करने की सलाह देते हैं[१८३]। इस तरह अपने देश से द्रोह करने वाले उसकी जितनी निन्दा की जाय थोड़ी हैं।

धर्मेन्द्रसिंह—

वह लाखाजी राज के पुत्र हैं और सौराष्ट्र राज्य के राजा के पद पर आसीन हैं। वह गुणों में न तो अपने पिता के समान ही हैं और नहीं अपने नाम को सार्थक करते हैं। उन्हें देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति से कोई सम्बन्ध नहीं है वह तो अंग्रेज अधिकारियों को प्रसन्न करके अपना पद बनाये रखना चाहता है और वह वीरावाला जैसे स्वार्थी, क्रूर, अधर्मी, राक्षस को प्रधान दीवान बनाता है[१८४]। वह अपनी प्रतिज्ञा भंग करने में भी नहीं हिचकिचाता है।[१८५]।

मुहम्मद अली जिन्ना—

मुहम्मद अली जिन्ना पाकिस्तान बनाने के पक्ष में थे और वह केवल मुसलमानों के ही हितचिन्तक थे। उन्हें सम्पूर्ण देश की स्वतन्त्रता एवं सुख-समृद्धि से दूर-दूर तक कोई वास्ता नहीं था। महात्मा गांधी के समझाने जाने पर भी वह अपने पाकिस्तान बनाने के दुराग्रह को नहीं छोड़ते हैं [१८६]। वह कटु भाषण करते हैं और कांग्रेस का विरोध करते हैं [१८७]। वह महात्मा गांधी के विचारों से सर्वथा विरोध करते थे। वह मुस्लिम लीग के नेता थे [१८८]। उनका ये मानना था कि हिन्दू-मुसलमानों के मध्य एकता की स्थापना इसलिए भी नहीं हो सकती है क्योंकि उनके धर्म, आचार-विचार, संस्कृति में भी महान् अन्तर है [१८९]। जिन्ना की कुटिलता के कारण हिन्दू-मुसलमानों के मध्य वैमनस्य हो गया [१९०]।

नाथूराम गोड्से—

जब-जब महात्मा गांधी को याद किया जाता है तब-तब उनको मारने वाले नाथूराम गोड्से का नाम भी हमारे जेहन में उतर जाता है। उसने महात्मा गांधी जैसे देश सेवक की हत्या करके संसार को महती हानि पहुँचाई [१९१]। वह देश द्रोही था। किशोरलाल मशरूवाला ने कहा कि वह निर्लज्ज एवं मूर्ख मानव था जोकि उसने महात्मा गांधी जैसे महामानव की हत्या की [१९२]।

ए॰ओ॰ ह्यूम—

वह एक ऐसे अंग्रेज अधिकारी हैं जिन्होंने भारत के कल्याण की बात सोची। वह राष्ट्रीय कांग्रेस महासभा के संस्थापक थे। उनके साथ मिलकर ही भारतीयों ने समिति का गठन किया [१९३]।

लार्ड माउण्टबेटन—

लार्ड माउण्टबेटन भारत के अन्तिम वायसराय हैं। ये गांधी जी के प्रति सद्भाव रखने वाले और उनके उच्च गुणों का सम्मान करने वाले हैं। गांधी जी की मृत्यु से उन्हें अत्यधिक दुःख हुआ और उन्होंने अपनी पुत्रियों सहित आकर काली पोशाक द्वारा अपनी व्यथा का प्रदर्शन भी किया है [१९४]। वह उनके अन्तिम दर्शन करके स्वयं को धन्य मानते हैं।

लिनलिथगो—

यह भी भारत वर्ष के तत्कालीन वाइसराय रह चुके हैं। उनके साथ हुई मित्रता को महात्मा गांधी अपना सौभाग्य मानते हैं। उनका सरकारी पद गांधी की मित्रता में बाधक नहीं बनता है [१९५]। वह महात्मा गांधी को यह सलाह देते हैं कि वह कांग्रेस महासभा से सम्बन्ध विच्छेद कर दें तो उन्हें बम्बई के गवर्नर द्वारा सुख-सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकती हैं [१९६]। वह सहृदय एवं उदार भी हैं [१९७]।

चार्ली एण्ड्रूज—

इनके अलावा चार्ली एण्ड्रूज अंग्रेज होते हुए उदार हैं। गांधी जी का उन पर विशेष स्नेह है। वह भारत संस्कृति के लिए आदर्श स्वरूप हैं। वह गांधी जी के अच्छे मित्रों में

से है[१९८]। अब कुछ विदेशी महिला पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करना भी महत्वपूर्ण है—

सुखदा—

यह अंग्रेज पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की पत्नी हैं और गाधी जी के प्रति अत्यधिक स्नेह रखती है। वह गाधी जी के प्रति होने वाले अपमान एवं दुर्व्यहार को सहन नही कर पाती हैं। उन्हें मनुष्यरूपधारी "देवी" की संज्ञा से अलकृत किया जा सकता है[१९९]।

मीरा बहन—

वह अग्रेज कुलीन महिला हैं। वह दूसरों की पीडा को देखकर अत्यधिक व्यथित हो जाती हैं[२००]। वह "बापू" को अपना आश्रय ही नहीं सर्वस्व मानती हैं। उनकी मृत्यु के पश्चात् वह यह विचार करती हैं कि समस्त प्राणी धर्म एव वर्ण के भेद को भूलकर समता का व्यवहार करें और सब जगह से हिंसा एव असत्य का समूल नाश हो जाये। वह कर्त्तव्य मार्ग की दिग्दर्शन कराने वाली और ईश्वर भक्त भी हैं[२०१]।

लेडी माउण्टबेटन—

यह लार्ड माउण्टबेटन की पत्नी लेडी एडविना माउण्टबेटन हैं। वह महात्मा गाधी के गुणों की प्रशसक हैं और उनके बताये मार्ग पर चलने के लिए तत्पर हैं। उन्हें महात्मा गाधी से अत्यधिक प्यार है। वह उनकी मृत्यु को अन्तरराष्ट्रीय हानि स्वीकार करती हैं और इस घटना को अकल्याणकारी बताती हैं। इस दुःख से व्यथित मन को शान्ति प्रदान करने के लिए वह पति का सामीप्य चाहती हैं[२०२]।

ईडसन—

यह एक अंग्रेज महिला डाक्टर थीं। उन्हें भारतीयों मे अत्धिक घृणा थी। वह किचल्यू और सत्यपाल नामक डाक्टरों को सजा दिये जाने पर उनकी मुक्ति के लिए प्रार्थना करने वाली प्रजा के प्रति हो रहे अत्याचारों से उनकी असहायता पर हँसती हैं और विष वाण छोड़ती हैं कि उन्हें अपनी करनी का फल मिल गया है[२०३]।

चर्चिल तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री हैं और वह हिसा के मार्ग पर चलने वाले हैं। फ्रेड्रिक फ्क्ल ब्रिटिश मत्री हैं, वह अत्यधिक क्रूर, वञ्चक, दुष्ट और कूटराजनीतिज्ञ हैं, गिब्सन अंग्रेज सरकार का प्रतिनिधि है और यह धर्मेन्द्रसिंह को महात्मा गाधी के खिलाफ भड़काता है। इनके अलावा डायर, कर्जन जानसन, जज ब्रूमफील्ड, ओडवायर, टाटनहम, पञ्चम जार्ज, आदि पात्रों में कुछ अत्यधिक क्रूर हैं जोकि महात्मा गाधी सहित अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों को परेशान करते हैं और कुछ महात्मा गाधी के प्रति उदार भाव भी रखते हैं और उनकी सहायता भी करना चाहते हैं।

इन पात्रों के अलावा समस्त महाकाव्यों में अन्य पात्रों का चित्रण भी हुआ है जो कि बहुत अधिक महत्वपूर्ण तो नहीं है, लेकिन उनके चरित्र की विशेषताएं हमें अपनी ओर आकृष्ट तो करती ही हैं और साथ ही एक विशिष्ट छाप भी हमारे मनोमस्तिष्क में छोड़ जाती हैं लेकिन मैं यहाँ पर उन पात्रों के चरित्र पर प्रकाश नहीं डाल रही हूँ।

समस्त महाकाव्यों में जिन स्वतन्त्रता सेनानियों, अंग्रेज शासक वर्गों गाधी जी के शुभचिन्तकों, पारिवारिक सदस्यों का चित्रण किया गया है, वे सभी मानव स्वभाव और उसकी प्रवृत्तियों, रुचियों, मानव मूल्यों, नैतिक धर्म, तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को ही इंगित करते हैं। प्रत्येक पात्र किसी न किसी उद्देश्य की पूर्ति में सहायक है। साथ ही मेरा यह विचार है कि यदि गाधी जी के पद चिन्हों का अनुकरण किया जाए तो निश्चय ही हम एक ऐसे रामराज्य की स्थापना कर सकते हैं, जहाँ समस्त मानव जगत् शत्रुभाव भूलकर मैत्री भाव से एक परिवार की भाँति जीवन व्यतीत करते हुए अधिकतर उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है और उनके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का अवलम्बन लेकर जीवन-यापन करने पर हम सर्वत्र ऐसा वातावरण उत्पन्न कर सकते हैं जहाँ पर सभी समस्त सुखों को प्राप्त कर सकें, उसे किसी प्रकार की व्याधियों से जूझना न पड़े, पूर्णरूपेण स्वस्थ रह सकें।

खण्डकाव्यों में चरित्र चित्रण—

महाकाव्यों के आधार पर चरित्र-चित्रण प्रस्तुत करने के पश्चात् खण्डकाव्यों के आधार पर चरित्र-चित्रण कर रही हूं। जैसा कि प्रथम अध्याय से ही स्पष्ट है कि जहाँ महाकाव्य का कलेवर बड़ा है तो उसमें प्रधान पात्र के अलावा अन्य पात्रों का चरित्र भी विस्तार से प्रस्तुत किया गया है किन्तु खण्डकाव्यों में प्रधान पात्र महात्मा गांधी की कतिपय चारित्रिक विशेषताओं को ही प्रस्तुत किया गया है। जो अन्य पात्र उसमें आए भी है उनका चरित्र अत्यल्प है और इसके अलावा अन्य पात्रों का नामोल्लेख करना ही कवि को अभीष्ट रहा है। अत. खण्डकाव्यों के आधार पर चरित्र-चित्रण इस प्रकार है—

महात्मा गाधी ही समस्त खण्डकाव्यों के नायक हैं। अतः सर्वप्रथम उनकी चारित्रिक विशेषताएं प्रस्तुत की जा रही हैं—

समभाव के पक्षपाती—

महात्मा गाधी मानव मात्र के प्रति सौहार्दपूर्ण व्यवहार करते थे। वह सदैव इस बात का प्रयास करते थे कि हिन्दू-मुसलमान भ्रातृत्व भाव से रहें। साथ ही वह अस्पृश्य कहे जाने वाले "अछूत" वर्ग के प्रति भी प्रेम भाव रखते थे। वह उन्हें समाज में प्रतिष्ठा दिलवाना चाहते थे। उनके मन में राम, महावीर, स्वामी, महात्मा बुद्ध, मोहम्मद आदि के प्रति जो समान श्रद्धा थी उससे भी हमें उनके समभाव का परिचय मिलता है [२०४]। वह प्रत्येक मानव के प्रति एक सा व्यवहार रखते थे। उनके लिए यह बात नगण्य थी कि कौन किस धर्म का है या कौन ऊँचा है या नीचा। वह जन्म से वैष्णव होते हुए भी सभी धर्मों के प्रति सम्मान भाव रखते थे [२०५]।

देशोद्धारक—

गाधी को अपने भारत देश से असीम अनुराग था। उसकी रक्षा एवं उन्नति हेतु वह जी जान से प्रयत्नशील रहते थे। वह कोई कार्य प्रशंसा पाने के लिए नहीं अपितु देश के सर्वांगीण विकास हेतु करते थे [२०६]। वह ये मानते थे कि स्वतन्त्रता समस्त सुखों का आधार है पराधीनता से कष्ट मिलता है अतः सबको मिलकर स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु प्रयास करना

चाहिए [२०७]। वह राष्ट्र की उन्नति के लिए हिन्दी को उन्नत स्थान देने पर बल देते हैं। उनका मानना है कि यह जन-जन की पवित्र वाणी है इसके द्वारा हृदयगत भावों को सुव्यक्त किया जाए जिससे भारतमाताका कल्याण हो सके। उनके मत में विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करना पाप है[२०८]।

उन्हें अपने देश से इतना अनुराग है कि वह अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करते और मातृ भूमि की सेवा को अपना धर्म मानते हैं—

गच्छेच्शरीरं निवसेद् वरं वा
मया तु धर्मो भुवि सेवनीयः।
एवं विधो यस्य हि नरचयोऽस्ति
स आप्नुतेऽवश्यमनन्तमोशम्।।
(डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य स.-११४)

सत्य के प्रति अनुराग रखने वाले—

महात्मा गांधी को सत्य के प्रति अपार श्रद्धा थी। अपनी सत्यादिता के कारण ही वह अपने गुरुवृन्द एवं छात्र समूह के मध्य स्नेह भाजन हो गए थे। हरिश्चन्द्र नाटक देखने से उनमें यह गुण और भी अधिक प्रदीप्त हो उठा [२०९]।

मातृ एवं पितृभक्त—

महात्मा गाधी अपनी माता के प्रति अत्यधिक श्रद्धा एवं आदर भाव रखते थे। उनकी आज्ञा का पालन करना वह अपना कर्त्तव्य समझते थे। माता के प्रति श्रद्धाभाव का परिचय इस बात से मिलता है कि जब वह बैरिस्टर होकर लौटे तो उन्हें अपनी माता की मृत्यु का समाचार मिला जिससे वहविदेश गमन के काण पश्चाताप की अग्नि से जलनेलगे [२१०]।

साथ ही पिता की सेवा को वह सबसे बड़ा धर्म समझते थे। वह उनकी सेवा हेतु-क्रीड़ा आदि में भी भाग नहीं लेते थे [२११]।

ईमानदार—

गाधी जी के चरित्र की एक विशेषता यह भी थी कि वह अपने गुरुजनों से झूठ नहीं बोलते थे। वह अगर कोई ऐसा कार्य कर लेते थे जिससे कि गुरुजनों (माता-पिता, भाई या शिक्षक) को ठेस पहुँचे तो वह स्वयं को हेय दृष्टि से देखने लगते थे। एक बार वह स्वर्ण खण्ड की चोरी करते हैं लेकिन पिता के समक्ष उसका उद्घाटन करके क्षमा याचना द्वारा अपनी ईमानदारी का परिचय देते हैं [२१२]।

ईश्वर में विश्वास—

महात्मा गाधी को ईश्वर में अत्यधिक आस्था थी। वह रामनाम को अचूक औषधि स्वीकार करते थे और जब कभी उनका मन विचलित होने लगता था तो वह ईश्वर का ही सहारा लेते थे। उनमें यह विश्वास उनकी रम्भा नामक दासी ने डलवाया। वह बाल्यकाल में भूत प्रेतों से भयभीत रहा करते थे। उनके इस भय को दूर करने के लिए ही उन्हें राम मन्त्र

दिया गया और तब से आजीवन यह विश्वास उनके साथ जुड़ा रहा [२१३]।

दृढ़निश्चयी—

गांधी जी अपने निश्चय पर स्थिर रहने वाले थे। वह अपने मन में जो विचार कर लेते थे उसे पूर्ण करके ही रहते थे। उन्होंने मास-भक्षण से माता-पिता को कष्ट होते देखकर और उसे स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद मानकर भविष्य में यह पापकृत्य न करने का निश्चय किया और आजीवन इस प्रतिज्ञा का पालन किया [२१४]। साथ ही प्रतिज्ञा पर अटल रहने का उत्कृष्ट एवं चिरस्मरणीय उदाहरण अपने प्राणों की आहुति देकर भी देश को स्वतन्त्रता प्राप्त करवाने के लिए किया गया प्रयास है [२१५]।

श्रम के प्रति दृढ़ आस्थावान्—

महात्मा गांधी को श्रम के प्रति अपूर्व विश्वास एवं श्रद्धा है। उनका मानना है कि श्रम वह अमूल्य थाती है जिसके बल पर हम अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। वह श्रम को परिवार एवं राष्ट्र दोनों के लिए महत्त्वपूर्ण मानते हैं। वह श्रम को जीवन मानते हैं। उनका विचार है कि श्रम के अभाव में व्यक्ति का अधः पतन हो जाता है अतः श्रम की प्रतिष्ठा करनी चाहिए। वह स्वयं भी चर्खा कातते हैं, उनकी दृष्टि में शारीरिक परिश्रम सर्वोत्तम तपस्या एवं यज्ञ है। श्रम ही समस्त सुखों एवं ऐश्वर्य का मूलभूत कारण है। वह इसी भावना से "फिनिक्स" वासियों को "श्रम" का महत्त्व समझाते हैं और स्वयं भी कठोर परिश्रम में रत रहते हैं। दीन-दुखियों को सेवा हेतु एवं स्वराज्य प्राप्ति हेतु समय-समय पर किया गया प्रयास उनकी इसी भावना से ओतप्रोत है [२१६]।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आदरभाव—

महात्मा गांधी को राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति विशेष अभिमान था। यद्यपि वह अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे लेकिन देश की उन्नति को ध्यान में रखते हुए वह उसकी वैभवशालिता को कायम रखते हुए राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार पर बल देते हैं [२१७]।

कर्मचन्द—

यह महात्मा गांधी के पिता है। कर्मचन्द गांधी पोरबन्दर नामक राज्य के मंत्री के पद पर आसीन थे। वह धैर्यशाली, गम्भीर, अभिमानी, सम्पत्तिशाली, निष्काम कर्मयोगी भी थे। वह सर्वाधिक वीर एवं सत्यवादिता आदि गुणों से मण्डित थे [२१८]।

पुतलीबाई—

महात्मा गांधी की माता पुतलीबाई पति धर्म परायणा हैं [२१९]। *वह सत्य के प्रति अनुराग* रखने वाली, धर्म को ही सबसे श्रेष्ठ धन मानने वाली, व्यवहार कुशल, सूर्योपासिका, कामादि विषयवासनाओं से दूर रहने वाली, सौन्दर्यशाली, विपत्ति में निमग्न लोगों के प्रति दया रखने वाली, सर्वगुण सम्पन्न होते हुए भी विनम्र स्वभाव वाली, उत्तम चरित्र से मण्डित एवं हिन्दू महिलाओं के लिए आदर्श नारी हैं। उनके इन गुणों का प्रभाव गांधी पर दृष्टिगोचर होता है। वह अन्धविश्वासी भी हैं यही कारण है कि वह महात्मा गांधी के

एकदम से विदेश गमन की अनुमति नहीं दे पाती हैं। क्योंकि वह सोचती हैं कि अध्ययन स्वदेश में रहकर भी किया जा सकता है [२२०]।

मैंने यहाँ पर महात्मा गांधी की कतिपय प्रमुख चारित्रिक विशिष्टताओं का उल्लेख किया है और उनके माता-पिता के चरित्र को भी संक्षेप में प्रस्तुत किया है। इसके अलावा इन काव्यों में भगतसिंह, राजेन्द्र प्रसाद, सरोजिनी नायडू, आदि अन्यान्य स्वतन्त्रता सेनानियों एवं गाधी के सम्पर्क में आने वाले भारतीय एवं विदेशी पात्रों का उल्लेख भी हुआ है। लेकिन मैं यहाँ पर उनका विवरण नहीं दे रही हूँ। इस संक्षिप्त विवेचन से ही स्पष्ट है कि खण्डकाव्यों में भी चरित्र-चित्रण उत्कृष्ट कोटि का है। लघु कलेवर में ही पात्रों को इस ढग से प्रस्तुत किया गया है कि प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता है।

गद्य काव्यों में चरित्र-चित्रण—

जहाँ महाकाव्यों का चरित्र-चित्रण सशक्त है वहीं गद्य काव्यों का चरित्र-चित्रण भी अत्यधिक प्रशंसनीय है। दो काव्यों में तो केवल महात्मा गांधी का ही चरित्र-चित्रण किया गया है। एक काव्य में गांधी के साथ-साथ अन्य पात्र भी स्वाभाविक रूप से आ गए हैं। ये पात्र कथा को प्रवाह प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

मातृ-पितृभक्त एवं सेवा परायण—

महात्मा गांधी अपने पिता के अनन्य भक्त थे। वह उनकी सेवा करना अपना कर्तव्य एवं सौभाग्य समझते थे। उन्होंने पिता की सेवा उनके अन्तिम समय तक की। यही कारण है कि उनकी मृत्यु के समय उपस्थित नहीं हो पाने का उन्हें हमेशा पश्चात्ताप रहा [२२१]। साथ ही वह रोगियों की सेवा शुश्रूषा को अपना सबसे बड़ा धर्म स्वीकार करते थे। एतदर्थ वह चिकित्सक बनने की अभिलाषा रखते थे [२२२]। वह माता का भी अत्यधिक आदर करते थे। वह उनकी आज्ञा का पालन अवश्यमेव करते थे। उनका विधिशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विलायत गमन हेतु माता के समक्ष किए गए प्रण (मांस, मदिरा एवं स्त्री संग से दूर रहने का पालन करना मातृ भक्ति का परिचायक है [२२३]।) उन्हें दीन-दुखियों की दशा से क्लेश पहुँचता था। वह जहाँ कहीं भी उन्हें विपत्तिग्रस्त देखते थे उनका हृदय हाहाकार कर उठता था और वह उन्हें उन परेशानियों से उन्मुक्त करने को तत्पर हो उठते थे [२२४]। वह कारागृह में रहते हुए भी बंगाल की दुर्भिक्ष पीड़ित जनता की सेवा करना चाहते थे [२२५]।

गुणवान्—

वह किसी भी प्राणी के प्रति द्वेष नहीं रखते थे। वह सभी के प्राण प्रिय थे। दीनों एवं दरिद्रों पर सदैव दया रखते थे। उनके दुख दूर करना उनका धर्म था। वह अन्याय सहन नहीं कर पाते थे। वह अहंकार शून्य थे। छल-कपट, असत्य, क्रूरता, दुर्व्यवहार, हिंसा आदि दुष्ट भाव उनका स्पर्श नहीं कर पाते थे। वह संसार के लिए तिलक स्वरूप थे। धर्म के हृदय थे, सन्नीतियों के घर थे। शुद्धता, सरलता, सरसता आदि सद्व्यवहार से युक्त होने के कारण मानो महासागर थे, भावुकता के बन्धु थे, पवित्रता के मानो मित्र थे, उपकार

का स्त्रोत थे, स्नेह की विधि थे, पाप नष्ट करने वाले गंगा की भाँति पवित्र थे। समदर्शिता के कारण लोगों पर अमृत वर्षण करते थे [२२६]। वह शत्रु के कष्ट को दूर करने का प्रयास करते थे। वह कभी भी अंग्रेजों से द्वेष नहीं रखते थे। उनका द्वेष उनकी भेदबुद्धि और निन्दनीय शासन पद्धति से था। वह सदैव उनकी सेवा करने के लिए हृदय एवं धन से तत्पर रहते थे[२२७]।

ईश्वर भक्त—

वह ईश्वर भक्त भी थे। वह ईश्वर के पादारविन्द की अभ्यर्थना किए बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते थे और उनकी पूजा वह हृदय की निर्मलता, सत्य व्यवहार, दीन दरिद्रों की सेवा करके, समस्त प्राणियों के प्रति समान व्यवहार करके, मानवता का संरक्षण करके, अन्याय का विरोध करके, निरन्तर उत्तम कर्मों में संलग्न रहकर और निष्काम भाव से भगवान् का स्मरण करते थे [२२८]।

कुशल नेता—

वह सम्पूर्ण भारत राष्ट्र की प्रजा के नेता थे। जैसी नेतृत्व की संगति महात्मा गांधी में थी वैसी पहले कभी नहीं देखी गई। सैकड़ों निरक्षर भारतीय शंका रहित होकर उनका अनुकरण करने को तत्पर रहते थे। प्रमुख नेतृवर्ग में महात्मा गांधी का नाम सबसे पहले लिया जायेगा। वह दार्शनिक, शिक्षक, धर्म का उपदेश देने वाले लेखक, अत्यधिक विनम्र, समस्त विश्व के मित्र एवं सखा थे [२२९]।

विभिन्न भाषाओं पर समाधिकार—

वह विभिन्न भाषाओं पर अधिकार रखते थे। वह हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी बड़ी कुशलता से करते थे। उनकी प्रवहणशील एवं सरल अंग्रेजी भाषा को लोग सहज में ही आत्मसात कर लेते थे। उनकी गणना अंग्रेजी के विशिष्ट ज्ञाताओं में हुआ करती थी [२३०]।

हरिजनोद्धारक—

महात्मा गांधी ने हिन्दू समाज में घृणा की दृष्टि से देखे जाने वाले अस्पृश्य वर्ग को "हरिजन" यह संज्ञा देकर उन्हें ईश्वर की अनुकम्पा का सर्वाधिक भागीदार माना। शासक वर्ग द्वारा अस्पृश्य वर्ग को हिन्दू समाज से पृथक् प्रतिनिधि निर्वाचन का अधिकार देने के कारण चिन्तित होकर उन्होंने सर सेमुअल होर के समक्ष इस कुविचार का विरोध किया और इस हेतु अनशन भी किया जिससे उन्हें समाज में समान स्थान मिल सके [२३१]। वह कभी भी यह नहीं चाहते थे कि समाज में अस्पृश्य जैसा कोई अलग वर्ग हो जिससे विभाजन हो तथा उनका मानना [redacted] कि छुआछूत या अस्पृश्यता जैसी भावना से तो मृत्यु ही श्रेयस्कर है। अतः उन्होंने हरिजनों को अनेक सार्वजनिक स्थलों, भोजनालयों, विद्यालयों, मन्दिरों में प्रवेश की अनुमति दिलवाई [२३२]।

प्रजावत्सल—

उन्हें नेटाल स्थित भारतीयों के प्रति तिरस्कार पूर्ण व्यवहार से अत्यधिक विक्षोभ हुआ। अतः उन्होंने उन्हें इस अपमानजनक स्थिति से उबारने के लिए "कुली-बैरिस्टर" बनना स्वीकार कर लिया। गान्धी जी ने प्रिटोरिया नगर से जाते हुए वहाँ पर निवास करने वाले भारतीयों की पीड़ा को अनुभव किया और उनके मन में दक्षिण-अफ्रीका स्थित भारतीयों की पीड़ा का विनाश करने की महती इच्छा जागरित हुई, एवं उन्होंने इस हेतु भारतीयों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास किया और स्वास्थ्य एव स्वच्छ जीवन जीने के नियम बताये [२३३]।

अहिंसा के पालक—

महात्मा गांधी अहिसा के पालक होने के कारण शान्ति के पुजारी भी हैं। उनका विश्वास था कि अहिंसा में एक ऐसी शक्ति है जिसका विनाश अणु बम से भी नही हो सकता है। प्रसिद्ध विश्ववैज्ञानिकोंने भी अहिसापालक महात्मा गाधी की प्रशसा की [२३४]।

दृढ़ निश्चयी—

वह जब कभी भी स्वयं की कमजोरियों के कारण अपनी हानि का अहसास पाते थे तो उसे शीघ्रातिशीघ्र विलग करने को तत्पर रहते थे। वह पाश्चात्य सभ्यता एव सस्कृति के अनुसार व्यतीत किए गए क्षणों को केवल समय का दुरुपयोग एव मातृधन का अपव्यय मानकर उसका परित्याग कर देते हैं एव अपनी ही संस्कृति के अनुसार जीवन यापन का निर्णय कर लेते हैं और आजीवन उसका अक्षरश: पालन करते हैं [२३५]।

क्षमावान्—

वह क्षमाशील भी हैं। वह निबन्धन कार्यालय को जाते हुए स्वय पर प्रहार करने वाले मीर आलम नामक आक्रमणकारी को दण्ड से मुक्ति दिलवाने की याचना करते हैं [२३६]।

आत्म सम्मान की रक्षा करने वाले—

अफ्रीका में निवास करते हुए महात्मा गांधी के समक्ष ऐसी घटनाए हुई जिनसे उनके मन में राष्ट्र एवं आत्माभिमान की भावना जागरित हो गई। उन्हें यह बात बिल्कुल पसन्द नहीं हुई कि नेटालवासी भारतीयों को विदेशी कष्ट पहुँचाएं। अत उन्होंने आन्दोलन किया और अपने प्राणों की भी परवाह नहीं की [२३७]। उनका कहना था कि सत्य में स्वत: बल होता है। अतः इस विषय में कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिए (पृ.सं.-७-८)।

प्रकृति प्रेम—

महात्मा गाधी को उन्मुक्त वातावरण में भ्रमण करना अत्यधिक प्रिय था। उन्होंने अपनी इस रुचि का आजीवन पालन किया। वह यह मानते थे कि भ्रमण का महत्त्व इसलिए है क्योंकि इससे सामर्थ्य, उत्साह, ओजस्विता एवं कर्मनिष्ठा एवं सत्य-सन्धान आदि गुणों का विकास होता है [२३८]।

अनुपम व्यक्तित्व—

वह अपने देश में उत्पन्न हस्त निर्मित श्वेत वस्त्र ही धारण करते थे। उनका जीवन जनता के लिए था। सुकोमल शरीरधारी होते हुए उनमें अत्यधिक वर्चस्व था। उनके विषय में यह मत है कि वह कैसे व्यक्ति हैं? तो गौतम बुद्ध के पश्चात् वह ही महान् व्यक्ति होगे। इस बात का निर्धारण इतिहास ही कर पायेगा [२३९]। वह अत्यधिक लज्जाशील थे। एक बार लन्दन में शाकाहारियों की एक सभा में भाषण देने में असमर्थ होने पर अत्यधिक लज्जा का अनुभव किया किन्तु उन्होने सन्तोष कर लिया कि सत्य के प्रति आस्था रखने वाले के लिए मौन एक शक्तिशाली साधन है साथ ही वह यह भी मानते थे कि मौन अनेक बार मिथ्या भाषण से बचाता है [२४०]। वह स्वयं को निर्धन मानते थे और उन्हीं के समान जीवन यापन करते थे [२४१]। उन्होने इग्लैण्ड में रहते हुए भी अपने प्रात कालीन भ्रमण को नही छोडा। शीतकाल में वह केवल कम्बल ही धारण करते थे और पैरों में चप्पल पहनते थे। उनके इस पहनावे से कुछ आलोचक उन्हें "अर्धनग्न" भिक्षु की उपाधि देते थे [२४२]।

देशप्रेम—

महात्मा गाधी को अपने देश से असीम प्यार था। वह जहाँ कही भी अपने देशवासियों को कष्ट पाते हुए देखते थे तो वह उनकी सहायता के लिए वहीं पहुच जाते थे। उन्हें अपने देश को परतन्त्र देखकर अतीव दु ख होता था। साथ ही वह देश-प्रेम की भावना से ही विभाजन का विरोध करते थे। यही कारण है कि उन्होने स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपलक्ष्य में मनाए जा रहे आनन्दोत्सव में भाग नहीं लिया क्योंकि बिना विभाजन के मुक्ति का उनका स्वप्न साकार नहीं हो सका और उन्होंने अनुभव किया कि उनका अनेक वर्षों का प्रयास निष्फल हो गया [२४३]।

महात्मा गाधी के पश्चात् अन्य पात्रों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है।

जवाहर लाल नहरू—

महात्मा गाधी की हत्या का दुःखद समाचार पाकर जवाहर लाल नेहरू को अत्यधिक क्लेश पहुँचा। उन्हें ऐसा लगने लगा जैसे कि उनके जीवन का प्रकाश ही चला गया हो। सर्वत्र अन्धकार ही छा गया हो। उन्होने यह विचार व्यक्त किया कि "बापू"पद से सम्बोधित हमारे प्रिय नेता और राष्ट्र के पिता स्वर्ग चले गये हैं। वह गाधी जी की आकस्मिक मृत्यु से नव निर्मित राज्य का भार अपने ऊपर आ जाने के कारण स्वयं को निराश्रित महसूस करने लगे। उन्हें यह चिन्ता होने लगी कि उनका मार्ग दर्शन कौन करेगा [२४४]। वह कांग्रेस के अध्यक्ष पद को भी अलकृत कर चुके थे। वह भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे [२४५]।

सीमान्त गांधी अब्दुल गफ्फार खाँ—

जिनके नेतृत्व में स्वाभिमानी आदिवासियों ने पूर्ण अहिंसा को स्वीकार किया और शान्ति सेना का निर्माण किया जिसका नाम रेडशर्ट्स पड़ा [२४६]।

लार्ड माउण्टबेटन—

वह महात्मा गाधी का सम्मान करते थे। वह भारत के अन्तिम वाइसराय थे। लार्ड माउण्टबेटन ब्रिटिश शासन की समाप्ति हेतु ही भारत आए थे। उनके आचरण से महात्मा गाधी ने अनुभव किया कि माउण्टबेटन निश्चय ही ब्रिटिश राज्य के प्रतिनिधि होते

हुए भी भारत की सहायता करना चाहते हैं। उन्होंने भारतीयों के हृदय को अपने व्यवहार से जीत लिया था [२४७]।

स्मट्स—

वह ट्रांसवाल का प्रधानमंत्री था। वह अपने वचनों पर स्थिर रहने वाला नहीं था। वह गांधी को कृष्णाध्यादेश जारी न करने का आश्वासन देकर फिर अपने वचन का पालन नहीं करता है [२४८]।

नाथूराम गोड्से—

नाथूराम विनायक गोड्से ने ३० जनवरी १९४८ को प्रार्थना सभा में जाते हुए महात्मा गांधी की हत्या कर दी। इस तरह यह उनका हत्यारा बना [२४९]।

अब मैं विस्तार में न जाकर अन्य पात्रों का नामोल्लेख कर रही हूँ। ये पात्र भारतीय (देश प्रेमी-देश द्रोही) विदेशी दोनों हैं। गद्य काव्यों में आए हुए अन्य पात्रों के नाम इस प्रकार हैं—श्रीमती सरोजिनी नायडू, पण्डित मालवीय, महादेव देसाई, प्यारे लाल, कुमारिम्यूरियल लेस्टर महाशया, लार्ड जार्ज, चार्लि चैपलिन, बर्नार्ड शॉ, सर सेमुअल होर, रोम्याँ रोला, विलिंगटन, सर मारिस गियर (भारत के मुख्य न्यायाधीश), डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य विनोबा भावे, जयकर, सप्रू, उमेश चन्द्र बनर्जी, लार्ड इर्विन, मीर आलम, अलान अक्टोवन ह्यूम आदि।

दृश्य काव्यों में चरित्र-चित्रण—

दृश्य काव्यों में भी महात्मा गाधी का चरित्र अतीव मनोरम है, लेकिन साथ ही अन्य पात्रों का चरित्र भी महत्वपूर्ण है। सभी पात्र अपना पृथक्-पृथक् अस्तित्व रखते हैं। अन्य काव्यों की तरह दृश्य काव्यों में भी सर्वप्रथम महात्मा गाधी का चरित्र प्रस्तुत है—

अनोखा व्यक्तित्व—

महात्मा गाधी अत्यधिक वाक् कुशल हैं। उनकी तर्क शैली अतीव मनोहारी है। 'सत्याग्रहोदय.' के दृश्य-३ में नाविकाधिप के साथ हुई उनकी वार्ता से इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। वह किसी भी कार्य को पाप अथवा पुण्य की भावना से या किसी फल की कामना से नहीं करते हैं अपितु निष्काम कर्म करने पर बल देते हैं। वह सम्मान की आकांक्षा से सत्य को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते हैं इसीलिए वह सत्य हरिश्चन्द्र के प्रशंसक भी हैं [२५०]।

त्यागी—

वह त्याग में ही परमानन्द की अनुभूति करते हैं। वह अपने श्रेष्ठ कार्य के लिए प्राप्य समस्त उपहार सामग्री को कस्तूरबा के न चाहते हुए भी भारतीयों की सेवा हेतु प्रत्यर्पित कर देते हैं। वह मानते हैं कि त्याग में ही समस्त सुख विद्यमान हैं [२५१]।

कृतज्ञ—

वह कृतज्ञ भी हैं। महात्मा गांधी बेकर एवं मुरें की सहमति से एक सम्मेलन में हिन्दू धर्म के विषय में अपने विचार व्यक्त करने के लिए उद्यत हो जाते हैं अतः उनके प्रति वह

अपना आभार व्यक्त करते हैं [२५२]।

सत्यवादी—

वह स्वयं सत्य बोलने के साथ-साथ अन्य लोगों को भी सत्य आचरण करने की सलाह देते हैं। वह अफ्रीका वासी भारतीयों से कहते हैं कि सत्य से अत्यधिक लाभ होता है और असत्य से हानि। वह कर को चोरी करने वाले श्रेष्ठी अब्दुल्ला से न्यायालय में सत्य का उद्घाटन करके उसे दण्ड मुक्त करवा देते हैं। उनकी सत्यवादिता से प्रभावित होकर कलैक्टर एवं पादरी भी उनके कार्यों के समर्थक एवं उनके सहायक हो गए [२५३]।

एकता के पक्षपाती—

महात्मा गाधी का मानना है कि यद्यपि भारतवर्ष में हिन्दू, सिक्ख, पारसी, इसाई, मुस्लिम आदि अनेक वर्ग के लोग निवास करते हैं और वह विभिन्न भाषाओं को बोलने वाले हैं लेकिन उनमें भिन्नता होने पर भी भ्रातृत्व भाव होना चाहिए उन्हें परस्पर भाई चारे का व्यवहार करते हुए सुख का अनुभव करना चाहिए। उनका कल्याण तभी हो सकता है जबकि वह संगठन की स्थापना करें [२५४]।

आत्म नियन्ता—

उनका अपने मन एवं इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार था। वह नाविकाधिप द्वारा मित्र के बहाने से वेश्या के समीप ले जाये जाने पर क्षणभर के लिए हतप्रभ हो जाते हैं लेकिन वह किसी भी परिस्थिति में मद्य, मांस एवं स्त्री का स्पर्श न करने का प्रण लेने के कारण एवं माता को कष्ट न हो इस कामना से इस घृणित व्यवहार से मुक्ति पा लेते हैं [२५५]।

क्षमावान्—

गाधी स्वयं को सताने वाले लोगों को भी दण्ड नहीं दिलवाना चाहते हैं। वह स्वयं पर प्रहार करने वालों को क्षमा करके अपने महान् होने का परिचय देते हैं और किसी अधिकारी द्वारा प्रताड़ित किये जाने पर भी उसे दण्ड दिलवाने नहीं जाते हैं और असत्य सवाद प्राप्ति के कारण अफ्रीका में प्रहार करने वालों को माफ कर देते हैं [२५६]।

महात्मा गाधी की इन चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालने के पश्चात् कुछ अन्य पात्रों पर प्रकाश डालना भी आवश्यक हो जाता है।

तिलक—

ये देशभक्त स्वतन्त्रता सेनानी हैं। उन्हें भारतवर्ष को परतन्त्रता के पाश में बंधा हुआ देखकर अत्यधिक कष्ट होता है। वह देशोद्धार हेतु कठोर कदम उठाने को तत्पर हैं। उन्हें यह विश्वास है कि भारतमाता के बन्धन शीघ्र ही छूट जायेंगे और वह अंग्रेजों को मृतप्राय देखेंगी [२५७]।

मालवीय—

पण्डित मालवीय को भी भारत देश से विशेष प्यार है। वह विदेशी वस्तुओं के

बहिष्कार को हिन्द देश का कल्याण समझते हैं। साथ ही उन्हें विश्वास है कि इस माध्यम से महात्मा गांधी की अहिंसा को बल मिलेगा [२५८]।

अब्दुल्ला—

अफ्रीका वासी गाधी के मित्र श्रेष्ठी अब्दुल्ला गाधी जी के प्रभाव से कर की चोरी के प्रति खेद व्यक्त करते हैं और महात्मा गाधी के परामर्श से सत्य का उद्‌घाटन करके अभियोग से मुक्त हो जाते हैं। उन्हें इस बात का खेद है कि धन के लालच में आकर उनके द्वारा किए गए दुष्कृत्यों से पिता के द्वारा स्थापित कीर्ति धूमिल हो गई [२५९]।

जिन्ना—

मोहम्मद अली जिन्ना मुस्लिम लीग के नेता हैं और ये मुस्लिम राज्य की अलग स्थापना करने के पक्ष में हैं। उन्हें यह आशंका है कि अगर देश का विभाजन नहीं हुआ तो हिन्दुओं के पक्ष में मताधिक्य की वजह से प्रत्येक स्थान पर हिन्दुओं का प्रभुत्व रहेगा। अत: वह माउण्टबेटन से भारत को दो टुकड़ों में बाँटकर ही स्वतन्त्रता प्रदान करने का दुराग्रह करते हैं [२६०]।

रेल अधिकारी—

यह प्रिटोरिया जाते हुए गाधी को अनेकश. प्रताडित करता है और अपमानित करता है। वह गांधी से कहता है कि उसने प्रथम श्रेणी के कक्ष में जाने का साहस कैसे किया है। उसके मन में यह बात है कि एक तो महात्मा गाधी भारतीय हैं और दूसरे काले वर्ण के हैं अतः उन्हें प्रिटोरिया जाने का साहस नहीं करना चाहिए। वह गाधी जैसे भारतीयों को अपने पैर की धूल मानने से भी इन्कार कर देता है। इससे स्पष्ट है कि वह भारतीयों को तुच्छ समझता है और उसके प्रति दुर्व्यवहार करने में ही अपना कर्तव्य पालन समझता है [२६१]।

नाविकाधिप—

यह जञ्जीवार नामक द्वीप में नौकाहारी है। वह ईसाई धर्म के प्रति अन्ध भक्त है। उसका विचार है कि जो पाप करता है उन सभी के विनाश का एकमात्र हल ईसाई धर्म में है। वह जीवन के प्रति अपना अलग दृष्टिकोण रखता है। वह खाओ, पिओ और मौज उड़ाओ की जिन्दगी जीना पसन्द करता है। इसके बिना जीवन नीरस प्रतीत होता है। ईश्वर ने इस संसार का निर्माण मनुष्य के भोग के लिए किया है अतः हमें अपनी इच्छानुसार उपभोग करना चाहिए। इस तरह वह भोगवाद में यकीन करता है वह गाधी को श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता है और जब महात्मा गांधी किसी विकार के वशीभूत हुए बिना लौट आते हैं तो वह पुनः प्रशंसा किए बिना नहीं रह पाता है [२६२]।

शकट नायक—

यह एक अंग्रेज व्यक्ति है जोकि पर्दाकोफ ग्राम को जाती हुई घोडा गाड़ी का नायक है। यह गान्धी को अपशब्द कहकर नीचा दिखाता है। अपने सुख के लिए जब वह जहाँ चाहता है वहाँ बैठता है और गाधीजी उसकी बात नहीं मानते हैं तो वह अपशब्द कहता है [२६३]। इस तरह स्पष्ट है कि भारतीयों को तिरस्कार पूर्ण दृष्टि से देखता है।

रॉबिन्सन—

रॉबिन्सन नेटाल के प्रधानमंत्री के पद को अलंकृत कर रहे थे। उनका यह विचार था कि भारतीयों का उनके देश में आकर निवास करना उनके देश के लिए अहितकारी है। उनका यहाँ आगमन धूमकेतु सिद्ध हुआ। उन्होंने भारतीयों के अहित एवं श्वेत जाति की रक्षार्थ कुछ कठोर नियम बनाये[२६४]। उन्हें स्वयं पर इतना अधिक विश्वास है कि वह यह मान लेते हैं कि उनके साथ युद्ध करने की सामर्थ्य किसी में नहीं है।

लार्ड माउण्टबेटन—

ये भारतवर्ष के अन्तिम वाइसराय हैं। माउण्टबेटन जिन्ना के दुराग्रह के कारण भारत को दो टुकड़ों में विभाजित करने के साथ-साथ स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं[२६५]।

मुर्रे—

वह ईसाईयों के धर्म सम्मेलन के अध्यक्ष हैं। मुर्रे महात्मा गाधी का सम्मान करते हैं और सभा में गाधी जी से अनुचित प्रश्न करने वालों को शान्त करते हैं। इस तरह वह उन्हें यह बता देना चाहते हैं कि महात्मा गाधी को यहाँ पर भाषण देने के लिए बुलाया गया है न कि उनके प्रश्नों का उत्तर देने के लिए साथ ही वह सभा की ओर से गाधी जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं[२६६]।

आरक्षिक—

यह प्रिटोरिया नामक स्थान का आरक्षिक है। यह प्रिटोरिया जाते हुए गाधी को सामग्री सहित कम्पार्टमेण्ट से बाहर फेंक देता है और जब वह रात्रि में राष्ट्रपति के मार्ग पर भ्रमण हेतु जाते हैं तो यह उनको अनेकश: प्रताड़ित करके मध्य मार्ग में गिरा देता है। यह इतना दुष्ट एव नृशस है कि यह गाधी को न केवल मारकर सन्तुष्ट होता है अपितु वह उनसे कटु वचन भी कहता है। इससे पता चलता है कि यह भारतीयों के प्रति अच्छे भाव नहीं रखता है तथा उन्हें हिकारत भरी नजरों से देखता है[२६७]।

अलक्षेन्द्र की पत्नी—

प्रत्येक समाज में हर तरह के लोग होते हैं, कुछ बड़े निष्ठुर होते हैं और कुछ में मानवता इस कदर होती है कि उसे जहाँ तक सराहा जाये थोड़ा है ऐसी ही एक विदेशी महिला प्रधान आरक्षक की पत्नी है। रुस्तम के घर जाते हुए गाधी के प्रति जनसमूह का अपमान देखकर उनके प्रति हिकारत भरी नजरों से देखती है और गाधी की रक्षा हेतु शीघ्र पहुँच जाती हैं। वह निडरता पूर्वक जनता का सामना करती है साथ ही उनकी उद्दण्डता से तंग आकर उन्हें आरक्षक के समक्ष प्रस्तुत करने की धमकी भी देती है[२६८]।

वेश्या—

यह निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली महिला है। इसके चरित्र के वर्णन से गाधी के संयम की परीक्षा कसौटी पर खरी उतरती है। वह गाधी को प्रलोभन देती है और उन्हें अपने सुन्दर रूप एवं यौवन को व्यर्थ न जाने देने के लिए प्रेरित करती है और यह मान बैठती है कि गाधी जी का उनके समीप आना सौभाग्य का विषय है[२६९]।

उपर्युक्त विवेचन से दृश्य काव्यों के चरित्र-चित्रण की सफलता का अनुमान लगाया जा सकता है। उपर्युक्त पात्रों के अलावा इन काव्यों में राजेन्द्र प्रसाद, सरदार पटेल, महादेव देसाई, आदि स्वतन्त्रता सेनानियों अरविन्, क्रिप्स, डायर आदि शासक वर्ग और कुछ सामान्य वर्ग के पात्रों का चरित्र भी प्रस्तुत किया गया है। इन काव्यों में आये हुए पात्र वास्तविक एवं काल्पनिक दोनों हैं। जैसे भारत माता, सखी, एवं सरस्वती काल्पनिक एवं स्त्री पात्र हैं और भारतीय, कर्मकर आदि काल्पनिक पुरुष पात्र हैं। भारत माता एवं सरस्वती के चरित्र के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि परतन्त्रता के बन्धन अतीव कष्टप्रद हैं और साथ ही देशद्रोहियों को भी उल्लेख कर दिया गया है जिनके कारण देश अंग्रेजों का गुलाम हुआ।

समवेत समीक्षा—

समस्त काव्यों में महात्मा गाधी के चरित्र को ही प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया गया है। उन्हें सत्य पालक, प्रजा रक्षक, देश प्रेमी, क्षमाशील, त्यागवान् आदि बनाया गया है। महाकाव्यों में महात्मा गाधी का चरित्र विस्तार से वर्णित हुआ है और अन्य पात्रों को भी अत्यधिक मात्रा में प्रस्तुत किया गया है। सभी पात्रों का चित्रण महाकाव्य के सर्वथा उपयुक्त है तथा केवल गांधीगीता में "भारतीय" एवं "सजय" आदि काल्पनिक पात्रों को प्रस्तुत करके उत्कृष्ट बनाया गया है। उनमें आए भारतीयों एवं विदेशी सभी पात्र अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हैं। खण्डकाव्यों में महात्मा गाधी के अलावा आए हुए अन्य पात्रों का चरित्र अतीव सक्षिप्त है। गद्य काव्यों में भी महात्मा गाधी को प्रधानता दी गई है। अन्य पात्रों को सीमित मात्रा में लिया गया है। दृश्य काव्यों में महात्मा गाधी के साथ-साथ अन्य पात्रों से हमें कोई न कोई शिक्षा मिलती है। यदि हम गाधी जी के चरित्र से शिक्षा ग्रहण करें तो हमारा जीवन सुखमय बन सकता है। गाधी जी का जीवन हमें प्रेरणा देता है कि हमें अपने देश एवं जाति पर गर्व करना चाहिए, आपसी भेदभाव भूलकर प्रेम से रहना चाहिए।

संदर्भ

(१) वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोष, पृ.सं.- ६०३
(२) (क) नेता विनीतो मधुरस्त्यागी दक्ष: प्रियम्वदः।
रक्तलोक: शुचिर्वाग्मी रूढवंश: स्थिरो युवा।।
बुद्ध्युत्साह स्मृति प्रज्ञाकलामान समन्वित:।
शूरो दृढश्च तेजस्वी शास्त्रचक्षुश्च धार्मिक ।।
(धनञ्जय, दशरूपक, द्वितीय प्रकाश, कारिका—१-२)
(ख) त्यागी कृती कुलीनः सुश्रीको रूप यौवनोत्साही।
दक्षोऽनुरक्तः लोकस्तेजो वैदग्ध्य शीलवान्नेता।।
—साहित्य दर्पण, पृ.सं.- १३८
(३) मनसि वचसि काये यस्य वार्ता सदैका
स इह सकल लोकैरुच्यते वै महात्मा।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/७४)
(४) गन्धस्य कार्ये नितरा हि लग्नाः "गान्धी" ति सञ्ज्ञामलभन्त पूर्वे।
(वही, वही, १/९)
(५) (क) महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थन ।
स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढव्रत:।।
(धनञ्जय, दशरूपक, द्वितीय प्रकाश, कारिका—१-२)
(ख) अविकत्थनः क्षमावानतिगम्भीरो महासत्त्व ।
स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढव्रतः कथितः।।
(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, तृतीय परिच्छेद, कारिका—३२)
(६) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ८/६२-६३
(७) पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रह गीता, १/१२
(८) लग्ने तुलायां जनुरस्य जातस्तत्र स्थिताः सन्ति गृहास्त्रयोऽमी।
कुजः कविर्ज्ञश्च शनिर्द्वितीये केतुश्चतुर्थे मदने गुरुश्च।।
माने तमो लाभगतः सुधांशु: प्रान्ते रविर्व्योमचराधिनाथ:।
एवं स्थितानां निखिलग्रहाणां फलानि सर्वाणि वदन्ति तज्ज्ञा:।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १/४१-४२)
(९) ततो ग्रहैः सौम्यसितेज्यमीनैः केन्द्रस्थितैर्भाग्यवता वरेण्यम्।
सुखेन साध्वी सुषुवेऽर्कबन्धुं मायेव पुत्रं जगतो हिताय।।
(वही, वही, १/२८)

(१०) वही, वही, १/४३-६४)

(११) सत्यं दृष्टं गान्धिना यत्र यादृक्
ताहृक् तत् संवर्गित तेन सम्यक्।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/७२)

(१२) न सत्यमप्रियं जातु प्रियं नानृतमेव सः।
सुहृदा परिहासेऽपि जगादस्थिरनिश्चयः।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, २/७५)

(१३) स्वामि श्री भगवादाचार्य, भारतपरिजातम्, ४/३०, ६/३)

(१४) सत्य पराञ्चास्त्रनेन हस्ते————————।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/६१)

(१५) सत्यवादी सदा सुखी————————।
(वही, वही, २/६६)

(१६) न तद्जिह्वाऽस्पृशन् मिथ्या शब्दात् तद्वाचकादृते।
न चापि तन्मुखाम्भोजं क्रोधेन्दुर्जात्वलोकयत्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/७६)

(१७) धर्मात्मकस्य वृक्षस्य मूलं सत्य व्यवस्थितम्।
————————————————
स तरुस्सर्वथा सेव्य सर्वै. श्रेयोऽर्थिभिर्जनै·।
येनात्मनश्च लोकश्च कल्याणमभिवर्धताम्।।
(वही, वही, २/७७-७८)

(१८) स एव सत्यं सत्यं च परमात्मेति मे मति ।।
(पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्यविजय., १/१६)

(१९) श्रीमोहनो' दलमतः परिलिख्य तस्यै
पत्नीं स्वबालसहिता प्रबुबोध मित्रम्।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम् १\४०)

(२०) कराधिकारिणे तस्मै द्विगुणं दापयन् करम्
तद्दोष क्षमायामास————————।।
(वही, वही, २/६६)

(२१) अस्मत्क्लेशतमोहश्री केवलं सत्यदीपिका।।
(पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रहगीता, २/१३।)

(२२) सत्यस्य हेतोर्वचनं गुरूणामपि, प्रहेयं भविता सदेति।।
(श्रीमद्भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ६/३)

(२३) साक्षात्सत्यप्रदीपोऽयं दीप्यतेऽखिल भारते।

तस्मै सत्याग्रहाख्याय त्र्यम्बकाय नमो नमः।।

(पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रह गीता, ४७/१८)

(ख) वही, वही, ३५-३६

(३२) (क) आनन्दाम्बुधिवर्द्धिनीमनुमतिं सम्प्राप्य मातुर्मुदा।
प्रेम्णा ता प्रणनाम पादपतितः श्रीमानसो मोहनः।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ३/४३)

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ३/४३)

(ख) वही, वही, ३/१२

(ग) ततो जगाम त्वरितं स मोहनः सहाग्रजाभ्यां जननीनिकेतम्।
ददर्श ता तत्र सुताननेक्षणात् सुवत्सलां स्नेहसुधाभिवर्षिणीम्।।
सहग्रजस्ता प्रणनाम पादयोः शिरस्युपाघ्राय तथाभिनन्दित ।
जगाद पृष्टश्च निजेप्सितन्तदा भवन्कृतार्थो जननीसमोहन ।।

X X X X X X X

ततोऽप्यनुज्ञामधुना प्रदेहि मे, नतोऽस्मि मातस्तव पादपंकजम्।
समीहितं यज्जननी स पूरयेत्, सुतस्य तत् पूरयिता न चापरः।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिवचरितम्, ३/१-२, १२)

(घ) वही, वही, ३/४५

(३३) (क) ओमित्थमूचे जननी यदैव, प्रोवाच बाल पुरतस्तदैव।
मद्यं न मासं नहि संस्पृशेय, स्त्रब्रह्मचर्यञ्च दधामि नित्यम्।।
इत्थं प्रतिज्ञाय च मातरम्प्रति जगाम शीघ्रं स तु बम्बई मुदा।
मनोरथं प्राप्य युवास "मोहनो" गम्भीर भावेन जहर्ष मानसे।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/३२)

(ख) वही, वही, ५/३७, १/३६

(३४) श्री गान्धिनः कण्ठधृता च कण्ठी
प्रसादरूपा जननी प्रदत्ता।
तां त्रोटितुं तेन च प्रेर्यमाण—
स्तुत्रोट नेमा स तु मातृभक्त.।।

(वही, वही, २/३६)

(३५) (क) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ६/१३-१९)

(ख) गत्वा जनन्याः पदयो पतामि पुनस्तदाशीर्वचनं भजामि।
उगत्मोपनत्या च मनोऽपि तस्याः प्रमोदयामीति मनोरथालिः।।

X X X X X X X X X

प्रेम्णो गतायाः किल पारतन्त्र्यं तस्याः करस्पर्शमवाप्य भूयः।

अपाकरिष्यामि च तद्वियोगाद्दुःखं मदीये हृदि लब्ध जन्मः ।।

(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ४/१३-१४)

(३६) (क) स्वजीवने तेन सतित्वत्व-
न्तथा समत्वं ह्यपरिग्रहञ्च ।
ततार्थ भक्त्या स हरौ द्रढीयान्
सस्पृह "वीणां" सुखमत्यजच्च ।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/२४)

(ख) ममत्व चिन्ता जनबन्धने क्षमा
ततो गतः "साबरमतीं" तटस्थितम् ।
तमाशु मत्वा किल बन्धकारणम्
बभञ्ज सम्यग् यतिराज आश्रमम् ।।

(वही, वही, ७/३०)

(ग) परिग्रहस्तेन कृतो न जीवने
वीणा स्वकीया विससर्ज कातिरान् ।
ततोऽकिञ्चनत्वमनञ्च रागतो
विदाधि-काले न गृहीतमद्भुतम् ।।

(वही, वही. ८/७५)

(३७) पारतन्त्र्यमुदारात्मा मरणादतिरिच्यते ।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/३६)

(३८) हन्त भोः किं बहूक्तेन प्रतिज्ञाने दृढ हि व ।
सर्वात्मा यतिष्येऽहं देशकल्याण सिद्धये ।।

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रहगीता, २/१०)

(३९) श्रीमद् भगवदाचार्य पारिजात सौरभम्, ९/४०

(४०) (क) ततो भारतवर्षस्य स्मार स्मारमिमां दशाम् ।
मनसा दूयमानोऽभूद् दीनबन्धुः स मोहनः ।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ६/१०)

(ख) पारतन्त्र्यं विलोक्यैव मनो गान्धेश्च दूयते ।
कदा भारतदेशोऽयं स्वातन्त्र्यं परिलप्स्यते ।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिचरितम् ३/६४)

(४१) पारतन्त्र्यनिविष्टानां दीनानां दास्य पीडया ।
संशयं प्राप्यमाणानां को त्राता जीवितेन वै ।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी गीता, २/७)

(४२) वही, वही, २/२६-३७

(४३) यथा माता तथा राष्ट्रं यथा सर्वेश्वरोऽपि वा।
प्रेम्णादरेण सेव्याश्च धर्म एव सनातनः।।
(वही, वही, ३/२५)

(४४) हिन्दी वाचा भवन्मातृभाषा न स्यादुपेक्षिता।
हिंदी भाषा गिरः सर्वाः समुत्कर्ष हि नेष्यति।।
(पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रहगीता, १८/१७, ९/१०)

(४५) वही, वही, ये विशेषताएं स्थान-स्थान पर देखी जा सकती हैं।

(४६) अवरंगस्य राज्याद् या देववाणी विखण्डिता।
"हिन्दी" नाम्ना जजागार राष्ट्रभाषा कृता च सा।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/३८)

(४७) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/३९)
(ख) स्वदेशभाषामय मातृभाषां त्यक्त्वा प्रजा या. परदेशभाषाम्।
समाश्रयन्ते विपदो भजन्ते ततोऽत्र हिन्दीसुरगी. प्रचारः।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ६/१८)

(४८) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धीगीता, चतुर्दश अध्याय सम्पूर्ण।

(४९) (क) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/३३-३५।
(ख) सेवितुं च क्षतान् गान्धिर्देहलौमगमदद्भुतम्।।
(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ५/१३)

(५०) क्रीडाञ्च त्यक्त्वा सहपाठिमध्यात्
पित्रोः सुसेवा निनरा करोति।
(वही, वही, १/१७)
(ख) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/९८-१००)

(५१) नेटालसेवा परिपूर्य गान्धी
चिकीर्षरासीन्निजदेशसेवाम्।
सत्येव कार्ये पुनरावजेने—
त्युदीर्य तेभ्यो ह्यवकाशमाप।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/३७)

(५२) (क) जातौ तु भागद्वयेऽत्र चैको
जग्राहसम्बन्धिमिन परो न।
अतः पत्नौ चाय-जले न गान्धी
स्वश्रुवा भगिन्याश्च गृहे कदापि।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/१७)
(ख) समुद्रयात्रामुद्दिश्य स्वदिमार्गावलम्बिभिः।

ज्ञातिभिश्चेतरैरेतद् धर्मनिष्ठामवेदिभिः।।
बहिष्कृतो ऽपि नाखिद्यद् धृतिमान तत्त्ववित्स्वयम्।
धर्मागमोक्तिखिल शुद्ध्यर्थं व्रतमाचरत्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ६/२२-२३)

(५३) अथ मानधनाभिजीवनामनयावर्धक शिष्टिमज्जनात्।
न विना गतिरस्ति मे परा परिरक्ष्या सुखदासु मादृशाम्।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ७/३७)

(५४) त्यक्त्वाशु त न्यायमहालय ययौ प्राणास्त्यजेयुर्न हि मानमीश्वराः।
(वही, वही, ५/७)

(५५) न मे प्राणाधिक किञ्चिनतो दास्यामि तन्मुदा।
स्वराज्यादपि मे श्रेयो ह्यन्त्यजाना विमोचनम्।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, ७/२३)

(५६) अन्त्यजाना समुद्धारो नवैतानि व्रतानि हि।
भारतोत्कर्ष सिद्धयर्थमाश्रमस्य महात्मन ।
(पण्डिता क्षमा राव, सत्याग्रह गीता, ४/४)

(५७) अस्पृश्यता कलंक चेत्तन्नमाक्ष्यामि तदा हि मे।
जीवनस्यैह सार्थक्य जीवन्नति मृतोऽन्यथा।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, १२/९)

(५८) स्वस्यैव सेवाभिरतस्य हरेनोम्नतोन्त्यजत्वव्यपदेश मानः।
तस्यान्त्यवर्णस्य हरेर्जनेति संज्ञा विशुद्धा कृतवान्महात्मा।।
(श्री साधुशशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,१६/४८)

(५९) बहिष्कारोऽन्त्यजाना हि भारतस्यैव लान्छनम्।।

x x x x x x x x x ९

अनन्तेषा समुद्धारो धर्मो गुरुतम हि नः।
तदेव साधनं शक्य देशस्योद्धारसिद्धये।।
दुराग्रहमिमं तस्मादुत्सृज्य कृतनिश्चयाः।
हीनाना हितकाम्यार्थं प्रयस्यामो दिवानिशम्।।
विद्यालये मन्दिरे च निषिद्धास्नानन परम्।
निरशंक स्वीकरिष्यामो निष्कारण बहिष्कृतान्।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रहगीता, २/१८, २२-२४)

(६०) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३२, ३३

(६१) पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रहगीता, ७वाँ, ८वाँ, ११वाँ, ३४वाँ, ४३वाँ अध्याय सम्पूर्ण।

(६२) क्षमा धनु करे यस्य दुर्जनः किम् करिष्यति।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/१४)

(६३) (क) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १७/५५-५६

(ख) कृत्यं शोध्यं कारकं नैव शोध्यो।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/१८)

(६४) क्षमा वारानिधिर्गान्धि महात्मा साधु सत्तमः

(श्री साधुशरण मिश्र, गान्धिचरितम्, ११/६५)

(६५) (क) इत्यह परमात्मानं प्रार्थये च दिवानिशम्।

x x x x x x x x x

स एव संकटेऽस्माकं भविता मार्गदर्शकः।।

(पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजयः १/१६-१७)

(ख) वही, वही, १४/१५

(६६) हृदये रामनामेव सन्नेह्यक्य सुखिनी भव।

तदेव परमं दिव्यमौषधं रोगनाशनम्।।

(श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातसौरभम्, ३/२०)

(६७) परमात्मनि विश्वासाद्विश्वासो मे नरेष्वपि।

नरेष्वपि चविश्वासाद्विश्वासो परमात्मनि।।

(पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजयः, १/२८)

(६८) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ३/१९-२०, १६/३७

(६९) ईश्वर हि विना नान्यो रक्षकः पृथ्वीतले।।

(पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजयः, २५/८)

(७०) (क) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ७/४४-४५

(ख) पारिजातापहार, १९/५४

(ग) भगवत्प्रेरणामूलं ब्रतमेतदुपाश्रितम्।

भगवत्प्रेरणायां हि श्रद्धा भक्तिश्च मे परा।।

जीवेयमपि सेवार्थं यदि भगवती कृपा।

तं विना शरणं नान्यस्तदिच्छा को निवारयेत्।

(पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ७/४१-४२)

(७१) अन्तरात्मनिर्याण वाञ्छया न हि मन्यस्व को निदेशमन्वसम्।

मम मानसतो विनिस्सृता बहु मन्यैव सरस्वती:।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ७/४०)

(७२) कस्मिन्नपि प्राणिनि भेद बुद्धिर्न वा कदाचित्व विमानभास्य।

संदर्शतो लोकमिमं समस्तं समप्रवृत्तेः स्वमिवानुकालम्।।

हिन्दुर्यथास्ते यवनोऽपि तद्वत् ख्रीष्टानुयायी च जनोऽपरोऽपि।

तुल्येऽस्य दृष्टौ न भिदालवेऽपि समप्रवृत्ते विषमा न बुद्धिः।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १६/२९-३०)

(७३) (क) शत्रु च मित्रे च समा प्रवृत्तिर्दयालुता चापि न पक्षपातः।
शरण्यतापन्नजनेष्वितीदं महात्मना सौम्यनिसर्ग सिद्धम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ९/८)

(ख) धनाढ्या वा दरिद्रा वा समाः सर्वे परस्परम्।
(पण्डिता क्षमा राव, सत्याग्रहगीता, २/२७)

(ग) आरभ्य जन्मतो यस्य विश्वकल्याण कारिता।
सर्वेषु प्राणिवर्गेषु समत्वं निर्विशेषकम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १८/२९)

(७४) यस्य नास्ति हृदि जातु विभेद आत्मनश्च परतोऽपि कदाचित्।
मैत्रमेव विनिवृत्तविपक्षे भावमस्ति ननु यत्र विवृद्धम्।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १३/५५)

(७५) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ३/६३

(७६) (क) बलेन युष्माकमथाद्य भीम युद्धं समारब्धमलीन पापम्।
स्त्री पुंसभूमानि महान्त्यमुष्मिन्स्वीयानि नामानि निवेशयन्तु।।
(वही, भारत पारिजातम्, १९/३८)

(ख) भारतस्य समुद्धारः स्त्रीजनैरेव शिक्षितैः।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, १८/५)

(ग) स्त्रियो नेष्यन्ति पुरुषान्स्त्रियो राष्ट्रस्य दीप्तयः।
राष्ट्रधर्मस्य माहात्म्यं स्त्रियः संवर्धयन्ति हि।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १०/५३)

(७७) (क) सर्वथा रक्षणीयैव प्रतिज्ञा या मया कृता।
उत्पादितं हि तद्भंगात्पापं मा मा वर्धतामिति।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, २०/६०)

(ख) न भक्षेयं निरितं कदाप्यहन वा पिबेयं मदिरान् कर्हिचित्।
इयं जनन्या पुरतः प्रतिश्रुतिः कृता हि तां तदधयितुं हि शक्यते।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ५/२७)

(ग, न ह्येकटेकेति नरैः प्रतिज्ञा
त्याज्या भवेज्जीवननेय मोच्यम्।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ५/३७)

(७८) पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रह गीता, २/१२-१३)

(७९) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ५/३७)

(८०) (क) पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, १०/१-२, २८वाँ अध्याय । सम्पूर्ण।

(ख) समदुःख सुख शान्त- सिद्धार्थ इव मानितः।
मिन्ये वर्ष द्वयं कुर्वन् कर्तन बन्धनालयो।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, ७/२४)

(ग) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, अष्टादश सर्ग सम्पूर्ण

(घ) दीनानामेव कल्याणं परमं ध्यायता सदा।
महात्मा दिवारात्र कृतस्तेभ्य- परिश्रम-।।
(पण्डिता क्षमा राव, सत्याग्रहगीता, ८/४)

(८१) (क) पीड्यमानान् जनान् वीक्ष्य क्रन्दतो भयविह्वलान्।
प्रत्यज्ञासीत् महाबाहुः सतप्तः करुणालय-।।
यावद् भारतवर्षस्य स्वातन्त्र्यं नाधिगम्यते।
तावत् पदार्पणं नात्र कुर्य्यमितद् व्रतन्मम।।
(श्री साधुशरण मिश्र,श्रीगान्धिचरितम्, १५\१०६-१०७)

(ख) वही, वही, १०/६७

(ग) महात्मा तु सर्वेषा दुःख बन्ध विमुक्तये।
उपायं चिन्तयित्वैव समाहूता सहस्रशः।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी गीता, १/२८)

(८२) (क) क्लेशार्तांना परं मित्रं सत्यवाग् गान्धि वंशज ।
बान्धवाना विमोक्षार्थमाफ्रिका देशमव्रत्
(पण्डिता क्षमा राव, सत्याग्रहगीता, १/१६)

(ख) अफ्रीका दक्षिणा यस्या दशा हिन्दुनिवासिनाम्।
तस्मै न रोचते तस्मात् शोद्धुं तामुपचक्रमे।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/४६)

(८३) (क) पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/२१-२२

(ख) चम्पारणस्य लोकानां नीतिभिर्दलितात्मनाम्।
दशामशिष्टषत् तत्र हृदयोनमाश्रिनीन्तदा।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम् ८/१६०)

(८४)(क)'राजकोटाद'गतो मुम्बा "वृत्त" "नेटाल" दुर्गतिः।
ज्ञापनार्थ समामेका तत्र गान्धी चकार वै।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, २/८१)

(ख) वही, वही, २/४१

(८५) (क) यो मन्यते लोक सुखं स्वसौख्यं तदीयदुःख निजदुःखमेव।
यत्रासीन् नृपतिः पुराथ परमोदारः सतां पूजको,
वात्सल्यान् निजसततीरिव सदा सम्यक प्रजा पोषयन्।
स्तैन्यादिप्रभृतेविपत्तिनिवहाद् रक्षन् स सर्वात्मना,
सदधर्मेष्वनुशिक्षयन्नु तथा स्नेहानुवृतयनिशम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ९/५५, १०/३)

(ख) विश्वबन्धुरयमेति महात्मा दुःखितामरतरुः करुणार्द्र।
यत्सुख हि जनतासुखमेय दुःखमेय निजमस्तितदीयम् ।।
(वही, वही १३/५४)

(८६) इमेऽन्त्यजा हिन्दुषु दुःखिता हि
तेषा प्रियेऽहं नहि कापि शंका।
एषा पृथक्त्व न कथापि भूयाद्
एष्य हि कार्यं पण एष नान्य ।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ७/८)

(८७) (क) धन दारा वपु सौख्यमात्मा ज्ञानन्तपोखिलम्।
स्वाध्यायश्चेति भवता लोकोपकृतयेऽर्पितम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/१९५)

(ख) स्वकर्तव्य नरेणद व्रत कष्टतरमहत्।
स्वार्थ ममत्व त्यक्तवेह लोककल्याण कारणात्।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १३/२७)

(८८) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, २/८१

(८९) वही, वही, २/८४

(९०) वही, वही, १/१८, २/९५ पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजयः ५०/७

(९१) यश्चापूर्वगुणैर्युक्तः पूज्यतेऽखिलभारते।
सता बहुमतो देशे विदेशेप्वपि मानितः।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रहगीता, १/७)

(९२) स्वातन्त्र्यसदृशं नास्ति सुखं किमपि भूतले।
(श्री साधुशरणं मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ६/३०)

(९३) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ३/३०, ३५-३७

(९४) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १३/१२

(९५) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ६/१

(९६) वही, पारिजातापहार, १८/११३-११४

(९७) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ४/२९

(९८) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय॰, ५४ अध्याय सम्पूर्ण।

(९९) गान्धी जी की इस चारित्रिक विशेषता का दर्शन सभी महाकाव्यों में स्थान-स्थान पर होता है।

(१००) नायको न हि कोप्यन्यो विद्यते जगती तले।
प्रेम्णा यस्य वशीभूता लोका॰ स्युरनुयायिनः।।
(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय॰, १४/११)

(१०१) (क) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, एकोनविंश सर्ग सम्पूर्ण,
श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १८/१४५, एकोनविंश सर्ग सम्पूर्ण।

(ख) आसीच्छ्रीमानसो नेता भुवो राष्ट्रहितैषिणाम्।
वशीचक्रे नृणां कोटीरेष बोधेश्च कर्मभि ।।
जीवनं चरितं चास्य स्यास्यत स्मृतिरक्षिणी।
लोकोत्तरमहिम्नोऽस्य नित्यं युग युगान्तरे।।
(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य-विजय॰, ५३/८४-८५)

(ग) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५२, ५४, ५५

(१०२) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १\४४

(ख) स फ्रेन्चभाषा मधुरामतीव लैटिनिगरं चापि समध्यगीष्ट।
कालेन तैनेव समस्तविद्यमहापगानाशपदं प्रतीच्छन्।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्,)

(१०३) (क) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ६/११, ७/३-८,
श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्,१९/५३-५५

(ख) समाध्यक्षपदाध्यासी श्रीमौलाना महोदय॰।
राष्ट्रसंघसभाकार्यमारब्धुं सज्जितः स्थितः।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, ४०/१०)

(१०४) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, २०/५, १८/६३

(१०५) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ३/५६

(१०६)श्री गोखले भारतमाशु कर्तु
देशं स्वतन्त्रं यतते मनस्वी।
धारासभायां मिलितं धनं यत्
स्वीये तु कार्येव्यतीतं न तेन।।
(वही, वही, ३/५७)

(१०७) (क) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १४/४६

(ख) गोपालकृष्णो जगतीतलस्थ विद्वत्सुमान्यः प्रथमोयमासीत।
(साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ७/२२)

(१०८) वही, वही, १२/६५-६६, पारिजातापहार, २२/६८-६९

(१०९) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/३३

(११०) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १८/२९

(१११) जवाहरस्तत्सुतोऽपि सुखभोगे विरागवान्।
देशभक्त्याप्युज्ज्वलया भारतेऽत्र विराजते।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १४/३३)

(११२) प्रधानमन्त्री पदस्य योग्यः सर्वात्मनार्थं मम भाति बुद्धौ।
अधिष्ठितं स्यादमुना पदं तत् सुपूजितं गौरवमाशु यायात्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १६/६९)

(११३) (क) वही, वही, १७/९, १४

(ख) सता पिता राष्ट्रपिता जगत्या, विमानमारुह्य दिवंगतोऽभूत्।
जवाहरो———-वक्षो विनिघ्नश्च भृशं रुरोद।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५२।

(११४) (क) पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ११/३

(ख) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, २०/५

(११५) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १४/२९-३०

(११६) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १५/९४

(११७) पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ९/१-२

(११८) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १९/४४

(११९) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ८/१०६

(१२०) अन्वर्थनामा राजेन्द्रो मेधावी बुद्धिसागरः।
शान्तिमूर्तिः महात्यागी शरीरीवोत्तमं तपः।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/८७)

(१२१) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापाहार, २०/६

(१२२) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १६/७४-७७

(१२३) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २/१०२

(१२४) वही, वही, १५/५६, श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १६/७१

(१२५) (क) श्रीसाधुशरण मिश्र श्री गान्धिचरितम्, ११/११०

(ख) यः पूरुषो लौहमयो जगत्या ख्यातः सदा दीनजनानुकम्पी।।
(वही, वही, १६/७२)

(ग) वही, वही, ७०-७३

(१२६) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १/३४,४०

(१२७) वही, वही, १८/२०८, पारिजात सौरभम्, १४/१००, २/१०३

(१२८) स्पष्टमेव सदा वक्ति सत्यप्रेमसुधामृत-।
वञ्चनार्चना चुञ्चुनास्ति सर्दारवल्लभ-।।
(वही, वही, १४/९९)

(१२९) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १५/८९-९१

(१३०) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १२/५९

(१३१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५२

(१३२) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २/९१-९५

(१३३) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/९५

(१३४) वही, वही, १२/७०-७५

(१३५) वही, वही, १२/७९, ७७, पारिजात सौरभम्, १९/८२

(१३६) वही, वही, १२/७८

(१३७) पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४६/२९-३२

(१३८) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, २२/१२-१४

(१३९) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/८१

(१४०) मैंने "फिरोज" स हिमालयं गिरिं।
(वही, वही, २/८४)

(१४१) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ४/२६

(१४२) वही, वही, पारिजातापहार, १९/७७

(१४३) वही, वही, १९/७८

(१४४) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/८४

(१४५) श्री निवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, २४/३०-३१, श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,७/६४-६५

(१४६) वही, वही, ४४/४५

(१४७) (क) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १४/४१
(ख) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ८/७५-८१

(१४८) वही, वही, ८/२३-२४, १५/५७

(१४९) पण्डिता क्षमा राव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ३२/२३-२४

(१५०) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ११/५४-५७,
श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम् १९/७७-७८,८७,८९

(१५१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,७/११,९,१२

(१५२) पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, १७/१-२
(१५३) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ११/२६-३२
(१५४) पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रहगीता, ३८/१-७
(१५५) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, २०/८-१०, पारिजात सौरभम्, , २/७२-७४, १९/३४
(१५६) श्रीमद् भगवदाचार्य पारिजात सौरभम्, २/१००, पारिजातापहार, २०/१० श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १२/६४
(१५७) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १४/९०, २१/२९-३०,२२,३५
(१५८) वही , भारतपारिजातम्, २२/३८, ३९,४५-४७
(१५९) वही, पारिजातापहार, १८/२३२-२३३
(१६०) वही, पारिजात सौरभम्, १९/९६
(१६१) वही, वही, १९/१०२
(१६२) वही, वही, १९/१०४
(१६३) वही, पारिजातापहार, २०/२५-२७
(१६४) (क) कस्तूरी बन्दिनी साम्बा "साम्प्रतयास्तटे स्थिता।
यर्वदा भागला तूर्णं यतिदर्शनकाक्षया।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/२५)
(ख) पतिप्रेम पराधीना मत्यनुज्ञानुवर्तिनाम्।
x x x x x x x
आराधयन्ती पतिदेवताया हितायनित्य कुलदेवता सा।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ३/८३, ४/२०)
(ग) वही, पारिजातापहार, २०/३, पारिजात सौरभम्, ३/६
(१६५)———पतिव्रता सामीत रमणीकुलभूषणम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/९०)
(१६६) कस्तूराम्बा तस्य कण्ठे सुमानाम् मालोधृत्वा प्रेषयामास कान्ताम्।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/५०)
(१६७) "नो जानेऽहं" "तुनारो कलहतु, नितरा मत्समाना सुवीरा"।
(वही, वही, ४/६८)
(१६८) (क) सर्वदा सर्वकार्येषु सा पत्युः वंदिता जनै.।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, २०/५०)
(ख) पतिव्रतायै पतिदेवताया अजिह्मवृत्या अतिथि प्रियायै।
कस्तूरदेव्या अपि चैष वासोऽस्पृश्यैः सहारोचत् नैव किञ्चित्।।
(श्रीमद् भगवदाचार्य,-भारतपारिजातम्, ६/३७)

(१६९) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ३/४०

(१७०) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, २०/५१

(१७१) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १/५५-६३

(१७२) पश्चात् प्राप्त सा "सरोजों" प्रसिद्धा
सैनापत्यं स्वीचकाराशु सङ्घे।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धि गौरवम्, ६/५०)

(१७३) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २२/१५

(१७४) वही, वही, २२/१६-२२

(१७५) वही, वही, २२/१८

(१७६) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १३/१९,५०

(१७७) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ४/२-३

(१७८) वही, वही, ४/९

(१७९) वही, वही, ३/६, ३३

(१८०) वही, वही, ३/६, ४/१२,२०, ७/१, १६/३५

(१८१) वही, पारिजातापहार, १/६७,७०

(१८२) वही, वही, १/७१-७२

(१८३) वही, वही, १५/१, ३-६, १२

(१८४) पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रह गीता, २७/२-४

(१८५) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १/४०,४६-४७, पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, २७/५-३०

(१८६) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम् ८/३, पण्डिता क्षमराव, स्वराज्य विजय १/२-३

(१८७) श्रीमद् भगवदाचार्य पारिजातापहार, १८/६८

(१८८) पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रहगीता, ४१/१-२

(१८९) पण्डिता क्षमा राव, उत्तर सत्याग्रह गीता, ४१/४५-४६

(१९०) पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजय , १/३९-४०

(१९१) श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १८/३४, पण्डिता क्षमा राव, स्वराज्य विजय ५३/१०, श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री *गान्धिगौरवम्, ८/५१*

(१९२) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १९/३२,३९

(१९३) (क) कांग्रेस संस्थापको "ह्यूम" आसीद् गौरांगनायकः।
भारतीयास्तमाश्रित्य एवं राज्यञ्चकिरेञ्जसा।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ५/२६,

श्री निवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ११/१३-१४

(ख) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २३/८

(१९४) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १९/१-४, २०/१४,
श्री शिव गोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ८/१०

(१९५) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १९/२५-२७, २३/६६-७१,
२५/१, २६/१-२

(१९६) वही, वही, २५/१२-१४, पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह
गीता, ४३/१२-१७

((१९७) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजातापहार, २३/७९-८०, २५/३०,३३

(१९८) वही, वही, १९/४२-४४, पारिजात सौरभम्, १/३५

(१९९) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ३/६६

(२००) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २८० ,४५

(२०१) वही, वही, १९/३५-५२ उत्तर सत्याग्रह गीता, १७/१०-११

(२०२) वही, वही, १९/५-१०

(२०३) वही, भारत पारिजातम् ९/३६-३७

(२०४) पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, भारतराष्ट्ररत्नम्, ५/१०.३

(२०५) आचार्य मधुकरशास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सख्या-४३

(२०६) पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, भारतराष्ट्ररत्नम्, ५/१०,२५

(२०७) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, १५२-१५३

(२०८) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं.-१५२,१५३

(२०९) वही, वही, पद्य सं.-२१,२५-२८

(२१०) श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-४६-४७

(२११) (क) श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-२०

(ख) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं.-२२

(२१२) वही, वही, पद्य सं.-२५-२६

(२१३) वही, वही, पद्य सं.-४५

(२१४) वही, वही, पद्य सं.-३९

(२१५) यह विशेषता सभी खण्डकाव्यों में दृष्टव्य है।

(२१६) (क) श्रीधर भास्कर वर्णेकर, रामगीता, सम्पूर्ण।

(ख) यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम्, पद्य सं.-२०

(२१७) डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं.-८२-८३

(२१८) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं.-१२

(२१९) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य स.-१३
(ख) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, ९
(२२०) (क) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं॰-१३
(ख) श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं॰-२१-२३
(२२१) डॉ॰ किशोर नाथ झा, बापू,
(२२२) वही, वही, पृ॰सं॰-४८
(२२३) वही, वही, पृ॰सं॰-१०
(२२४) वही, वही, पृ॰सं॰-१०
(२२५) वही, वही, पृ॰सं॰-६
(२२६) डॉ॰ रमेश चन्द्र शुक्ल, चारु चरित चर्चा, पृ॰स॰-१३७-१३८
(२२७) वही, वही, पृ॰सं॰-१३७-१३८
(२२८) वही, वही, पृ॰सं॰-१३९

(२२९) वही, वही, पृ॰स॰-८१-८२
(२३०) वही, वही, पृ॰सं॰-५१
(२३१) डॉ॰ किशोर नाथ झा, बापू, पृ॰स॰-४८
(२३२) वही, वही, पृ॰सं॰-४९,५२
(२३३) वही, वही, पृ॰सं॰-१७
(२३४) वही, वही, पृ॰सं॰-६६-६८
(२३५) वही, वही, पृ॰सं॰-१०
(२३६) वही, वही, पृ॰सं॰-२२
(२३७) डॉ॰ रमेशचन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ॰स॰-२३४
(२३८) डॉ॰ किशोर नाथ झा, बापू, पृ॰स॰-७
(२३९) वही, वही, पृ॰सं॰-८२
(२४०) वही, वही, पृ॰सं॰-१२
(२४१) वही, वही, पृ॰सं॰-४४
(२४२) वही, वही, पृ॰सं॰-४४
(२४३) वही, वही, पृ॰सं॰-७३-७४
(२४४) डॉ॰ किशोर नाथ झा बापू, पृ॰स॰-८०-८१
(२४५) वही, वही, पृ॰सं॰-५३-५४
(२४६) डॉ॰ किशोर नाथ झा, बापू, पृ॰सं॰-५४-,६६
(२४७) डॉ॰ किशोर नाथ झा, बापू, पृ॰सं॰-७०,७३

(२४८) डॉ. किशोर नाथ झा, बापू, पृ.सं.-२२,२१

(२४९) (क) वही, वही, पृ.सं.-७१

(ख) द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च, पृ.सं.-११

(२५०) राजकण्ठी बोम्मलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः, दृश्य-२,

(२५१) वही, वही, दृश्य-११

(२५२) वही, वही, दृश्य-११

(२५३) राजकण्ठी बोम्मलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः, दृश्य-८

(२५४) वही, वही।

((२५५) वही, वही।

(२५६) (क) मथुराप्रसाद दीक्षित, गान्धि विजय नाटकम्, प्रथमोङ्कः, पृ.सं.-७-८

(ख) बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय ,

(२५७) मथुराप्रसाद दीक्षित, गान्धिविजय नाटकम्, प्रथमोङ्क-, पृ.सं.-३

(२५८) वही, वही, पृ.सं.-५-६

(२५९) वही, वही, पृ.सं.-६-७

(२६०) मथुराप्रसाद दीक्षित, गान्धि विजय नाटकम्,

द्वितीयोऽङ्क-, पृ.सं.-२७-२८

(२६१) बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः, दृश्य-५

(२६२) वही, वही, दृश्य-३

(२६३) वही, वही

(२६४) वही, वही

(२६५) मथुराप्रसाद दीक्षित, गान्धिविजय नाटकम्,

द्वितीयोऽङ्क , पृ.सं.-२७-२८

(२६६) बोम्मकण्ठी, रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः,दृश्य

(२६७) वही, वही, दृश्य-८

(२६८) राजकण्ठी बोम्मलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः, पृ.सं.-१०

(२६९) वही, वही, दृश्य- ३

महात्मा गान्धी पर आधारित काव्य में वर्णन विधान

वर्णनात्मकता अथवा किसी विषय का विवेचन काव्य का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विषय स्वीकारा गया है क्योंकि कवि की कार्यक्षमता इस तथ्य के माध्यम से आकी जा सकती है कि वह किसी वस्तु का विवेचन किस सौन्दर्यपूर्ण एवं स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत करता है।

प्रत्येक सहृदय सामाजिक नित-नूतन कल्पनाओं और विचारों के सागर में गोते लगाता है, उसका मन प्रतिक्षण कोसों दूर भागता है। अपने इन विचारों को वह किसी न किसी के समक्ष व्यक्त करना चाहता है, लेकिन वह अपनी बात को पूर्णरूपेण व्यक्त कर पाने में उसी प्रकार असमर्थ होता है, जैसे कोई गूँगा व्यक्ति फल का आस्वादन करके स्वयं ही प्रसन्न हो लेता है और अपने मन में जन्म लेने वाले भावों को या अपनी इच्छा को हाव-भाव द्वारा व्यक्त करने का लाख प्रयत्न करता है लेकिन असफल ही रहता है। वह अपने विचारों तथा अनुभवों का प्रसारण या तो अपने मित्रों तक ही कर पाता है अथवा एक दो स्थलों पर भाषण आदि के द्वारा थोड़े विद्वज्जनों पर; लेकिन कवि लोकोत्तर-वर्णन करने में निपुण होता है। वह अपने अनुभवों से स्वयं ही लाभान्वित नहीं होता है अपितु समस्त साहित्य प्रेमियों को ही नहीं कहना चाहिए कि समस्त मानव जाति को उनसे परिचित कराकर उनका मार्ग प्रशस्त करता है।

कवि में यह सामर्थ्य होती है कि वह अपने से अभिन्न रूप से सम्बन्धित रहने वाले चारों ओर के व्यवहार, घटनाओं, क्रियाओं, परिवर्तनों और परिस्थियों से प्रभावित होकर सर्वप्रथम उन्हें अन्तर्मन में संजोकर उन्हें काव्य रूप में परिणत कर पाने में समर्थ हो पाता है।अतः यहाँ पर देखना यह है कि कवि वस्तु वर्णन में कितना निपुण है। इसके लिए हमें सर्वप्रथम यह स्पष्ट करना आवश्यक हो जाता है कि वर्णन कौशल के अन्तर्गत आने वाले प्राकृतिक वर्णन, वैकृतिक वर्णन, अन्य प्रकारक वर्णन हैं क्या?

प्राकृतिक वर्णन—

प्रकृति एक ऐसी रचना है जिसका निर्माण स्वयं ब्रह्मा के द्वारा हुआ है। उसमें प्राणिमात्र का किञ्चित् भी योगदान नहीं होता है। "प्रकृति" शब्द प्र उपसर्ग ~

कृ धातु में क्तिन्[1] प्रत्यय जोड़ने से निर्मित हुआ है। जिसका तात्पर्य है प्रकृष्ट कृति अर्थात् विधाता की सर्वोत्कृष्ट रचना।

प्रकृति मानव की चिरसंगिनी है। चाहे पुराण हो या महाभारत, वेद हो या रामायण हो कोई भी ऐसा ग्रन्थ नहीं है जोकि प्रकृति के मनोहारी दृश्यों से युक्त न हो तथा महान् साहित्यकारों की लेखनी भी प्राकृतिक वर्णन करने का लोभ संवरण नहीं कर सकती। कालिदास ने तो प्राकृतिक वर्णन के आधार पर "मेघदूत" नामक काव्य लिखकर ही साहित्य जगत् में कीर्तिमान स्थापित कर लिया। माघ का प्रभातकालीन वर्णन भी कम प्रभावशाली नहीं है।अतः कवि निदमित रूप से होने वाले सूर्योदय और सूर्यास्त के मनोमुग्धकारी दृश्य से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता है। चिड़ियों की चहचहाट में, कोयल के कूजन में, मयूर के नृत्य में, झरनों की झर-झर में, पत्तों की फड़फड़ाहट में, भ्रमरों के मधुर गुञ्जार में मेघ की गर्जना में, सागर की लहरों में नदियों की कलकल ध्वनि में, पक्षियों के कलरव में, शीतल मन्द सुगन्धि युक्त प्रवहमान वायु में उसे एक विशिष्ट प्रकार की अनुभूति होती है और वह स्वानुभूत दृश्यों को काव्य रूप में परिणत करने के लिए लालायित हो उठता है।महात्मा गान्धी परक संस्कृत काव्य

वैकृतिक वर्णन—

इसके अन्तर्गत आने वाले पदार्थों का सम्बन्ध प्रकृति से ही होता है, लेकिन मानव का भी सहयोग उसमें अपेक्षित रहता है। वह प्राकृतिक वस्तुओं में अपनी कुशलता से चार-चाँद लगा देता है। बाण के द्वारा किया गया उज्जियनी वर्णन इसका ज्वलन्त उदाहरण है। इसके अन्तर्गत आने वाले पदार्थ देश, नगर, गाँव, बन्दरगाह, भवन आदि हैं।

अन्य तत्त्वों के समान ही वर्णन कौशल का समावेश महाकाव्य में अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक होता है। इसमें भी प्रत्येक कवि की अपनी पृथक्-पृथक् विशिष्टता होती है। कोई प्रकृति का सुकुमार वर्णन प्रस्तुत करता है तो कोई भयावह दृश्यों को चुनता है। कोई प्रकृति के अधिकाधिक पक्षों को प्रस्तुत करता है तो कोई प्रकृति के कुछ ही पक्षों को प्रस्तुत करके अपनी चतुरता का परिचय दे देता है।

सर्वप्रथम गान्धिपरक महाकाव्यों के आधार पर वर्णन कौशल प्रस्तुत है।

प्राकृतिक वर्णन—

सूर्य—

प्रकृति के समस्त उपादानों में सूर्य का महत्त्व अत्यधिक है। वह व्यक्ति में आशा एवं उत्साह भरता है, उसे कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। सभी महाकाव्यों में सूर्य का उल्लेख हुआ है। यद्यपि वे स्थल अल्पतर हैं लेकिन हैं

अत्यधिक प्रभावपूर्ण। इस वर्णन से कवियों की प्रतिभा का परिचय मिलता है। महात्मा गाधी को भरुच से लौटते हुए देखकर सूर्य सोचता है कि जब अनन्त किरणों वाले भगवान् ही यहाँ से जा रहे हैं तो अब मेरे यहाँ रहने से क्या लाभ है [२]। एक स्थल पर समुद्री तूफान के पश्चात् उदित होने वाले सूर्य का उल्लेख है जोकि भविष्य में उत्पन्न होने वाली बाह्य तूफानों की स्थिति में गान्धी को विषम परिस्थिति में जूझने का साहस प्रदान करता है [३]। सूर्यास्त से पूर्व महात्मा गाधी की शव यात्रा प्रारम्भ हुई [४] कुछ स्थलों पर उसका उल्लेख आशा का सञ्चार करने के लिए और उपमान के रूप में किया गया है [५]। श्रीगान्धिचरितम् में किया गया सूर्य वर्णन इतना अधिक उत्कृष्ट है कि मैं यहाँ पर उसका वर्णन करने का लोभ सवरण नहीं कर पा रही हूँ। महात्मा गाधी समस्त विश्व के कल्याण के विषय में सोच रहे हैं तभी अन्धकार समूह को भेदता हुआ नवीन किरण समूह को बिखेरता हुआ सूर्य उदित हो गया। सूर्य के रक्तिम वर्ण हो जाने पर अन्धकार और भय समाप्त हो गया है। सम्पूर्ण विश्व के नेत्र की किरणों से चोटियाँ मनोहर हो गई जैसे तपे हुए स्वर्ण की कान्ति से युक्त हों और सारा ससार स्वर्ण पर्वत सा प्रतीत होने लगा और कमलों के प्रस्फुटित होने के साथ ही अपनी-अपनी क्रियाओं में प्रवृत्त होने की अभिलाषा करने लगा। वह सूर्य जैसे खिले हुए नवीन पुष्पों से मुनिजनों की अभ्यर्थना कर रहा हो। गंगा को जल से परिपूर्ण और चन्दन युक्त बना रहा हो। भक्ति पूर्वक सुगन्धित पुष्प से युक्त अर्घ्यदान देने वाले उस सूर्य की जय हो। रात्रि के आगमन पर जो संसार भयभीत हो जाता है वही किरण समूह के विकीर्ण होते ही भय रहित और विवेकवान् हो जाता है। जो चकवा-चकवी युगल सम्पूर्ण रात्रि वियोग से उत्पन्न विरह रूपी अग्नि की ज्वाला में तपता है तथा व्यथा का अनुभव करता है वह सूर्य उदित होते ही आनन्दमग्न हो जाता है। रात्रिभर इस ससार में अधकार छाया रहता है; जिससे वीरजनों का मन भी भावी आशका से भर उठता है, वही सूर्योदय के होने पर अमन्दानन्द सन्दोह की प्राप्ति करते हैं और शिशुओं का गन्तव्य कण्टक विहीन हो जाता है। सेनापति के सदृश सूर्य किरण रूपी सेना से युक्त घोड़ो से जुते हुए रथ से शत्रु रूपी अंधकार को नष्ट करके आकाशरूपी युद्ध भूमि में विराजमान है। मदमस्त भ्रमर समूह कमल को ग्रहण करने की इच्छा से सूर्य की किरणों के समूह से कमल को प्रस्फुटित देखकर कानो को प्रिय लगने वाला शब्द करते हुए उसकी सुगन्ध से लुब्ध बना सूर्य को ही स्वर्णिम कमल समझ बैठा। रात्रिकाल समाप्त हो जाने पर चकवा-चकवी हर्षित हो गए, नील कमल वन की शोभा को द्विगुणित करता हुआ शीघ्र ही अपनी किरणों से इस सम्पूर्ण विश्व का बोध कराता हुआ अन्धकार समूह को नष्ट करके सूर्य का आगमन हो गया है। वह विशाल स्वर्णमय मूर्ति रूपी रथ चक्र अरुण रूपी सात अश्वसारथि से युक्त है। उसकी कान्ति अलौकिक एवं लोकोत्तर है। सूर्य की समस्त क्रियाए विचित्र होती है। सूर्योदय के

परिणाम स्वरूप कहीं पर मन को आह्लादित करने वाला भ्रमर समूह का गायन सुनाई दे रहा है और कहीं पर कमल समूह विकसित हो रहा है और कहीं पर मन्द-मन्द वायु प्रवहमान हो रही है। अपनी किरण समूह से समस्त विश्व को प्रकाशित करते हुए भारत का भाग्य रूपी सूर्य उदित हो गया। भारत को स्वतन्त्रता रूपी विजय लाभ हुआ जिससे समस्त लोग प्रसन्न हो गए। अन्धकार का विनाश करके समस्त प्राणियों को जीवन्तता प्रदान करने वाले संसार के नेत्र स्वरूप भगवान् स्वरूप की जय हो। जिसके उदय और अस्त होने की प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप दिन, रात और काल की व्यवस्था होती है और उसके कारण ही तिथि, माह, का विभाजन होता है वह सूर्य शोभायमान हो रहा है। सूर्य का प्रकाश पाकर ही चन्द्रमा शीतलता और कान्ति प्रदान करता है जिससे वह समस्त प्राणियों को अमन्दानन्द सन्दोह की अनुभूति कराता है[६]। महात्मा गाधी अपने अनुयायियों को शान्तिपूर्वक सत्याग्रह करने का उपदेश देकर अपनी कुटिया में चले गए। महात्मा गाधी के वचनों ने उन्हें उसी प्रकार प्रभावित कर दिया जैसे कि सूर्य की किरणें लोगों के मन को आकृष्ट करती हैं। उनके कुटिया में प्रविष्ट होने के साथ ही सूर्य पश्चिम दिशा को रक्तिम बनाता हुआ अस्ताचल की ओर चला गया[७]।

महात्मा गाधी की मृत्यु हो जाने पर कवि कल्पना करते हैं कि सूर्य भगवान् इस ससार को अन्धकारमय बनाकर कहाँ जा रहे हैं। भारत के भाग्यविधाता रूपी सूर्य के अस्त हो जाने से समस्त संसार अन्धकाराच्छन्न हो गया[८]। आकाश में स्थित सूर्य के बादलों से ढक जाने पर अन्धकार छा जाने से समस्त प्राणिवर्ग व्याकुल हो जाते हैं और जब वायु का वेग बादलों को हटाकर प्रकाश फैला देता है जिससे सबको सुख की अनुभूति होती है[९]। जिस सूर्य का नाम लेने से समस्त विपत्तियों से छुटकारा मिलता है उसके ही अस्त होने पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ता है[१०]।

चन्द्रमा—

सूर्यास्त हो जाने पर चन्द्रमा उदित होता है वह कैसा अनुपम लगता है इसका वर्णन भी अत्यधिक मनोहारी है। जब सम्पूर्ण जगत् अन्धकाराच्छन्न हो गया तभी उज्ज्वल किरणों से युक्त पूर्ण चन्द्रमा उदित हो गया। सूर्यास्त होने से जो अन्धकार समूह प्रसन्न हो गया था वह कान्तिमान् चन्द्रमा को देखकर हताश हो गया। दिनभर सूर्य की तपती किरणों से जो संसार सतप्त हो गया था वह चन्द्रमा के अमृत वर्षण से अत्यधिक उल्लसित हो गया। नक्षत्र समूह से भली-भाँति पूजित होती हुई रात्रि चन्द्रमा के बिना उसी प्रकार शोभायुक्त नहीं होती है जैसे कि पति के बिना रमणी की शोभा नहीं होती है। कपूर और बर्फ की कान्ति के सदृश अमृत वर्षा करने वाले चन्द्रमा से रात्रि शोभायमान हो रही है। कर्पूर सदृश शुभ्रकान्ति से सारा संसार धवलित हो रहा है। अमृत सदृश किरणों से रात्रि को सींचता हुआ चन्द्रमा नेत्रों को सुख पहुँचा रहा है।

आकाश में चन्द्रमा के उदित होने पर समुद्र की लहरें हिलोरे लेने लगीं और वह अत्यधिक आनन्द प्रदान करने लगीं। चन्द्रमा की श्वेत किरणों के द्वारा कुमुद पुष्प का आलिंगन देखकर कमलिनी उससे क्रुद्ध होकर उसके प्रति प्रसन्नता व्यक्त नहीं कर रही है। चन्द्रमा की किरणों से कुमुद पुष्प खिल गए हैं। यह देखकर नीलकमल पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा है। अर्थात् चन्द्रोदय होने पर कुमुद पुष्प प्रफुल्लित हो गए हैं और कमल मुर्झा गए हैं। रात्रि व्यतीत हो जाने पर मेरी भी सूर्य की किरणों के साथ क्रीड़ा होगी इस आशा में कमलिनी रक्तिम वर्ण की हो गई है। चन्द्रमा आनन्द रूपी अमृत की वर्षा करने लगा। समस्त इन्द्रियों के भगवान् चन्द्रमा के उदय होते ही सम्पूर्ण विश्व आनन्द रूपी अमृत सागर की लहरों में डूब गया।

पश्चिम दिशा क्षण भर में ही क्रोधित होकर लाल हो गई। चन्द्रमा की ज्योत्स्ना से युक्त नक्षत्र समूह प्राणियों को आनन्द प्रदान करने वाला और प्रीति को बढ़ाने वाला स्थान है। कभी तो चन्द्रमा की ज्योत्स्ना चकोर पक्षी को उल्लास प्रदान करती है और कभी चकवा-चकवी को कामदेव की वाणाग्नि से व्याकुल बना देती है। कभी चन्द्रमा की किरणों को कुमुद पुष्प का आलिंगन करते हुए देखकर कमलिनी अपनी सौत के ऐश्वर्य से झुक जाती है[११]।

सूर्य और चन्द्रमा का इस प्रकार उदय और अस्त होना ससार को उन्नति और अवनति का ज्ञान कराता है। यह क्रम चक्र की भाँति चलता रहता है। इससे समस्त वस्तुओं के नियमित रूप से परिवर्तन का परिज्ञान होता है[१२]।

अपनी शीतलता से लोगों को आह्लादित करने वाले चन्द्रमा का उल्लेख एक स्थलपर उपमान के रूप में हुआ है।

"विडला" भवने स राजते
कु (क्रु) शमर्यक उरः क्षतैर्वृतः।
यमुनाजलसिक्त रवादिना
वृतदेहो शुभमे च चन्द्रवत्।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/५३)

सन्ध्या वर्णन

सन्ध्या वर्णन भी महाकाव्यों में विस्तार से नहीं हुआ है। इसका वर्णन जहा भी हुआ है केवल नाम मात्र के लिए। सूर्यास्त के पश्चात् सन्ध्या अपना साम्राज्य स्थापित करने लगी। महात्मा गांधी के भरूच छोड़कर जाने पर न केवल स्त्री पुरुषों ने अपितु सन्ध्या ने भी उनके प्रति अपना प्रेम व्यक्त किया[१३]। ३० जनवरी सन् १९४८ की सन्ध्या को महात्मा गांधी मनु और आभा के कन्धे में हाथ रखकर सभा में जा रहे थे तभी नाथूराम गोडसे द्वारा भारत रूपी उपवन से पारिजात रूपी महात्मा गाधी को विलग कर दिया गया। ३१ जनवरी की सन्ध्या को महात्मा गाधी

का शवदाह हुआ[१४]।

नदी

उत्तरसत्याग्रह गीता में साबरमती नदी का उल्लेख मानवीयकरण के रुप में हुआ है। जब महात्मा गाधी कारागृह से विमुक्त होकर साबरमती नदी के तट पर अवस्थित आश्रम में जाते हैं तब वह नदी उनके आगमन से प्रसन्न होकर पूर्णत प्रवाहित होकर खुशी से नृत्य करने लगता है। यही नदी उनके वियोग में सूख गई थी। उस नदी को इस तरह भरा हुआ देखकर ऐसा लग रहा था मानो वह किसी सन्यासी का स्वागत करने के लिए खडी हो[१५]।महात्मा गाधी नमक निर्माण के सन्दर्भ में जब भरूच पहुचे तब सर्वप्रथम उन्होंने नर्मदा नदी का प्रत्यक्षीकरण किया। जगत् विख्यात, समस्त पापों का विनाश करने वाली उस पूज्या नदी को तरंगें उन्नत हो रहीं थीं जिससे ऐसा लग रहा था कि वह नदी उनका स्वागत कर रही हो। यही नदी पापपूर्ण और दुर्गुणों से युक्त मन को भी पावन बना देती है और सदैव संसार के कल्याणार्थ तत्पर रहती है। अत्यधिक सतप्त लोगों को शान्ति प्रदान करने के कारण ही यह अपने नाम को सार्थक बना रही है। इसका स्पर्श पाकर निकृष्ट प्राणी को पुण्य मिलता है। नाम लेने से आनन्दानुभूति होती है। उसकी उन्नत तंरगों को देखकर ऐसा आभास हो रहा है कि प्रेमातिरेक के कारण जैसे माता काफी समय से बिछुडे हुए अपने पुत्र को अपनी बाहें फैलाकर अपने अंक में समेट लेने के लिए उत्सुक हो। वह प्रेमवश ही अपनी शक्ति को सहर्ष गाधी को प्रदान करने के लिए उनके पास ही आना चाह रही है(वह संतप्त प्राणियों को शान्ति प्रदान करती है। अत वह यह इच्छा कर रही है कि गाधी जी भी प्रजा को इन कष्टों से उबारें।) यह सब देखकर महात्मा गाधी ने उसको प्रणाम किया। उस समय नर्मदा नदी की वह आतुरता और उसका रूप देखकर प्रतीत हो रहा था कि जैसे उसने महात्मा गाधी के लिए श्वेतरत्न सदृश खद्दर बिछाया हो और वह उनका स्वागत करने के लिए वैसे ही तत्पर थी जैसे कोई घर आए अतिथि के आराम, भोजन आदि की समुचित व्यवस्था कर रहा हो[१६]।

गगा नदी का उपमान के रूप में उल्लेख करने (श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/१६,७४,८४,३/६८,४/९९) के साथ ही एक स्थल पर बड़ा ही सुन्दर चित्र खीचा है।

उच्चात् स्त्रवन्ती जननी तु गगा
सर्वान् पुनाना निजसेवकेभ्य.।
"पण्डाभ्य" ईशस्य विशेषपुम्पय·
प्रादापयत्सा कलधौतराशीन्।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/१०१)

अर्थात् उन्नत रूप में प्रवाहित होने वाली जल धाराओं वाली गंगा माता अपने समस्त भृत्यों और ईश्वर के विशिष्ट पुरुष कहलाये जाने वाले पण्डों को पवित्र करती हुई ऐसी प्रतीत हो रही है मानो उन्हें स्वर्ण राशि प्रदान कर रही हो।

प्रस्तुत उदाहरण से यह प्रतीती हो रही है कि कवि ने यहाँ पर गंगा को पावनत्व का प्रतीक स्वीकारा है। वैसे भी गंगा को प्राचीन काल से ही पवित्र नदी के रूप में स्वीकारा गया है।

एक स्थल पर उन्होंने गंगा, यमुना और सरस्वती के सम्मिलन का बड़ा ही प्रभावशाली चित्रण किया है।

"दृष्टा गगा श्वेतवर्णा वहन्ती
कालिन्दी च श्यामवर्णा मिलन्ती।
अन्तारूपा शारदेषा तृतीया
जातस्त्वेव सगमोऽयं त्रिवेण्याम्।।
(वही, वही २/७४)

एक स्थल पर श्री साधुशरण मिश्र ने भी त्रिवेणी का चित्रण किया है।

"गंगायमुनयोर्यत्रसहान्त श्रौतसा शुभ ।
संगमोऽस्ति त्रिवेणीति नाम्ना परमपावन ।।"
(श्री साधुशरणमिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/१३६)

महात्मा गाधी ने ऐसी गगा नदी में स्नान किया जिसके स्मरण, दर्शन, स्पर्श नामोच्चारण मात्र से पुण्य होता है तो उसके प्रवाह में स्नान करने के विषय में तो कहना ही क्या है अर्थात् उसका जल अत्यधिक प्रभावपूर्ण होता है। समस्त चराचर जगत् के स्वामी भगवान् शिव ने जिसकी श्रेष्ठ पुष्प माला के सदृश अपने सिर में धारण किया। ब्रह्मा की क्रोध रूपी अग्नि से विदग्ध पूर्वजों का उद्धार करने के लिए भगीरथ ने तपस्या की और गंगा के पवित्र जल से पूर्वजों द्वारा किए गए पापों का विनाश करके उनका महान् उपकार किया[२७]। ऐसी प्रसिद्ध गंगा नदी में स्नान करके महात्मा गांधी ने भक्ति और श्रद्धा पूर्वक विश्वेश्वर मन्दिर देखने के लिए प्रस्थान किया।

एक स्थल पर यह वर्णन है कि महात्मा गाधी के शवदाह के पश्चात् उनकी भस्म को अनेक स्थानों में विसर्जित किया गया है जिससे अनेक नदियों को भस्म प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। विष्णु भगवान् के पादारविन्द से नि.सृत गंगा अपना शोक भूलकर शान्त हो गई, यमुना नदी भी श्वेत और निर्मल हो गई और सरस्वती भी प्रकट हो गई। इसके अलावा सरयू, कोसी, मल्ल, मढीला, मही, ब्रह्मपुत्र, हुगली, कंसावती, माराक्षी, कुवो, शयाटा, शर्मा, भद्रा, तुग, तावी, आजो, क्षिप्रा, सेवान्, तुगभद्रा, इन्द्राण्णी, कृष्णा, चन्द्रभागा, पञ्चगंगा,

गोदावरी, सतलज, बनास, चम्बल, सोंप, देवझारी, बेतवा, भागीरथी, फल्गु, दामोदर, नारायनी, ताप्ती, सिन्धु, वैतरिणी, नीला आदि नदियों में महात्मा गाधी की भस्म को विसर्जित किया। उनकी भस्म के सम्पर्क से ये समस्त नदियाँ धन्य हो गई[१८]।

इसी प्रसंग मे अशोका की जिंगी नामक पर्वत से निकलने वाली थोका और योनिया नामक नदियों का उल्लेख है जोकि उपर्युक्त पर्वत से निकली हुई गुणवती दो कन्याएं हैं जंगलों में क्रीडा करती हुई युवावस्था को प्राप्त हुई और उन्होंने चिरकाल तक अपने पिता स्वरूप पर्वत का स्मरण नहीं किया। तत्पश्चात् वह पृथक्-पृथक् विहार करती हुई पुन: एक ही स्थान में आ गई[१९]।

कानन—

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने घने, अंधकार युक्त भयावह काननों का विवेचन नहीं किया है। केवल एक स्थल पर ही उपमान के रूप में उल्लेख किया है।

श्रीनन्दन भूमिगतनन्दनं स, विहाय मुम्बा पुनराजगाम।
भ्राम्यन् स्वगोऽनन्तमुपैति नीडं, तथा विदेशात्रिजदेशमायात्।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३)

अर्थात् गाधी जी ने नन्दन वन के समान लन्दन को छोड़कर विदेश का परित्याग करके बम्बई को (स्वदेश भारत को) उसी प्रकार प्रस्थान किया जिस प्रकार कोई पक्षी विशाल अन्तरिक्ष में भ्रमण करने के पश्चात् अपने विश्राम स्थल का आश्रय लेता है।

अन्य किसी कवि ने कानन (वन) वर्णन पर अपनी लेखनी नहीं उठाई है।

पर्वत—

गान्धिपरक काव्यों में कानन-वर्णन की ही भाँति पर्वत-वर्णन भी, अत्यल्प मात्रा में प्राप्त होता है। श्रीगान्धिगौरवम्, में उपमान के रूप में प्रस्तुत किया गया हिमालय पर्वत का संक्षिप्त किन्तु हृदयग्राही वर्णन द्रष्टव्य है—

"तस्या सभायां निजकार्यपद्धतिं
ऊचे च नेटाल धृतां स्वभायया।
मेने "फिरोज" स हिमालयं गिरिं
"कृष्णं" च गंगा "तिलकञ्च" सागरम्।।
(वही, २/८४)

ऋतु—

गान्धिपरक काव्यों के अवलोकन से परिज्ञात होता है कि उनमें ऋतुओं का भी वर्णन हुआ है। श्रीगान्धिगौरवम्, में केवल एक स्थल पर ग्रीष्म ऋतु का उल्लेख

मात्र हुआ है।

शशिवसुनवचन्द्रे वत्सरे त्वीशवीये
नयनशशितिथ्या जूनमासे समायाम्।
करकृत परिपत्र- पूर्णवाचिस्तरस्य
गमनमथकार्षीद् भारतं वर्षमाशु।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/५०)

ऋतु वर्णन की दृष्टि से श्रीमहात्मगान्धिचरितम् का वर्णन सर्वोत्कृष्ट है। अब श्री महात्मगान्धिचरिम् में वर्णित ऋतुवर्णन का आस्वादन कीजिए—

महात्मा गांधी को शेगाँव में निवास करते हुए देखकर छहों ऋतुओं ने क्रमशः उन्हें दर्शन दिए। उनके चरण कमलों का स्पर्श पाकर जीवन धन्य हो गया। महात्मा गाधी को तपश्चर्या में लीन देखकर ग्रीष्म ऋतु को ईर्ष्या होने लगी और वह यह सोचने लगी कि कहीं महात्मा गाधी मेरी अपेक्षा तेजवान् न हो जाय। अतः वह क्रोधित होकर गाधी के प्रति मन ही मन में जलने लगी। लेकिन तभी उसे यह आभास हुआ कि महात्मा गांधी के प्रति ईर्ष्या करना व्यर्थ है वह सदैव कल्याण में ही रत रहते हैं इस प्रकार शान्त प्रकृति वाले उन्हें देखकर ग्रीष्म ऋतु शोकसंतप्त हो गई और वह अपने नेत्रों से अश्रुवर्षा करने लगी। गाधी को सुख प्रदान करने की अभिलाषा से जल सिञ्चन के द्वारा वहाँ जाकर वर्षा ऋतु उन्हें शीतलता प्रदान करने लगी है। उसने समस्त नदियों, नदी और तालाबों को जल से परिपूर्ण करके सबके नेत्रों को आनन्द प्रदान किया। उन-उन स्थलों को जल से युक्त देखकर ऐसा लग रहा था कि वर्षा ऋतु विनम्र हो गई और वह इस तरह महात्मा गाधी को प्रणामाञ्जलि प्रस्तुत कर रही है। उस ऋतु ने अन्धकार पूर्ण आकाश में बिजली से प्रकाश विकीर्ण किया। बादल गरजने लगे, जल की बूँदें टप-टप ध्वनि करती हुई बरसने लगीं। इस जल की धारा को बादल की गर्जना उसी उसी प्रकार मधुर बना रही थी जैसे बाजा बज रहा हो। चारों तरफ हरियाली छा गई। इस तरह वर्षा ऋतु का मौसम सुखद हो गया। इसके पश्चात् बादल छँट गए और आकाश में तारे आच्छादिक हो गए जिससे ऐसा लग रहा था कि तारों के समान रत्न जटित स्वच्छ और निर्मल आकाश रूपमें चन्दोवा फैलाए हुए शरद् ऋतु का आगमन हुआ।

इस ऋतु के आगमन के साथ ही मार्ग स्वच्छ हो गए। नदियों को पार करना आसान हो गया। दिन छोटे होने लगे। बादलों का कहीं दर्शन नहीं हो रहा था। इस प्रकार इन सुखद दिवसों से वह महात्मा गाधी की अभ्यर्थना करने लगी। इसके बाद बसन्त ऋतु आई और अलसी, सरसों आदि पुष्पों, आम्रफल से सुगन्धित वायु सर्वत्र फैल गई और कोयल का कूजन कानों को आनन्द पहुँचाने लगा [१०]। अन्य ऋतुओं का वर्णन नहीं किया गया है।

मास—

पुतली बाई सदैव भगवद् प्रार्थना में निमग्न रहती थीं। उनकी इस भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् ने गांधी के रूप में उनके गर्भ में प्रवेश लिया। जब महात्मा गांधी उनके गर्भ में प्रविष्ट हुए तो माघ मास प्रारम्भ हुआ था। माघ के महीने में अत्यधिक ठण्ड होती है जिससे प्राणियों के शरीर में कम्पन होने लगता है। वह अत्यधिक व्याकुल हो जाते हैं और अगर किसी के पास वस्त्र ही न हों तो यह मौसम उसे और भी प्रताड़ित करता है। अतः माघ की ठण्ड देखकर ऐसा लग रहा था जैसे वह क्रुद्ध हो और अपने इस क्रोध को निर्दयता पूर्वक दुर्बलों पर प्रकट कर रही हो। तभी माघमासको लगा कि उसके इस प्रकार से समस्त प्राणी संतप्त हो गए तब उसने ओसकणों के रूप में अश्रुविमोचन करके पश्चाताप किया। माघ मास की यह धृष्टता देखकर फाल्गुन ने पदार्पण किया और गर्म होकर शोक से व्यथित लोगों को सान्त्वना दी। इसके बाद चैत और वैशाख का आगमन हुआ। कोयलों का कूजन और भ्रमरों का मधुर गुंजन होने लगा। आम्रवृक्षों में पत्ते लालिमा लिए हुए हो गए थे। जिससे वह आकर्षक हो गए थे। शीतल मन्द सुगन्धयुक्त प्रवहमान वायु मन को आकृष्ट कर रही थी। तत्पश्चात् ज्येष्ठ मास के आते ही रात्रियाँ न्यून हो गईं। सूर्य प्रचण्ड हो गया, नदियों का जल सूख गया जिससे उनका विस्तार कम हो गया। फिर आषाढ़ मास आया। आकाश बादलों से आच्छादित हो गया। यह देखकर कृषक आशान्वित हो गए कि उनकी फसल निश्चय ही अच्छी होगी। खूब वर्षा होने लगी जिससे वृक्ष, लताएं, नदी, तालाब, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि सभी तृप्त हो गए। सर्वत्र हरियाली छा गई। अब भादों का महीना भगवान् के पादारविन्द की सेवा में उपस्थित हुआ। बादल छा गए। घोर गर्जना के साथ जोरों की वर्षा होने लगी जिससे किसानों ने अत्यधिक संतोष का अनुभव किया इससे भगवान् भी तृप्त हो गए। अन्त में उनका जन्म समय आश्विन मास प्रकट होता है। इस तरह कवि ने नौ महिनों का वर्णन किया है। गांधी जी के जन्म समय माघ से आश्विन तक। अन्य महीनों कार्तिक, मार्गशीर्ष और पूस का वर्णन उनकी लेखनी से अछूता रहा है। केवल एक स्थल पर उन्होंने कहा है कि कार्तिक और मार्गशीर्ष दोनों गांधी जी का दर्शन करने में असमर्थ रहे इसलिए शोक में निमग्न हो जाने के कारण कार्तिक का नाम ऊर्ज और शोक सहन करने वाला होने के कारण मार्गशीर्ष का नाम "सह" पड़ा। कवि ने यह वर्णन इस प्रकार किया है।

वासो न येषामतिदैन्य भाजामासीच्छरीरावरणाय किञ्चित्।
तेषां प्रकम्पाय समुद्यतोऽसौ मासो. सहस्य सहसा जगाम्।।
मासो यमागत्य तुषारपातैः कायातिभेदे कुशलैः प्रगीते.।
वातैः कृपाशून्यतयेव नित्यं कोपीव कोऽपि प्रजहार दीनान्।।

x x x x x x

मासस्तपा प्राणिगणं निपीड्य कामं स्वकीयैर्निशि सम्प्रहारैः।
प्रातः समन्युर्मिहिकामिषेण पश्चात्तपन्सर्वजनै स दृष्टः।।
स्मृत्वैव सख्युस्तपसोऽपराध कोष्णो भवत्फाल्गुनिकोऽथ मास ।
अन्तं गतं सर्वजनस्य दुःखं किञ्चित्तदानीं शिशिरातुरस्य।।
आजग्मतुस्तौ मधुमाधवौ द्वौ हरेः सपर्या क्रमतो विधातुम्।
परां प्रफुल्लाम्रवणान्झरन्तीमोदवीचिं नितरा दधानौ।।
कूर्पत्पिको गुञ्जदलिव्रजाद्यावारक्तद्रुतसङ्घरम्यौ।
त्रैविध्यमाराद्धतौ शिवस्य वायोः समेतामुपकारशीलो।।
ज्येष्ठो निशा अल्पतमाश्चकार प्राज्यार्थमकार्य ददावुदारः।
अन्यं नदीनामभिमानतानं विस्तारयामास तपन्प्रतापै ।।
आषाढ़ आगत्य जलभिषेकैस्तप्ता भुवं शीतलता निनाय।
गर्जद्भिरभ्रैः कृषिकारसङ्घमाह्लादयामास धृतिं प्रदाय।।
वृक्षान्पशून्पक्षिगणान्मनुष्यान्भूमीर्नदीर्निर्झरिणीस्तटाकान्।
अन्यूश्च वापीः परिखाश्च खातान्सन्तर्पयामास नभो जलौघैः।।
एवं नभस्योपि हरेः पादाब्जयुग्मप्रसादाय कृत प्रयाणः।
नित्यं जगन्नाथ ववर्ष वारि धाराधरैणैक्यमवाप्य साधु।।
सर्व जगच्छ्रीहरिकामजन्यं तस्मादिदं सर्वममुष्य ह्यम्।
ह्यस्य सन्तर्पणतोऽतितृप्तात्सन्तृप्तिनाक्सो- ऽपि भवत्यवश्यम्।।

x x x x x x

एवं शनैः प्राप स सूतिमासो नाम्नाश्विनो सौ जगतां नमस्यः।
यस्मिन्परा भागवती नृमूर्तिर्मोदाद्भवं भाग्यवती चकार।।

x x x x x x

ऊर्जः सहा यत्र च तत्र काले सम्प्रापतुर्दर्शनमीश्वरस्य।
शौकोर्जनात्सो भवदूर्ज एवं तद्दु खसंसोढृतया सहाः सा।।
(श्री भगवादाचार्य, भारत पारिजातम्, २/१-२३)

श्रीगान्धिगौरवम् में भाद्र पद एवं श्रावण मास का उल्लेख हुआ है। महात्मा गांधी का जन्म विक्रम संवत् १९२५ में शुक्ल पक्ष में भाद्र माह में एकादशी के दिन हुआ था [२१]। महात्मा गाधी श्रावण में सोमवार और प्रदोष का व्रत रखते थे [२२]। इन दो स्थलों में ही मास का उल्लेख हुआ है। अन्य मासों का उल्लेख भी नहीं है। स्वराज्य विजयः में कार्तिक (२/३), माघ (३/१), ज्येष्ठ (४/४, ७/१), भाद्र (८/१२), वैशाख (२५/१, ४३/१३), फाल्गुन (३९/१८), चैत्र (४०/१) आदि महीनों का उल्लेख हुआ है।

समुद्र—

समस्त रत्नों के आगार समुद्र का वर्णन भी महाकाव्यों में हुआ है। पुतली बाई गर्भवती होने पर सागर के तट पर घूमने जाया करती थीं। अत सागर उनके चरण प्रक्षालन करता था अर्थात् सागर उनकी वन्दना करता था। सागर को ऐसा लगा कि उन्होंने अपने गर्भ में रत्न समूह को धारण किया है और वह भगवान् को उत्पन्न करने वाली हैं इसलिए उन्हें बहुमूल्य रत्न प्रदान करके उनकी अभ्यर्थना करता था।

श्री पुत्तली स्वीयतटे विहर्तुं दृष्ट्वागता रत्ननिधिर्महाब्धि ।
प्रक्षालयामास पदौ स तस्या रत्नाधिरत्नस्य महाधरित्र्याः ।।
निर्जीवरत्नाकरता गतोऽहं, चिद्रत्नमेषा वहतीति मत्वा।
आवेद्य रत्नानि महार्घ्यमाञ्जि, पूजा ससर्जाति तरामममनुष्यः।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २/९-१०)

यहाँ पर समुद्र का मानवीकरण किया गया है। एक स्थल पर और इसी रूप में समुद्र का वर्णन है। समुद्र ने महात्मा गाधी को अपने समीप आया हुआ देखकर (दुष्टों का संहार करने के लिए प्रविष्ट होते हुए) उन्हें क्षीरसागर में विराजमान विष्णु भगवान् समझकर प्रणाम किया।

आगत गान्धिनं दृष्ट्वा प्रणनाम सरित्पति·।
मन्यते क्षीरशायी स दुष्टान् हन्तु समुत्थित·।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/३५)

समुद्र ने अत्यधिक प्रसन्न मन वाले यति मुनियों के सदृश आचरण करने वाले महात्मा गाधी को समीप देखकर अपनी लहरों से उन्हें प्रणाम किया जैसे कोई पूज्यजन के आगमन पर शब्दोच्चारण सहित दण्डवत् प्रणाम करता है। समस्त पापों का विनाश करने वाले महात्मा के पादारविन्द को देखकर वह आनन्दमग्न हो गया और अपनी उत्ताल तरंगों से उस आनन्द को बिखेरने लगा[२३]।

नमक कानून तोड़ने के सन्दर्भ में समुद्र का उल्लेख हुआ है।

कौपीनधारी यतिराजगान्धी
स्नात्वा समुद्रे भगवान्नुवाच।
तटे च कीर्णं लवणं स्वमुष्ट्यां
बभार "कानून" विभञ्जनाम्।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/४०)

एक स्थल पर समुद्र का उग्र रूप में वर्णन प्राप्त होता है[२४]। कहीं पर उपमान के रूप में भी समुद्र का प्रयोग हुआ है।

तस्या समायां निजकार्य पद्धतिम्
ऊचे च नेटाल धृतां स्वमापाया।

मेने "फिरोज" स हिमालयं गिरिं
"कृष्णञ्च गगा तिलकञ्च सागरम्।।
(वही, वही, २/८४)

नमक निर्माण के सन्दर्भ में उल्लेख है कि नमक प्राणियों का जीवन और औषधि स्वरूप है। अतः समुद्र के जल से उत्पन्न नमक को बिना मूल्य के ग्रहण करना चाहिए। इसी भावना से महात्मा गाधी सहित सभी भारतीय गुजरात में समुद्र के किनारे एकत्रित हुए [२५]।

महात्मा गांधी के अवसान पर डॉ. राजेन्द्र प्रसाद विचार करते हैं कि इस विशाल संसार सागर से पार कैसे पहुँचा जाएगा जबकि उसे पार लगाने वाला नाविक ही नहीं रहा। करुणा के सागर गाधी के स्वर्गगमन पर लोगों को सान्त्वना कौन देगा [२६]।

बिहार पहुँचने पर दया के सागर दीनबन्धु महात्मा गाधी जनता को विपत्ति के सागर में निमग्न देखकर व्यथित हो गए [२७]। यहाँ पर यह बताया गया है कि जैसे सागर विशाल होता है वैसे ही मानो जनता पर विपत्ति रूपी महान् सागर उमड पडा हो।

उपर्युक्त प्राकृतिक वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि सभी महाकाव्यों में प्राकृतिक वर्णन अत्यधिक मनोहारी, प्रशसनीय है। सभी महाकाव्यों में प्राकृतिक सन्तुलन बना हुआ है। किसी महाकाव्य में मास एव ऋतु वर्णन उत्कृष्ट हुआ है तो किसी में सूर्य और चन्द्रमा का ऐसा दृश्य खीचा गया है कि मन आनन्द से भर उठता है। उसे पढ़कर ऐसा लगता है मानो यह सब हम अपनी आँखों से ही देख रहे हों।

वैकृतिक वर्णन—

भारतवर्ष—

भारतवर्ष को हिन्दुस्तान इस नाम से भी अभिहित किया जाता है। यहाँ पर श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्ण जैसे महात्माओं और श्रीगोपालकृष्ण गोखले, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक जैसे महान् पुरुषों ने जन्म लिया [२८]। इस तरह यह भारतवर्ष महान् विभूतियों की जन्म स्थली रहा है। इन्हीं विशेषताओं के कारण यह देश जगत् प्रसिद्ध है। इन विभूतियों के माध्यम से भारतवर्ष ने ज्ञान रूपी महामणि का दान करके सारे संसार को आलोकित करके अज्ञानान्धकार का विनाश करने की प्रेरणा प्रदान की और सर्वरूपेण शक्तिशाली भगवान् ने इस पृथ्वी में मोह स्वरूप सघन अन्धकार का उपशमन करने हेतु वेद के रूप में सूर्य की कान्ति को विस्तारित किया। जब-जब धर्म का ह्रास होता है और मानव विपत्ति में फँस जाता है तब-तब कृपा के सागर भगवान् जन्म लेकर धर्म पथ की पुनर्स्थापना करते हैं और इस ससार को विपत्ति से उबारकर उसकी रक्षा करते हैं। ऐसे ही भारतवर्ष में पार्वती और

शिव, लक्ष्मी और विष्णु, सूर्य, वायु, अग्नि, कुबेर आदि देवता स्वेच्छा से प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं और मनु, शतरूपा, भगीरथ, भानु, अनन्त ऐश्वर्यवान् इक्ष्वाकु, दिलीप, रघु, अज, दशरथ और श्रीराम जैसे महात्माओं, सावित्री-सत्यवान्, संसार को पावन करने वाली सीता, लक्ष्मण, और धर्मात्मा भरत, ऐश्वर्यशाली युधिष्ठिर,कृष्णजैसे बलवान् के मित्र अर्जुन, पतिव्रता सतिशिरोमणि, कल्याणकारिणी द्रुपद की पुत्री जैसे पवित्र, ऐश्वर्यसम्पन्न महान् लोगों ने यहाँ जन्म लिया। साथ ही यदुवंशियों को विनष्ट करके शरणागत वत्सल,कल्याणमय उपदेश देने वाले श्रीकृष्ण ने इस भारतवर्ष को पुनीत किया [२९]। भारतवर्ष में जन्म लेना दुर्लभ है। ऐसे ऐश्वर्य सम्पन्न देश की दुरवस्था हमारे लिए अत्यधिक कष्टप्रद है। भारत का वह प्राचीन वैभव और वेदों में वर्णित उसका माहात्म्य ? वह महान् पुरुष पता नहीं कहाँ गए जिन्होंने इस भूमि को कृतार्थ किया था। जिस पुण्यशाली भूमि में अश्वमेध हुआ था और जहाँ पर आत्मज्ञान की प्राप्ति में निमग्न रहने वाले ब्राह्मण निवास करते थे। वर्ण व्यवस्था के अनुसार अपने-अपने कर्म करते हुए सभी संतोष करते थे, स्वाध्याय में रत रहने वाले, दानशील एव वैराग्यशील ब्राह्मण रहते थे और दुःखियों की रक्षा करने वाले वीरपुरुषों की जहाँ सदैव प्रशंसा होती थी। इस भारतवर्ष में कृष्ण और युधिष्ठर जैसे महान् लोगों की पवित्र कथा पढ़कर भारत माता आज भी तृप्ति का अनुभव करती है। यहीं पर चन्द्रगुप्त ने दूसरे राजाओं पर विजय प्राप्त की जिसका यश सुदूर देश में फैला हुआ है। इसकी उत्तर दिशा की रक्षा हिमालय पर्वत करता है। जहाँ से ब्रह्मपुत्र, गंगा आदि नदियाँ निकलकर सागर को विस्तृत करती हैं और अन्य नदियों के साथ मिलकर इस देश को शस्य श्यामला बनाती हैं। विपुल नदियाँ अपने जल से भारतवर्ष के पुत्रों को सन्तुष्ट करती हैं [३०]। भारत वर्ष के इस वर्णन से यहाँ की वैभवशालिता का परिचय मिलता है।

जयपुर—

जयपुर नगरी क्षत्रियों की राजधानी रही है। इसे "गुलाबी शहर" इस नाम से जाना जाता है। इस नगरी में ही गलता नामक तीर्थ स्थल और आमेर देवी का मन्दिर है। यहीं मत्स्यावतार हुआ था। इस कारण प्राचीन काल में इसे "मत्स्य देश" इस नाम से अभिहित किया जाता है। साथ ही राजा विराट् ने भी यहीं पर राज्य किया था इस कारण इसे वैराट देश भी कहा जाता है। इन नामों के रूप में अभिज्ञ जयपुर नामक नगरी में ही पाण्डवों (युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव) ने अपनी पत्नी द्रौपदी सहित निवास किया था [३१]।

कलकत्ता—

महात्मा गांधी भारतीयों को दुःख सागर से उबारने के लिए अनेक स्थानों में गए। वह सर्वप्रथम ध्वजदण्ड युक्त उतुंग भवनों से युक्त पश्चिम दिशा के आभूषण

स्वरूप कलकत्ता गए। सफेद रंग के विशाल मन्दिर में मृदग का स्वर गूँज रहा था। वहाँ पर स्वर्ण लता से निर्मित इन्द्रधनुष शोभायमान हो रहा था। गंगा की लहरों से अभिसिञ्चित होकर श्वेत कमल उसी प्रकार शोभित हो रहे हैं जैसे बिजली से युक्त बादल गर्जना कर रहे हों। जहाँ पर गंगा का प्रवाह समुद्र की लहरों को उन्नत बना रहा है। इस कलकत्ता में प्रत्येक स्थान की वस्तु भाषा, लोग आदि का दिग्दर्शन हो सकता है। ऐसी कोई वस्तु नहीं है जोकि कलकत्ता में उपलब्ध न हो सके और जो यहाँ पर उपलब्ध नही है उसे प्रयास पूर्वक भी कहीं और नही देखा जा सकता है। गगा के ऊपर महान् पुल बंधा हुआ है जहाँ पर रातभर जलती हुई विद्युत् दीपक की भाँति प्रकाशित हो रही है। यह देखकर ऐसा लग रहा था जैसे कि वह आकाशगगा हो और उसमें अनेक तारागण चमक रहे हों। वहाँ कौओं और मयूर आदि पक्षीसमूह से युक्त चित्रशाला शोभायमान हो रही थी। जहाँ पर साक्षात् दुर्गा देवी, करुणा रूपी अमृत वर्षा करने वाली तीनों लोकों की स्वामिनी की भक्ति पूर्वक अभ्यर्थना की जाती है। गगा के किनारे अवस्थित उस देवी की उस गंगा के पवित्र जल से प्रदान की गई धूप आदि पूजा सामग्री से अभ्यर्थना की जा रही है। वह जगन्माता पशुओं की बलि देखकर व्यथित हो गई। समस्त प्राणियों की माता, सबका दुःख दूर करने वाली करुणा की आगार अपनी ही सन्तति का इस तरह विनाश देखकर कैसे खुश रह सकती है। इन्द्र नगरी के समान प्रतीत होने वाली उस नगरी के राजमार्ग पर सुन्दर उन्नत भवन सुशोभित हो रहे थे और उन भवनों में विशाल रथ अलकृत थे स्वर्ग से आई हुई अप्सराओं की भाँति रानियों से युक्त उन भवनों में अनेक लोगों ने दृष्टिपात किया [३२]।

वाराणसी—

महात्मा गाधी शिव के मुक्ति स्थान वाराणसी गए। यह नगरी प्राणियों को पाप निर्मुक्त करने में इन्द्र धनुष के समान है और जहाँ पर शिव के चरण कमलों से निकली हुई गगा बाण सदृश सज्जनों के ऊपर पडकर उनका कल्याण करती है। देवताओं से अधिष्ठित होकर गंगा जहाँ उत्तरवाहिनी होकर बहती है जिसमें समस्त प्राणियों के पाप धुल जाते हैं। देवतागण भी जहाँ पर अपनी कान्ति बिखेरना चाहते हैं, प्राणियों को ज्ञान राशि प्रदान करके उन्हें पुनर्जीवित करते हैं। जहाँ पशु-पक्षी और निकृष्टतम् एवं पापी लोग मरकर मोक्ष की प्राप्ति करते हैं। बिना शम्भु की कृपा के उस काशी को कौन प्राप्त कर सकता है जैसे बिना सूर्य के दिन नहीं होता है। काशी, गंगा, विश्वनाथ आदि नाम लेने से पापराशि नष्ट हो जाती है। आकाश को चूमने वाली चमकती हुई भव्य पताका से विभूषित महल सुशोभित होते हैं जोकि इन्द्रपुरी के समान लगते हैं। वहाँ विश्वेश्वर के मन्दिर में ढोल, डमरु और घण्टों की ध्वनि गुञ्जित हो रही थी। वहाँ पर ब्रह्मचारी बालक वेदों का मधुर पाठ कर रहे थे। चारों वेदो (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) और उसके अगों

(शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छन्द) का अभ्यास करने वाले विद्वान् निवास करते हैं। कहीं पर ज्ञान का साक्षात् भण्डार रूपी तपस्वियों का समूह दृष्टिगोचर होता है जिनके दर्शन से संसार का कल्याण होता है। तपस्या के कारण वह देवताओं की भाँति तेजस्वी प्रतीत होते हैं और सतीशिरोमणि स्त्रियाँ उनके कुल को अलकृत करती हैं। वाराणसी के सदृश नगरी अन्यत्र नहीं है और ऐसा शिवलिंग कहीं नहीं है। जहाँ पर ज्ञान की साक्षात् मूर्ति बनाए गए द्युलोक, अन्तरिक्ष एवं भूलोक में सोने, चाँदी और लोहे से निर्मित नगरों को देवताओं की प्रार्थना पर जला देने वाले हैं। यह काशी विद्यार्जन का श्रेष्ठ स्थल है। यहाँ पर विद्यार्थिगण उपासना में उसी प्रकार रत रहते हैं जैसे भ्रमर कमलिनी की उपासना करता है अर्थात् जैसे भ्रमर कमल के चारों ओर मँडराते रहते हैं। यह समस्त कलाओं और विद्याओं का घर है। काशी से साम्य रखने वाली अन्य कोई नगरी नहीं है। यहाँ पर रहकर आश्चर्यचकित करने वाली दक्षता प्राप्त की जा सकती है जिसके समक्ष ब्रह्मा भी तिरस्कृत हो जाते हैं अर्थात् उसकी बुद्धिमता से हतप्रभ हो जाते हैं। इस काशी को वाराणसी इस नाम से अभिहित किया जाने का कारण यह है कि इसकी दक्षिणोत्तर दिशा में असी और वरुण नामक नदियाँ हैं और उन नदियों के कारण यह महान् तीर्थ स्थल माना जाता है। शिव और यम जिसकी उसी प्रकार रक्षा करते हैं जैसे भुजाएं शरीर की और पलकें नेत्रों की रक्षा करती हैं[३३]।

विहार—

बिहार राज्य की राजधानी पटना को 'पाटलिपुत्र' इस नाम से भी जाना जाता है[३४]। विविध अलंकारों से युक्त होने के कारण भारतवर्ष के लिए आभूषण स्वरूप है। "बिहार" यह नाम होने के कारण लोगों के मन को अपनी ओर आकृष्ट करता है। जहाँ पर अलौकिक, दिव्य, महाबलशाली गया नामक राक्षस को श्रीकृष्ण ने मारा था। पितृचरणों का उद्धारक यह गया तीर्थ स्थल के रूप में स्थापित हो गया। महाबलि जरासन्ध और भीमसेन में अट्ठाईस दिन तक परस्पर एक दूसरे को जीतने की अभिलाषा में सिंह की भाँति गदा युद्ध चला। अन्त में कृष्ण के आँख के इशारे पर भीम ने इस युद्धि में विजय प्राप्त करके यश प्राप्त किया।

भगवान् समन्तभद्र (बुद्ध) ने आत्म तत्त्व को जानने की इच्छा से सम्पूर्ण पृथ्वी पर भ्रमण करके यहाँ पर निवास किया। पटना का "पाटलिपुत्र" यह नाम इस आधार पर पड़ा कि काफी समय पूर्व "पुत्रक" नामक राजा हुआ और उसकी पत्नी पाटली। उन दोनों के नाम पर दो नदियों के अवस्थित होने के कारण "पाटलिपुत्र" नाम रखा गया। जहाँ पर नन्द नामक राजा अपने गुणों से विश्वव्यापी हो गए। जिनकी शरद्कालीन चन्द्रमा की भाँति धवल यश-राशि संसार को चन्द्रमा की भाँति आलोकित कर रही है। जिसकी सुगन्ध का आस्वादन करने के लिए इच्छुक विद्वानों का समूह समस्त दिशाओं से आकर उसी प्रकार एकत्रित हो गया जैसे भ्रमर

समूह पुष्पों की सुगन्ध लेने को एकत्रित हुए हों। इस कारण इसको "पुष्पपुर" भी कहा जाता है।

जहाँ पाणिनी ने शिव की भक्ति पूर्वक उपासना करके और तीव्र तपस्या के प्रभाव से (अइउण्, ऋलृक् आदि। चौदह सूत्रों का विधि पूर्वक अलौकिक ज्ञान प्राप्त किया। उन सूत्रों से अनेक शब्दों को लेकर सर्वांगपूर्ण शब्दशास्त्र का निर्माण किया और समस्त शब्द-सागर का सन्निवेश करके, व्याकरण शास्त्र का निर्माण करके, गागर में सागर भरने की उक्ति को चरितार्थ कर दिया। पाणिनी के सहपाठी कात्यायन ने अपने वार्तिक में उसका अर्थ करके अलंकृत किया। जहाँ पर वात्स्यायन, विष्णुगुप्त और कौटिल्य इन नामों से जाने जाते हुए चाणक्य जैसे अग्रगण्य तेजस्वी और श्रेष्ठ नीतिविद् हुए। जिन्होंने विशद अर्थ वाले न्याय भाष्य, गम्भीर कामसूत्र की रचना की। अत्यधिक मूर्ख कालिदास भी जहाँ पर शिव-पार्वती की भक्ति पूर्वक आराधना के प्रसाद से तीक्ष्ण बुद्धिवाले हो गए। उन विश्ववन्दनीय महाकवि कालिदास के काव्य रूपी अमृतरस का आस्वादन करके सारा संसार आनन्दित होता है। इस तरह कालिदास ने पाटलिपुत्र में जन्म लेकर उसको सुशोभित किया। मगधराज की सभा में कालिदास को कवियों में प्रथम स्थान प्राप्त था। यहाँ पर पाणिनी और कात्यायन ने विद्वानों के समक्ष हुई शास्त्रीय परीक्षा में खरे उतरकर प्रतिष्ठा प्राप्त की थी उसी गंगा की लहरों से सुन्दर नगरी को राजेन्द्र प्रसाद ने आवास के लिए चुना[35]।

प्राचीन काल में यह "मिथिला" इन नाम से अभिज्ञ राजा जनक की राजधानी थी। यहाँ पर राम की पत्नी सीता हल जोतने से हुए गड्ढे से पैदा हुई थी[36]। यह महाराज जनक की "तपोभूमि" के रूप में प्रतिष्ठित है। नेपाल की दक्षिण पश्चिम दिशा पर नारायणी नामक नदी है। इसको शालग्राम और मोक्षदा नाम से भी जाना जाता है। हंस, सारस, चक्रवाक आदि के मधुर कूजन से ऐसा लग रहा था जैसे नदी के बुलबुलों में घुंघरुओं की ध्वनि हो रही हो। सरस्वती नदी उसके पूर्वी दिशा में है। वहाँ पर सोमनाथ का मन्दिर है। लोगों द्वारा भक्ति पूर्वक पार्वती के पति शिव की उपासना की जाती है[37]।

लखनऊ—

लखनऊ को "लवपुर" और "लक्ष्मणपुर" इस नाम से भी अभिहित किया जाता है। महात्मा गाधी कांग्रेस महासभा के अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए लखनऊ गए। गोमती के किनारे बसी हुई उस मनोहारी नगरी में गगनचुम्बी महल भव्य पताका से शोभायमान थे। कहीं पर महोत्सवों में रथादि यानों के आने-जाने की आवाज सुनाई दे रही थी। राजमार्ग में आने वाले लोगों के मन को आकर्षित करने वाली जगमगाहट हो रही थी जैसे सूर्य प्रकाशित हो रहा हो। जिस नगरी व श्रेष्ठ पुरुष पुरुषोत्तम श्रीराम ने लक्ष्मण के लिए राजधानी की कल्पना की थी •

रघुवर की यशः पताका की भाँति शोभायमान नगरी को गांधी जी ने देखा। कपूर की भाँति उज्ज्वल भवनों को देखा।उन भवनों के प्रत्येक बहिर्द्वार चन्द्रमा की भाँति सुन्दर चित्रों के निर्माण से अत्यधिक कान्तिमान् हो रहे थे। कहीं पर स्तम्भ सफेदी के कारण रजत निर्मित लग रहे थे और कहीं पीले रंग के होने के कारण स्वर्ण निर्मित से प्रतीत हो रहे थे। विविध वर्णों के तम्बू लगे हुए थे जिससे पताका अनेक रंगों की प्रतीत हो रही थी[३८]।

आगरा—

महात्मा गाधी ने काशी से आगरा नगरी में पदार्पण किया। वहाँ पर उन्होंने मुगल बादशाह शाहजहाँ द्वारा अपनी प्रेयसी मुमताज-महल की याद में बनवाए गए ताजमहल को यमुना के जल में प्रतिबिम्बित होते हुए देखा।

काशीत आगत्य तृतीय कक्षामारुह्य पूर्वो गतः आगरायाम्।
श्री ताजहर्म्य यमुनाजलेऽस्मिन् ददर्श पूर्ण प्रतिबिम्बमानम्
शाहजहाँ नृपम्लेच्छ वरिष्ठः श्री मुमताज महल्ल रमायै।
कारितवानिदमद्भुतरुपम् तत्र समाधि गतौ शुशुभाते।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/७१-७२)

स्वागत—

महात्मा गाधी के चिरकाल के पश्चात् सेवाग्राम आने पर वहाँ के ग्रामवासी उत्सुकता पूर्वक उनके दर्शन की अभिलाषा कर रहे थे। मार्ग भलीभाँति धुले हुए थे। प्रत्येक गृह पुष्पों से सुसज्जित थे और राष्ट्रध्वज फहरा रहे थे। प्रवेश द्वार पर पुरुषों, महिलाओं और बच्चों का समूह पंक्तिबद्ध होकर जयघोष करते हुए उनका अभिनन्दन कर रहे थे जैसे सूर्य के उदित होने पर पक्षीगण चहचहाने लगते हैं। कारागृह से मुक्त हुए गाधी पर लोग पुष्प वर्षण कर रहे थे मानो चिरकाल के बनवास के पश्चात् राम अयोध्या लौट रहे हों[३९]।

शिव मन्दिर—

शिव मन्दिर में चाँदी के रंग का फर्श बना हुआ था और शिव का ध्वज दण्ड स्वर्ण निर्मित था। जहाँ पर विद्वान् ब्राह्मण भक्ति पूर्वक तपस्या में लीन थे और ज्ञान की साक्षात् मूर्ति के समान शिव की अभ्यर्थना कर रहे थे, वेदशास्त्र के ज्ञाता वेद पाठ करते हुए उनके माहात्म्य का स्तवन करते हुए ध्यानमग्न हो रहे थे[४०]।

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने जयपुर एवं आगरा आदि पर किञ्चित् प्रकाश डाला है लेकिन अन्य देश, प्रान्त, प्रदेश, गाँव आदि का उल्लेख प्रसंगवश किया है। यही कारण है कि उनकी स्थिति और विशिष्टताओं का परिचय हमें नहीं मिलपाया है।उन्होंनेभारतवर्ष(श्रीगान्धिगौरवम्,)१/५,६,५०,७/२,५२-५३,८/३३-३४), इंग्लैण्ड, (१/३६,७/२९), अफ्रीका (२/३९,४६,८/३५), द्रविडदेश,

(३/४९), लंका, (४/१०), जर्मनी (४/८९), नेपाल, (५/१२), पाकिस्तान, (८/३,२१,३४-३५,५८), आदि देशों, गुजरात (१/८), काठियावाड़, (५/१), आदि प्रदेशों, आसाम, (३/४९), बंगाल (३/४९,८/१,६,३७), बिहार (५/१२,२१,५७,८/२६-२८,२७,३०) पंजाब, (८/५६) आदि प्रान्तों को उल्लिखित करके अपनी कुशलता का परिचय दिया है।

इसके अलावा लन्दन (१/४०,४४,२/३,६/५६,७/१,९) जन्जीवार, (२/२५), नेटाल (२/२९,४७,४८,५४), प्रिटोरिया (२/३३), अफ्रिका, (२/४१-४२), ट्रांसवाल, (२/४१-४२), जोहान्सबर्ग (४/४३), ट्रावनकोर (७/३), पोरबन्दर (१/८), राजकोट, (१/१०,२/८०), बम्बई (१/३२,२/८०,४/१०,७/९), कलकत्ता (२/७३,८६,३/४५,८/६), मद्रास (२/८५,७/३७), आगरा, (३/७२), लक्ष्मणझूला (४/१०२), अहमदाबाद, (५/१,१०३,७/३९), चम्पारन, (५/१२-१३), लखनऊ (५/१४), खेड़ा (५/४२), नडियाद (५/५७), दिल्ली (५/७७,६/५६,८/१), सूरत (५/८०), पायधूनी (५/९६), लाहौर (५/११३), अमृतसर (५/१२१), पालमपुर (५/१३३), भड़ौच (५/१३४), नागपुर (५/१५०), वर्धा (७/३१), नोआखाली (८/२,६,२१,२६), पेशावर (८/३७), बन्नों (८/३७), दाण्डी (६/२४), असलाली (६/२५), मुहम्मदपुर (६/३०), कराडी (६/३४), धारासना (६/५५), शेगाँव (७/२९,३१,८/१,२५), आदि नगरों एवं गाँवों का उल्लेख किया है। साथ ही कुछ पवित्र स्थानों प्रयाग (२/७४,५/७१,८/६३), पूना (२/८३,७/२७/३९), काशी (३/६८-६९,७१-७२,७/३१,८/६६), हरिद्वार (८/६६) का भी उल्लेख किया है। गाधी-गीता में लाहौर (१/२९), महाराष्ट्र (३/४०), इंग्लैण्ड (३/४४), भारतवर्ष (२४/५८), पाकिस्तान (२४/६४) मोहमद्याँ (२४/३१),रूस (२४/२६), महाराष्ट्र (२४/२३), भागलपुर (२४/१९), हस्तिनापुर (२४/२०), काश्मीर, (२४/४), वग, पंजाब (२४/१४), आदि देशों, नगरों का उल्लेख हुआ है।

सत्याग्रह-गीता और भारत पारिजातम् में भी स्थानों का उल्लेख बहुत अधिक हुआ है किन्तु यहाँ पर मैं उनका उल्लेख नहीं कर रही हूँ।

युद्ध वर्णन—

गान्धिपरक महाकाव्यों में वर्णित युद्ध अपना अलग ही महत्व रखता है क्योंकि यह सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह युद्ध है। इसमें अधर्म को धर्म से, अशान्ति को शान्ति से जीतने का प्रयास किया गया है। इस युद्ध में प्रसिद्ध अस्त्र-शस्त्रों की होड़ नहीं है।

महात्मा गाधी का युद्ध अफ्रीका से प्रारम्भ होता है। उन्होंने अफ्रीकावासी भारतीयों के प्रति रंगभेद नीति से दुःखी होकर अनेक सभाएँ की और अपनी जागरुकता का प्रदर्शन किया, भारतीयों के विरुद्ध सामाजिक एवं राजनियमों को

समाप्त करवाया [४१] महात्मा गाधी ने अंग्रेजों का समूल विनाश करने के लिए असहयोग आन्दोलन किया क्योंकि यह स्वराज्य प्राप्ति के लिए उचित मार्ग था [४२]। षष्ठ सर्ग में युद्ध का बड़ा सजीव चित्रण है। यह वर्णन राष्ट्रीय-भावना का पोषक भी है। इसके माध्यम से स्वतन्त्रता सेनानियों के देश प्रेम का परिचय मिलता है। महात्मा गाधी ने १९३० में लाहौर में सम्पन्न कांग्रेस अधिवेशन में यह विचार रखा कि "हमें पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना है" इसके साथ ही उन्होंने वाइसराय को सूचित किया कि वह इस स्थान से नमक लूटेंगे। अब प्रजा के लिए शासक द्वारा दी जाने वाली यातनाए सहन करना असभव है। अतः प्रजा की रक्षा के लिए सत्याग्रह करना ही पड़ेगा। x x x x x x x x x x x x ग्यारह मार्च को महात्मा गाधी का सत्याग्रह युद्ध के लिए प्रस्थान होगा यह सुनकर सभी लोग उनका दर्शन करने के लिए साबरमती के किनारे एकत्रित हो गए। महात्मा गाधी का कहना था कि चाहे मुझे बन्दी बना लिया जाए लेकिन अन्य लोग साहस न छोड़ें। नमक भारत का जीवन है और राज्य कर के कारण उसे प्राप्त करना दुर्लभ है अत पहली यात्रा दाण्डी नामक स्थान से होगी। इस प्रकार उपदेश देकर उन्होंने इन्द्र की भाँति अपनी सेना सहित प्रस्थान किया। सत्याग्रह युद्ध के लिए जाने वाले महात्मा गाधी का पुष्प मालाओं, पुष्पों की वर्षा करके एवं आरती उतारकर सत्कार किया और उनकी सेना शख बजाती हुई बढ़ी चली जा रही थी। तभी वह असलाली पहुँचे। वहाँ पर स्त्रियाँ मगल कलश लेकर और मगलगीत गाते हुए उनकी आरती उतारने लगीं। वह अंग्रेजों के राज्य का विनाश करने एवं नमक सत्याग्रह हेतु सभी का आह्वान करते हैं। उन्हें भड़ौंच से आगे जाते हुए देखकर देवनागण भी प्रसन्न होने लगे। इसके बाद गाधी जी सूरत, कराडी और फिर दाण्डी नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ पर भी उन्होंने कहा कि उनके कारागृह चले जाने पर अन्य लोगों को हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। उन्हें सदैव खद्दर पहनना चाहिए। सत्य बोलना चाहिए और हिंसा से दूर रहना चाहिए। इसके बाद उन्होंने नदी के तटपर फैले हुए नमक को अपनी मुट्ठी में भर लिया जिससे नमक कानून का सदा के लिए विनाश हो जाए और फिर सभी अनुकर्ताओं ने उनका अनुकरण किया। इस नमक आन्दोलन में तत्पर लोगों ने कारागृह की यातना सहते हुए, शारीरिक रूप से दण्डित होते हुए भी पीछे न हटने की ठान ली। उन्होंने वाइसराय को निर्भीकता पूर्वक समाचार भेजा कि या तो नमक कर का विनाश हो जाये अथवा उन्हें मार दिया जाये। नमक-कर की समाप्ति पर ही यह युद्ध समाप्त हो सकता है उससे पूर्व नहीं। महात्मा गाधी को कारागृह ले जाये जाने पर जनता ने मंगल गीत गाकर उन्हें प्रसन्नता पूर्वक विदा किया और उनके अनुकर्ता अब्बास की कस्तूरबा ने फूलों की माला अर्पित की। तब सेना का सेनापतित्व स्वीकार करने वाली सरोजिनी को भी कारागृह में डाल दिया। प्यास से व्याकुल उनकी सेवा करने के लिए उपस्थित

समूह को भी पकड़ लिया गया। उनका साहस सराहनीय था। इन सत्याग्रहियों को कष्ट पहुँचाकर भी दुष्ट उनको लक्ष्य से च्युत नहीं कर सके। सिपाहियों के लिए उनकी सेना पर विजय पाना असम्भव हो गया और अन्त में लार्ड इर्विन को गाधी जी सहित समस्त सेना को मुक्त करना पड़ा [४३]।

खण्डकाव्यों में वर्णन कौशल

चन्द्रमा—

चन्द्रमा का प्रयोग उपमान के रूप में किया गया है। कवि का कथन है कि बालक मोहन अपनी माता के गुणों से उसी प्रकार पूर्ण हो गए जैसे चन्द्रमा अमृत से युक्त होता है।

"सर्वोपस्कारसंयुक्ता भूमिर्दिव्यवफलप्रदा।"
मातपुर्गुणैरभूत्पूर्ण.,पीयूषैरिव चन्द्रमा.।।
(ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य स -१५)

समुद्र—

मोहनदास विचार करते हैं कि जब राम की कृपा से प्रस्तरखण्ड भी समुद्र में तैर जाते हैं तो उसी राम की अनुकम्पा से मैं भी विपत्ति- सागर को पार करने में अवश्य ही सफलता प्राप्त करूगा।

पाषाणखण्डस्तु, तरन्ति सिन्धौ, तवानुकम्पाकलिता यदा वै।
तदैव भूत्वा न तरामि राम। तदा विपद्वारिधिमेव किन्नु।।
(वही, वही, पद्य सं.-६५)

भारतवर्ष-

हमारा यह भारत देश महान् है। यहा पर गंगा, यमुना जैसी नदिया अलौकिक जल से उसका सिञ्चन करती हैं।—लक्ष्मी एव सरस्वती जिसका निरन्तर यशोगान करती हैं और बाल्मीकि आदि कवि अपनी बुद्धि के बल से जिसको अधिकाधिक सम्पत्तिशाली बनाते हैं। इसके अलावा वेदों में पारंगत ब्राह्मण भी यहीं पर निवास करते हैं [४४]। यह भारतवर्ष प्राचीन समय में अत्यधिक समृद्ध था। यहा पर अनेक विद्वान् रहते थे। इसी भारतवर्ष में सत्य मार्ग पर चलने वाले लोग निवास करते थे [४५]।

पोरबन्दर—

भारत के पश्चिम में सागर के किनारे पोरबन्दर नामक नगर है। वहा पर श्वेत पत्थरों से निर्मित गृहों की शोभा निराली है। श्वेत पत्थरों से निर्मित गृहों के कारण इसे "श्वेत नगर" यह नाम दिया गया है। वहा का प्राकृतिक सौन्दर्य अनुपम

भारतवर्ष

भारतवर्ष एक विशाल देश है। वह ऋषि-मुनियो का देश है। इस तपोभूमि पर प्रभूत शक्ति सम्पन्न महात्माओं ने अवतार ग्रहण किया। इसी भारत भूमि पर आदि शक्तियाँ अवतरित हुई जिनका प्रकाशपुञ्ज समय और सीमा की परिधि को लाँघकर चिरकाल के पश्चात् आज भी दिग्-दिगन्त में प्रकाशित हो रहा है और हमेशा रहेगा। रामकृष्ण, शुक्र, बृहस्पति, बाल्मीकि, व्यास, जनक, जाबालि, कपिल, बुद्ध, महावीर, कबीर,नानक, ज्ञानेश्वर, रामदास, देवनुकाराम, सूर, तुलसी, कबीर, चैतन्य, राधाकृष्ण, विवेकानन्द, रामतीर्थ, दयानन्द, एकनाथ, गान्धी, अरविन्द आदि महान् आत्माओं ने इसी भूमि में जन्म ग्रहण किया। यह परम्परा आज भी अक्षुण्ण है [५०]। यह वर्णन इस बात का द्योतन करता है कि भारत प्राचीन समय से ही महान् पुरुषों की जन्मभूमि रहा है और आज भी ऐसे महान् पुरूष हैं जोकि भारत के प्राचीन गौरव और उसकी संस्कृति को अक्षय बनाने में योगदान देते हैं।

भारतवर्ष एक महान् देश है। यहाँ पर भागीरथी, ब्रह्मपुत्र आदि विशाल नदियाँ प्रवाहित होती हैं। उनसे प्रेरणा मिलती है कि नदियो की भाँति ही हमारा भी हृदय विशाल होना चाहिए [५१]। इनसे यह संकेत मिलता है कि जैसे यह पवित्र नदियाँ समस्त पाप धो देती हैं सबका कल्याण करती हैं वैसे ही मानव को परोपकारी होना चाहिए।

समवेत समीक्षा-

वर्णन विधान से स्पष्ट है कि चारों ही विधाओं में काव्य की कथावस्तु के अनुसार और काव्य में वर्णन के महात्म्य को दृष्टिपथ पर रखकर ही कवियों ने उसका विवेचन किया है। महाकाव्यों में वर्णन विधान अत्यधिक विस्तृत एव उत्तम है जबकि अन्य विधाओं में अति सक्षिप्त है और उनमें वर्णनात्मकता के लिए अवकाश भी नहीं है लेकिन जितना भी है उसे प्रशंसनीय ही कहा जा सकता है।

सन्दर्भ

(१) वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोष, पृ.सं.-६४०
(२) श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १९/७४
(३) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/५
(४) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ५३/६९
(५) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/४७,७०,७/३५
(ख) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १८/४५
(६) वही, वही, १७/१-२४

(७) वही, वही, १५/४५-४७
(८) वही, वही, १९/२१-२२
(९) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, २४/५२-५३
(१०) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९/४८
(११) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/४८-६८
(१२) वही, वही, १५/६९-७०
(१३) श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १९/७४
(१४) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी श्रीगान्धिगौरवम्, ८/४९, ६१
(१५) पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, १/१-२
(१६) श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजात, १९/५५-६५
(१७) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/७६-८१
(१८) श्री भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २०/८१-१४१
(१९) वही, वही, २०/१६५-१६८
(२०) वही, वही, २५/१४-२४
(२१) बाणाङ्कनन्दैकमितेऽघ शुक्ले, साद्विक्रमाब्दे शुभभाद्रमासे।
लङ्केऽथ पुत्रो हरिवासरे य स मोहनो दासयुतश्च गान्धी।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/१२)
(२२) स श्रावणे रौक्मते ऽनुरक्तः सोमप्रदोषादि चकार कृत्स्नम्।
(वही, वही, ४/७७)
(२३) श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २१/६-७
(२४) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/१-५
(२५) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १/४०,४६
(२६) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९/२४-२५
(२७) वही, ९/६२
(२८) अस्माकं भारत वर्ष हिन्दुस्तानमितीर्यते।
महता जन्मना रामकृष्णादीनामियं धरा।
याता यत्र सदाचारा गोखले-तिलकादयः।
दृष्ट्वा ये बन्धनं मातुः "कांग्रेस" पर्य्यचालन्।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/५-६)
(२९) श्री भगवदाचार्य, श्रीमहात्मगान्धिचरितम्, १/५-१२
(३०) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १७/१६-३१
(३१) आनन्द राष्ट्र नगरे जयाख्ये श्री पाटले क्षत्रिय राजधान्याम्।

श्रीगात्वं तीर्थजलं प्रमार्ज्य विलोक्तिताऽऽमेरगता शिलाम्बा।।
मत्स्यावतारो ह्यभवत्पुराऽत्र मत्स्याभिध पूर्वमिदं वदन्ति।
राजा विराट् चात्र चकार राज्यं न्युषु संमार्य्या पुरि पाण्डवाश्च।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/७४-७५)

(३२) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/१३-२९
(३३) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/३८-५९
(३४) (क) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ९/१२
(ख) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ३९/१८
(३५) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ९/१२-३५
(३६) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ५/११
(३७) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/१६०-१६८
(३८) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ८/१४३-१५३
(३९) पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, १/१-५
(४०) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,
(४१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/३९-४१
(४२) वही, वही, ५/१४८-१४९
(४३) वही, वही, ६/१-५६
(४४) सुधोपमैः दिव्यजलैः सदैव गंगादयोऽयं परिपाययन्ति।
श्री-शारदा-गीत-यशाः प्रशस्ति-देशश्चिर भातु स भारताख्यः।।
वाल्मीकि-मुख्याः कवयो यदीया, भूतां प्रभूतां गायन्ति भूतिम्।
वेद-प्रभा-भासुर-भूसुरालि-देशः स नो मंगलमातनोतु।।
(श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-१-२)
(४५) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य स.-४०
(४६) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धी-गाथा, पूर्वभाग पद्य सं.-११
(४७) डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः, दृश्य-१०
(४८) वही, वही, दृश्य-५
(४९) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.सं.-५०
(५०) वही, वही, पृ.सं.-५१
(५१) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.सं.-५२ का प्रथम-तृतीय गद्य भाग, ५८ पृ. अन्तिम गद्य भाग।
(५२) वही, वही, पृ. ५९ प्रथम गद्य भाग।

चतुर्थ अध्याय

महात्मा गांधी पर आधारित संस्कृत काव्य में भावपक्ष

प्रत्येक वस्तु के दो पक्ष होते हैं–बाह्य और आन्तरिक पक्ष। काव्य के इस आधार पर कलापक्ष और भावपक्ष दो पक्ष होते हैं। एक पक्ष उसके बाह्य ढाचे का निर्माण करता है और दूसरा पक्ष उसके आन्तरिक ढाचे का। काव्य में आन्तरिक पक्ष या भाव पक्ष का महत्त्व अधिक होता है। जिस प्रकार मानव शरीर में आत्मा बिना शरीर के नहीं रहती है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि शरीर का महत्त्व अधिक हो गया। उसी प्रकार कलापक्ष या बाह्य ढाचा शरीर कहलाता है, उसमें काव्य की आत्मा भाव पक्ष है। शरीर की क्रियाओं को सुचारू ढंग से चलाने, उसमे प्राणों का सचालन करने के लिए जो महत्त्व हृदय का है वही महत्त्व शरीर के प्राणाधायक तत्त्व भाव पक्ष का भी है।

यदि काव्य में भाव पक्ष का निर्वाह भलीभाति हुआ हो तो कलापक्ष के न्यून होने पर भी अधिक अन्तर नहीं पडता है। वैसे भी मस्तिष्क की अपेक्षा हृदय पक्ष अधिक प्रबल होता है। यदि काव्य में केवल कलापक्ष का साम्राज्य होगा तो वह केवल चमत्कार जनक ही होगा। उसका प्रभाव सहृदय पाठक के मन पर तो कदापि नही पड़ सकता है। यही कारण है कि भावपक्ष को कलापक्ष के पूर्व अवस्थित किया गया है।

अत जैसे बिना भोजन के शरीर पुष्ट नहीं होता है, चन्द्रमा के बिना रात्रि सूनी लगती है, सूर्य के बिना उदासी का आलम छा जाता है, दीपक के बिना प्रकाश नहीं होता, पति के बिना पत्नी का जीना व्यर्थ होता है, अध्यापक के बिना कक्षा की और वादी स्वर के बिना राग की, पूज्यजनों के बिना गृह की, नमक के बिना दाल की, प्यासे के बिना कुएँ की, सत्पात्र के बिना दान की, मूर्ख को दिये गए उपदेश की, गूंगे को दिए गए फल की किञ्चित् भी उपयोगिता नहीं होती है, सुगन्ध के बिना पुष्प का, लावण्य के बिना शरीर का, नवनीत मे क्षीर का, शीतलता के बिना उष्णकाल का, चमक के बिना मोती का, मयूर-नृत्य के बिना वर्षा काल का, कोयल की कूजन के बिना शरीर की कोई उपयोगिता नही होती है, ठीक वैसे ही भाव पक्ष के बिना काव्य का महत्त्व तिरोहित हो जाता है।

प्रश्न ये उठता है कि भाव है क्या? भाव एक चित्तवृत्ति है, जो कि प्रत्येक मानव में जन्म से रहती है। यही कारण है कि इसे स्थायी भाव इस नाम से भी अभिहित किया जाता है। व्यक्ति को कभी क्रोध आता है, कभी शोक होता है और कभी वह अत्यधिक हर्ष

का अनुभव करता है, कभी वह उत्साह से भरपूर होता है। तो कभी भयाकुल, कभी विस्मित होता है तो कभी घृणा से युक्त। मानव में निरन्तर प्रवहणशील इन मनोभावों का सूक्ष्मता से अवलोकन करके कवि अपने काव्य के द्वारा सहृदयों को जिस अमन्दानन्द सन्दोह की अनुभूति कराने में सक्षम हो पाता है, वह ही भाव पक्ष कहलाता है।

काव्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रयोजन आनन्द लाभ है और इसकी पूर्ति तभी हो सकती है जबकि भाव पक्ष का सुनिश्चित, सुनियोजित एवं चारूता पूर्वक वर्णन प्रस्तुत किया जाए। भाव पक्ष काव्य शरीर के आन्तरिक पक्ष की श्रीवृद्धि में सहायक होता है भाव पक्ष के अन्तर्गत रस, भाव, रसाभास, भावाभास, भावोदय, भावशान्ति, भाव सन्धि, भावशबलता आदि को लिया जाता है।

सर्व प्रथम रस है क्या? इस सन्दर्भ में विवेचन प्रस्तुत करना आवश्यक हो जाता है। भरत मुनि से लेकर आज तक रस के सन्दर्भ में अनेक परिभाषाए प्रस्तुत की जाती रही है। भरतमुनि ने रस के सन्दर्भ में विचार प्रस्तुत किए हैं कि—

यथा हि नाना व्यज्जन संस्कृतमन्न भुज्जाना।
रसानास्वादयन्ति सुमनस पुरुष हर्षादिश्चाधिगच्छति।।
तेषा नाना भावाभिनयं व्यञ्जितान् वागङ्ग सत्त्वोपेहान्।
स्थायिभावानास्वादयन्ति सुमनस प्रेक्षका हर्षादिश्चाधिगच्छति।।

अर्थात् जिस प्रकार अनेक व्यञ्जनों से भलीभाति बनाये गए सुस्वादु भोजन को खाकर सुरुचि सम्पन्न पुरुष उसका आस्वादन प्राप्त करके हर्षित होते हैं वैसे ही सहृदय अभिनय द्वारा व्यक्त सात्त्विक भावों के माध्यम से स्थायी भाव का आस्वादन करके आनन्द का अनुभव करते हैं।

यद्यपि प्रस्तुत परिभाषा में रस का कोई उल्लेख नहीं है लेकिन बिना द्रव्य के गुणों का अस्तित्व नहीं होता है। जैसे सुगन्ध पुष्प में ही रहेगी। हम पुष्प को पकड़ सकते हैं सुगन्ध को नहीं। तात्पर्य यह है कि कोई भी वस्तु गुणों के बिना नहीं रह सकती है। इसी आधार पर पुष्प की सार्थकता है। अत. स्पष्ट है कि जब स्थायी भाव रस रूप में परिणत होता है तभी उसका आस्वादन किया जा सकता है।

भरतमुनि के पश्चात् अनेक आचार्य रस-सम्मत विचार प्रस्तुत करते रहे, लेकिन मम्मट और विश्वनाथ द्वारा प्रस्तुत परिभाषा ही अधिक सशक्त, सक्षम एवं परिपूर्ण है—

(क) कारणान्यथ कार्याणि सहकारिणी यानि च।
रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि चेन्नाट्यकाव्ययो ।।
विभावानुभावास्तत् कथ्यते व्यभिचारिणः ।

व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः।।

(काव्यप्रकाश, चतुर्थ उल्लास, सूत्र संख्या-४३)

अर्थात् जब रति आदि स्थायी भाव जोकि सामान्य जगत् में कारण, कार्य, सहकारी कारण के नाम से जाने जाते हैं वे ही जब काव्य में आकर विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी भाव आदि के रूप में परिणत होकर जिस आनन्द की अनुभूति कराते हैं उसे रस कहते हैं।

(ख) सत्त्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वाद सहोदरः।।
लोकोत्तरचमत्कार प्राणः कैश्चित् प्रमातृभिः।
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः।।

(साहित्य दर्पण, तृतीय परिच्छेद, कारिका-२-३)

रस एक ऐसा तत्त्व है जोकि सात्विक भाव के उद्रेक से अखण्ड रूप में बोधित होता है और स्वयं प्रकाशित होता हुआ आनन्द प्रदान करता है। रसास्वादन की स्थिति में व्यक्ति अपने स्वरूप को नकार देता है, जैसे एक योगी समाधि की अवस्था में माया, मोह आदि के बन्धन को भूलकर ब्रह्म साक्षात्कार का ही अनुभव करता है। उसे सारा जगत् ब्रह्ममय ही लगता है ठीक वैसे ही काव्य नाटक आदि से रसास्वादन किया जाता है तब कवि, पाठक या दर्शक को समस्त वस्तुओं का बोध नहीं रहता है वह केवल रस के आनन्द में डूबकर आत्म-विभोर हो जाता है यही कारण है कि रस को "ब्रह्मास्वाद-सहोदर" कहा गया है। साथ ही रस में लोकोत्तर आनन्द, चमत्कार उत्पन्न करने की क्षमता होती है, सहृदय तो इसका प्रमाण है ही। लोक में जिन वस्तुओं से दुःख होता है काव्य में आकर वे ही सुख का कारण बन जाते हैं, व्यक्ति जिन दृश्यों को देखकर अश्रुपात करता है काव्य में वे ही रस रूप में आनन्द की अनुभूति कराते हैं। यदि ऐसा न हो तो रामायण जैसी महान् कृति के प्रति लोगों में समादर भाव ही न हो। यद्यपि सामान्य जन की प्रवृत्ति दुःखात्मक कार्यों के प्रति नहीं होती है वह सदैव सुख पाना चाहता है, किन्तु वह दुखपूर्ण काव्य को पढ़ने के लिए इसीलिए प्रवृत्त होता है कि उसमें एक विलक्षण या अलौकिक आनन्द की प्राप्ति होती है। साथ ही यदि सत्य हरिश्चन्द्र नाटक का अवलोकन करके कोई अश्रुपात करता है तो इसी आधार पर उसे दुःखात्मक मान लिया जाए तो ऐसा नहीं हो सकता है उसे देखकर जो अश्रुपात होता है वह दुःख के कारण नहीं आनन्दातिरेक के कारण होता है।

स्पष्ट है कि रस वह है जोकि अलौकिक आनन्द की अनुभूति कराये, साथ ही वह पानक रस के समान ही विभाव, अनुभाव एवं व्यभिचारी भाव का समग्र रूप में आस्वादन कराने में सक्षम हो।

कतिपय आचार्यों ने रस की संख्या आठ मानी है, कतिपय आचार्यों ने नौ एवं कुछ ने इसकी संख्या दस भी मानी है। मम्मट ने स्थायी भाव नौ माने हैं और इसी आधार पर

उन्होंने रस की संख्या नौ बतायी है—

रतिहासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहो भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः।।
निर्वेदस्थायिभावो ऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रस ।।
(काव्यप्रकाश, चतुर्थ उल्लास, कारिका, ३०,३६)

महाकाव्यों में रस निरूपण—

काव्य में कई रसों का वर्णन होता है, लेकिन उसमें महत्त्व किसी रस को ही दिया जाता है। अन्य रस उसके सहायक के रूप में वर्णित होते हैं । महात्मा गांधी सम्बन्धी समस्त महाकाव्यों में वीर रस की प्रधानता है और अन्य रसों में भयानक, रौद्र, करुण, वीभत्स, शान्त रस का भी यथास्थान वर्णन हुआ है। श्रृंगार एवं हास्य रस का उनमें सर्वथा अभाव है। वीर रस की प्रधानता के कारण इन रसों के वर्णन का अवकाश ही नहीं मिलता है। साथ ही वीर पुरुषों को आमोद-प्रमोद शोभा भी नहीं देता है। महाकाव्य का नायक अपने आराम की बात नहीं सोचता है उसे तो हर क्षण देश की ही चिन्ता रहती है और वह उसके दुःख दूर करने के उपाय सोचता रहता है।

महाकाव्यों में अंगीरस—

महात्मा गांधी पर आधृत समस्त महाकाव्यों में वीर रस का अनुपम रूप देखने को मिलता है। यह समझा जाता है कि अस्त्रों से सुसज्जित होकर अपने बल का प्रदर्शन करना ही और शत्रु पक्ष को हताहत करना, उसमें भय उत्पन्न करना ही साहस है लेकिन वीरता का सम्बन्ध शारीरिक बलाबल से ही नहीं होता है, अपितु किसी भी मुसीबत का सामना करने के लिए शान्ति पूर्वक विचार करके धर्मयुक्त युद्ध करना और उसके लिए ऐसे साधनों का प्रयोग करना जिससे शस्त्र धारण करने वाला भी हतप्रभ होकर उसके साहस की बात मानने को मजबूर हो जाए तो वह भी वीरता का ही प्रतीक है। महाकाव्यों में वर्णित वीर रस विलक्षण एवं परम्परा से हटकर है जहा एक सेना अस्त्र-शस्त्रों के बल पर अपना प्रभुत्व कायम रखना चाहती है वहीं दूसरी सेना सत्य, अहिंसा एव सत्याग्रह का आश्रय लेती है। इस युद्ध को केवल दो सेनाओं का ही युद्ध नहीं कहा जा सकता अपितु यह धर्म का अधर्म से, सत्य का असत्य से, अक्रोध का क्रोध से एवं शान्ति का अशान्ति से युद्ध है।

वीर रस के आश्रय महात्मा गांधी है। उनमें अपने देश को परतन्त्रता की जंजीरों से मुक्त करवाने एवं यहा की दीन-हीन दशा में सुधार लाने के लिए असीम उत्साह है, लेकिन वह अपने इस उत्तम कार्य की सफलता के लिए ऐसे साधनो का प्रयोग करना नहीं चाहते हैं जिससे कि दोनों पक्षों को नुकसान पहुचे। इसलिए वह सत्य, अहिंसा,

सत्याग्रह, असहयोग एवं बहिष्कार आन्दोलन जैसे दिव्यास्त्रो के बल पर युद्ध करते हैं। आलम्बन विभाव है तत्कालीन अंग्रेज शासक वर्ग एव उद्दीपन विभाव है उनकी दुर्नीति। सकट पूर्ण स्थिति में अपने मन पर नियंत्रण रखना एवं प्रजा को उत्साहित करना उसमें देश के प्रति आदर का भाव भरना, कर्तव्यनिष्ठ बनने की प्रेरणा देना आदि अनुभाव है एव स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु कष्ट सहना, प्राणों की भी परवाह न करना और अपने देश की सेवा नि-स्वार्थ भाव से करना आदि व्यभिचारी भाव है।

इन सभी महाकाव्यों में महात्मा गाधी के राष्ट्रप्रेम सम्बन्धी विचारों को स्पष्ट किया गया है जिसके कारण उनमें महात्मा गाधी की धर्मवीरता झलकती है, किसी महाकाव्य में कर्मवीरता का दिग्दर्शन भी होता है, परन्तु वीर रस के अन्य भेदों का निर्वाह नही हुआ है। अतः अब वीर रस के उदाहरण प्रस्तुत कर रही हू। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा कि इन महाकाव्यों में वीर रस का अभूतपूर्ण वर्णन हुआ है।

सत्याग्रह गीता में वीर रस—

पण्डिता क्षमाराव के काव्य में वीर रस प्रारम्भ से अन्त तक प्रवाहित हुआ है। महात्मा गाधी राष्ट्र की सर्वात्मना रक्षा हेतु परदेशी वस्त्रों का परित्याग करके खादी वस्त्र धारण करने की प्रेरणा देशवासियों को देते हैं जिससे निराश जनता को बल मिलता है और उनके उपदेश से उत्साहित होकर करोड़ो की संख्या में एकत्रित स्त्री-पुरुष महात्मा गाधी के साथ विदेशी वस्त्रों की होली जलाकर श्वेत खादी परिधान ग्रहण कर लेते हैं। महात्मा गाधी के इन प्रयासों से आङ्ग्ल शक्ति वध जाती है। पण्डिता क्षमाराव के ही शब्दों में महात्मा गाधी की वीरता का आस्वादन कीजिए—-

(क) भारताभ्युदयायात्त कुरुध्व दृढनिशचयम्।
परदेशीयवस्तूना विधद्ध्व च वहिष्कृतिम्।।
नैर्बल्यमुपयास्यन्ति बहिष्कारेण चाङग्ला।
तद्व्यापारे च विध्वस्ते स्वातन्त्र्यमुपभुञ्जमहे।।
खादी वस्त्रात्परं वासो नैव धार्य कदाचन्।
स्वार्थत्यागात्स्वदेशार्थ नान्यच्छ्रेयो हि विद्यते।।
इत्यादिशन् महात्मासौ देशबन्धून् पुरे-पुरे।
प्रोत्साह हृतचेतस्सु लोकेपु समधुक्षयन्।।
कोटयो नरनारीणामुपदेशं महात्मनः।
निशम्यापुर्महोत्साहं देशकार्ये च निष्ठताम्।।
पौरा मोहतमस्सुप्ता जागरित्वा शनै शनैः।
त्यक्तभोगा अजायन्त मुनेस्तस्यानुयायिन।।
परदेशीयवस्त्राणि निर्दह्य बहवो जना।

श्वेताखादिधराः सन्त-सञ्जाता देशसेवकाः।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रहगीता, २/३९-४५)

(ख) महात्मा गांधी सत्य और अहिंसा के बल पर आग्ल शासक पर विजय. प्राप्त करना चाहते हैं। वह सत्याग्रह को अमोघ अस्त्र स्वीकार करते हैं। वह यह मानते हैं कि शान्ति सम्पन्न इस सत्याग्रह पूर्ण युद्ध में अनेक बाधाएं आयेंगी लेकिन गान्धी जी को अपने इस अस्त्र पर अत्यधिक विश्वास है। उन्हें भरोसा, है कि उनके सत्याग्रह के समक्ष पाषाण हृदय शासक वर्ग भी पिघल जायेंगे। कवि ने महात्मा गान्धी के इस साहस पूर्ण कृत्य को इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

दुर्बला ननु गण्यन्ते शान्तिमार्गावलम्बिन ।
परं सत्याग्रहाद्धिद्धि नास्ति तीव्रतर बलम्।।
अतो वस्तद्बलेनेव निरोद्धं निश्चित मया।
आग्लीयं हठात्कारं प्रतिरोत्स्यामि तेन च।।
सदमोघबलं जानन् श्रद्धया च समन्वित.।
यदि स्या विमुख कार्ये भविष्याम्यतिनिन्दत ।।
सत्याग्रहेण बद्धोऽह मङ्क्ष्यामि नृपशासनम्।
घोषयिष्ये च सर्वत्र तद्बतस्यादभुतं बलम्।।
शान्तिसत्वप्रधानो ऽपि मार्गोऽयं विषम परम्।
न सत्यस्य जय-साध्यो भयाद्घोरतमादृते।।
उद्बोध्यते च सद्भावो मया प्रस्तुत कर्मणः।
यतिष्ये तद्बलेनैव भेत्तुमाङ्‌गलदुराग्रहम्।।
सदुपायेन तेनाहमहिंसेकावलम्बनः।
जगते दर्शयिष्यामि दुर्नथानाङ्‌गलशासितु.।।
एकलक्षयोऽध चेल्लोकेश्वरेर्दिंहसाविवर्जित·।
क्लेशैराद्रीभविष्यन्ति पाषाणहृदयान्यपि।।
अहिंसाव्रतबद्धो ऽहराजशासन भगत ।
भवन्तं निरुरुत्सामि दुर्नयाश्च प्रकाश्ये।।
(पण्डिता क्षमा राव, सत्याग्रह गीता, १०/२५-२३)

(ग) महात्मा गाधी की वीरता के दर्शन वहा पर भी होते हैं जब महात्मा सहित देश सेवक विश्व युद्ध में सरकार की सहायता करते हैं और अपने प्राणों की परवाह नहीं करते हैं क्योंकि वह इसमें भारत का हित समझते हैं लेकिन युद्ध समाप्त होने पर इसके

विपरीत होता है तब वह सत्याग्रह आन्दोलन करते हैं और समस्त जनता को कार्य न करने की सलाह देते हैं किन्तु आश्रय अहिंसा का ही लेते हैं—

साम्राज्यस्योपकारे हि भारतस्य हितं स्थितम्।
इति मत्वागमद्गान्धिर्देहल्या युद्धसंसदम्।।
स्वार्थलाभमथ त्यक्त्वा सेवका देशवत्सलाः।
व्यसृजन् परसङ्ग्रामे निजप्राणान् सहस्रशः।।
समाप्ते तु महायुद्धे प्रजामर्दनं दुस्सहम्।
देशदास्यमगाद् वृद्धिं स्वातन्त्र्यस्य तु का कथा।।
गान्धिचक्रे शठैराङ्ग्लैभरित प्रेक्षय वञ्चितम्।।
सत्याग्रहमनारम्भमाफ्रिकायां पुरा यथा।।
विरम्यतां निजोद्योगादिति लोकान्निबोध्य च।
तपोभिर्लङ्घनैध्यानैरहिंसाव्रतमाचरत्।।
(वही, वही, ५/६-१०)

गान्धी-गीता—

महात्मा गांधी का साहस अनुपम एवं विशिष्ट है। उनका जैसा वीर योद्धा शायद ही मिलेगा। भारत को विपन्नावस्था में देखकर महात्मा गान्धी स्व सञ्चालित निःशस्त्र युद्ध में भाग लेने के लिए भारतीयों का आह्वाहन करते हैं।

वह भारत को परतन्त्रता से मुक्त करवाने के लिए सत्याग्रह रूपी अस्त्र का सहारा लेते हैं और समस्त भारतीयों को भी इसी अस्त्र का अवलम्बन लेने का परामर्श देते हैं वह विश्वास करते हैं कि सफलता अवश्यम्भावी है। साथ ही वह शारीरिक बल प्राप्ति की अपेक्षा आत्मिक बल प्राप्ति पर जोर देते हैं। वह ऐसी शक्ति की प्रशंसा करते हैं जिसमें क्रोध और द्वेष के स्थान पर शान्ति की स्थापना हो।

वह स्वतन्त्रता प्राप्ति के इस धर्मयुद्ध में प्राणों की परवाह नहीं करते हैं। वह मानते हैं कि इस महान् कृत्य में सब कुछ सहन करना पड़ेगा। हमें अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ेगी लेकिन विजयश्री हमारे चरण चूमेगी। ये युद्ध राम एवं रावण युद्ध से साम्य रखता है। एक ओर शारीरिक बल है तो दूसरी तरफ आत्मिक बल, एक ओर अधर्म और अनीति का पालन हो रहा है तो दूसरी तरफ धर्म एवं नीति का। उनका कहना है चाहे हमें कारागृह की यातना भोगनी पड़े, चाहे हम युद्ध भूमि में रणनीति को प्राप्त हो जाएं अथवा चिरकाल तक कारागृह में रहना पड़े किन्तु इस मार्ग पर चलकर सफलता अवश्य मिलेगी।

तेषां तथा विषण्णानाभारतानामुदारधीः।
मेघगम्भीरया वाचा महात्मा वाक्यमब्रवीन्।।
कुतो व कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।

अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं राष्ट्रहानिकरं महत्।।
समाश्रयोऽयंक्लैव्यस्य सर्वथा नैव शोभते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठत् भारता।।
अस्माकं च तथैतेषां विचार्येव बलाबलम्।
मया प्रकल्पित मोऽत्रअपूर्वोऽय रणक्रम ।।
तेषां हि वध सामग्री विपुला वद्यते यदि।
नि:शस्त्र प्रतिकारेण तानह जेतुमुत्सहे।।

x x x x x x x

सत्याग्रहोऽयं हि मया योजितो बन्धमुक्तये।
यदासे प्रभवेन् नं सर्वे, स्यात्स्वीकृतो यदि।।
अत्रात्मिक बलस्यैव धारणं समपेयते।
सत्यं ज्ञानमनन्तं च सत्सर्वत्र विशिष्यते।।
क्रोधद्वेषादिविकृतिहीनमानन्दसंयुतम्।
बलं येनार्जितं लोके स कार्येऽस्मिन्प्रशस्यते।।
लोककल्याणसिद्धयर्थमृषिभिस्तपसा पुरा।
संपादितं बलं चेतत्तेन ते मान्यता गताः।।
अधुनापि बलावाप्त्ये कार्यो यत्नः सदा जनै ।
समुन्नतिकरो मार्ग· सेव्यो यमिह चादरात्।

x x x x x x x x x

राष्ट्रस्वातन्त्रयज्ञोऽयं सर्वैरपि विधीयताम्।
अस्मान्प्रतिकरिष्यन्ति येऽप्यत्राजन्मसेवका ।।
शस्त्रैश्चापि हनिष्यन्ति मात्र भीतिं वृथा कृथा ।
यावदेको मृतस्तावदन्यस्तत्रागमिष्यति।।
सत्पक्षे वर्तमानानां विजयोऽन्ते भविष्यति।
पुरा यथा रावणरामयुद्ध मायादृष्टा विविधा राक्षसस्य।।
क्षेत्रं हि तद्रात्रगपूर्णमासोत्तथा बतेषामपि युद्धनीति ।
यत्र तत्र वय यामस्तआस् तत्राधिकारिणाम्।।
बलं भीषयतीहास्मान्भीषणैश्च स्वकर्मभिः।
सशस्त्रै· शस्त्रहीनानामपूर्वं युद्धमीदृशम्।।
शरीरबलमेतेषामस्माक मानसं बलम्।
पुरा प्रसंगे युधिकौरवाणा पाण्डोः सुतास्तुल्यबलास्तथासन्।

समेत्य शत्रुस्तरसा विजित्य राज्यं स्वकीयं पुनराप्तवन्त.।।
अस्मिन्विचित्रे तु रण प्रसगे असमास्वध वैपरीत्य समेतम्।
कारागृहे शृङ् खलया निबद्धा रणे हता स्याम च सेवकैर्वा।
कारावासश्चिरतन अद्य वा श्वो भविष्यति।
मरण वा भवेदत्र न तथापि निवर्तनम्।।
इतो गतेषु चास्मासु अन्ये भारतवासिन॰।
कार्ये स्थिता पुन सर्वे सिद्धिमाप्स्यन्ति पुष्कलाम्।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, ३/१-५, ११-१५, २८-३७)

श्रीगान्धिगौरवम्—

(क) महात्मा गाधी जहा धर्मवीर हैं वही उनमें कर्मठता भी कम नहीं है। वह अत्यधिक परिश्रमी हैं। वह अस्पताल का सचालन स्वय करते थे और रोगियों की सेवा शुश्रुषा नर्स की भाति करते थे। वह घायलो की स्थिति में सुधार लाने के लिए डॉक्टरों को उनकी वास्तविक स्थिति से अवगत कराने के लिए अत्यधिक प्रयास करते थे। वह सारा कार्य स्वय करते थे। जैसे वस्त्र प्रक्षालन और बाल काटना आदि। बोअर युद्ध में उनके द्वारा की गई घायलों की सेवा भी कर्मवीरता का ही द्योतन करती है। वह घायलो को सुरक्षा स्थान में पहुचाने के लिए २४ मील तक पैदल चलते थे।

अस्वस्थपाल स्वयमेव चालयन्।
सेवामनेका कृतवाश्च "नर्स" वत्।
घण्टाद्वय सन्ततमेव रोगिणा
श्रीडाक्तरेभ्यो वचनान्यवेदयत्।।
यत्साम्प्रत तस्य गृहेन दृश्यते
आडम्बर क्वापि न दर्शनीयता।।
वस्त्रेषु सैत्यनतु केशकर्त्तनं
विधाय हस्तेन स याति पार्षदं।।
शुश्रुषणे सेवनकार्यचुञ्चु
गाधी स तस्मिन् निजराजभक्तया।
"इग्लैण्ड" पाले सह बर्वराणा
जन्ये स सेवाविपुलाञ्चकार।।
एकादशार्धशत परिगृह्य स्न्यून्
सङ्ग्राममेवनपर॰ क्षतकार्य शिक्षाम्।।
ज्ञात्वा गृहीत परिपत्रपदश्च गाधी
नीत्वा च तानवनगेह मगौ जुगोप।।

"रेडक्रास"- शिक्षा-परिशिक्षितै रवै
रारोप्य दोल्या समरागणात् स ।।
"श्रीब्रूयत-" प्राप्तसहायसपन्
निनाय "मीलान" शरयुग्मसख्यान्।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगाधिगौरवम्, ३/१६-३१,३३-३५)

(ख) उनकी वीरता सस्मरणीय है। वह एक साहसी युवक है। मृत्यु से भी उन्हें कोई भय नही है। वह बार-बार यही उद्घोष करते हैं कि यदि उन्हें कारागृह में डाल दिया जाये तो भी अन्य लोग धैर्य पूर्वक अपना युद्ध जारी रखें और अपने साहसपूर्ण कृत्य से शत्रुपक्ष को हिला दें। वह अत्यधिक साहस पूर्वक नमक लूटने के लिए दाण्डी प्रस्थान करते हैं और कहते हैं कि इस युद्ध में वर्षों लग सकते हैं लेकिन हमें पीछे नही हटना है। इस प्रकार साहसपूर्ण वचनों को कहकर वह अपनी सेना सहित प्रस्थान करते हैं तो ऐसा लगता है मानो इन्द्र अपनी सेना लेकर चल रहे हों।

प्रोचे बन्दी यदि चेद् भवानि
कैश्चित्र धैर्य परिहीयमत्र।
सहस्त्रसख्यासु यतोऽपि याम-
स्ततो धारित्रीमपि कम्पयाम ।।
"दाण्डी" ति सज्ञे नगरे मदीया
यात्रा प्रशस्ता लवण विजेतुम्।।
इदन्नु देशस्य हि प्राणभृत
तद्दुर्लभे राज्यकरस्य हेतो ।।
जाते प्रभाते हितकारी सद्वच
प्रोवाच सर्वान् गमनाय सयत ।।
मासे समाप्ते यदि वर्षपूरिते
युद्ध समाप्नोनु न वा समाप्नुयात्।।
न कोऽपि जन्यान् परिवर्त्तते युवा
नीतिं विनम्रा परिपातु सर्वथा।
नदीसमीपे रचितेऽथगोपुरे
सर्वान् परावृत्य रराज जिष्णुवत्।।
(वही, वही, ६/१०-१३)

श्रीमहात्मगांधिचरितम् में वीर रस—

(क) भारत पारिजात में तो महात्मा गांधी की धर्मवीरता ही देखने को मिलती है। महात्मा गांधी नमक निर्माण के लिए प्रस्थान करते समय इस प्रकार के साहसपूर्ण वचन कहते हैं कि अब इस आश्रम में तुम्हारा प्रत्यागमन तभी हो सकता है जबकि तुम युद्धभूमि में साहस प्रदर्शित करते हुए परतन्त्रता का विनाश कर सको अथवा लड़ते-लड़ते अपने प्राण त्याग दो। लड़ाई छोड़कर वापिस नहीं आना है। इस धर्मयुद्ध में मरने अथवा घर लग सकते हैं उनके गृह विनष्ट हो सकते हैं। लेकिन योद्धाओं को युद्ध क्षेत्र से लौटना शोभा नहीं देता। उन्हें अपरिग्रह और संयम का परिचय देना चाहिए। यह युद्धभूमि तुम्हारे सिवा और कुछ नहीं चाहती है और अगर तुममें बल न हो तो इसी समय लौट जाओ। इस युद्ध में में भाग लेने वाले चाहे हिन्दू हों या मुसलमान उन्हें अहिंसा नहीं छोड़नी है भले ही अनेक लोगों को मारा जाए, निरपराधियों की हत्या हो। यदि पारिवारिक सदस्यों के प्रति इस युद्ध मे भाग लेने वाले चाहे हिन्दू हों या मुसलमान उन्हें अहिंसा नहीं छोड़नी है भले ही अनेक लोगों को मारा जाए, निरपराधियों की हत्या हो। यदि पारिवारिक सदस्यों के प्रति हमारा प्रेम जागरित होगा तो जन समाज की सेवा नहीं हो सकेगी।

यदि गृहे जनके जननीपदे सुतसुतादिषु वा वनितामुखे।
रतिरुदेष्यति च प्रिय आश्रमे जननिषेपणशक्तिरपक्षयेत्।।
(श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १३/८-१७)

(ख) महात्मा गांधी निलहे गोरों द्वारा किसानो पर किए जा रहे अन्याचारों को सुनकर चम्पारन गए । वहाँ पर उन्होने उन किसानो को अन्याय मुक्त करवाने के लिए और उचित अधिकार दिलवाने के लिए न्यायाधीश से याचना की । उन्हें किसानो का शुभचिन्तक समझकर शासक गाधी जी को शहर छोडने की आज्ञा दे देता है, लेकिन वह ऐसा नहीं करते हैं और न्यायालय में जाकर अपना अपराध स्वीकार करते हैं । वह दण्ड सहने को भी तत्पर हो जाते हैं । यद्यपि जज उनसे प्रभावित होकर मुकदमा नही करना चाहता है, लेकिन गाधी जी ऐसा करने से उसे रोक देते हैं । धर्मवीर रस का यह वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—

परमेशमहामतीश्वरो मृदुवाचाऽनुजगाद तत्क्षणम् ।
समुपस्थितं एव वो अहस्वयमुरीकरणाय चागस. ।।
अपराधपरीक्षयागता अनुश्रवन्तु निवेदन मम ।
अहमद्य कुत' प्रयोजनाद्भवदाज्ञावमर्नि प्रणीतवान् ।।
जनसेवनभावनायुतो विपदापन्नजनार्तिपीडित· ।
अहमत्र समागम मुदा परिचर्याचरणाय दुःखिनाम् ।।
अपव्यवहारसेविनो व्यथयन्त्येव सदा प्रजाजनान् ।
इह नीलावरास्ततोऽहमागतवान्क्रौर्यनिरोधनैत्सुक ।।
नहि यावदत्र विवेचितं सकलं वस्तु भवेच्छ्रुतम् मया ।
नहि तावदुपायचिन्तनं सुशक स्यादिति मे मतौ स्थितम् ।।
X X X X X X
यत एव महाशय प्रजाजन एवास्मि ततो नो मम् ।
अनुधावति शिष्टिपालने विरमामि स्वकृतिं पर स्मरत् ।।
अवगादममुंनया श्रयिप्रनुमन्ये यदि तद्विनिश्चतम् ।
च्युत एव भवामि धर्मतो ममशुद्धे मनसीत्यजागरीत् ।।
उपकारपरायणस्य मे हृदये नैव विजायते रुचिः ।
परिहर्तुमियं प्रदेशक कथमप्यद्य भवेन्न तन्तत· ।।
अधमानधनाभिजीविनामन यावर्धक शिष्टि भञ्जनात् ।
न बिना गतिरस्ति मे परा परिरम्या सुखदाशु मादृशाम् ।।
नृपशासनभञ्जनेन यत्किमपि प्राप्यमथातिदण्डनम् ।
अतिधीरतया सुखेन तन्मम सोढव्यमितीतह निश्चय· ।।

भवदर्दीहितदण्डकल्पने किमपि न्यौन्यमथो नयावह ।
परिकल्पयितुं निवेदन न हि गृह्यं भवता कदाचन् ।।
(वही, वही, ७/२४-३९)

(ग) और महात्मा गाधी तबतक बिहार नहीं छोड़ना चाहते हैं जब तक अंग्रेजों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों का पता लगाकर जनता को दुख से छुटकारा न दिलवा दें—

सपदीति तदुत्तर ददे विनयैनैव महात्मना तदा।
मम कार्यमदो विलम्बित भजने द्यापि न चावधि परम्।।
अनयस्य परीक्षणे कृते जनता दुखकथानके श्रुते।
नहि यावदनीतिनिवारण न विहास्यामि विहारमण्डलम्।
(वही, वही, ७/५८-५९)

श्रीगान्धिचरितम् में वीर रस—

प्रस्तुत महाकाव्य में भी वीर रस का धर्मवीर नामक भेद ही प्रस्फुटित हुआ है। महात्मा गाधी स्वतन्त्रता सेनानियों से कहते हैं कि आप लोग चाहें तो स्वराज्य मिल सकता है। इसके लिए उत्साह और शान्ति की आवश्यकता है साथ ही सत्याग्रह और अहिंसा के व्रत का पालन करना होगा।

सम्यक् प्रबोधितोऽस्माभि सम्राट सामात्यमण्डल.।
स्वराज्य भारतीयेभ्य प्रेम्णा दातु प्रतिश्रुतम्।।
किन्तु दिष्टबलं लोके किमप्यास्ति महाबलम्।
प्रतिक्रियाविरहित स्वकार्य कारयत्तदा।।
x x x x x x x x x
स्वराज्य निश्चितं भद्रा भवता यदभीप्सितम्।
युष्माभिश्च मदोत्साहे शान्तैर्भाव्यं यथाविधि।।
धृतसत्याग्रहास्त्राणामहिंसाव्रतधारिणाम्।
विजयो भवतामेव भवेदत्र न सशय.।।
एवमभ्यर्थिता दातुं यदि नेच्छन्ति ते बुधा.।
यौष्माकपाशिपद्मेषु दास्यन्ति दास्यति स्वयमागता।
युष्माभिर्भूयतामेव उपदेशोऽस्ति मे धुना।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/३७-४५)

(ख) महात्मा गाधी यह मानते हैं कि अहिंसा, सत्य, अस्तेय, लोभ न करना, क्षमा, उपकार, उत्साह, धैर्य और क्रोध न करना यह किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होते हैं। इन नियमों का पालन करने से किसी प्रकार का भय नहीं रहता है और शत्रु को भी मित्र बनाया जा सकता है१।

(ग) महात्मा गाधी अपने देश और देशवासियो के लिए कष्ट सहन करने को तत्पर रहते हैं। जब महात्मा गाधी दक्षिण अफ्रीकावासी भारतीयों की दशा में सुधार करने के लिए प्रथम श्रेणी का टिकट लेकर वाष्पयान में यात्रा कर रहे होते हैं तब नराधम (अंग्रेज अधिकारी) उन्हें प्रताडित करके यान से बाहर निकाल देता है लेकिन वह इस अपमान को सहन कर लेते हैं और उसके क्रोध का तनिक भी बुरा नही मानते हैं। यह उनकी धर्मवीरता नहीं तो और क्या है ~

गृहीत शुल्क पत्रोऽपि वाष्पयानेषु मोहन ।
क्वचिद्बहिष्कृत क्वापि ताडितश्च नराधमै ।।
पन्था मर्वोपयोगार्हो लोके सर्वत्र सर्वदा ।
भवतीति व्रजस्तत्र मोहनो लोकमगल ।।
विलोक्य रक्षिमि· क्रुद्धै राक्षसैरिव निर्दयै ।
आहत परिभूतोऽपि न चिक्लेश मनागपि ।।
(वही, वही, ६/४९-५१)

महाकाव्यों में वीर रस ही सर्वत्र प्रस्फुटित हुआ है, लेकिन कहीं-कहीं पर अन्य रस भी अनायास ही देखने को मिलते हैं। वीर रस के पश्चात् करुण रस का वर्णन सबसे अच्छा है।

करुण रस—

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी के विमानारुढ होकर दिवगत हो जाने पर जवाहर लाल नेहरु, बल्लभ भाई पटेल, गोविन्द बल्लभ पन्त आदि उनका स्मरण करके अपनी छाती पीटकर रुदन कर रहे हैं। वह उनकी मृत्यु से अत्यधिक शोकाकुल हो गए हैं। गाधी जी की स्मृति उन्हें और भी अधिक सतप्त कर रही है।

सता पिता राष्ट्रपिता जगत्या
विमानमारुह्य दिवगतोऽभूत्।
"जवाहरो" "वल्लभ"- "पन्त" युक्तौ
वक्षो विनिघ्नश्च भृशं रुरोद ।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५२)

महात्मा गाधी जलियाँवाला बाग काण्ड में सिपाहियो द्वारा सेनानियों को कीडों के समान चलाया जाता हुआ देखकर व्यथित हो गए। इस हत्याकाण्ड से समस्त नेतृवर्ग किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गए। ऐसे जघन्य नरहत्या काण्ड से किसका मन नहीं दहलेगा।

भटा जनान् कीट समानताया
सञ्चालयन्ते व्यथितं मनस्तु।
कर्त्तव्यमूढ- स हि नेतृवर्ग·

प्रसिद्धहत्यात् इय परा हति. ।।

(वही, वही, ५/११०)

इससे अधिक करुणाजनक स्थिति और क्या हो सकती है कि मानव-मानव के साथ भेदभाव करे । अफ्रीका में अंग्रेजों ने भारतीयों का निवास अपने से दूर रखा था साथ ही उन्हें कोई सुविधा प्राप्त नहीं थी ।

न सन्ति मार्गा., नहि मार्गदीपः ।
न कोऽपि भूपोऽस्ति कुलीजनानाम् ।।
धनेन हीना मलिनाश्च सर्वे
वसन्ति ते वै छुपताविहीना ।। (वही, वही, ४/२७)

महात्मा गांधी की मृत्यु का समाचार वायु की भाँति समस्त संसार में फैल गया । सभी के लिए इस दुख को सहन करना कठिन हो गया । कुछ अपनी चेतना खोकर पृथ्वी पर लोटने लगे और कुछ शोकातिशय के कारण विलाप करते हुए अपनी छाती पीटने लगे, कुछ कान्ति विहीन हो गए । यहाँ तक कि बालक भी शोकाकुल हो गए और नेत्रों से प्रवाहित होती हुई जलधारा से अपने कपोल सींचने लगे । जवाहर लाल नेहरु तो टूटे हुए वृक्ष की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े, धैर्यशालियों में अग्रगण्य वह भी मूर्च्छित हो गए, क्षण भर के लिए चित्रलिखित से हो गए, ब्रल्लभभाई पर तो जैसे महा विपत्ति आ पड़ी हो मानो उन पर वज्र ही गिर गया हो । X X X X X X X X X X X X पिता को रक्त में लथपथ पृथ्वी पर देखकर देवदास भी चेतना रहित हो गए । पिता की नवीन वियोग रूपी अग्नि से उसका शरीर जलने लगा । नेत्र से प्रवाहित होने वाली जल की धारा भी उसके मन को सान्त्वना प्रदान नहीं कर सकी । X X X X X वह तपस्वी राष्ट्रपिता दया के सागर हमको इस अंधकार पूर्ण संसार में छोड़कर कहाँ चले गए हैं ।

अथ वृत्तमिद क्षणादभूत् प्रसृत विश्वगत मनोजवम् ।
व्यथयद् हृदय वपुष्मताम् अपि शून्या हरितश्च पश्यताम् ।।
युगपद् जगतीनलं द्रुत तदुदन्तं निखिलं नभोगिरा ।
गिरिराशुरिवारनुतोच्चकै-रशनैः पात इवातिदु.सह ।।
व्यलुठन् भुवि कोऽपि मानवाः श्रुततद्वृत्तविलुप्त चेतनाः ।।
व्यलपत्परे शुचीकुला. उपरसस्ताऽनपूर्वकैर्भुजैः ।।
मनसापि न यस्य सम्भवस्तदिहाचिन्तितशोकसागरे ।
सहसा पतितास्तथेतरे मतवाचः परितापनिष्प्रभाः ।।
शिशवोऽपि निशम्य गान्धिनो निधनं शोकसमाकुलान्तराम् ।
विगलन्नयनाम्बुधारया परिषिक्त स्वकपोलमण्डला. ।।
अपि लोक गुरोर्महात्मनः सुहृदो हेय वतामिमा गतिम् ।
श्रुतवान् पतितो जवाहरो ननु संछिन्नतरुर्यथा क्षितौ ।।
अपि धैर्यवता महाग्रणी विधुरो मोहमुपागमत् शुचा।
नववाप्यकुलाकुलेक्षण लिखितश्चित्र इव स्थित. क्षणम्।।

व्यलुठद् भुवि वल्लभो महान् धृतियान वीरतमो विपत्रगी-
करुणं विलपन् विसंज्ञता मिव जातो हृदि वज्रताडित ।।

X X X X X X X X X X X

पतितं भुवि शोणिताप्लुतं पितरं वीक्ष्य हत जगद्गुरुम्।
सहसा स हि देवदासको न्यपतत् छिन्न इव द्रुम क्षितौ।।
नवतातवियोगवह्निना ज्वलदगो विलुठन् महीतले।
नयनागतनीरधारया न मन सान्त्वयितुं क्षमो भवत्।।

X XX X X X X X X X

अपि राष्ट्रपिता तपोनिधे कथमस्मान् वृजिनार्णवेऽधुना।
भवदीय पदाब्जनौश्रितान् प्रविहाय क्व गतो निराश्रयमान्।।
अधिनाथ, दयानिधे, विभो, कथमस्मान् प्रविहाय साम्प्रतम्।
गतवान् भवदेक संश्रयान् रुदत शोक समाकुलानि ह।।
जगतां निविडं तमश्चयं प्रभया स्वस्य निरास्य संततम्।
पितरन् जनतासु सम्मद क्व नु यातः सहसा भवानितः।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९/१-८, १३-१४, १९-२१)

महात्मा गाधी की मृत्यु का दुखद समाचार सागर में उत्पन्न वडवाग्नि की भाँति समस्त भारत में फैल गया। यह समाचार मिलते ही सभी कार्यालय, पिक्चर हाल, बाजार आदि बन्द हो गए। जवाहर लाल नेहरू आदि मर्मभेदी शोक से ग्रस्त होकर अपना कार्य छोडकर बिड़ला भवन में एकत्रित हो गए। उनके शव के चारों तरफ उनके पुत्र, पौत्रियाँ और अन्य सम्बन्धीगण एकत्रित हो गए। उनके अन्तिम श्वास लेने पर कुछ लोग गीता का पाठ करने लगे, कुछ रुँधे हुए कण्ठ से "उनका प्रिय भजन गाने लगे। तथा लार्डमाउण्टबेटन और अन्य मन्त्री भी वहाँ पर उपस्थित हो गए। तत्पश्चात् विशाल जन समूह अन्न जल छोड़कर उनके अंतिम दर्शन को आ गया। यह दृश्य देखकर नेहरू यह सोचने लगे कि गाधी पुनर्जीवित हो जाएं। कुछ विलाप करते हुए पृथ्वी पर गिरने लगे और हाथों से छाती को पीटते हुए मूर्च्छित हो गए। X X X X X X X X X X उनकी मृत्यु से दुःखी आंग्ल शासक अपना दुःख इन शब्दों में व्यक्त करता है कि महात्मा गाधी की मृत्यु से मुझे भय होने लगा है। यह न केवल भारत की ही क्षति है अपितु यह मानव मात्र के लिए दुर्भाग्यपूर्ण घटना है।

वृत्तान्तोऽयं दुरन्तस्य वडवाग्निरिवोदधौ।
प्रससारे पुरे तस्मिन न चिराद् भारतेऽखिले क्षणात्।।
सर्वकार्यालयाश्चित्रशालाः पानगृहास्तथा।
गतेऽस्य चरमे श्वासे यथास्तेऽर्काशुरन्तिमः ।
पठितं भगवद्गीतामरमन्तानुयायिनः ।।

अन्ये गद्गदकण्ठेन जगुर्गीतं मुनिप्रियम् ।
"वैष्णवजनतो तेने" इत्यादिपदगुम्फितम् ।।
राजप्रतिनिधि श्रीमान् सजानिमाण्टबाटन· ।
मन्त्रिणश्चान्यदेशाना विर्लागेह समाययु· ।।
अत्रान्तरे जनस्तोमो महान्सम्मिलित स्थित ।
अत्रोदक परित्यज्य विशाले प्रार्थनागणे ।।
गम्यता स्वस्वगेहानीत्यर्थितोऽपि तदा जन ।
स्थितो ऽत्र चिरयत्रेव गान्धिमीक्षितुमुत्सुक· ।।
जोवत्यद्य महात्मेति कैश्चित्समुदीरिते ।
अभ्यद्रवज्जनो गेह प्रविविक्षुर्बलादपि ।।
श्रीमान नेहरुरिद दृष्ट्वा निर्गत्य सदनाद्बहि· ।
स्वय न्यवेदयत् सास्त्रो "गान्धिरुत्क्रान्तजिवित " ।।
तच्छ्रुत्वाव्यलपन् केचिदपरे व्यलुठन्भुवि ।
केचिदास्फोटयन्वक्ष पाणिभ्या शोकमूर्च्छिता· ।।
x x x x x x
x x x x x x
"कम्पितो ऽरिम सभार्थोऽह श्रीगाधेर्मृतिवार्तया ।।
हानिरप्रतिसन्धेया भारतस्य न केवलम् ।
पर मानुष्यकस्यैव दुर्दैवात्समजायत ।।
ईदृग्व्यपदि लोकाना सानुकम्पोरिक्तरावयो· ।
ममप्रतिनिधि द्वारा प्रेषिता गृह्यता जनै ।।
(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय·, ५३/१७-२९, ८०-८२)

जलियाँ वाला बाग काण्ड से न केवल मनुष्य अपितु पत्थर भी रुदन करने लगे।

हाहेतिशब्दैर्निखिल वनं तद्व्याप्तं तदानीमधिदु·ख भाजाम्।
निशम्य तानश्मचयोऽप्यरोदीत्काम्या त्कथा मानवमानसानाम्।।
(भारत पारिजात, ९/४९)

नोआखाली में मुसलमानों ने हिन्दुओं के घरों को जला दिया। सभी हिन्दू अपने-अपने सगे सम्बन्धियों को याद कर-करके दुखी हो रहे हैं। सभी निसहाय हो गए हैं। किसी परिवार के समस्त सदस्य मारे गए हैं, किसी की माता, किसी के पिता, किसी के स्वामी और किसी का बेटा मारा गया है। वह करुण विलाप कर रहे हैं। उन-उन मारे गए सम्बन्धियों की प्रयोग में आनेवाली सामग्री उनके दुख को और भी

अधिक तीव्र बना रही है। करुण रस का यह वर्णन कवि ने बडे ही सुन्दर ढंग से कियहै—

हा हेति कृत्वा रुदतां तदोरस्ताड जनाना हतबान्धवानाम्।।
विलुठितागारधन प्रजाना ददर्श वृन्दानि स तत्र तत्र।।
माता हता मे हत एव तातोऽखिला हता मे बत बन्धवोऽध।
हा नाथ हा प्राणपते विहाय मामद्य यातोसिकथ च कुत्र।।
हे पुत्र कुत्रासि गतस्त्वमद्य मामक्षिहीना जरठा विपन्नाम्।
विहाय मा त्वज्जनकेन सार्ध गच्छन्कथ मामनयो न सार्कम्।।
अन्धो कथं त्व पितरौ विहाय प्राया अपृष्ट्वैवमुत क्व कस्मात्।।
हावत्स कोध प्रभृति त्वया नो हीनो जल जीविन् पाययेत।।
एत्त्वदर्थं सुतमत्स्यखण्डान्नयोदन क्षुद्गुमयितातिशीघ्रम।
आसं प्रयासन्ननु पाचयन्ती क्षुत्थानकण्ठोसि गत क्व गत।।
एव बहूना प्रवय पितृणा गताक्षिकाणा च सचक्षुषा च।
हा हा तदोर· प्रतिवेषमारोदतास शुश्राव वचांसि दीनम्।।
तदस्ति पात्रं लवणस्य तत्र स्थित मदीय च समाखुपात्रम्।
तत्रास्ति मृत्पात्रमिदं च भिक्षापात्र ममाकर्षय शीघ्रमेव।।
तत्रास्ति धौतं वसनं च तत्र शाटी च तत्रास्ति कटश्च कन्था।
एताश्च शब्दान्बहु दुर्विधाना देहद्गृहेषु श्रुतवान्महात्मा।।
भृत्या· इमा सन्ति च रत्नपेटा इमाश्च वस्त्रैर्विविधैर्भृतास्ता ।
इमा अलकारभृताश्च मञ्जूषास्ता रापधेव बहिर्नयध्वम्।।
इमे च वेदा मृतयश्च शिष्या एता· पुराणानि कियन्ति तावन्।
शस्त्रार्थपत्त्राणि गुरोः श्रुतानि सर्वाणि शीघ्र बहिरानयेत्।।
इमानि भस्मानि महार्घ्यकाणि तथौषधाना निचय महार्घ्यम्।
एतं च त सुश्रुतमाधवीयग्रन्थादि शिष्या बहिरानयध्वम्।।
(श्रीभगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ८/४०-५१)

महात्मा गाधी की मृत्यु पर वर्णित करुण रस अत्यधिक मर्मस्पर्शी एवं अत्यधिक उत्तम है। महात्मा गाधी से वियुक्त होकर यह पृथ्वी अत्यधिक वेदना युक्त हो गई। उनके अवसान से सारा संसार रोने लगा। भगवान् ने भी ऐसी दुर्दशा होते हुए भी नहीं देखी थी। पृथ्वी करुण क्रन्दन कर रही थी। उनके चले जाने के दुख से भगवान् सूर्य तक अंधकाराच्छन्न हो गया। सारा संसार अंधकार में डूब गया। उन्हें यह दुख सताने लगा कि अब वह अपने मन की बात किससे कहेंगे। समस्त मानव समूह तो विषाद युक्त था ही पशु पक्षी भी जैसे शब्द करना भूल गए थे। जवाहर लाल नेहरू को तो प्रतीत हो रहा था कि राष्ट्रपिता ही नहीं अपितु उनके माता-पिता ही चले गए हों, उन्हें अपने नेत्रों का

प्रकाश विलुप्त होता हुआ प्रतीत होने लगा। वह ये विचार करने लगे कि अब वह किसकी सेवा करेंगे और विपत्ति आने पर किसकी शरण में जायेंगे। आज इस कष्टमय समय में जबकि उनकी हमें महती आवश्यकता है तब वह हमें छोड़कर चल गए हैं। वैसे भी चन्द्रमा सदैव सूर्य से वियुक्त होकर नहीं रह सकता है। अतः उस जीते-जागते सूर्य के समान महात्मा के विलीन होने पर इस संसार की क्या दशा होगी। हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य के इस संकटपूर्ण समय में हमें चाहिए कि हम गुरुदेव महात्मा गाधी के द्वारा दिखाए गए मार्ग का अवलम्बन लेकर विपत्तियों से छुटकारा प्राप्त करें।

धरणी नववेदना गता रहिता गान्धि महात्मना सता।
अथ सत्यमितो गतं जगत्सशरीर जगदेतदर्दितम्।।
नयनानि नृणामनारतं जलजातानि नृणा तनूरिमा।
अपदूषितदुस्त्यरा वलैरघहीनाः सकला वितन्वते।।
अथकेन निशम्य मूर्च्छिता वध वार्ता वन मोहनस्य ताम्।
अथ केन गता निराशता जननी भूमिमवेक्ष्य दुर्गताम्।।
न कदापि विलोकिता मही मयनायेन दुरन्तवेदृशी।
न कदापिविलापवर्गकैर्विलपन्तीयमुपश्रुता क्वचित्।।
गत एवमनोभिरामको गत एवास्ति मनोरथाश्रयः।
गत एव मनः शमोघ से गत एवाखिलसम्पदा निधिः।।
गत एव जगत्सदाश्रयो गत एव प्रतिभाभराश्रयः।
इत हून मनानभोनभितमसाच्छन्न इहापवत्क्षणात्।।
जगदन्धतमिस्त्रलेमितं सहसा आतमनातपं सदा।
हृदये समुदीतवेदना पुरतः कस्माविकारयेददः।।
जनताविविषादविह्वला विरता सर्वकृतेस्तदारता।
पशुपक्षीगण अपि प्रभावरिता शवहितास्तदाभवन्।।
मम राष्ट्रपिता पिता गतो जननी चाद्य दिवं गता मम।
धृतिरेव मामद्य चक्षुषोर्व्यथिताद्य परमार्थदर्शिनी।।
हृदयं मम निर्गतं ननु विरहव्याध निर्धिकालिव।
क्वचिदेव गतां मनोपि मे चिरसंगित्वमनालयत्तदा।।
पतितो यदि संकटेऽधुना सविधे कस्य नु यामि चिन्तिवः।
क इहास्ति होऽन्मम व्यथां मधुरेणैव वचश्चयेन यः।।
इति हन्ति जवाहरः परं व्यलुपद्राष्ट्रपितुः कृते मुहुः।
सततं हि महात्मनात्मना पयसा प्रेममयेन पालितः।।
न हि कंचिदतः प्रकाशते परितोऽस्मानिह सान्तरं ज्वलत्।

वयमद्य समावृताः परंतमसामिव चयेन भारते।।
न हि राष्ट्रपिता अद्य वर्तते गुरुदेवो गत एव मा त्यजन्।
परम सुहृदस्तमन्वगादधुना को हि निषेव्यतां मया।।
रुचिरः प्रखरप्रकाश कृन्नहि देहोऽस्ति ततो न वा क्षतिः।
सकलं स परीत्य संस्थितः प्रति भासाय भवत्यल सदा।।
निखिलोद्य भवस्तमोनिधौ परिमग्नः खलु मायया वशः।
परिहर्तुमनेन दीपितं विजरज्योतिरिदं ज्वलेत्सदा।।
यदुपादिशदेष नो गुरुर्निखिलोऽगम्यस्तदागमक्षम।
नियतं हि तदास्ति शाश्वतं परमं सत्यमनञ्जनं शिवम्।।
स गतः परिहाय नस्तदा तदपेक्षा नियताध्ववद्वद।
नियनो विधिना विलेखितं निपुणोऽपि प्रतिवर्तयेत कः।।
न वयं समचिन्तयाम यत्तदपेक्षा न कदापि विद्यते।
पतिता वयमद्य दुर्दिने विपदम्भोनिधिवीचिताडिता।
अथ न परिहाय तद्गतिर्न विवद्या कथमप्यरिष्टदा।।
बहुभिर्दिनमासवृन्दकैर्बहुभिर्वर्षगणैरपीह वा।
विषमुप्तमनिद्रमत्र यत्फलितं नो विषमाय तत्खलु।।
विषमस्थितिशालिभिस्त्वयं तरणीयैव विपत्सरिद्भवेत्।
गुरुशिक्षितवर्त्मनैव तत्पदगामित्वपरेण संभृतेः।।
(वही, वही, १७/९-२२)

एक स्थल पर नेहरू जी का विलाप ह्रदय को छू लेने वाला है। अतः मैं उस स्थल को प्रस्तुत किए बिना नहीं रह पा रही हूँ। जवाहर लाल नेहरू विचार करते हैं कि महात्मा गांधी क्षणभर में पता नहीं कहाँ चले गए। विधि की लीला विचित्र है। उनके जाने से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जैसे हमारे बापू, नेता, मित्र चले गए हों। उनकी अनुपस्थिति ने हमें अनाथ कर दिया है। अब वह लौटकर आने वाले नहीं हैं। यह एक स्मरणीय ऐतिहासिक घटना है। उनके नेतृत्व में ही हम स्वराज्य लाभ कर सके। इस तरह महात्मा गांधी की याद कर-करके वह अत्यधिक विकल हो रहे हैं।

जवाहर उवाचेदं पुनरुद्दिश्य तं यतिम्।
क्षणेनैव गताः क्वासावहो विधिविडम्बनम्।।
गतो बापू गतो नेता सर्वेषां सखा मतः।
वञ्चिता स्मो वयम् चाद्य विधात्राक्रूरकर्मणा।।
सर्वे वयमनाथा स्मः पित्रा तेन विना कृताः।
प्रयातोऽस्मान्विहायैव न निवर्तिष्यते पुनः।।

रोमनर्तक एतादृगितिहासो न विद्यते।
इतिहासविवृत्कालो वर्तते क्वथ्यते च हृत॥
(वही, वही, १८/१-४)

एक स्थल और है जहाँ पर करुण रस का पूर्ण परिपाक हुआ है।

हा तात हा मातरिति प्रकामलालप्यमाना- करुणं रुदन्त-।
रक्तोक्षिता भूपतिता लुठन्तो लोकाः क्षतागोपरताम्तदामन्॥
केचित् काराग्या परिगृह्य पुत्रान् पुत्रीश्च पत्नीरथ केऽपि बालात्।
मृताग्निजाके प्रसनोक्षमाणा प्राणान् जहुः स्वान रुधिरोक्षिताङ्गा॥
भ्राष्ट्रेऽतितप्ते परिमार्जितानि बीजानि दग्धानि यथा भवन्ति।
तथा तदस्त्राग्निशिखाभिमृष्टा विदग्धगात्रा जनता अभूवन्॥
तारा वपुर्म्य परित क्षतेभ्यो विनि- सरद्भीरुधिर प्रवाहै-।
सर्व वदुद्यानमभूत् क्षणेन रक्तोत्पलाभं करुणार्ननयम्॥
क्वचिद् जनाना जननीञ्च तातमुद्दिश्य दीनेरदितै कुतश्चित्।
पुत्र स्वमित्रञ्च जलपिपासाकुलात्मान प्रार्थयता निनादै-॥
कुत्रापि हाहेति महार्तनादे क्वचित्त्व पुमा गुरुभिव्यथाभि।
मर्माहताना करुणैर्विलापै- रम्यं तदुद्यानमभूत भुषीमम्॥
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १२/३६-४१)

अंग्रेज अधिकारी द्वारा गोली वर्षण करने पर भारतीय जनता क्षत-विक्षत होकर और रक्तरंजित होकर पृथ्वी पर गिरने लगी। सम्बन्धियों को याद कर-करके करुण विलाप होने लगा। अग्नि अस्त्रों के प्रहारसे जनता विदग्ध हो गई। उनके शरीरावयवों से निकलते हुए रक्त प्रवाह से वह उद्यान लाल कमल के समान कान्ति बिखेर रहा था। यह अत्यधिक करुणाजनक दृश्य है। प्यास से व्याकुल होकर अपने पुत्र मित्र आदि को याद करते हुए आर्त नाद कर रहे हैं। इस प्रकार उनके करुणापूर्ण विलाप से वह उद्यान अत्यधिक भयानक लगने लगा।

रौद्र रस—

(क) अंग्रेजों के अत्याचारों से जनता भड़क उठी और उसने राजमहलों को भस्म करना जैसे कृत्य किये। जनता ने किचल्यू और सत्यपाल को मुक्त करवाने के लिए राजप्रतिनिधि से याचना की लेकिन उसने जनता पर प्रहार किया। परिणामतः जनता ने पाँच अंग्रेजों को मार दिया और राजमहल जला दिए।

याचमानस्तयोर्मुक्तिं राजप्रतिनिधिं तत-।
ताडितो जन समर्दो रक्षकैः कारणं विना॥
रश्मिग्रामपचारेण [illegible] जनताऽभवन्।

आङ्ग्लान् पञ्च निहत्याथ राजहर्म्याण्यनाशयत्।।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, ५/१६-१७)

(ख) अनेक नेताओं के कारागृह में डाल दिये जाने पर प्रजा अत्यधिक उत्तेजित हो गई। चारों तरफ क्रोधरूपी ज्वाला भड़क उठी। उस पर नियन्त्रण करना असम्भव हो गया। उन्होंने डाकखानों, रेलवे स्टेशनों में आग लगा दी। पटरियाँ स्थानों से हटा दी और टेलीफोन आदि तोड दिये। गाँव जला दिए, दुकानों को लूट लिया।

बन्धनस्थेषु सर्वेषु नायकेषु पृथक्-पृथक्।
षण्मासाभ्यन्तरेणैव प्रजाक्षोभो महानभूत्।।
राष्ट्रस्य सर्वतो दिक्षु प्रजाक्रोधमहानल.।
नानारूपाणि बिभ्राण प्राज्वलीदनियन्त्रित.।।
पत्रप्रेषण गेहानि लोहमार्ग गृहाणि च।
दग्धानि शतशो लोकैः क्रोधने स्वैरचारिभि ।।
लौहमार्गशलाकाश्च विपर्यसता क्वचित्कृता ।
सदेशवाहितन्त्रीणा स्तम्भाश्च विनिपतिता।।
आङ्ग्लेयचूर्णराशीनामालय पुण्यपत्तने।
दीपित सह सा शत्रौ भस्मशेषो भवत्क्षणात्।।

(वही, वही, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४५/१-५)

देश सेवक सत्यपाल और किचलू को देश निकाला देने पर उन्हें दण्ड मुक्त करवाने के लिए जब जनता कमिश्नर के पास गई तब उन्हें मारा गया, अपमानित किया गया। यह सब देखकर ईसडन ने मजाक बनाई परिणामत जनता भडक उठी और उसने ईसडन के प्राण लेने चाहे। उन्होंने बैंक में आग लगा दी और बैंक कर्मचारियों एव कुछ गोरों को भी मार दिया।

निशम्य ता व्यङ्ग्यगिर वितप्ता दुःखेन लोका विकला बभूव ।
ता प्राणमुक्ता हि विधातुकामा सर्वे द्रुता- किन्तु सदा न साप्ता।।
क्रुद्धैस्तदा वीरभुवः सुपुत्रैर्भस्मीकृत नेशनलबैंकमिद्धम्।
प्रबन्धकश्चास्य स्टुअर्ट स्काट च ते ध्वस्तमसापरीता ।।
रबिन्सनं टामसनं तथैव रोलेण्डमार्ता व्यसुमेव चक्रुः।
x x x x x x x x x x
गौरागकान्यायशतेन चैवमुपद्रवो जायत खेदकोऽयम्।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ९/३९-४०)

नोआखली में मुस्लिम लीग के बहकाने पर मुसलमान हिन्दुओं को बहकाने लगे, उन्हें मारने लगे। मुसलमान हिन्दुओं को जबर्दस्ती मुसलमान बनाने के लिए जोर देने लगे। उन्होंने अनेक हिन्दुओं के घर उजाड डाले।

"नवखली"-जनजात उपद्रव श्रुतिपथं कृत एव महात्मना।
यदि भवन्त मदीयसुदेशजाः "मुसलमान" मते कुल हिन्दव।।
तदिह "पाक" मरं भवतात्स्थलं "मुसलिमलीग" सुसम्मतिरेपिका।
अत च हिंसनवृत्ति परायणै प्रबलहिन्दुगणणः कियतां मते।।
ततश्च हिंसाकृति दक्षकूर्चिण करेषु कृत्वा करवालगोलिकाः।
हताश्च प्रिया बहवश्च ठक्कुरा हतास्तु तेषां ललना नराधमैः।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/२-४)

जिन्ना के दुराग्रह के कारण मुसलमान हिंसापूर्ण कृत्य करने लगे। अनेक परिवार, बालक और वृद्ध मारे गए, धन नष्ट हो गया, घर जला दिए और मानवता नष्ट हो गई, मुस्लिम भाई मार्ग में हिन्दुओं का वध करने लगे, पूजा गृहों को जला दिया। सर्वत्र ही विध्वंस होने लगा जिससे हिन्दू लोग अपने प्राण छुड़ाकर भारत आने लगे।

आदौ घनेषु हिंसा ततोऽपि भयकारिणी।
हिंसा प्रवृत्ता पंजाबे घातिताश्चैव लक्षश ।।
कुटुम्बीया हता बाला वृद्धा नष्टं धन तथा।
गृहण्यपि प्रदग्धानि मनव्य नष्टमेव च।।
सर्व त्यक्त्वा प्रधावन्ति प्राणत्राण परायणाः।
हिन्दवस्ते ऽपि वध्यन्ते मार्गे मुस्लीमबान्धवै ।।
शीखानामपि धर्म्याणि ध्वस्तानि सुबहूनि च।।
सिन्धुदेशे ऽप्येवमेव हिन्दूना कृपणा स्थिति.।
निर्वासिता पलायन्ते हिन्दभूमि सहस्त्रशः।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, २३/८-१२)

महात्मा गाधी के कारागृह में डाल दिये जाने पर जनता क्रोध में भडक उठी। उनके समक्ष ठहरना उसी प्रकार असमर्थ हो गया जिस प्रकार अग्निके समक्ष जल समूह नहीं ठहर पाता है।

तत क्रोधानल सर्वलोकाना ववृधे महान्।
प्रलयाग्निरिवोद्भूतो ज्वालाकुलित विग्रहः।।
यथोर्ध्वाग्ने पुरः स्थातुं न जलौघः प्रभुर्भवेत्।
तथा क्षुब्धात्मना पुमा न कोऽपि पुरतस्तदा।।
बालस्त्रीवृद्ध वर्गेषु छात्रेषु च विशेषत.।
चरकेषु च सर्वेषु प्राकृतेषु जनेषु वा।।

(श्री माधुरारम मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/१२३-१२५)

वीभत्स रस—

महाकाव्यों में वीभत्स रस कम ही परिलक्षित होता है। नोआखाली में हुए हत्याकाण्ड से गाँव का दृश्य अत्यधिक घिनौना हो गया। महात्मा गांधी ने देखा कि मुसलमानों के द्वारा मारे गए हिन्दुओं के शरीर पृथ्वी पर पड़े हुए हैं उसको गिद्ध और सियार नोच रहे थे। किसी के दोनों हाथ, किसी के पैर, किसी का सिर और कुछ लोगों की नाक, कुछ लोगों का एक हाथ कटे हुए पड़े थे। किसी के सिर से रक्त निकल रहा था जिस पर कौए आदि चोंच मार रहे थे और कहीं पर लाश पड़ी हुई थी, जिसका मास नोंचकर पक्षी खा रहे थे और उन्होंने कहीं पर बच्चों के अगों को इधर-उधर पड़े हुए देखा।

वृन्दं शताना निहताहताना हिन्दूजनानां मुसलीम लोकैः।
गृधे मृगालैश्च निकृत्यमानं क्षितौ तनूनां स ददर्श तत्र।।
केचित्त्व तत्रहसिमग्नदोषश्छिन्नाड् घ्रियुग्माश्च विभिन्न शीर्षा।
केचित्त्व विग्रा विगतैकहस्ता गतैकपादा अपि केचिदासन।।
स्त्रवच्छिरोभेदमहास्त्रधारा चन्चवाक्षिणी क्वापि च निष्कुपन्त।
शवेभ्य अच्छिय च मांसखण्डान्नश्नन्त आशासु च विष्किराँधा.।।
क्वचिद्‌हताना च करा· शिशूनामंगुल्य आसन्भुवि सनिरीक्ष्या·।
क्वचिद्भुजौ क्वापि च पञ्चशाखक्वचित्कफोणीश्च यतिददर्श।।
(श्रीभगवदाचार्य, पारिजात सौरमम्, ८/३६-३९)

महात्मा गाधी ने कहीं पर गिद्धों के द्वारा लुढकाए हुए, इधर-उधर फैले हुए हाथों पैरों को देखा और कहीं पर सृगाल द्वारा खाए हुए शरीरावयवों को देखा।

कुत्रापि हस्तान् विततंश्च पादान्
शिरासि गृध्रै· परिलुण्ठितानि।
गोमायुभिर्भक्षित मासकानि
ददर्श चागानि शमी महात्मा।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/१३)

भयानक रस—

अंग्रेजों द्वारा किए गए अत्याचारों को देखते हुए महात्मा गाधी कहते हैं कि यह युद्ध रावण के युद्ध से साम्य रखता है जिसके सैनिक अग्नि अस्त्रों से आकाश में अग्नि की वर्षा करते हैं। उन्हें धिक्कार है जो कि मानव के रक्त से पृथ्वी का सिञ्चन कर रहे हैं। ऐसा हृदय को विदीर्ण करने वाला अमानवीय कृत्य मानव अथवा देवता तो नहीं कर सकते हैं। उनका कार्य पशुओं से गया गुजरा है। यह सेना हिन्दुओं का घर और दुकानें लूट रही हैं। कुलीन स्त्रियों को कटु वचनों से परेशान करते हैं और उनका अपहरण कर लेते हैं, उनकी पतिव्रता में कलंक लगा देते हैं। वह दुर्व्यसनी और दुराचारी सैनिक

अंग्रेजों के संरक्षण में हैं। इनके दुष्कृत्यों की वजह से आँख वाले अन्धे और कान वाले बहरे हो गए हैं।

असुरैरशावनसमीकतुल्यता दधतैव जन्यमिदमागतं महत्।
गगने नभस्वति महाजना स्थिता अनलास्त्रवर्षमनिमे प्रकुर्वते।।
परिकल्प्य हु मिय इमेरिता सितापिना क्षिपेण वसुधा नृशोणितैः।
परितर्पयन्ति जलराशिभिर्यथा धिगिमा महामहिमशालिसमृतिम्।।
नहि दर्श्यते किमपि शौर्य्यमत्र तैर्नरमुण्डलोलुपगणोनहानृपे।
न सुरो नरोऽपि नहि कर्तुमीदृशा हृदयनिकृत्यप्रधनेतदासुरम्।।
पशुभिर्विधातुमिह शक्यते तु यत्रापामरा अपि मनाचरन्ति तत्।
जनतागृहाज्जगतान्धनादिकानितरा लुठन्ति तव सैनका इमे।।
पथि सगतानिरपराधशालिनीर्ललना इमे शठधियो बलादपि।
परिपीडयन्ति वचनैररुन्तुदैरधमा हरन्ति निरनुगृहाश्च ताः।।
बहुशो विशन्ति गृहमेधिना गृह निरपत्त्रपा धवलसैनिका इमे।
अथपानपान्तिपतिना:पतिव्रता:सितशासनं विकृतिधिक्चसैनिकान्।
सितशासनेन परिप नता इमे पशुवृत्तिपालनपरा नराधमा।
निखिलं दुराचरणमद्य नाधिपा इह दर्शयन्ति कृपणे हि भारते।।
अथ नेत्रिणोऽपि जनुषान्धतां गताः श्रुतिमज्जना अपि गलच्छ्रवोबलाः।
भवितार एव विवशाः पराहताः प्रसरेदिहाद्य बलिनां स्वतन्त्रता।।
(श्री भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १२/५-१२)

सैनिकों के नृशंसता पूर्ण क्रूर कर्मों को देखकर समस्त जनता व्यथित हो गई। उन्होंने कैसा देने वाला ऐसा नीचता पूर्ण कृत्य पहले कभी नहीं देखा था। उन नीच मानवों ने सैंकड़ों स्त्रियों के अंगों को क्षत विक्षत कर डाला।

न धानुवानामपि कौणपानां क्रौर्य्यं निरागस्सु कदाचिदेवम्।
दृष्टं हि केनापि नराधमाना यथानुकम्प्येष्वधुना प्रवृत्तम्।।
पर शताना रमणीगणानां तदंकभाजामनल प्रमाणाम्।
यदर्भकाणामुपरि प्रजहुस्तत्तो नृशंसा मनुजाधमास्ते।।
कर्माति हिंस्त्रं भुवि दानवोयमेषा विलोक्याथ जनास्तु सर्वे।
क्षुभ्यन्महाम्भोधिमहोर्मिमालानिभास्तदा ते व्यथिता बभूवुः।।
(श्रीमाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १२/४३-४५)

वत्सल रस—

श्री कर्मचन्द गांधी पुत्र के जन्म से अत्यधिक प्रसन्न हैं। वह इस शुभ समाचार से आनन्दित एवं हर्षित हैं और उन्हें स्वयं के विषय में भी ज्ञान नहीं है। प्रसन्न

होकर दीन-दुखियों को प्रचुर दान देने लगते हैं।

आकर्ण्य श्रुतिसुखदां प्रवृत्तिमिष्टां
तत्काले सुखभरविस्मृतस्वकोऽसौ।
श्रीगाधी श्रियमधिकां कावा व्यतारी-
दाहूयं द्रुतमतिदीनरुग्णलोकान्।।

(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २/४२)

बहुत समय के बाद मिलन के कारण मोहनदास के ज्येष्ठ भ्राता ने उन्हें आलिंगन में ले लिया और अमूल्य भाई के सिर को प्रसन्नता पूर्वक चूम लिया। उन्हें आशीर्वाद दिया।

चिरादवाप्त निजसोदरतं ज्यायानपि प्रेमभरेण बन्धु ।
समालिंगाशु मुदा चुचुम्ब शिर प्रदेश सदमूल्यबन्धो ।।

(वही, वही, ४/१७)

वत्सल रस का पूर्ण परिपाक उस स्थल पर हुआ है जब मोहनदास माता से विदेश गमन की अनुमति लेने के लिए जाते हैं तब वह पुत्र को अनुमति तो दे देती हैं लेकिन उनके मन में तरह-तरह की शकाएं होने लगती हैं। वह पुत्र से कहती हैं कि तुम तो बालक हो और इस विशाल सागर को कैसे पार करोगे। वहाँ पर तुम्हें अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा। इस विषय में सोच-सोचकर मेरा हृदय काँप रहा है। वहाँ न तो तुम्हारा कोई मित्र होगा और न ही भाई बन्धु साथ ही कोई तुम्हारे कल्याण की कामना करने वाला भी नहीं होगा। अत परिजनों के मध्य तुम्हारा निर्वाह कैसे होगा।

परन्त्वयम्मे हृदय न सशयः समुत्थितो वत्स विवर्धते निशम्।
यदि त्वमेन परिहर्तुमीश्वरस्तदा महान्त परितोषमाप्नुयाम्।।
कथन्नु बालस्त्वममुं महार्णवं विशालमेकः प्रतीरीतुमीहसे।
भवन्ति तत्र व्रजता विपत्तयः ततोऽधुना मे हृदय विकम्पते।।
न यत्र मित्राणि न सन्ति बान्धवा न चापि तेऽभीष्टसुचिन्तकाजनाः।
कथं त्वमेक परिसर्पणोचितो विभावयेस्तत्र वसन् सुनिर्वृतम्।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम् ३/१४-१६)

और जब मोहनदास विदेश से लौटते हैं तब अत्यधिक समय के पश्चात् मिलने के कारण उनका ज्येष्ठ भ्राता मोहनदास को गले लगा लेता है।

समुत्थायाकमानीय शिरस्याघ्राय त मुदा।
सिन्चन्तमश्रुभिः स्नेहप्रभवैरभ्यसिञ्चत।।

(वही, वही, ६/१२)

अद्भुत रस—

महात्मा गांधी के जन्म से पूर्व पुतलीबाई ने एक दिन आधी रात के समय आश्चर्यपूर्ण अनुभव किया। समस्त ब्रह्माण्ड में एक मात्र तत्त्ववस्तु, वेदों के प्रतिपाद्य विषय का मुख्य तत्त्व, शत्रुओं का विनाश करने में समर्थ योगियों के स्मरण की प्रियवस्तु, अपने मन्दहास्य के कारण खुले हुए दाँतों की कान्ति से अन्धकार को विनष्ट करते हुए, किसी अपूर्व व्यक्ति को अपने समीप आया हुआ देखा। उन्होंने उस दिव्य शक्ति को अपने सामने देखकर आश्चर्य पूर्वक प्रणाम किया। उन्हें अपने समक्ष देखकर पुतलीबाई इतनी अधिक आत्मविभोर हो गई कि उनके नेत्रों से जल की धारा बहने लगी। उस मूर्ति ने पुतलीबाई से कहा कि मैं तुम्हारे गर्भ में प्रवेश कर रहा हूँ। वह भगवान् के ध्यान में इतनी अधिक सराबोर थी कि उन्हें उनके अन्तर्धान होने का भी आभास नहीं मिल सका।

निखिलभुवनसारं श्रौतमन्दर्भसारं, रिपुमथनविसारं योगिनाकण्ठहारम्।
प्रहसितदशनाभामंहनध्वान्तधारं, कमपि च महकस्मादागतं सा ददर्श।।
हृदयजलजमध्ये यामधिस्थाममूर्ति, प्रतिदिवमनुशास्त श्रेयसे शुद्धचेना ।
चकितचकितभावा ता पुरो वीक्ष्य हृष्टा, प्रणतिनिधिवतानासावुदस्रा पदाब्जे
इह विविधसमर्थार्चर्चितोऽद्यैव तस्मै। तव परमपवित्रं गर्भगेहं विशामि।
प्रसरदतिकुविद्याकल्पिनानेकरूढि-व्यधिनजनशभायेत्याह सा दिव्यमूर्तिः।।
विकसितमुखपद्मा पुतली कान्तकान्ती, रघुपतिपदपद्मन्यस्तदृष्टिर्निमग्ना।
हृदयपटलजातानर्गलप्रेमसिन्धो, प्रभुगमनमजानान्नैव मग्ना तदानीम्।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १/५२-५५)

रसाभास—

परस्त्री के प्रति, माता, गुरुमाता, पुत्र आदि के प्रति रति भाव अथवा प्रेम का होना, किञ्चित् सफलता प्राप्त करके अत्यधिक प्रमत्त हो जाना, पूज्यजनों के प्रति क्रोध करना, अवसर निकल जाने पर क्रोध करना, वीर पुरुष में भय दिखाना, व्यर्थ के कार्य के प्रति उत्साह, अकारण भयभीत होना, निरपराधियों पर क्रोध करना रसाभास कहलाता है। कारण यह है कि इससे प्राप्त होने वाला आनन्द अत्यधिक अल्प होता है। समस्त महाकाव्यों में रौद्र रसाभास ही परिलक्षित होता है।

ओडायर नामक महाभिमानी शासक ने निशस्त्र और शान्त जनता पर भयानक गोलियों की वर्षा की, उसने क्रोधाग्नि में जलकर सेनापति को दुष्ट कर्म करने की प्रेरणा दी।

ओडायरो नाम महाभिमान- प्रान्तस्य तस्याय पतिर्मनस्वी।
निःशस्त्रो विश्रुत दुष्प्रवृत्ति क्रोधाग्निना प्रज्वलितो बभूव।।
आहूय सेनापतिमुग्रकर्मा प्रसादिशद् दैत्यसभक्तनिर्हिन्त्रम्।

—

श्रीरामं प्रार्थये तस्माद्बलं निश्चलता व्रजेत ।
जिजीविषोपवासं मे वर्जयेत्र च तर्जयेत् ।।

(वही, पारिजात सौरभम्, १४/१९७-१९९)

आत्मज्ञानी श्रीराजचन्द्र की श्रीकृष्ण के प्रति भक्ति देखिए—

हसन्तं खेलन्तं हरिमथहर द्रष्टुमभित-
मदीया वान्छेय भवतु यदि पूर्णा कथमपि ।।
तदा स्व प्राप्तनामिह सफलता वै मनुमहे
गुरुर्मुक्तानन्दो वदति मम नाथो मधुरिपु ।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/१३)

श्री साधुशरण मिश्र काव्य के प्रारम्भ में गणेश के चरणों की वन्दना करते हैं—

यस्याङ्घ्रिस्मरण विघ्नव्रातध्वान्तदिवाकर ।
हेरम्ब सिद्धिसदनः प्रीत कामान्स वर्षतात् ।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/१)

गुरु विषयक भक्तिभाव—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने अपने महाकाव्य में प्रारम्भ में गुरु के प्रति अपनी भक्ति का प्रदर्शन किया है—

आदौ स्मरामि गुरु पाद रंजांसि चित्ते
स्थित्वा पुरः स्वकरकम्पित मन्त्र भागै ।
उच्चा विधाय बहुशीत समृद्धिरंतम् ।
ध्यादेङ्घ्रियुग्ममहमत्र हृदि स्वकीये ।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/१)

इसके अलावा एक स्थल पर गाधी जी की गुरु भक्ति दृष्टिगोचर हो रही है—

योग्य गुरुं नाप युवा स गाधी
गुरोस्तु लब्धिर्महती दुरापा ।
त्रिक कृतं तेन सदा हृदिस्थं
द्वे पुस्तके श्री कवि "राजचन्द्र" ।।

(वही, वही, २/१५)

महात्मा गांधी के प्रति भक्तिभाव—

पण्डिता क्षमाराव को महात्मा गाधी से बेहद प्यार है । वह महाकाव्य के अन्त में उनके प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करती है । ये विचार गाधी के प्रति भक्तिभाव का ही द्योतन करते हैं ।

किं भूयोलेखनेनास्य चरितस्य महात्मनः ।

मृतोऽपि यः राजीवोऽन्त सर्वदाधिपते जनैः ।।
धन्याः किल वयं सर्वे युगेऽस्मिन् प्राप्त सम्भवाः ।
चरन्तः क्षमातलं तस्य पावितं पादरेणुभिः ।।
परसहस्त्रवर्षोर्ध्वं स्मररिष्यन्ति जना किल ।
महात्मानमिमं गान्धीं जनाश्च समकालिकान् ।।
स महापुरुषो लोकेः पूजितः सकला प्रियः ।
निजघ्ने देशजेनेति भारतस्य त्रपाकरम् ।।
तत्रापि हिन्दुनैकेन हिन्दुष्वपि महत्तमे ।
उद्यतो हस्त इत्येष कलंको वागगोचरः ।।
स्तुवन्ति सद्गुणान् पद्यैः पदलालित्यमण्डितैः ।
यशस्विना च साधूना कवयोऽनादिकालतः ।।
परं त्वलोक सामान्यभूतप्रकृतिनिर्मितम् ।
अप्रमेय गुणोत्कर्षकः स्तुवीयात्कवीश्वर ।।
महिमा जीवतोऽप्यस्य सर्वातिशयितोऽभवत् ।
कृत्स्नेन जगताप्यद्य पूज्यते स्वर्गतोऽपि सः ।।
महता सुप्रसिद्धाना कल्प्यन्ते स्मृतिरक्षकाः ।
शिलाकास्यमयाः लोके प्रोच्चसुन्दर विग्रहा ।।
दिव्यं तेजोमृतो गान्धेः सन्ति नावश्यका इमे ।
तस्य स्मृतिकरोभाव स्वयं यत्नेन निर्मितः ।।
सत्याहिंसात्मकः सोऽयं भावो भावि प्रजाततेः ।
शाश्वतस्मृतिरक्षाये प्रभवेद्यत्न रक्षितः ।।
प्रससाराऽस्य दिव्याभा न परं धनिवेश्मसु ।
दीनानामपि दीनानामार्तांना च कुटीष्वपि ।।
भारतं भवतीदानीमन्धकारपटावृतम् ।
पश्यन्ती जाग्रती मार्गमन्तरन्वेषणक्षिपा ।।
तमेन च मुनेर्मार्गमनुवर्तेत चेज्जनः ।
निश्चित भारते भूयः प्रकाश उपजायते ।।

(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ५४/१-१४)

श्रीनिवास ताडपत्रीकर भी महात्मा गांधी को जगद्गुरु मानते हुए उनकी वन्दना करते हैं

कर्मचन्द्र सुतं धीरं मोहन लोकनायकम् ।
महात्मनं सतां श्रेष्ठं वन्दे जगद्गुरुम् ।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अथध्यानम्, पद्य संख्या-२)

पण्डिता क्षमाराव अपने महाकाव्य को गांधी वंश के नाम समर्पित कर देती हैं ।

भारतवनि रत्नाय सिद्धतुल्य महात्मने ।
गान्धिवंशप्रदीपाय गीतिमेनां समर्पये ।।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/५)

असलाली ग्रामवासियों का गांधी के प्रति अनन्य प्रेम इन पदों में अभिव्यञ्जित हो रहा है ।

केचित् प्रणामान्साष्टांगान्कृत्वा स्वान्बहुन्मानयन् ।
केचित्तत्पादपाथोजपरागान्मस्तके न्यधु ।।
तत्पादन्याससम्भूतरजांसि निजचक्षुषोः ।
अञ्जयन्तः परं केचिदमाड्क्षुमुत्रिधौ ।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १४/८-९)

एक और स्थल में भी ग्रामवासियों का गांधी के प्रति भक्ति भाव झलक रहा है ।

तद्वैभवं जितभवं परिवीक्ष्य लोका·
स्फारादराजनतमस्तकमालिकाभि ।
सम्पूज्य तस्य युगलं पदम्पोत्न
ग्रामागतं स्म गमयन्ति मुदा खरारेः ।।

(वही, वही, २०/१९८)

कुछ स्थलों पर हिन्दू-मुसलमानों, शान्तिमूर्ति ग्रामणी, सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा आदि का गांधी के प्रति भक्तिभाव का वर्णन किया गया है ।

तत्रस्थ हिन्दूयवनाः समस्ताः विदामि हेतोः समितीश्चक्रुः ।
अमूल्य वस्तूनि समर्प्य तस्मै कृतज्ञताः स्वा प्रकृटीकृतास्तै ।।

x x x x x ।

सायं निवृत्तो यतिराड् यदाऽभूत् सर्वाश्च लोकानपदिष्टवान् सः ।
स· ग्रामणीमूर्तिधरश्च शान्तेः शुश्राव शिक्षा परिवारपूर्ण· ।।

x x x x x x

समस्तदेशकिलशोकमारुतः ससार दुद्राव जनौघ आर्तिभृत ।
"सरोजिनी" तस्य समीपमास्थिता चकार सेवा शुचिकार्यकारिणी ।।

x x x x x x

कस्तूरी बन्दिनी साम्बा "साप्रमत्या" स्तटो स्थिता।
"यर्वदा" मागता तूर्ण यति दर्शन काक्षया ।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/३९, ६/१७, ७/२३, ७/२५)

श्रीसाधुशरण मिश्र काव्य के प्रारम्भ में गांधी के चरणों की वन्दना करते हैं ।

नमः परमकल्याण सन्दोहामृतवर्षिणे ।
श्रीमद् गान्धिमदद्वन्दराजीवाय मुरारिणे ।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/२)

महात्मा गाधी के प्रति मालवीय जी का भक्ति भाव कितना अनुपम है ।

धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि भवता पुरुषर्षभ ।
दर्शनेनामुना देव लोककल्याणकारिणा ।।
(वही, वही, ८/११०)

चम्पारन के निवासी तो उन्हें कल्पवृक्ष मानकर उनकी शरण में जाते हैं ।

निराश्रयाणा सुरपादप प्रभो
नतो वय त्वा शरणं समागताः ।
महद् व्रत नाम सतान्तदारिन
सुरक्षण यत् शरण मनीषुषाम् ।।
(वही, वही, ८/१९३)

देश के प्रति भक्तिभाव—

पण्डिता क्षमाराव का अपने देश के प्रति अनन्य अनुराग है । उनका सम्पूर्ण महाकाव्य इसी भावना से ओतप्रोत है । उन्होंने प्रस्तुत महाकाव्य का निर्माण ही देशभक्ति भावना से प्रेरित होकर ही किया—

तथापि देशभक्त्याह जाताम्मि विवशीकृता ।
अत एवास्मि तद्गातुमुद्यता मन्दधीरपि ।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/३)

महाकाव्य में कहा गया है कि आपसी भेदभाव छोडकर एकजुट होकर देश की सेवा करनी चाहिए ।

अज्ञानमूलमुत्सृज्य परस्परविरोधनम् ।
युयुत्सून् योजयेद्बन्धून् विनीतो देशसेवक ।।
(वही, वही, ७/६)

श्री भगवदाचार्य ने अपने महाकाव्य में देश के प्रति अपनी भक्ति भावना प्रदर्शित करते हुए कहा है कि भारतीय प्रजा को विदेशी भाषा के स्थान पर मातृभाषा का अधिकाधिक सम्मान करना चाहिए ।

स्वदेशभाषामथ मातृभाषा त्यक्त्वा प्रजा या परदेशभाषाम् ।
समाश्रयन्ते विरता भवन्तो ततोऽत्र हिन्दी सुरगो- प्रचारः ।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ६/१८)

अस्माकं भारतं वर्ष हिन्दुस्थाननिवासिने ।

मरतां जन्मना रामकृष्णादिनामियम् धरा ।।
जाता यत्र सदाचारा गोखले तिलकादय ।
दृष्ट्वा ये बन्धन मातु "कांग्रेस पर्यचालनम् ।।

x x x x x x

नेटालसेवा परिपूर्य गाधी चिकीर्षुरासीन्निजदेशसेवाम् ।
सत्येव कार्ये पुनराव्रजेने त्युदीर्य तेभ्यो ह्यवकाशमाप ।।
स्वीकृत्यौत्तरदायित्वमनुगान् सान्त्वयन् मुहु ।
उपवासत्रय कृत्वा देशसेवा व्यधात् स्वयम् ।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/५-६, ३/३७, ५/१०६)

साथ ही महात्मा गाधी को यह चिन्ता रहती थी कि देश कब स्वतन्त्र होगा ।

पारतन्त्र्यं विलोक्यैव मनो गान्धेश्च दूयते ।
कदा भारतदेशोऽयं स्वातन्त्र्य परिलप्स्यते ।।
(वही, वही, २/६४)

यही भाव साधुशरण मिश्र ने व्यक्त किया है ।

पारतन्त्र्यान्दुकेनायं बद्धोदेशो नवापि न ।
ततोमोक्षार्थमस्माभि प्रयत्न परिचिन्त्यताम् ।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/१२३)

व्यभिचारी भाव—

व्यभिचारी भाव स्थायी भाव के चारों ओर सचरण करते है और स्थायी भाव को और भी अधिक पुष्ट करने में सहायक होते हैं, यही कारण है कि इन्हें लोक में सहकारी कारण इस नाम से और साहित्य-शास्त्र में संचारी भाव इस नाम से भी अभिहित किया जाता है।

महाकाव्यों में व्यभिचारी भाव—

चिन्ता—

जब कार्य में अवरोध या विघ्न दृष्टिगोचर होता है अथवा इष्ट वस्तु की प्राप्ति नहीं होती तो वह चिन्ता नामक व्यभिचारी भाव कहलाता है, जैसा कि प्रस्तुत श्लोक में स्पष्ट है—

(अ) "प्रकाशकार्येषु सुपत्रकस्य
शैथिल्यमाकर्ण्य चचाल गाधी
"नेटाल" प्रान्तं स विचारमग्न
कथन्चलेत्यत्रमिदमदीयम्।" (श्रीशिवगोविन्दत्रिपाठी गान्धिगौरवम्, ४/३४)

प्रस्तुत श्लोक द्वारा गाधी जी को अपने पत्र के प्रकाशन में शिथिलता जानकर चिन्ता हो रही है ।

कृपकों की शोचनीय दशा के विपय में सुनकर महात्मा गाधी उनकी मुक्ति का उपाय सोचने लगे ।

शोचनीया कथामेतामकर्ण्य स दयानिधि· ।
द्रवीभूतश्चिरं तस्थौ ध्यायस्तन्मुक्तसाधनम् ।।
(पण्डिता श्रमाराव, सत्याग्रह गीता, ३/११)

रालेट एक्ट के पास हो जाने से महात्मा गाधी इस चिन्ता में निमग्न हो गए कि देश को इस विपत्ति से छुटकारा कैसे दिलाया जाए ।

यदा व्यवस्थेपमपूद्विचार्या शश्वत्त्वदेशाहितमाकलय्य ।
कार्यं किमत्रेति विचारसिन्धौ ममज्ज रोग व्यथितोऽपि धीर ।।
(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ९/११)

हिन्दुओं द्वारा किए जा रहे दुष्कृत्यों को देखकर महात्मा गाधी घोर चिन्ता में डूब गए ।

तेपा विपत्कथा· श्रुत्वाश्लिष्य दुःख निजे हृदि ।
लोककल्याणकामोऽसौ चिन्तामापन्महामुनि ।।
(वही, वही, १४/१६)

महात्मा गाधी को इस बात की चिन्ता है कि भारतवर्ष को दासता के पाश से कैसे मुक्त किया जाये ।

एवं स प्रतिपद्य शान्तमनसा गान्धिर्महात्मा चिराद् ।
बद्ध भारतवर्षमेतदखिलं दासत्व पाशैर्दृढम् ।
सद्यो मोचयितुं महास्त्रमुथितम् ध्यायन्नमोघ पर
तूष्णीमास्थितवान् क्षणं कृतिनामग्रेसरो विश्वदृक ।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ७/७८)

निर्वेद—

शत्रु द्वारा किए गए नृशसता पूर्ण कार्यों से महात्मा गाधी को न तो हर्ष होता है और न ही किसी प्रकार का दुःख । वह ये मानकर चलते हैं कि यदि कोई शक्ति है तो इस विषय में चिन्ता ही नहीं करनी चाहिए ।

भवति न मम हर्ष शोक एवापि कृत्ये
रिपुकुल परिपोप्येऽत्रातिहीनातिहीने ।
विलसित यदि सर्व प्रेक्षिका कापि शक्तिः
कथमिह कम चिन्ता जायता दुःखदाद्य ।।
(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २१/५०)

हर्ष--

प्रिय एवं इच्छित वस्तु की प्राप्ति होने पर अथवा अकस्मात् ही किसी वस्तु की प्राप्ति हो जाए जिसकी पहले से सम्भावना न हो उस समय जो भाव उद्बुद्ध होता है उसे "हर्ष" भाव कहा जाता है। सुदामा के द्वारका पहुँचने पर कृष्ण अपने आसन को त्यागकर दौड़ पड़ते हैं।

प्रवेशितं द्वार-जनेन दुर्गत विशीर्णदुश्चोन्दरखण्डमण्डितम् ।
चिरादभिज्ञाय सखायमात्मनो हरि स राजासनतो व्यधावत् ।।
(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १/२९)

महात्मा गाधी के असलाली पहुँचने पर वहा की जनता गा बजाकर अपना हर्ष व्यक्त करती है।

अथ ग्रामनियुक्तेन सेवकेन प्रबोधिता ।
युवानो बालका वृद्धा स्त्रीपुंसा ।।
हर्षोन्मादसमायुक्ता सत्कर्तुं तं परन्तपम् ।
सद्गानवादनैरभ्रं मादयन्त प्रतिस्थिर सुव्यवस्थिता ।।
(वही, वही, १४/१-२)

अल्पायु में विवाह होने पर बालक मोहन के मन में जो हर्ष भाव प्रस्फुटित हुआ उसका अवलोकन कीजिए--

"गुणैकवर्षे पितृकर्मचन्द्र सुतस्य मोदान विधस्तु पूर्वम् ।
विवाह दीक्षा कृतवान् स्वजातौ मुग्धो विवाहस्य कृत किशोर ।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/२०)

श्री मदन मोहन मालवीय द्वारा बुलाये जाने पर जब महात्मा गाधी पजाब गए तो वहाँ की जनता अत्यधिक हर्षित हुई।

"लव पुर गतगान्धी स्टेशने दृष्टवान् तु
परमिति बहिरारात् पुञ्ज पुञ्ज जनानाम् ।
दिशि दिशि कृतधावस्तत्समूहचकास्ति
बहुदिवसवियोगान्मन्यते प्राय बन्धुम् ।।
(वही, वही, ५/१३)

महात्मा गाधी के जन्म की बात सुनकर देवता लोग भी पुष्पों की वर्षा करने लगे।

अयं सुजन्मा जगता शिवाय लोकस्य दुःख शमयेदवश्यम्।
इति प्रहृष्टा ववृषुः सुरास्ते पुष्पाण्यदृश्या नभस प्रकामम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, १/३२)

स्वतन्त्रता मिल जाने पर तो जैसे भारतवासी मानो आनन्द के सागर में डुबकी लगा रहे हों।

अभुवन महानन्दसुधाब्धिरिगतरंग मालाकुलित जनानाम्।
मन प्रसादोल्लसितप्रमोदधारा समस्मिन्नपि भारतेऽस्मिन्।।
(वही, वही, १६/१८)

विषाद-

कार्य के प्रति उत्साहहीनता, जडता, मन्दता, आलस्य का होना विषाद कहलाता है। बा सहित अन्य नेताओ के राजकोट पहुचने पर राजा ने उन्हें पकड लिया। यह देखकर गान्धी अत्यधिक दु खी और सतप्त हो गए।

निरीक्ष्य विविधान्दोषान्भूपतिना कृतास्तदा।
अग्लायदहपञ्चापि हृदये स मुहुर्मुहु ।
(श्री भगवदाचार्य , पारिजातापहार, १/७४)

जवाहर लाल नेहरू चीन और एशिया के विनाश को देखकर अत्यधिक व्याकुल हो रहे हैं।

चीनदेशएशियाप्रदेशयोर्नाशमेतमभिवीक्षय पण्डित ।
श्रीजवाहरइतोभितप्यति श्रेयसि प्रहितमानसस्तयो ।।
एतदर्थमतिदु खभासन यावदस्ति हृदयेद्य मेथ ते।
तावतोप्यधिककारणाकुल सतपत्ययमहीनमानसे।।
(वही, वही, २२/६७-६८)

कार्यकुशल नेताओं की कामचोरी देखिए-

स्वय सेवका कार्यचोरा अनेके वदत्येक एकगदत्यन्यमत्य·।
तथा तत्र याता जना प्रातिनिध्ये स्वय कार्यदक्षा अदक्षा बभूवु ।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगाधिगौरवम्, ३/४६)

जनता को क्रोधावेश में देखकर महातमा गाधी क्षुब्ध हो गए।

क्रोधावेशे जनाञ्च श्रुत्वा शान्तिशिक्षामगृहणत·।
हत्याञ्च सैनिकस्यापि गाधी चुक्षोभ मानसा।।
(वही, वही, ५/१०५)

दुर्भिक्ष के कारण ग्रामीण वासियों को भूख से व्याकुल देखकर गाधी विषाद युक्त हो गए।

प्रौढेन वयसा युक्तोऽप्यानत क्लेशसञ्चयै·।
न्यवर्तत निज देश दीन दुर्भिक्ष पीडितम्।।
ग्रामीणजनाना क्षुधार्त्ताना क्षेत्रेक्षेऽपि निर्जले।
दृष्ट्वास्थिपञ्जरान्भीमान् विष्णोऽभूद्दयाकुल·।

विस्मय—

कभी-कभो किसी कार्य के प्रति व्यक्ति को न तो आशा होती है और न वह उसके लिए प्रयत्न ही करता है, लेकिन कुछ ऐसी परिस्थितिया उत्पन्न हो जाती है, जिससे कार्य में सफलता प्राप्त होने की केवल सम्भावना मात्र ही नहीं होती है, अपितु पूर्ण सफलता भी मिल जाती है अथवा कुछ ऐसी घटनाएं हो जाए जिनकी किञ्चित् भी सम्भावना न की हो तो वहा पर विस्मय होता है। कथन को पुष्ट करने के लिए उदाहरण प्रस्तुत है—

अ- वीर प्रसूति किल यत्र भूमौ
यत्रत्यवीरेश्चलिता यमूस्यात्।
देश स गौर कृतमित्यभाग
सेहे कथं तत्त्वकितोऽस्ति गाधी।।

(श्री गाधी गोरव्रम्, ५/११७)

आ- चतुर्दिक्षु वापी तथा ह्युत्थिता सा
यया भीतभीत स सर्वाधिकारी।
प्रमोक्तु विचार स्थिरीकृत्य तूर्ण
समग्राश्च बद्धान्मुमोचाद्भुतन्तत्।।

(वही, वही, ५/१२२)

यहां पर प्रथम उदाहरण में भारतीय वीर पुरुषो का अंग्रेजो के अत्याचार को सह लेना और द्वितीय उदाहरण मे अग्रेज अधिकारी द्वारा अमृतसर में हुई काग्रेस अधिवेशन में समस्त बन्दियो को मुक्त किया जाना आश्चर्य का ही विषय है।

त्रास—

जब व्यक्ति अपने को अकेला असमर्थ जानकर असहायता अथवा मन में एक प्रकार की बेचैनी का अनुभव करता है तो वह त्रास कहलाता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(अ) "स ट्रासवालो गतयुद्धकालात्
श्मशानरूपो नहि तत्र किञ्चित्।
न खाद्यमत्रं परिदृश्यते हा
न वा विपण्या लभते च वस्त्रम्।।"

(श्री गाधि गौरवम्, ४/९)

(आ) "परोपसेवी स तु भारतीयान्
निवासहेतो परिलुण्ठ्यमानान्।
स्वकीय पार्श्वे परिरक्षणार्थ
समागतान् दृष्टिपथे शुशोच।।"

(इ) "मुक्तेषु बन्दिषु जनेषु गताश्च बालाः
"फीनिक्स" देशमनुरूपनिवासहेतोः।
तत्रत्यव्यक्तियुग पापकृतेश्चवार्ता
श्रुत्वा शमोदधिरयं हृदये चकम्पे।।"

(वही, वही, ४/८०)

महात्मा गाधी जनता को विपत्ति सागर में निमग्न देखकर दु:ख से कापने लगे।

एव जनास्तत्र विपत्तिवारानिधौ निमग्नाना सुतरा निरीक्षय।
जातानुकम्पो व्यथितस्तदानीं दयानिधिर्दीनजनैक बन्धु:।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ९./६२)

सर्वत्र विध्वस देखकर महात्मा गाधी त्रस्त हो गए।

विध्वंस सर्वतो धीर प्रत्यक्षीकृतवानहम्।
त्रस्तालोकेन लोकाना मम दुद्राव मानसम्।।

(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, ३४/२२)

क्रोध—

जब व्यक्ति की मन कामना पूर्ण नहीं होती है, वह अपनी आशा पूर्ति में बाधा देखता है, उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य होता है, तो उस स्थिति में उसकी जो मन स्थिति होती है, उसे क्रोध नामक भाव कहते हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(अ) इत्थ विलोक्य जनयूथमिमं प्रवृद्ध
शास्ता स्वचेतसि महा विकलो बभूव।
आज्ञामदत्त किल सोऽथ सुसैनिकेभ्यो
गोली प्रचालन परा विरली कुरुध्वम्।।

(आ) गच्छेत्तु दुर्ग प्रति चेज्जनौघ
उपद्रवम्नत्र भवेदवश्यम्।
अतो मया त परिरोद्धुमेव
मकारि भीमाकृतिरोद्रसी वै।।

(वही, ५/१००)

यहा पर १९१९ के समय में विद्यमान वायसराय के रोके जाने पर भी जब तत्कालीन पारित रोलेट एक्ट को तोड़ने के लिए प्रवृत्त जन समुदाय विमुख नहीं हुआ, तो वे (वायसराय) क्रुद्ध हो गए।

रति—

असमय में किया गया प्रेम अथवा विपरीत आलम्बन के प्रति जो प्रेम होता है, उसे रति भाव कहा जाता है। गान्धी जी का बाल्यावस्था में विहार सुख का अनुभव और

विलायत-अध्ययन काल के अवसर पर नृत्यादि में आनन्द का अनुभव करना रति भाव ही प्रत्यक्ष प्रमाण है। कुछ उदाहरणों से इसकी और भी अधिक पुष्टि हो जायेगी—

(अ) एतादृशी बालविवाहं रीतिर्वसेत् स्वमातुर्भवने नवोढा।
आसीत्तदासक्तिरतीव तस्या, बाल्ये विवाहस्य बुभोज शर्मा।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/२)

(आ) नृत्यादि कारणं प्रति दत्तचित
तत्राप्यनेन बलुरुप्यमकारि फल्गु।
गत्वापि तत्र युवक स्व विवाह चर्चा
कुत्रापि नैव विदध्यति विहार हेतो ।।
(वही, वही, २/३८)

उत्साह—

लगनशीलता, प्रसन्नता पूर्वक जी जान से अपने लक्ष्य की प्राप्ति में प्रयत्नशील रहना, सफलता प्राप्ति के लिए उत्कट अभिलाषा आदि उत्साह भाव के अन्तर्गत ही आते हैं। प्रस्तुत उदाहरण से भी इस बात की पुष्टि होती है–

(अ) स्वदेश सेवा करणे प्रवृत्तो
यात्रा स्वकीयामवरुद्धवान् स ।
मताधिकारीयबिले ऽपि पूर्ण।
ह्यच्छेतु काम· स बभूव गाधी।।
(श्री गांधी गौरवम्, २/५२)

(आ) परमिति गाधी वचनमसोढ्वा
पुनरपि योध्यं कृतमतिरासीत्।
(वही, ४/७)

(इ) लवणकरविनाशो मेऽस्ति कार्य प्रधान
धनरहित जनाना भोजने तत्सहायम्।
वसुशतामेलरुप्ये क्रीयते वर्षमध्ये
लवणकरविनाशो, राज्यलब्धि· स्वहस्ते।
(वही, ६/१९)

महात्मा गान्धी प्रयास करते हैं कि अफ्रीका वासी भारतीयों को अपमान न सहना पड़े और इसके लिए वह पुरुषार्थ की प्रेरणा देते हैं।

अपमानमिमं सोढुं कथं शक्नुथ बान्धवाः।
त्यक्तवाधिकारिणो भीतिमुत्तिष्ठत सपौरुषम्।।
(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, ३/२०)

स्मृति—

महात्मा गान्धी सन् १९१५ में अपने आश्रम में हुए जापानी भिक्षुओं को याद कर रहे हैं।

उदाश्रमे मे वहवो हि भिक्षुका· प्रेम प्रतिष्ठाप्य परं परं सने।
स्थिता गता·स्वा जनिभूमिमादरात्स्मरामि यातानि दिनानि तान्यहम्॥
(श्री भगवदाचार्य, पारिजातापहार, ६/२)

कस्तूरबा की मृत्यु के पश्चात् महात्मा गान्धी उनके साथ अफ्रीका में बिताए हुए और अपने देश में बिताए हुए क्षणों को याद कर रहे हैं।

स्मरति स्म पुरावृत्त प्रियया सह जीवने।
स्वदेशे चाफ्रीकाखण्डे सुखदु·खशतं मुनि·॥
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४६/४)

मोह—

कमजोर वर्ग पर अत्याचार देखकर मन में दु ख, आवेग अथवा उस विषय पर अत्यधिक विचार करने पर चित्त व्याकुल हो जाता है उसे ही मोह नामक व्यभिचारी भाव कहते हैं। बा से जनता अपार स्नेह रखती है। उन्हें रुग्णावस्था में राजकोट के लिए प्रस्थान करते हुए देखकर समस्त जनता व्याकुल हो रही है।

एतस्यामवस्थायामस्वस्था रोगपीडिता।
कारागारं महादु·ख कथमेषा सहिष्यते॥
इत्येव व्यग्रलोकाना विक्लेर्नानमे ।
मणिदेव्या महात्मासौ धूमयानमुपाश्रयत्॥
(श्री भगवदाचार्य, पारिजातापहार, १/६८-६९)

कलकत्ता में काली के मन्दिर में बकरे और भैंसे बलिदान के लिए ले जाते हुए देखकर गान्धी मोह को प्राप्त हो गए।

"कलकत्ता" पुटभेदने महति यद् बंगे महाशाक्तकं
श्रीकालीभवनं हि तत्र बलये छागातुलायादयः।
नीयन्ते वधिकाश्च तत्र निरताः हस्ते कृपाणग्रहाः।
दृष्ट्वा तानबलिश्च रक्तसरिता गांधी स मोहं गता॥
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, ३/६५)

शोक—

महात्मा गाधी को पूना से लौटने पर अपनी भावज की मृत्यु का समाचार सुनकर अत्यधिक दुःख हुआ।

पूनात् आगत्य स राजकोटे स्व भ्रातृजाया विधवा ददर्श।

अन्यैश्च सर्वे मिलितो विपश्चिद् गतो रवीन्द्रस्य च शान्ति गेहम्।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम् ४/९३)

निर्दोष जनता का विनाश किया जाना शोक नामक भाव को परिपुष्ट कर रहा है।

इदृशो जन पुञ्जोऽयं "दिल्ल्यां" दृष्ट· पुरा नहि।
आहताश्चात्र बहवो हताश्चात्र निरागस·।।

(वही, वही, ५/७९)

श्रीकृष्ण को सुदामा की करुणा जनक स्थिति देखकर अत्यधिक पीड़ा होने लगी।

कथं न नामाहमये तव स्मृतिं गतोऽद्ययावद्यदिमां दशा गत ।
प्रियो वयस्यस्त्वमिति प्रबोधयन्पुनर्हरिः शोकसमाकुलोऽभवन्।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम् १/३३)

महात्मा गाधी के परलोक गमन करने पर सारा संसार शोक-सागर में डूब गया। सर्वत्र हाहाकार होने लगा।

हाहाकारेण निखिल जगदभ्रं प्रपूरितम्।
दिशोपि विदिश· पूर्णा· शोकोच्छ्वास समीरणै ।।

(वही, पारिजात सौरभम्, २०/४)

महात्मा गान्धी अपने प्रिय मित्र महादेव की मृत्यु से अत्यधिक शोकाकुल हो गए।

अहो मे दक्षिण पाणिर्विनष्ट इव भाति मे।
मित्र कलत्रमपाग ममासीत्प्रियमाधव ।।

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह-गीता, ४३/२८)

महात्मा गाधी की मृत्यु से समस्त भारतीय जनता शोकाकुल हो गई।

निर्भेद्यातिकठोरवज्रपतनोदन्त · हृदम्भोरुह।
प्रालेयाग्निवर्षण जनगणा श्रुत्वाथ सम्मूर्च्छिता
केचित् श्रद्धते स्म नेदमपरे हा हा हता·स्मो वयम्।।
यातोऽस्तं पुनरेव भारत रविः शोकावदन्तो रुदन।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम्, १८/१४४-१४५)

व्याधि—

जब व्यक्ति का शरीर कार्य करने में असमर्थ हो जाता है तो उसे व्याधि कहा जाता है—

"देवात्सुतोऽसौ "मणिलाल" नाम
कालज्वरेण व्यथितो बभूव"।।

(वही, ३/७९)

विमूढता—

अनिर्णय की स्थिति "कि क्या किया जाय" ही विमूढता है। कथन की पुष्टि में उदाहरण देखिए–

"रेवाशंकर" गेहेऽस्मिन याते, प्राप्ते च मोटरे।
"अनुसूया" च "सोवानी" सुद्विग्नो शान्त्यभावतः।।
(श्री गान्धिगौरवम्, ५/९)

यहाँ पर अनुसूया और उमर सेवानी शान्ति के अभाव में किंकर्तव्यविमूढः दिखाई दे रहे हैं।

बंगाल में हिन्दू-मुसलमानों को बिना किसी कारण के विद्वेष भाव से ग्रस्त देखकर महात्मा गांधी का मन दोलायमान हो रहा है।

परतु दृयते चेत प्राच्यवगेषु यज्जनो।
उभौ च बद्धविद्वेषो तिष्टत कारणैरलम्।।
(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय , ३४/४१)

तर्क—

सुदामा जब श्रीकृष्ण के समीप जाते हैं तब मन में विचार उठते हैं कि वह उन्हें पहचान पायेंगे या नहीं और अगर पहचान भी लिया तो बात करेंगे या नहीं मैं उनसे अपने मन की बात कह पाऊगा या नहीं।

शनै शनैर्विप्रवरेण गच्छता विचारमाला विविधाःप्रतन्वता।
अकारि लोकोत्तरकान्तिशालिनी हरेः पुरी नेत्रपथातिथिर्मुदा।।
(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १/१८)

सुदामा की दीन-हीन दशा देखकर श्रीकृष्ण रो पड़े।

शरीरमाग्रे कृशता द्विजन्मनः कपोलेयोर्गर्त उतापि चक्षुषो।
अगूढता जत्रुयुगे विपदिकाः पदद्वये श्रीहरिमत्यरोदयन्।।
(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १/३२)

यह अतीव दुःख का विषय है कि प्रचुर मात्रा में अनाज पैदा करने पर भी भारतीय प्रजा की दशा अत्यधिक विचारणीय है।

धान्यस्य राशिन्जनयन्ति नित्यमेता प्रजा भारतभूनिवासाव।
एतेषु मत्स्वन्यम ता म्रियन्ते कूप पतन्त्येतदतीव दुःखम्।।
(वही, पारिजातापहार, २४/७)

वात्सल्य-

वात्सल्य भाव तब होता है जबकि अपने से अल्प आयु वाले के प्रति त्याग मिश्रित प्रेम भाव जागरित हो। तो लीजिए प्रस्तुत है कुछ उदाहरण—

तत्रैव नैकं बहुभीतिवातमिश्रावयत्रुच्चजलाधजाताम्।
माता स्वत्रघ्या बहुभूपणा नि विक्रीम वन्धोश्च धन मुयोज।।
प्रजा भवन्तं बहुधा प्रमाच-ते
मदीय पार्श्वे वित्रशा समागता।
सत्याग्रह नाम यदस्त्रमति मे
तस्य प्रयोगो न निवार्यते मया।।

(श्रीगाधिगौरवम्, १/३३, ६/४)

यहां पर प्रथम उदाहरण में पुतलीबाई का गान्धी जी के प्रति वात्सल्य भाव, द्वितीय उदाहरण में गाधी जी का प्रजा के प्रति वात्सल्य भाव परिलक्षित हो रहा है।

भय

किसी भयावह दृश्य को देखकर रोम-रोम सिहर उठता है। उससे जो दहशत अथवा डर मन में बैठ जाता है, कार्य के पूर्ण रूपेण फलीभूत हो जाने के पूर्व तक जो मन- स्थिति होती है उसे भय नामक भाव कहा जाता है। अंग्रेज वायसराय लार्ड कर्जन द्वारा आयोजित एक सभा में समस्त राजा मन्त्रियों सहित इसलिए सम्मिलित हुए क्योंकि उन्हें अपना राज्य छीन लिए जाने का भय था।

नित्य न ते वियमिद धरन्ति छिन्द्यात्र मे राज्यमय गुरुण्ड-।
इत्थं प्रभीता निजमन्त्री सार्धा समागतास्तत्र समस्त भूपाः।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगाधिगौरवम्, ३/६२)

भयभीत होकर अंग्रेज अधिकारी ने जन-समुदाय पर अश्व दौड़ा दिए।
अपारपार जनना समेता मुक्तो गतो दर्शयितु स्वमत्र।
भीतोऽधिकारी जनता समक्षं प्रधपयामास च वाजिवाहान्।।

(वही, वही, ५/९४)

भावोदय-

चिरकाल से जो ग्रामवासी महात्मा गाधी के प्रवास से दु-खी हो गए थे वह उनके आगमन से प्रसन्न हो गए। यहा पर हर्ष भाव का उदय हो रहा है।

ग्रामीणा ये पुरा तस्य प्रवासादुर्मनायिता ।
प्रफुल्लवदनास्तेऽमी बभूवुर्दर्शनोत्सुकः।।

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४७/२)

पगड़ी पहनकर कचहरी जाने पर महात्मा गान्धी का अपमान हुआ तो क्रोधित हो गए।

सोऽपि स्वभावात्सरलोऽपि कोपतो मानाधिक श्रीरतिमत्तमानहृत।

त्यक्त्वाशु तं न्यायमहालयं ययौ मानस्य हेतुर्न हि मानिनीश्वरः ।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ५/७

भावशान्ति-

जहा पर प्रतिकूल परिस्थिति होने पर मन में उठ रहे भाव परिपुष्ट नहीं हो पाते हैं वहा पर भावशान्ति होती है। अफ्रीका में महात्मा गाधी सेठ अब्दुल्ला के मुकदमे के सिलसिले में पगडी पहन कर जाते हैं तो न्यायाधीश द्वारा पगडी उतारने के लिए कहने पर खिन्न होकर बाहर आ जाते हैं। शीघ्र ही उन्हें शान्ति का अनुभव होता है।

पत्नीं प्रिया मानमतो च देहजो यस्मात्स्वतन्त्रावनिमुत्ससर्ज सः ।

तद् खल्वपि तमन्वगाददिति न्वन्न तमाशय बभूव शान्तिकृत ।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजात, ५/८)

कस्तूरबा का हर्ष तब समाप्त हो गया जब उन्होंने राजकोट में हो रहे युद्ध के विषय में सुना।

श्रुतवृत्ता मन्दहर्षा कस्तूरगन्धा सतीश्वरी।

वार्तातोल्या समन्ते त सतिराजन्यवोचन ।।

(वही, पारिजातापहार, १/५५)

महात्मा गाधी विलायत की परम्परानुसार अपने विवाह की चर्चा नहीं करते हैं, किन्तु भयभीत होकर सत्य का उद्घाटन कर देते हैं। इस तरह रति नामक भाव शान्त हो जाता है।

गान्धी तथैव कृतवाननृत निगद्य, वृद्धा तु कर्हिचि भवने रविधामरेषु।

एव निमन्त्रय बहुधा तरुणीषु भेजे, भीतो नृतादपनरो हृदये शुशोच ।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/३१)

महात्मा गाधी जनसेवा हेतु वकालत का परित्याग कर देते हैं। उनकी क्षमाशीलता क्रोध नामक भाव पर विजय प्राप्त कर लेती है।

अमर्षशून्यस्य हि गान्धिन. क्षमा प्रचारकार्ये बहुलाधिका भवन्।

वाक्कीलकार्येषु विरोधभाषणं विहाय गान्धी जनसेवकोऽभवत् ।।

(वही, वही, ३/१५)

भाव सन्धि-

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी द्वारा प्रयुक्त भाव सन्धि के उदाहरण देखिए-

प्राप्ते समग्र जनता प्रणता स्थले-स्थले नेतृजनानुयाता।

सम्भाषणे गान्धि-जय वदन्ती प्रीत्या च भोजनम् मिलिता चकार ।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ५/५८)

यहा पर जनता में हर्ष एवं भक्ति दोनों ही भावों का एक साथ उद्गम हो रहा है।

पुष्पांजली कुसुमादि वर्षने-

आरातियात्रै परिपूजितो यति ।
सेना समेता लगुडेन मयुत
श्चचाल सेनापतिरायुधैर्विना।।

(वही, वही, ६/१४)

इस स्थल पर उत्साह एवं भक्ति भाव दोनों एक साथ गांधि जी के मन में उठ रहे हैं। एक स्थलपर गाधी जी की विषादयुक्त प्रजावत्सलता का वर्णन है—-

पादान् भारतवर्षस्य कृन्तन्ति मम शत्रव ।
पादहीनो कथं गच्छेद् भेदनीते फलान्त्विदम्।।

(वही, वही, ७/१७)

पुतलीबाई मोहन दास को अश्रुपूरित नेत्रों से और प्रसन्नता पूर्वक आशीर्वाद देकर विदा करती है।

इति वचनमुदारं श्रृण्वती सा सुतस्य व्यपनयदपशंकामकमानीयसूनुम्।
शिरसि तमुपाघ्राद्वत्सला सा-श्रुनेत्रा व्यतरदथशुभारता स्वशिषोऽस्मै प्रसन्ना

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, ३/४१)

समस्त जनता महात्मा गाधी को देखकर हर्षित हो गई और भक्ति पूर्वक उनकी विजय कामना करने लगी।

विलोक्य जनता सर्वा हर्षोत्फुल्लविलोचना ।
भक्त्या सभाजयाचक्रुर्जयघोषपुरःसरम्।।

(वही, वही, ८/१५६)

भाव शबलता-

श्री गाधिगौरवम् में केवल एक ही स्थल पर भावशबलता देखने को मिलती है—-

ततो घोषित.पूर्ण सत्याग्रहोऽयं
न देय.करो देहदण्डं सहेरन्।
सहित्वा च कारा बुभुक्षाञ्च सौड्ढ्वा
परमेव हेय शुभो नम्र भाव ।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी , श्रीगाधिगौरवम्, ५/५७)

यहा पर दृढता, धृति, उत्साह भाव एक साथ उदित हो रहे हैं। इस प्रकार समस्त काव्यों में भाव पक्ष का निर्वाह बड़ी ही कुशलता से हुआ है। उनमें वीर रस का तो समायोजन अत्यधिक सराहनीय है। अन्य रस और भाव का प्रदर्शन उनमें पृथक्-पृथक् हुआ है। इसके अलावा सभी महाकाव्यों में किया गया करुण रस का वर्णन हृदय को झकझोर देता है। हम कह सकते हैं उनमें वर्णित भाव पक्ष सक्षम है। उनमें जितनी चतुरता से कला-पक्ष का निर्वाह हुआ है उससे कहीं अधिक भावपक्ष आकर्षित एवं मन को छू लेने वाला है।

महाकाव्यों में भावपक्ष का विवेचन करने के पश्चात् अन्य काव्यों में भी भावपक्ष का विवेचन करना आवश्यक है लेकिन मैं यहा पर विस्तार भय के कारण उनका यहा पर सक्षेप में परिचय मात्र दे रही हूं।

खण्डकाव्यों में भाव पक्ष-

खण्डकाव्यों में भावपक्ष निरूपण अत्यधिक उत्कृष्ट बन पड़ा है। उनमें सर्वत्र ही वीर रस का साम्राज्य है। मैं यहा पर राष्ट्ररत्नम् में वीर रस का विवेचन कर रही हूं।

सम्पूर्ण काव्य में राष्ट्रिय-भावना दृष्टगोचर होती है। अत: उसमें वीर रस का होना स्वाभाविक है। महात्मा गाधी समस्त सुखों के मूल स्वराज्य प्राप्ति हेतु भारतीयों का आह्वान करते हैं। उनकी यह उत्साहपूर्ण वाणी सभी के हृदय में एवं आकाशमण्डल में गूज उठी। गाधी जी के इन वचनों से प्रेरणा पाकर समस्त भारतीय उनके साथ ही चल पड़े। उन्होंने अपने प्राणों की भी परवाह नहीं की। उन्होंने इस सत्याग्रह आन्दोलन के बल पर अग्रेज शासन से मुक्ति पाई और भारत राष्ट्र को स्वतन्त्रता दिलवाई। धर्मवीरता का यह उदाहरण कवि के ही शब्दों में देखिए—

स्वतन्त्रता सर्वसुखस्य मूल पराश्रयो दुःखकर. सदैव।
समं मिलित्वा खलु भारतीया लभध्वनानन्दकरं स्वराज्यम्।।
इयं सदुक्तिर्वदनान्निरीय, जुगुञ्ज देशेऽत्र महात्मनोऽस्य।
सा पूरयामास दिगन्तराणि, अनान्तरारलानि नभा-न्तराणि।।
तद्वाक्यमाकर्ण्य च भारतीया· श्रीगांधिना दर्शितमार्गमेत्य।
सर्वे ऽपि ते प्राणपणेन युक्ता· सत्याग्रहे सम्मिलिता अभूवन्।।
आन्दोलनन्याममयोगमूलम् अहिंसक वीर वरै· च साध्यम्।
आलोचयद् चैन जगाम मुक्ति, विलुप्त गौरांग मिदं सुराष्ट्रम्।।

(यज्ञेश्वर शास्त्री, भारतराष्ट्ररत्नम, राष्ट्रपिता महात्मा गाधी शीर्षक सं, प.सं.-२५-२८)

अन्य काव्यो में इसका उदाहरण नहीं दे रही हूं। इन काव्यों में वीर रस के अलावा करुण रस, भक्ति-भावना, नाथूराम गोड्से द्वारा गांधी जी के मारे जाने के प्रसंग में रौद्र रसाभास आदि का भी यथास्थान वर्णन हुआ है। इन उदाहरणों को मूल पुस्तक में देखा जा सकता है।

गद्य काव्यों एवं दृश्य काव्यों में भावपक्ष-

गद्यकाव्यों एव दृश्य काव्यों में भी सर्वत्र ही वीर रस ही परिलक्षित होता है। वह सर्वत्र ही उत्साह का संचार करने वाले हैं। उनमें अहिंसात्मक युद्ध का वर्णन है। हमारे आलोच्य नायक वीर रस का आश्रय है। वह कारागृह की यातनाओं से भी नहीं घबराते हैं। उनके साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाले वीर सिपाही किसी प्रकार की यातना से घबराकर पीछे नहीं हटते हैं। यह भी महात्मा गांधी की वीरताहै कि वह अब्दुल्ला को न्यायालय में सत्य बोलने के लिए प्रेरित करते हैं। इसके अलावा इन काव्यों में करुण

रस का संचार भी मन को आकृष्ट कर लेता है।

समवेत समीक्षा-

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि महात्मा गाधी पर आधारित समस्त विधाओं में भाव-पक्ष का निर्वाह कुशलता पूर्वक किया गया है। उसमें रस, भाव, भावाभास आदि समस्त अंगो को नियोजित ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

सन्दर्भ

(१) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, ११/९६-१०१

सप्तम अध्याय

महात्मा गान्धी पर आधारित काव्य में कलापक्ष

"उपकुर्वन्ति तं सन्त येऽङगद्वारेण जातुचित्।
हारादिवद् अलंकारास्तेऽनुप्रासोपमादय [2]।।
"काव्यशोभा करान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते [3]।"

स्पष्ट है कि वह दोनों अलंकारों को काव्य के लिए उपयोगी तो स्वीकार करते है लेकिन आवश्यक नहीं क्योंकि अलंकारों का अतिशय प्रयोग काव्य को अलंकृत करने के स्थान पर दूषित ही करता है, वैसे भी स्वाभाविक सौन्दर्य ही अधिक उत्तम होता है उसे अन्य किसी आडम्बर की आवश्यकता ही नहीं होती है।

यद्यपि शरीर की शोभावृद्धि में सहायक कटक, कुण्डल आदि के समान अनुप्रास, उपमा आदि भी काव्य शरीर की सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होते हैं, लेकिन उनका सीमित मात्रा में प्रयोग अधिक अच्छा लगता है। कभी-कभी तो अधिक अलंकारों को धारण करने वाले व्यक्ति के सौन्दर्य का ह्रास ही होता है। जिस तरह से भोजनमें व्यञ्जनों की अधिक मात्रा जिह्वा के स्वाद को कम कर देती है और व्यञ्जनों की उचित मात्रा तथा यत्नपूर्वक बनाया गया भोजन और भी अधिक सुस्वादु हो जाता है। एक हल्के रंग का वस्त्र नेत्रों को आनन्द प्रदान करता है: लेकिन अगर कोई नानाविध बेल-बूटों वाले विभिन्न रंगों के वस्त्रों को धारण करता है तो वह दर्शक की आखों को खटकने लगता है। वैसे ही काव्य में अगर अलंकारों की झड़ी लगा दी जाए तो उसका वास्तविक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है जबकि स्वाभाविक रूप से आए हुए अलंकारों से काव्य का सौन्दर्य और भी बढ़ जाता है।

अलंकारों की उपयोगिता इस आधार पर है कि ये रस की अभिव्यंजना में अत्यधिक सहायक होते हैं और अगर ये रस की अभिव्यंजना में बाधक होते हैं तो इनकी अपरिहार्यता नष्ट हो जाती है-वैसे भी अलंकार काव्य के अस्थिर धर्म है। वह काव्य में सदैव रहें ही यह कोई नियम नहीं है।

जिस तरह एक सुन्दर स्त्री को विभिन्न आभूषणों की कोई आवश्यकता नहीं होती है उसी तरह एक उत्तम काव्य को अलंकारों की कोई आवश्यकता नहीं होती है उसमें तो दोषों का अपनयन और गुणों का आधान होना चाहिए। अलंकारों का होना काव्य के लिए जरूरी नहीं है, लेकिन अगर अलंकारों का प्रयोग भी हो और उससे काव्य की आत्मा धूमिल न हो, काव्य का सौन्दर्य द्विगुणित हो तो उन्हें नकारा भी नहीं जा सकता है। समस्त कवियों का सिंहावलोकन करने से यह तथ्य प्रस्फुटित होता है कि पण्डिता क्षमाराव से लेकर साधुशरण मिश्र ने अलंकारों का प्रयोग उपर्युक्त तथ्य को दृष्टिपथ पर रखकर ही किया है। उन्होंने अलंकारों के प्रयोग में अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया है।

अलंकार शब्द और अर्थ के आधार पर दो प्रकार के होते हैं—शब्दालंकार अर्थालंकार। शब्दालंकारों का चमत्कार शब्द पर आश्रित होता है और अर्थालंकार का चमत्कार अर्थ पर निर्भर करता है। समस्त महाकाव्यों में दोनों ही तरह के अलंकारों का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। इनमें से कुछ महाकाव्यों में तो बारह, पन्द्रह, सत्रह अलंकारों

का प्रयोग किया गया है जबकि कुछ महाकाव्यों में चार-पांच अलंकारों का ही प्रयोग किया गया है।

समस्त महाकाव्यों में जिन अलंकारों का प्रयोग किया गया है वे इस प्रकार हैं—

अनुप्रास, यमक, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, दृष्टान्त, अपह्नुति, व्याजस्तुति, व्याजनिन्दा, रूपकातिशयोक्ति, स्वभावोक्ति, विरोधोक्ति, परिणाम, भ्रान्तिमान्, सहोक्ति, दीपक, संसृष्टि, निदर्शना, समासोक्ति, परिकर, एकावली आदि। श्रीमद् भगवदाचार्य, श्री माधुरराम मिश्र,श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, पण्डिता क्षमाराव आदि को उपमा अलंकार अत्यधिक प्रिय हैं तभी तो उन्होंने अपने काव्यों में इसका प्रयोग सर्वाधिक किया है और श्री निवास राडवत्रीकर ने तो अपने काव्य में एक-दो अलंकारों का ही प्रयोग किया है,किन्तु जितना भी किया है वह सराहनीय है। अब मैं सभी महाकाव्यों में प्राप्त अलंकारों का सम्मिलित रूप में वर्णन कर रही हूं—

सभी महाकाव्यों के पर्यवलोकन से स्पष्ट हो रहा है कि उन सब में शब्दालंकारों में अनुप्रास को और अर्थालंकारों में उपमा को महत्त्व दिया है। इसी आधार पर सर्वप्रथम शब्दालंकारों को लिया जा रहा है—

(क) अनुप्रास—

"अनुप्रास शब्द साम्य वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्।"

—विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/३

अनुप्रास अलङ्कार का प्रयोग लगभग सभी कवियों ने किया है।

सत्याग्रह गीता में प्रयुक्त अनुप्रास अलंकार

पण्डिता क्षमाराव ने अनुप्रास अलङ्कार का प्रयोग सर्वाधिक किया है और उनमें भी अनुप्रास के पांचों भेदों में से अन्त्यानुप्रास का प्रयोग अधिक किया है—

(क) साम्राज्यस्योपकारे हि भारतस्य हितं स्थितम्।
इति सत्याग्रहग्रामिदेहस्या युद्धसंमदम्।।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, ५/६)

यहां पर पद के अन्त में "अ" स्वर सहित "म" व्यञ्जन की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है।

(ख) सत्याग्रहेण वर्द्धोऽहं भस्यामि नृपशासनम्।
योगविन्दे च सर्वत्र तदवनस्माद्भुतं बलम्।।

(वही, वही, १०/२८)

प्रस्तुत उदाहरण में भी अन्तिम स्वर सहित व्यंजन की आवृत्ति होने के कारण अन्त्यानुप्रास प्रस्फुटित हो रहा है।

इसके अलावा उन्होंने श्रुत्यनुप्रास के प्रयोग से काव्य को मधुर बना दिया है—

(ग) न परं भारतं वर्षं विदूरा अपि भूभुजः।

भामिता- सत्यदीपेन ज्वलितेन महात्मना।।

(वही, वही, १८/१६)

अनुप्रास अलकार का ही एक और सुन्दर उदाहरण देखिये—

जयतु-जयतु गाधिः शान्तिभाजा बरेण्यो
यमनियममुनिस्ठः प्रौढसत्याग्रहीन्द्रः।
हिमरुचिरिव पूर्ण सान्द्रलोकान्धकारम्
विशदसुनयबोधैरंशुजालैर्निरस्यन्।।

(वही, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४७/२१)

इन उदाहरणों से ही उनकी अनुप्रास प्रियता और अनुप्रास बहुलता का परिचय मिल जात है अन्य उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है।

गांधी-गीता में अनुप्रास अलंकार—

श्रीनिवास ताडपत्रीकर ने भी अन्त्यानुप्रास का प्रयोग ही अधिक किया है और श्रुत्यानुप्रास का भी प्रयोग किया है—

(क) "परस्परविरोधेषु वयं पञ्चैव ते शतम्।
परै-परिभवे प्राप्ते वय पञ्चाधिक शतम्"।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, ८/४३)

यहां पर तो अन्त्यानुप्रास एकदम स्पष्ट हो रहा है।

(ख) तेजोविहीने भावे तु दैन्यस्यैव प्रदर्शनम्।
क्षुद्रस्य चास्य भीतस्य यथा कर्म सुदुर्बलम्।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, ६/१२)

प्रस्तुत उदाहरण में भी अन्तिम स्वर सहित व्यजन की आवृत्ति होने से अन्त्यानुप्रास अलंकार है।

श्रीमहात्मगाधिचरितम् में अनुप्रास अलंकार—

इस महाकाव्य में भी अन्त्यानुप्रास का प्रयोग अधिक किया गया है—

(क)आर्त्तैरनार्त्तैरपि भारते ततैरुदन्तजातैरधिगत्य सयुगम्।
चीनेन साक उदारचेतसा मनोभवन्मेचित्रश व्यथाकुलम्।।

(श्रीमद् भगवद्ाचार्य, पारिजातापहार, ६/१६)

यहा पर पद के अन्त में "अ" स्वर सहित "म" वर्ण की आवृत्ति होने से अन्त्यानुप्रास अलंकार है।

पद के अन्त में "ता" व्यजन की आवृत्ति वाला अन्त्यानुप्रास का एक उदाहरण देखिए—

(ख) युष्माभिरपि वक्तव्यं जीविकायै हि दासता।
स्वीकृता तेन गुप्ताज्ञा न भवेत्प्रतिपालिता।।

(वही,वही, १८/२४३)

श्रीगांधिगौरवम् में अनुप्रास अलंकार-

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने अनुप्रास अलंकार का सर्वाधिक प्रयोग करके भाषा को अत्यधिक सरस एवं आकर्षक रूप प्रदान किया है। उन्होंने अपने काव्य में अनुप्रास के तीन भेदों श्रुत्यनुप्रास, अन्त्यानुप्रास और लाटानुप्रास का प्रयोग किया है। आपके आस्वादन के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) पठन्तो भारतीयास्तु लभ्यन्ते गौरवं स्वकम्।
महद्भ्यो लभ्यते ज्ञानं श्रेयोऽनुकरणम् मतम्।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम् १/४)

(ख) लक्षाधिके कर्मणि दत्तचित्त अन्योन्यदा लोष्टसमानवित्त.।
स आत्मबोधैनिरता वरिष्ठ श्रीराजचन्द्र कविनागरिष्ठ.।।
(वही, वही, २/८)

(ग) शपथमथ गृहीत्वा देशसेवी महात्मा
विगत समय मध्ये यो न बन्ध शिरस्त्र।
कृतनिजहठधर्मासेननाराथ कोटे
स हि महित मनस्वी बन्धनञ्चोत्तरान्।।
(वही, वही, २/५६)

(घ) दुर्गविधुनवचन्द्रे वत्सरे त्वीशवीये
सविधि भवति मत्ये चाग्रहे शान्तिनिष्ठे।
त्रिकमिदमवत्तद् गन्तुकामं स्वदेशं
प्रथमगमनमार्गेवन्दन राजदेशम्।।
(वही, वही, ४/८४)

(ङ) प्रबल बल मनेतो मारुतस्वा चचाल
जल कल कल शब्दा वारिधो सम्भ्रमुवु।।
(वही, वही, ३/१)

प्रथम दो उदाहरणों में पद के अन्त में स्वर सहित व्यञ्जन की आवृत्ति होने से अन्त्यानुप्रास की छटा प्रस्फुटित हो रही है। प्रथम उदाहरण में अ स्वर सहित म वर्ण की और द्वितीय उदाहरण में इ स्वर सहित त्त और ष्ठ व्यंजनों की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है। तृतीय और चतुर्थ उदाहरण में गृहीत्वा, देशसेवी कृत.......कोटे, चन्द्रे वत्सरे आदि का उच्चारण स्थान एक ही होने के कारण श्रुत्यनुप्रास अलंकार है।

पांचवें उदाहरण में बल की पुनरावृत्ति हुई है, जो कि तात्पर्यतः भिन्न है। प्रथम बल का अर्थ वेगवान् है और द्वितीय बल का अर्थ पवन है। अतः यहां पर लाटानुप्रास नामक भेद लक्षित हो रहा है।

श्रीगांधिचरितम् में अनुप्रास अलंकार—

श्री साधुशरण मिश्र भी अनुप्रास अलंकार के प्रयोग में अत्यधिक निपुण है। उन्होंने अपने काव्य में इस अलंकार का प्रयोग खूब जमकर किया है। उन्होंने अनुप्रास अलकार के भेदों में से छेकानुप्रास, श्रुत्यानुप्रास, वृत्यानुप्रास,अन्त्यानुप्रास का प्रयोग किया है और अन्त्यानुप्रास की तो झड़ी ही लगा दी है।

(क) कुसुमसौरभलुब्धपरिभ्रमद्भ्रमरवृन्दरबैरुपसेवत्।
पिककुलैश्च रसालमुमञ्जरी कृतरसामितपानकलस्वनै

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ४/१८)

प्रस्तुत उदाहरण में "म" "स" म "ध" "क" "ल" आदि वर्णों की अनेक बार आवृत्ति होने से वृत्यानुप्रास अलंकार है।

(ख) सुधामयूखमालाभिः सिञ्चन्तं शर्वरीश्वरम्।
नयनानन्ददं चन्द्रं नलिनी न निरीक्षते।।

(वही, वही, १५/५४)

यहा पर श्रत्यनुप्रास की छटा दर्शनीय है। इसके अलावा छेकानुप्रास का प्रयोग अतीव मनोमुग्धकारी है–

(ग) स्थाने-स्थाने वर्तते लोकसंघ संघे संघे गीयते तद्‌गुणोघ ।
गाने-गाने व्यज्जते प्रेमभावोभावे भावे श्रद्धयाभक्तिराशि

(वही, वही, १०/७)

अब कुछ उदाहरण अन्त्यानुप्रास के भी प्रस्तुत कर रही हूं—

(घ) निर्धनाना निधिः सीतारामनाममनोहरम्।
निर्बलाना बल दिव्यं सर्वतेजोभिभावकम्।।

(वही,वही, १८/११)

(ङ) तथैव सद्‌भक्तमतीमहिसा सत्यैकनिष्ठा तपसि प्रवृतम्।
तामेव संभावयितुं महात्मा धर्मप्रियाधर्मनिधिर्जगाम्।।

(वही, वही, १४/५)

इन दोनो उदाहरणों में आ स्वर सहित म की अन्तिम आवृत्ति होने से अन्त्यानुप्रास स्पष्ट हो रहा है।

श्लेषः—

"श्लिष्टैः पदैरनेक्कार्थाभिधाने श्लेष इष्यते"।

—विश्वनाथ साहित्य दर्पण, १०/११

श्रीगांधिगौरवम् में श्लेष अलकार—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने श्लेष का केवल एक-दो ही स्थलों पर प्रयोग किया। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

दास्यन्ती चेयं "महादेव"—पार्श्वे
स्वर्ग यात्वा तेन सार्ध वसेत्सा।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, ७/४६)

यहां पर "महादेव" का "महादेव-देसाई और" भगवान् शिव इन दो अर्थों में प्रयोग होने से श्लेष अलंकार है।

यमक—

"सत्यर्थे पृथगर्थाया स्वरव्यञ्जन संहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते।।

(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/८)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में यमक अलंकार—

यमक अलकार का प्रयोग केवल इसी महाकाव्य में हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) अथवा स्वसदाचाराद्विचाराद्युत्तमोत्तमात्।
सर्वेषां मोहनादेष सुनाम्ना मोहनोऽभवत्।।

(भारत पारिजातम् ३/३)

प्रस्तुत उदाहरण में "चाराद्" और "मोहन" इन दो शब्दों की पुनरावृत्ति हुई है। इनमें से चाराद् शब्द प्रत्येक बार निरर्थक है और "मोहन" शब्द का एक बार तो "मोहित" अर्थ है दूसरे "मोहन" का अर्थ मोहन नाम से है। अतः ये दोनों बार सार्थक है। इसलिए यहा पर यमक है।

(ख) अथ गता रजनी विजनीभवद्यतिवराश्रम एव नृणा सताम्।
दिवि च भास्करभा प्रसृता· शनैरुपसृता वसुधावसुधातले।।

(भारत पारिजातम् १३/१)

इस उदाहरण में जनी, सृता एवं वसुधा इन शब्दों की पुनरावृत्ति हुई है। पहले दोनों शब्द निरर्थक हैं और "वसुधा" शब्द दोनों ही बार किसी अर्थ की अभिव्यक्ति कराता है। अतः यमक अलकार है।

अर्थालकारों का विवेचन किया जा रहा है।

उपमा—

साम्यं वाच्यमवैधर्म्य वाक्यैक्य उपमा द्वयो·।

(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/१४)

समस्त अलंकारों में उपमा को सबसे अधिक श्रेयस्कर माना जाता है। उपमा का सर्वाधिक और उत्कृष्ट वर्णन करने के कारण ही संस्कृत साहित्य में कालिदास को "उपमा सम्राट" इस उपाधि से अलंकृत किया गया है। हमारे आलोच्य कवियों ने भी उपमा का अत्यधिक प्रशंसनीय प्रयोग किया है।

सत्याग्रहगीता में उपमा—

पण्डिता क्षमाराव ने उपमा अलंकार का प्रयोग बहुलता से तो नहीं किया है, लेकिन अन्य अलंकारों की अपेक्षा उस पर अधिक जोर दिया है। कुछ उदाहरण देखिए—

(क) अवरुद्धजनैः काराः पूरयन्ति स्म शासका.।
यथा गड्डरिकावृंदैर्वध्यशाला· पलाशका ।।

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता ६/१३)

(ख) तस्योपवासवृत्तान्तिः प्रसृत सर्वभारते।
मनांसि ज्वलयन्नृणां दावाग्निरिव शाखिन.।।

(वही, वही, ७/१२)

(ग) बन्धनादागते गाधो पुष्पाणि ववृपु जनाः।
अयोध्यामागते रामे वनवासादिवामरा·।।

(वही, वही, ४७/६)

(घ) वयं न शृणुमस्तस्याः सूक्ष्मनादं प्रमादिन ।
अन्धा इव न पश्यामो ज्वालास्तम्भं पुरोगतम्।।

(वही, स्वराज्य विजयः, १/३०)

प्रथम उदाहरण में कारागृह की तुलना वध्यशाला से की गई है और "यथा" वाचक शब्द है, द्वितीय उदाहरण में महात्मा गाधी के उपवास का वृत्तान्त उसी प्रकार फैला जिस प्रकार दावाग्नि प्रज्वलित होकर विस्तृत होती है। "इव" वाचक शब्द है। तृतीय उदाहरण में कारागृह से वियुक्त होकर आए हुए गाधी का स्वागत जनता ने पुष्पों की वर्षा से उसी प्रकार किया है जैसे कि वनवास के पश्चात् अयोध्या आए हुए राम का स्वागत हुआ था। चौथे उदाहरण में यह उपमा दी गई है कि हम प्रमादवश ईश्वर की आवाज को उसी तरह नहीं सुन पाते हैं जिस प्रकार अन्धा अपने समक्ष प्रज्वलित ज्वाला को नहीं देख पाता है।

(ङ) यथा समुदयत् भानुः केतुना ग्रस्यते हठात्।
तथा भानूदये गाधिवरुद्धौऽधिकारिभिः।।

(वही, उत्तरसत्याग्रह गीता ४३/१८)

गांधी-गीता में उपमा—

प्रस्तुत महाकाव्य में तो गिने-चुने ही स्थल हैं जहां पर उपमा का प्रयोग हुआ है। आपके समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) स्वयं संन्यतसर्वस्वतेजस्वी चांशुमानिव।
ऐक्यभावं स्वाभिमानं स्वकीयेषु प्रसारयन्।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गांधी-गीता, ११/२७)

यहा पर विवेकानन्द की तेजस्विता की तुलना सूर्य से की गई है और इव वाचक शब्द है। अतः यहां पर उपमा अलंकार है।

श्री महात्मगांधिचरितम् में उपमा

उपमा का सर्वाधिक उत्कृष्ट प्रयोग इसी महाकाव्य में हुआ है। उनके द्वारा प्रस्तुत उपमा कालिदास की उपमाओं से साम्य रखती है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) दीनानाम स्वदनैव पारिजातं कामनाखिलपूर्णां सदानन्दनम्।
श्रीराम स्पर्शित उपास्य [illegible]न्धुस्तत्स्थानाऽनन्तुविनाभ्दिवान्महात्मा।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ६/४३)

(ख) देव राजभिवादान्त नैन्द्रैर्युक्त सुरैरिव।
नयनातिथिता नीत्वा त नात्मनि समुरच ते।।
(वही, वही, १४/८)

(ग) अथ जानुविलम्बिबाहुको गगनानीत जनाधिवेष्टितः।
स्मयमानशशिप्रभाननो ह्युवतस्थौ स विचारमग्नि।।

(घ) ज्वलन्महानल ज्वालाविलासैः परिपेवितः।
काञ्चनो मणिर्निवाप दीप्यते दग्धदूषण।।
(वही, पारिजातापहार, २९/८७)

(ङ) यद्यप्यसौ तस्य वचो निशम्य मनं मर्षदे किन्हादृगन्तीना।
न व्यस्मरत्किन्तु निशानमेनच्छन्य मनस्येव महामनीषी।।
(वही, वही, ४/२८)

(च) यथा समुत्पाद्य सुरेश मन्निभ गुरुं सुरगामिव धिप्रवर्धमम्।
सुत हरिश्चन्द्रमिव प्रभासिन जगत्त्रय धन्यतमा कथं न सा।।
(वही, भारत पारिजातम्, १/४८)

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो रहा है कि काव्य में उपमा के अनेक भेदों का प्रयोग किया गया है। प्रथम उदाहरण में महात्मा गांधी की उपमा कल्पवृक्ष से दी गई है, कामनाओं को पूर्ण करना साधारण धर्म है और वाचक शब्द का लोप है, इसी तरह द्वितीय उदाहरण में महात्मा गान्धी उपमेय और देवराज इन्द्र उपमान हैं "इव" वाचक शब्द है, लेकिन साधारण धर्म का लोप है अत इन दोनों उदाहरणों में उपमा अलंकार है इसी प्रकार तीसरा और पाँचवा उदाहरण भी लुप्तोपमा का है। चतुर्थ उदाहरण पूर्णोपमा का है। और अन्तिम उदाहरण में मालोपमा है क्योंकि इसमें महात्मा गांधी की उपमा इन्द्र, बृहस्पति, हरिश्चन्द्र से दी गई है "इव" वाचक शब्द है और तेजस्विता साधारण धर्म है।

श्री गांधिगौरवम् में उपमा—

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी द्वारा प्रयुक्त उपमा की जितनी प्रशंसा की जाए थोड़ी है। उन्होंने उपमा के श्रौती एवं आर्थी दोनों रूपों का प्रयोग किया है—

(क) श्री नन्दनमूलिगतनन्दनम विहाय मुम्बा पुनराजगाम।
भ्राम्यन् खगेऽनन्तमुर्दैर्न नीडं, यथा विदेशात्स्वदेशमयात्।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३)

(ख) बम्बय्या सिंहदेश्यो ह्यविधृत मुकुटो बादशालो मनस्वी।

(वही, वही, २/८१)

(ग) गौरान् रक्षितुकामाऽसौ संसन् नगरपालिका।

नत्रास्य बाह्ये तान वस्ति होलिकावद् ददहताम्।।

(वही, वही, ४/३०)

(घ) तयोक्तं मया तन्तुं चक्रन्तुं खोज्य

तथा तं नलं प्राप भैमी प्रखुज्य।

तथा प्राप चक्रञ्च "बीजापुरे" सा

गृहीतुस्त्वभावे धृतं तच्च कोणे।।

(वही, वही, ५/१३५)

(ड) सर्वे नेतृत्त्व योग्या हि कारा भरत सैनिकैः।

चूमर्युपमाकम्पेया तु धारेवात्रागमिष्यति।।

(वही, वही, ६/३७)

(च) गौरस्य सूचना पत्रैऽधीतमन्त्यजमञ्जनम्।

चकम्पे हृदयन्तस्य यथा श्वत्थस्य पत्रकम्।।

(वही, वही, ७/१६)

प्रथम उदाहरण में उभयोपमा है, क्योंकि यहा पर प्रथम चरण में वाचक शब्द नही है और द्वितीय चरण में वाचक शब्द है। अतः श्रौती और आर्थी दोनों प्रकार की उपमा है तथा लन्दन की उपमा नन्दन वन से की गई है और गान्धी जी की उपमा एक पक्षी से। द्वितीय उदाहरण में बादशाह की उपमा सिंह से, तृतीय उदाहरण में बस्ती के दाह की तुलना होलिका दाहसे की गई है और "वत्" वाचक शब्द का प्रयोगभी किया है। चतुर्थ उदाहरण में सूत के चर्खे के अन्वेषण में नल द्वारी की गई दमयन्ती की खोज को उपमान बनाया गया है। पञ्चम उदाहरण में सेना की उपमा धारा से की गई है और "इव" शब्द के पत्ते को उपमान, यथा को वाचक शब्द और कापना आदि को दोनों में समान रूप में पाए जाने वाले धर्म को भी उल्लिखित किया है।

स्पष्ट है कि श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने अपने काव्य में उपमा के विविध रूपों को चतुरता से प्रयुक्त किया है। साथ ही कुछ स्थल हैं जहा पर (४) उपमा के दर्शन होते हैं।

श्रीगांधिचरितम् में उपमा—

श्री साधुशरण मिश्र ने भी उपमा अलकार का प्रयोग सर्वाधिक किया है। उपमा अलंकार के उदाहरण उनके सम्पूर्ण काव्य में देखे जा सकते हैं। कुछ उदाहरण आपके समक्ष प्रस्तुत हैं—

(क) तस्या पदा पलाशाक्ष्या वदनं निष्प्रभंशुचा।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम्, २,

(ख) यथा रविः सन्तमस विनाश्य करैरशेषैः कुरुते प्रकाशम्।
तथा महात्मा वचनैर्जनानामज्ञानमाच्छिद्य धियं प्रदत्ते।।

(ग) यथेन्धनौधं हुतमुक् प्रदीप्तो ज्वालावलीढंकुरुते विशुष्कम्।
क्षणैन तद्वत् हृदिनः प्रकोप सर्व विवेकं दहतीह पुसाम्।।
(वही, वही, १७/४१)

(घ) श्री साधुपूर्वशरणेन कवीश्वरेण,
राजीववद् विकसिता रचित सुकार्व्यम्।
आस्वादयन्तु सरसं रसिका विपश्चिद्।।
भृगा निरन्तरमिद महतादरेण
(वही, वही, १९/१२३)

(ङ) हित्वा लोकमिम माता परं धाम समाविशत्।
श्रुत्वेति छिन्नद्रुमवन् मूर्च्छितोन्यपतत् क्षितौ।।
(वही, वही, ६/१७)

(च) अन्धो यथा दृष्टिमवाप्य सद्यो भृशं प्रमोदेज्जगदीक्षमाण ।
तथा महात्मानवेक्षय सर्वे प्रीता निजोद्धारविधो प्रतीयु ।।
(वही, वही, ९/४३)

(छ) कल्पद्रुमं प्राप्य तथा दरिद्रः स्वकीयभाग्योदयमीहमान ।
भवेत्तथेमं समवाप्य लोका स्वदुः खमोक्षेत्वभवत्नधृताशाः।।
(वही, वही, ९/४४)

इन उदाहरणों के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है कि प्रस्तुत काव्य में श्रौती उपमा का प्रयोग ही अधिक हुआ है आर्थी उपमा का कम। प्रथम उदाहरण में पद्म के सदृश मुख का कान्तिविहीन होना ये अर्थ निकल रहा है। अतः यहा पर आर्थी उपमा है, अन्य उदाहरणों में यथा, वत्, इव आदि वाचक शब्दों से उपमा अलकार स्पष्ट हो रहा है।

रूपक—

रूपक रूपितारोपाद्विषये निरपह्नवे।
(विश्वनाथ, साहित्य, दर्पण, १०/२८)

सत्याग्रह गीता में में रूपक—

सत्याग्रह गीता में उल्लिखित रूपक अलंकार के दो उदाहरण देखिए—

(क) जनचित्तेषु जज्वाल ज्वाला क्रोधमहार्चिषाम्।
आग्लेपु भारतश्रद्धा चक्रे भस्मावशेषिताम्।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, ४३/३)

यहां पर क्रोध में ज्वाला का आरोप होने से रूपक अलंकार स्पष्ट हो रहा है।

(ख) स्वराज्यप्राप्तये नूनं देशस्यावश्यकं त्रयम्।

पूर्वमस्पृस्यताव्याधेर्निमूलनमशेषतः।।

(वही, स्वराज्य विजय., १३/३०)

इस उदाहरण में अस्पृश्यता रूपी व्याधि के समूल नाश की बात कही गई है। अत· अस्पृश्यता उपमेय और व्याधि उपमान है। अस्पृश्यता में व्याधि का अभेदारोप होने से रूपक अलंकार है।

(ग)न परं भारतं वर्ष विदूरा अपि भूमय ।

भासिता· सत्यदीपेन ज्वालितेन महात्मना।

(वही, सत्याग्रह गीता, १८/१६)

श्रीमहात्मगांधीचरितम् में रूपक—

प्रस्तुत महाकाव्य में उपमा के पश्चात् रूपक का प्रयोग किया गया है। कुछ उदाहरण देखिए—

(क) वसन्महात्मा स उदारवृत्तिर्निजाश्रमे साभ्रमती तटस्ते।

शनै· शनैर्भारतिना विशुद्धे मनः परे चित्रयताध्याहिंसाम्।।

(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ११/२)

प्रस्तुत उदाहरण में मन पर वस्त्र का आरोप किया गया है। अत रूपक अलकार स्पष्ट है।

(ख) निजाचार्यपदाम्भोज भ्रमरो निर्ममो भवत्।

सर्वत्र स्वस्य सौगन्ध्यान्मोहयन्गुणिना मन·।।

(वही, पारिजातापहार, २१/३४)

प्रस्तुत उदाहरण में महात्मा गाधी के चरणों पर कमल का और महादेव देसाई पर भ्रमर का आरोप है। अतः यहा पर रूपक अलंकार है। एक उदाहरण और प्रस्तुत है जिसमें महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के वर्णन में रूपक है—

(ग) अतिकान्ते सार्मदशहोरे कुमुदबान्धव ।

ग्रस्तोऽभूत्स महात्माऽपि सितकायेन राहुणा।।

(वही, भारत पारिजातम्, १०/१३)

रूपक अलंकार का ही एक उदाहरण और देखिए—

(घ) युष्माकमोजोदहने निपत्य स्वयं पतंगोपमका इमे ते।

भस्मावेशेषात्त्रिजसत्तवराशीन्सक्षयन्ति शंकावसरोऽत्रकोसो।।

(वही, वही, १५/५५)

श्रीगांधिगौरवम् में रूपक—

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने रूपक अलंकार का भी अतिशयता से प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) सम्प्राप्य नन्दनमसौ बुधसत्यनिष्ठो

"मैट्रीकुलेशन"परीक्षणमुत्ततार।

भाषाञ्च "लैटिन" महो शुभदान्वभाषा,
अभ्यस्य तत्रयनदीं सुखमुत्ततार।।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, १/८४)

(ख) क्षमा धनु - करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति।
(वही, वही, ३/१४)

(ग) सेवाचुञ्चुर्भारतोद्धारकर्त्ता
विष्णुद्वारे श्रीहरिद्वार तीर्थे।
सेव्यो जातकुम्भकालेमहात्मा
श्रुत्वा लोका दर्शनाय प्रजग्मु ।।
(वही, वही, ४/९६)

(घ) समाप्य सर्वे परिताल-यज्ञ
स वटयामास जनेषु मिष्टम्।
(वही, वही, ५/४०)

(ङ) विहारिणा तत्पुरुद "विहार"—
मुच्छेनुकामारणचण्डिका या।
ननर्त जात्योरभयोस्तु मध्ये
हस्ते गृहीत्वा ललित कपालम्।।
(वही, वही, ८/१७)

इन उदाहरणों पर दृक्पात करने से स्पष्ट हो रहा है कि यहा पर कानून को उपमेय और नदी को उपमान, क्षमा को उपमेय धनुष को उपमान, विष्णु के द्वार को उपमेय और हरिद्वार तीर्थ को उपमान, हड़ताल को उपमेय और यज्ञ को उपमान एवं युद्ध को उपमेय और चण्डी को उपमान मानकर उपमेय में उपमान का आरोप करते हुए अभेद की स्थापना कराई गई है। अत यहा पर रूपक अलकार है।

श्री गांधिचरितम् में रूपक—

श्री साधुशरण मिश्र ने रूपक का प्रयोग अतीव सुन्दर किया है। आप भी कुछ पदों का आस्वादन कीजिए—

(क) तृपितैरिव लोकाना लोचनैर्निश्चलैरसौ।
न्यपीयत महान्मुक्यादनृप्तैरिव सादरम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्री गांधिचरितम्, १५/११)

(ख) जयराज्जीवनाद्गाधि- प्राणिना प्रिय आत्मवत्।
यस्य दर्शनत- पुमा ह्यानन्दामृतं महत्।।
(वही, वही, १५/१२)

(ग) करुण रुदती मुग्धिला रमणीमहिनिरश्रु मुञ्चती।

नवशोकजवह्निहेतिभि- र्ज्वलदंगा विधुरा गतप्रभा।।

(वही, वही, १९/१५)

इन उदाहरणों से रूपक अलंकार स्वतः ही स्पष्ट हो रहा है। रूपक अलंकार का एक उदाहरण और देखिए—

अप्येकतो दुःखविमोक्षहेतोः सम्प्रीयमाणान् पुनरन्यतश्च।

भयस्मृतेः शासकदुर्ग्रहाणां सद्यः परिम्लानमुखारविन्दान्।।

(वही, वही, ९/५८)

यहा पर कहा गया है कि शासक रूपी दुष्ट ग्रहों के कारण मुख रूपी कमल मुर्झा गया है।

उत्प्रेक्षा—

सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन् यत्।

—काव्यप्रकाश, दशम उल्लास, सूत्र सख्या-१३६

उत्प्रेक्षा अलंकार के प्रयोग से कवि की कल्पनाशीलता का परिचय मिलता है। यद्यपि अलंकार के लिए बाण और हर्ष ही अधिक प्रसिद्ध हैं, किन्तु आलोच्य कवियो ने भी उत्प्रेक्षा अलंकार का मनोहारी वर्णन करके काव्य को सौन्दर्य प्रदान किया है।

सत्याग्रह गीता में उत्प्रेक्षा—

पंडिता क्षमाराव अत्यधिक कल्पनाशील है। महात्मा गान्धीजब कारागृह से मुक्त हुए तब वह साबरमती आश्रम गए जो कि साबरमती नदी के किनारे स्थित हैं। कवयित्री ने महात्मा गाधी के आगमन पर प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए कल्पना की है कि यह गान्धी के आगमन पर पुनर्प्रवाहित होने लगी और प्रसन्नता पूर्वक लहरा रही है मानो किसी सन्यासी का स्वागत कर रही हो और आश्रम के समीपस्थ पक्षी जोकि काफी समय से शब्द करना ही भूल गए थे उनकी चहचहाट से लगता है कि मानो वे अपनी इस मधुर ध्वनि से अपनी प्रसन्नता ही व्यक्त कर रहे हो। कवि के शब्दों में देखिए—

या तत्प्रवासमारभ्य तनुशुष्का नदी स्थिता।

पीना घनरसेदानीं वल्गति स्म मुदेव सा।।

ये पूर्वमाश्रमोपान्ते तं विना संन्निवारवा।

पक्षिणस्ते प्रमोदेन मुक्तकण्ठं जगु पुनः।।

(पंडिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, १/२-३)

इस स्थल में कहा गया है कि अहिंसा, सत्य, अक्रोध मानो शिव के त्रिनेत्र हो और महात्मा गाधी उस सत्याग्रह को धारण करने वाले त्रिनेत्रधारी स्वयं भगवान शकर हो—

अहिंसासत्यमक्रोध इति यस्याम्बकत्रयम्।

तस्मै सत्याग्रहाख्याय त्र्यम्बकाय नमो नमः।।

(वही, वही, ४७/१८)

श्रीमहात्मगांधि-चरितम् में उत्प्रेक्षा—

श्री भगवदाचार्य जहां उपमा देने में सिद्धहस्त हैं वहीं उनकी उद्भावना भी अत्यधिक उत्कृष्ट है। उन्होंने अपने काव्य में वाच्योत्प्रेक्षा एवं क्रियोत्प्रेक्षा दोनों का प्रयोग अतीव सुन्दर किया है।

द्वारिका में प्रविष्ट होने पर सुदामा को ऐसा प्रतीत होने लगा कि स्वर्णनिर्मित भवन अपनी दिव्याभा के कारण ऐसे लग रहे थे कि वह सूर्य से भी अधिक प्रकाश बिखेर रहे थे और इस कारण सूर्य उनके प्रति ईर्ष्यालु होकर उन्हें जला रहा हो ऐसे अग्नि से प्रज्वलित सा उन भवनों को उसने देखा। उन भवनों का प्रतिबिम्ब जब समुद्र में पड़ रहा था तो उससे जो लहरें तरंगित हो रही थी उससे ऐसा लग रहा था कि मानो वे भवन दुर्भाग्यावस्थावश समुद्र में ही डूब रहे हों। कवि के ही शब्दों में देखिए—

हिरण्मयैः रचितान्महागृहानखण्डदीप्तिप्रचयातिशालिनः
प्रकाशपुञ्जैरिव नैजरंगकैः प्रभाकरं रोद्धुमिवोत्थितान्द्विजः।।
विलोक्य तस्या पुरि नैज सम्पदा तिरस्कृतिं कर्तुमखिन्नयोग्य ताम्।
महेर्ष्यया सन्ततमुष्णरश्मिना गृहान्प्रदग्धानिव काञ्चनाननान्
महार्णवान्तःप्रतिबिम्बितान्गृहान्प्रकम्प्यमानांस्तरलैस्तरंगकैः
तदीयदौर्भाग्यविशेषवन्मुना निमज्जतस्तोयनिधाविवैक्षत।।

(श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १/२९-३१)

अतः यहां पर उत्प्रेक्षा अलंकार है और "इव" वाचक शब्द का प्रयोग होने से वाच्योत्प्रेक्षा है। एक उदाहरण और देखिए—

विच्छिद्य निस्सृत्य च मांसखण्डैः शरीरतस्तत्र हताहतानाम्।
इतस्ततः सम्पतितैस्तदानीं धरा बभूवामिषनिर्मितेव।।

श्री गांधिगौरवम् में उत्प्रेक्षा—

श्रीगांधिगौरवम् में प्रयुक्त उत्प्रेक्षा अलंकार के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) चरणगत मनुष्यान् कम्पमानानस्त्रेत्थं
क्षितिपतिपदमूर्तिः प्रेमपूतो ह्यराजि।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, ३/२)

(ख) हिलति पवनवेगात् स्तोमरो तत्र मन्ये
ज्वरविम्लानितमना- कम्पते कोऽपि जीवः।

(वही, वही, ३/२)

(ग) यदा भवत्सेवनदत्तचेतन—
स्तदा "निनिक्ले" गृहिणी महात्मनः।
बालैर्युता क्षेत्रभवे शुभाश्रमे
न्युवास मन्ये ननु योगिनी हि सा।।

(वही, वही ४/१३)

(घ) सत्याग्रहेण मान्योऽयं दुःखवारिधि मज्जितान्।
भारतीयन् समुद्धृत यशसा श्वेतयत् दिश ।।
(वही, वही, ४/७१)

(ङ) आगत् गांधिनं दृष्ट्वा प्रणनाम सरित्पति ।
मन्यते क्षीरशायी स दुष्टान् हन्तु समुत्थित ।।
(वही, वही, ४/३५)

प्रथम उदाहरण में यान की प्रेतरूप में उद्भावना होने से, द्वितीय उदाहरण में स्टीमर के कम्पन में किसी व्यक्ति के ज्वर से कम्पन की कल्पना होने से, तृतीय उदाहरण में महात्मा गांधी की पत्नी कस्तूरबा को योगिनी मानने से और ननु वाचक शब्द का उल्लेख होने से, चतुर्थ उदाहरण में भारतीयों का उद्धार करने में यश से दिशायें श्वेत करना, गांधी जी को विष्णु भगवान् के रूप में मानने से उत्प्रेक्षा अलंकार की प्रतीती हो रही है।

श्री गांधिचरितम् में उत्प्रेक्षा—

प्रस्तुत महाकाव्य में प्रयुक्त उत्प्रेक्षा का उदाहरण प्रस्तुत है—
साक्षात् मधुसख. श्रीमान् मन्मथो नलिनेक्षण ।
मित्रान्वेषीति तद्भुत वनं कुसुमितं क्षणात्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम्, २/४३)

परिणाम—

विषयात्मतयारोप्ये प्रकृतार्थोपयोगिनि।
(साहित्य दर्पण, १०/३४)

श्रीगांधिचरितम् में परिमाम अलंकार—

श्रीगांधिचरितम् में प्रस्तुत अलकार की छटा दखिए—
नगाः कुसुमित· पाणिपल्लवेपूपकल्प्यते।
तस्मै फलान्युपाजहु पुष्पाणि च मुनिव्रता ।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम्, २/४०)

यहा पर कहा गया है कि मुनि के सहवास के कारण वृक्ष हाथ हो गए हैं और अपने उन हाथों से वह उन्हें फल एवं पुष्प प्रदान कर रहे हैं। अतः वृक्ष की हस्त अर्थ में उपयोगिता सिद्ध हो रही है। इसलिए परिणाम अलंकार है।

भ्रान्तिमान्—

साम्यादतस्मिंस्तद्बुद्धिभ्रान्तिमान् प्रतिभोत्थित·।।
(साहित्य दर्पण, १०/३६)

श्रीगांधिचरितम् में भ्रान्तिमान्—

श्री साधुशरण मिश्र ने महात्मा गांधी का व्यक्तित्व ऐसा प्रस्तुत किया है कि जिससे वह कामदेव से लगने लगते हैं। उनके व्यक्तित्व की कतिपय विशेषताएं उन्हें

कामदेव समझ लेने पर मजबूर कर देती है—

अतसीकुसुमश्याममल्पकुञ्चित सुन्दरम्।
पीताम्बरं महोरस्क नवकञ्जारूणेक्षणम्।।
आजानुबाहु सुनसं मन्दस्मितमनोहरम्।
तत्रायान्तमुंदृष्ट्वा वीरुधो मेनिरे स्मरम्।।
(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम् २/३६-३७)

अपह्नुति—

प्रकत प्रतिषिध्यान्सथापन स्यादपह्नुति।
(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/३८)

सत्याग्रहगीता में अपह्नुति—

अपह्नुति अलंकार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

पाश्चात्येपु ह्यनेकेपु कृतघातेष्वनेकदा।
न्यायो व्यनक्ति केनापि व्याजेन किल सौम्यताम्।।
(पंडिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, ५/३२)

यहा पर प्रकृत है न्याय करना किन्तु न्याय के बहाने से अंग्रेजों ने अनेक बार आघात किया। ये अप्रकृत हैं। अत: अपह्नुति अलंकार है। अपह्नुति अलकार का एक उदाहरण और देखिए—

देशप्रयोजनव्याजैर्ऋणं भूरि प्रकल्पितम्।
आरोपितश्च तद्भारो भारतोपरि दुर्वर.।।
(वही, वही, १०/१२)

श्री महात्मगांधिचरितम् में अपह्नुति—

प्रस्तुत महाकाव्य में अपह्नुति अलकार का प्रयोग केवल एक बार हुआ है—

मासस्तया प्राणिगणं निपीड्य कामं स्वकीयैर्निशि सम्प्रहारैः।
प्रात: समन्युर्मिहिकामिषेण पश्चातपन्सर्वजने. स दृष्ट.।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम् २/१२)

माघ मास में रात्रि शीत युक्त होती है जिसके कारण प्राणिमात्र को कष्ट होता है। अतः यह विचार करते हुए माघ मास को अत्यधिक ग्लानि होती है और वह प्रातः काल के समय ओस कणो के बिखेरती है। इसमें इस प्रकृत का निषेध करके यह कहा गया है अपने इस कृत्य पर वह पश्चाताप के अश्रु विमोचन करता है।

"दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्"।

सत्याग्रह गीता में दृष्टान्त—

प्रस्तुत काव्य में जीवन में सफलता प्राप्ति हेतु कुछ सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने हेतु प्रमाण दिए गए हैं और उन्हें दृष्टान्त अलंकार के रूप में प्रस्तुत किया गया है। कुछ

उदाहरण देखिए—

(क) जातस्य चेद्ध्रुवो मृत्यु देशकार्ये वरं मृतिः।
जीवनं न तुदासस्य देशद्रोहविदायिनः।।

(पंडिता क्षमाराव, सत्याग्रहगीता, १७/६०)

(ख) विफलीभूतकार्योऽपि निराशो नाभवन्‌ मुनिः।
न धीराः प्रतिपन्नार्थाद्‌ विरमन्त्याफलोदयम्‌।।

(वही, उत्तरसत्याग्रह गीता, ३/४५)

(ग) स तूवाच न युक्तोऽयं प्रतीकार क्रमः क्रत ।
आत्महत्यासमानेयं वैरबुद्धिः परस्परम्‌।।

(वही, स्वराजस्य विजयः, ३९/२६)

(घ)
न्यायकाक्षी जनो न्यसमास्त्वयं न्यायपरो भवेत्‌।
न शक्यः करतालः स्यादेकेनैव हि पाणिना।

(वही, वही, ४९/२९)

(ङ) निमग्ना किल कार्येषु विस्मरन्ति निजव्यथाम्‌।
उद्योगिनमुपैति श्रीरुद्योगः शान्तिदायकः।।

(वही, वही, ५०/७)

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो रहा है कि इन सभी में बिम्बप्रतिबिम्ब भाव है। प्रथम उदाहरण में कहा गया है कि जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है अत दासता से युक्त जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा देश के लिए मरना श्रेयस्कर है। द्वितीय उदाहरण है कि मुनिजन कार्य का असफलता पर भी निराश नहीं होते हैं और धैर्यशाली पुरुष विघ्न आने पर भी फल की प्राप्ति तक उस कार्य को नहीं छोडते हैं। तीसरे उदाहरण में कहा गया है कि बदले की भावना नहीं होनी चाहिए क्योंकि वह आत्म हत्या करने के समान होती है। इसी तरह अन्य उदाहरण भी है जिसमें दृष्टान्त है।

श्रीगांधिगौरवम्‌ में दृष्टान्त—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने महात्मा गांधी के विलायत गमन के सन्दर्भ में कर्मचन्द गांधी के मित्र और गांधी जी के शुभचिन्तक भाऊजी जोशी द्वारा जो दृष्टान्त प्रस्तुत कराया है उसका अवलोकन कीजिए—

(क) "उवाचवाक्यं निजसूनुमाश्रय, ग्राह्या सुविद्या' लघुतोऽपिनीति'।
कुशाग्रबुद्धिः पठेनच्छुरच्छ, "श्रीमोहनो" वैश्यकुलावतसः"।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधीगौरवम्‌, १/२५)

तात्पर्य यह है कि श्री भाऊजी जोशी ने अपने पुत्र केवलराम को साक्षी करके कहा है कि "सदविद्या" का ग्रहण निम्न से भी करना चाहिए", क्योंकि वैश्य कुल में उत्पन्न मोहन तीव्र बुद्धि वाले हैं और उनमें पढ़ने की तीव्र अभिलाषा है। अत- उन्हें वकालत

श्री गांधिचरितम् में निदर्शना—

इस महाकाव्य में भी निदर्शना का प्रयोग केवल एक बार हुआ है—

(क) महात्मनः क्वातिमहच्चरित्रमगाधिमन्यूपमद्वितीयम्।

क्वाऽहं भृशं मन्दमतिर्न गन्तुं तत्पारमीशोऽस्य विना कृपाभिः

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, १/५)

कहा तो विशाल सागर के समान अलौकिक महात्मा का चरित्र और कहा अल्प बुद्धि वाला मैं। अतः ईश्वर की कृपा के बिना ये महान् कार्य सम्भव नहीं हो सकता है। तात्पर्य यह है कि कवि अपनी अल्प बुद्धि से गांधी का चरित्र प्रस्तुत कर रहे हैं। अतः बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव होने से निदर्शना है।

सहोक्ति—

सहार्थस्य बलादेकं यत्र स्याद्वाचकद्वयोः।।

(साहित्यदर्पण, १०/५४)

श्रीगांधिचरितम् में सहोक्ति—

श्री साधुशरण मिश्र ने सहोक्ति अलकार का प्रयोग भी किया है—

तातं ह्युपरतं ज्ञात्वा वज्राहतनगा इव।

व्यपतन्नश्रुभिः सार्द्धं सर्वे ते शोकमूर्च्छिताः ।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, २/१११)

यहां पर सह अर्थ को बताने वाले सार्द्धशब्द का प्रयोग हुआ है। अतः सहोक्ति है।

विनोक्ति—

विनोक्त्यदविनान्येन नासाध्वन्यदसाधुवा।।

(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/५५)

श्रीगांधिचरितम् में विनोक्ति—

प्रस्तुत महाकाव्य में विनोक्ति का उदाहरण देखिए—

नक्षत्रमालया सम्यक् भूषितापि तमस्विनी।

भर्तृहीनेव रमणी रेजेन विधुना विना।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, १५/५१)

नक्षत्रमाला से भलीभांति भूषित होते हुए भी रात्रि चन्द्रमा के बिना उसी प्रकार शोभाशाली नहीं लगती है जिस प्रकार कि पति के बिना स्त्री।

यहा पर रात्रि के बिना चन्द्रमा और पति के बिना स्त्री की निरर्थकता का प्रतिपादन किया गया है और "बिना" पद का प्रयोग भी है अतः विनोक्ति है।

गांधी-गीता में विनोक्ति—

गांधी-गीता में प्रयुक्त विनोक्ति का उदाहरण देखिए—

राजप्रतिनिधिश्चात्र राजा इव विलासभुक।

अकिंचित्कर एवासौ समाया- संगतिं विना।।

अर्थान्तरन्यास—

सामान्यं वाविशेषेणविशेषस्तेन वा यदि।
कार्यं च कारणेनेदं कार्येण च समर्थ्यते।।

(साहित्य दर्पण, १०/६१)

श्रीगाधिगौरवम् में अर्थान्तरन्यास—

प्रस्तुत काव्य में प्रयुक्त अर्थान्तरन्यास अत्यधिक प्रशंसनीय है—

(क) वाक्कील विद्या पठनाय सोऽयं, कथं न प्रेष्येत 'विलायतं' तु?
रोगी यदिच्छेद्हितकारिपथ्यं, तदेव दद्यात् स तु वैद्यराजः।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगाधिगौरवम्, १/२६)

(ख) शतावधानोच्चय जिघृक्षुणा, श्रीगाधिना शब्दमयस्वभाण्डकम्
रिक्तिकृतं पूरितवान् स उत्तरै-मेधाविभि विश्वमिदं न रिच्यते।।
(वही, वही, २/११)

(ग) तत्रैव गत्वा स तदा प्रतिज्ञा मावर्त्तयामास जनैश्च नित्यम्।
न होक्टेकेति नरै प्रतिज्ञा त्याज्या भवेज्जीवनमेव मोच्यम्।।
(वही, वही, ५/२७)

यहा पर गाधी जी को विलायत पढने के लिए भेजना, राजचन्द्र की प्रत्युत्पन्नमति, गाधी जी का प्रतिदिन प्रतिज्ञा पालन करने के लिए नियत स्थान पर गमन करना आदि विशिष्ट कथनों का समर्थन रोगी के मनोनुकूल पथ्य देने वाला ही चिकित्सक होने का अधिकारी है, यह ससार मेधावी व्यक्तियों से रहित नहीं है, प्राणार्पण करके भी अपनी प्रतिज्ञा से विचलित नहीं होना चाहिए आदि सामान्य कथन से किया गया है। इसलिए यहा पर अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

श्रीगांधिचरितम् में अर्थान्तरन्यास—

श्रीगाधिचरितम् में प्रयुक्त अर्थान्तरन्यास के कुछ उदाहरण देखिए—

(क) यत्नोऽप्येषोऽचिराद् राष्ट्रपिता स्यादिति गौरवम्।
यच्छ रत्नै रत्नाकरः प्रीत्या पूज्यन् पुलिनार्चितैः।।
(श्रीमाधुरारण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, २/४९)

(ख) विनेश्वर कः प्रयत्नेन् विधातुं सृष्टिं समस्ता मनोसोऽप्यगम्यान्।
यच्छ स्थूलानिमुखमखिलदेहिदेहानचिन्तयरना रदनांगिदित्रान्।।
(वही, वही, १६/५७)

(ग) पेयानगाना सम्बन्धे परीवाहे मृतस्य च।
सन्धप्यस्येपना निम्योर्भाव्यंगो नाम वारयेत्।।
(वही, वही, २/५५)

विशेषोक्ति—

सति हेतौ फलाभावे विशेषोक्तिस्था द्विधा।

(साहित्य दर्पण, १०/६७)

श्रीगांधिगौरवम् में विशेषोक्ति—

कवि ने एक स्थल पर कारण होते हुए भी कार्याभाव कि स्थिति वाले विशेषोक्ति अलंकार का भी प्रयोग किया है—

(अ) इत्थं खादी ह्याश्रमे वै सवान
सर्वानायाम्नो छादयामास खादी
येषां देहः कोमलस्तत्र चिन्हं
जातं मेने तत्र दुःखं न कैश्चित्।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, ५/१४०)

यहा पर यद्यपि आश्रमवासियो के लिए कष्ट प्रदान करने वाला वस्त्र और शरीर में होने वाले घाव आदि कारण विद्यमान हैं फिर भी दु ख रूप कार्य के न होने के कारण यहां पर विशेषोक्ति अलकार है।

स्वभावोक्ति—

स्वभावोक्तिदुरुहार्थस्वक्रियारूपवर्णनम्।।

(साहित्य दर्पण, १०/९२)

श्रीगांधिगौरवम् में स्वभावोक्ति अलंकार—

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी किसी विषय पर घटनानुरूप प्रकाश डालने में समर्थ है—

(क) गेहेषु हर्म्येषु चतुष्पदेषु
रथ्यासु मार्गेषु वितर्दिकासु।
प्रतोलिकायामथवा निपाने
सर्वत्र दृष्ट. स तु वि-लवो हि।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, ६/३९)

प्रस्तुत श्लोक से यह स्पष्ट रूपेण प्रतीत हो रहा है कि गृहो में, महलादि में जो विप्लव हो रहा है वह स्वाभाविक ही है। अत यहा पर स्वभावोक्ति अलकार नितान्त संगत है।

श्रीगांधिचरितम् में स्वभावोक्ति अलंकार—

प्रस्तुत महाकाव्य में मोहनदास के शरीरावयावों के विकास एव बाल मनोभाव का कैसा सुन्दर चित्र खींचा गया है—

अथासौ ववृधे बालश्चन्द्रमा इव प्रत्यहम्।
प्रचीयमानावयवो लोकचक्षुर्महोत्सव.।।

जानुभ्यां रिंगमाणो सावलकैराकुलः स्वनन्।
धारयन् वारकास्तद्वन् मुमुदे मोदयंश्च तान्।।
जनोदित वचो स्पष्टं लपन् लीलाधृतांगुलिः।
स्खलन्, रुद्रन्, हसन्, गच्छन्, रमयामास मातरम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगांधिचरितम्, २/१-३)

संसृष्टि—

यद्येत एवालंकाराः परस्परा विनिश्रिता।
तदा पृथगलंकारौ संसृष्टि सङ्करस्तथा।।
मिथो ऽनपेक्षमेतेषां स्थिति संसृष्टिरुच्यते।
(विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, १०/९७-९८)

श्रीमहात्मगांधीचरितम् में संसृष्टि—

श्री भगवदाचार्य ने मिश्रित अलकारों का प्रयोग भी अत्यधिक निपुणता से किया है। उन्होंने अनुप्रास और रूपक, अनुप्रास और उत्प्रेक्षा अलंकारों को एक साथ प्रस्तुत किया है।

इह विविधसमर्चार्चितेऽद्येव वत्से।
तव परमपवित्रं गर्भगेह विशामि।
प्रसरदतिकुविद्याकल्पितानेकरूढि-
व्यथितजनशुभायेत्याह सा दिव्यमूर्तिः।।
(श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १/५३)

प्रस्तुत उदाहरण में अनुप्रास एवं रूपक अलंकार है। अतः यहा पर संसृष्टि है।

श्रीगांधिगौरवम् में संसृष्टि—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी द्वारा प्रयुक्त अनुप्रास और उत्प्रेक्षा अलंकार से युक्त संसृष्टि का उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) प्रबलबलममेनो मातरिश्वा चचाल
जल कल-कल शब्दा वारिधो सम्बभूवु।
वरन गत् मनुष्यान् कम्पयानाम वेत्थे
क्षिपति पवन मूर्ति प्रेतभूतो द्वारातिः।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधीगौरवम्, ३/१)

यहां पर प्रथम दो चरणों में अनुप्रास और अन्तिम चरणों में उत्प्रेक्षा है अतः संसृष्टि अलंकार है। उनके द्वारा प्रयुक्त रूपकातिशयोक्ति अलंकार से युक्त संसृष्टि का उदाहरण देखिए—

(क) पादान् भारतवर्षस्य कृन्तन्ति मम शत्रवः।
पादहीनो कथं गच्छेद् भेदनीतेः फलन्त्विदम्।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगांधिगौरवम्, ७/१७)

यहा पर भारत वर्ष के चरणो रूपी शूद्रो को काटना आदि चरणों में शूद्रों का आरोप होने से रूपक है और चरण (विषयी) शूद्र (विषय) के अध्यवसित होने के कारण ः ियोक्ति होने से रूपकातिशयोक्ति अलकार है।

श्रीगांधिचरितम् में संसृष्टि—

त्रिपाठी जी ने तो शब्दालकार एव अर्थलंकार से युक्त प्रस्तुत ससृष्टि प्रस्तुत की है और श्री साधुशरण मिश्र ने अर्थालंकारों के आधार पर ही संसृष्टि प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त ससृष्टि में परिमाण अलकार एव भ्रान्तिमान अलंकार है। उदाहरण प्रस्तुत है—

श्यामं पीताम्बर तत्र भ्रमन्तं नलिनेक्षणम्।
समूर्तितं तडित्वन्तं मत्वानर्तीत् शिखाबल·।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, २/४१)

यहा पर परिणाम इसलिए है क्योंकि पीलावस्त्र एवं कमल सदृश नेत्रो को बिजली युक्त बादल के रूप में ग्रहण किया गया है और भ्रान्तिमान इसलिए है कि पीलावस्त्र और नेत्रों के सादृश्य के कारण बिजली एव बादल समझ लिया गया है। एक उदाहरण और प्रस्तुत है—

नव तातवियोगवह्निना ज्वलदगेविलुठन् महीतले।
नयनागतनीरधारया न मन सान्त्वयितु क्षमोऽभवत्।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगाधिचरितम्, १९/१४)

यहा पर रूपक एवं विशेषोक्ति होने से ससृष्टि है। अलंकारों के विवेचन से यह तथ्य परिलक्षित होता है कि अलकार महाकाव्यों की शोभावृद्धि में सहायक है। समस्त महाकवियों ने अनुप्रास एवं उपमा का प्रयोग करके काव्य को सरस एव अपूर्व रूप प्रदान किया है। अलकारों के सीमित प्रयोग से भावो की अभिव्यञ्जना में और उसके प्रवाह में किसी प्रकार का अवरोध नहीं आया है। मैंने कुछ प्रमुख अलकारो को समस्त काव्यों के आधार पर प्रस्तुत किया है और अन्य अलकारो में जिस महाकाव्य के उदाहरण मुझे आकर्षक लगे उनको ही प्रस्तुत किया है। महाकवियो ने अलकारो की सुन्दर परियोजना करके यह स्पष्ट कर दिया है कि अलकारों का काव्य में न्यून प्रयोग भी काव्य को उत्कृष्ट बनाने में समर्थ होता है।

छन्द

काव्य में गीत के समान लयात्मकता और गगा के समान प्रवाहोत्पादन के लिए छन्दों की अनिवार्यता को स्वीकारा गया है। यदि गीत तालबद्ध न हो और गंगा का प्रवाह अवरुद्ध हो गया हो तो उनका सौन्दर्य और महत्त्व समाप्त हो जाता है उसी प्रकार छन्द विहीन काव्य न तो काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है और न वह मन को मोहित करने में ही समर्थ हो सकता है।

मानव जीवन में पग-पग पर गतिशीलता को स्वीकारा गया है, क्योंकि गति जीवन व्यर्थ है। जिस मनुष्य में क्रियाशीलता का अभाव है वह जीवित रहते हुए

मृतक के समान है वैसे ही वर्णों में, अक्षरों, पदों और वाक्यों से निर्मित काव्य में गतिशीलता लाने के लिए उसे छन्दोबद्ध होना चाहिए।

छन्द का महत्त्व केवल पद्य काव्य में ही नहीं, अपितु गद्य और चम्पू काव्य में भी स्वीकारा गया है। कवि अपने कथन की पुष्टि में अथवा कथा का संकेत देने के लिए छन्दोबद्ध श्लोक की रचना कर देता है। फिर काव्य में जोकि अपनी लयात्मकता, संगीतात्मकता के लिए प्रसिद्ध है, उसमें तो छन्दों केहोना नितान्त अनिवार्य है।

महात्मा गांधी पर आधारित महाकाव्यों में छन्द—

आलोच्य महाकाव्यों को देखने से स्पष्ट होता है कि उनमें छन्दोयोजना अतीव प्रशंसनीय है। उनमें प्राप्त छन्द प्रचलित एवं अप्रचलित दोनों प्रकार के हैं। यद्यपि प्रचलित छन्दों का प्रयोग ही उनमें अधिक हुआ है तथापि अप्रचलित छन्दों का प्रयोग भी उनमें कुशलता पूर्वक हुआ है। कुछ कवियों ने तो केवल एक-दो छन्दों का ही प्रयोग किया है और कुछ कवियों ने अपने काव्य के कलेवर और उसकी विषय वस्तु के आधार पर अनेक छन्दों का आश्रय लिया है। पण्डिता क्षमाराव ने तो केवल अनुष्टुप् छन्द में ही सत्याग्रह त्रिवेणी का प्रणयन कर दिया है और श्रीनिवास ताडपत्रीकर को भी अधिक छन्दों का प्रयोग करना पसन्द नहीं है। उन्होंने भी सबसे अधिक अनुष्टुप् छन्द का ही प्रयोग किया है, केवल द्वितीय, चतुर्थ और सप्तदश अध्याय में ही केवल तीन और छन्दों का प्रयोग करके अपने छन्दोज्ञान का परिचय दिया है। इसके बाद भगवदाचार्य ने तो अपने काव्य में ४२ छन्दों का आश्रय लेकर काव्य को अत्यधिक आकर्षक और मधुर बनाने का सत्प्रयास किया है और उन्होंने प्रचलित छन्दों की अपेक्षा अप्रचलित छन्दों का प्रयोग अधिक करके छन्दो-योजना में कौशल दिखाया है। उन्होंने प्रचलित छन्दों का प्रयोग ही अधिक मात्रा में किया है और अप्रचलित छन्दों की संख्या अधिक होते हुए भी वह मात्रानुसार काफी कम है क्योंकि अप्रचलित छन्दों का प्रयोग अधिकांशतः एक बार ही हुआ है कुछ ही अप्रचलित छन्दों का प्रयोग अधिक बार हुआ है। श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने अपने काव्य में २१ छन्दों का प्रयोग किया है जिनमें केवल ५ अप्रचलित छन्दों का ही आश्रय लिया है वह भी अत्यल्प मात्रा में। साथ ही श्री साधुशरण मिश्र ने भी १९ छन्दों का प्रयोग किया है और उसमें भी प्रचलित छन्द अधिक हैं, अप्रचलित छन्द केवल दो-तीन हैं।

इन सभी के काव्यों को देखने से यह तथ्य सामने आता है कि उन्होंने रस, भाव आदि काव्य के प्रमुख तत्त्वों अथवा कहना चाहिए कि काव्य के जीवनाधायक तत्त्वों की सौन्दर्यवृद्धि और अपूर्वता के लिए उनके अनुकूल छन्दों के प्रयोग करने का प्रयास किया है, लेकिन उन्हें अपने विचारों में अवरोध कदापि मान्य नहीं है वे आकाश में विचरण करने वाले स्वच्छन्द पक्षी की भाँति हैं जो कि अपने विचारों को स्वच्छन्द रूप में प्रवाहित करने में ही आनन्दानुभव करते हैं। यही कारण है कि स्थान-स्थान पर रसानुकूलता विच्छिन्न सी होने लगती है, लेकिन उनके द्वारा प्रयुक्त छन्दों के माध्यम से काव्यों को जो अपूर्वता प्राप्त हुई है उसे किसी तरह नकारा नहीं जा सकता है। इन सभी

काव्यों में प्रयुक्त छन्द अतीव प्रभावपूर्ण एवं सराहनीय हैं। छन्दोयोजना के सम्बन्ध में विद्वानों का अभिमत है कि उनका निर्माण रस एव विषय वस्तु के अनुरूप होना चाहिए किन्तु आधुनिक समय में निर्मित होने वाले काव्यों में इन नियमों का पालन नहीं हो पाता है। इसका कारण यह है कि जिस समय काव्यशास्त्रीय नियम बने होंगे उस समय की परिस्थितियाँ आज की परिस्थितियों से भिन्न रहीं होंगी। फलस्वरूप आज जब वह काव्य निर्माण करता है तो उसके लिए इन नियमों में बंध पाना बहुत ही मुश्किल होता है।

जिस तरह जल का प्रवाह तीव्र होता है तो वह एक धारा में बहता है उसी तरह जब कवि के पास प्रस्तुत करने के लिए विस्तृत कथा होती है तो वह छन्दों के प्रदर्शन में समय न गँवाकर किसी एक ही छन्द में काव्य-निर्माण कर लेता है और इस हेतु वह छन्द भी सरल ही चुनता है। अब मैं महात्मागान्धिपरक काव्यों के आधार पर छन्दों का विवेचन कर रही हूँ—

अनुष्टुप्—

पञ्चमं लघु सप्तमं द्विचतुर्थयो।
गुरुः षष्ठं च सर्वेषामेतच्छ्लोकस्य लक्षणम्।।

(सुवृत्ततिलक १/१४)

अनुष्टुप् छन्द के विषय में कहा गया है कि इसमें अष्टाक्षर होने चाहिए और पञ्चम, षष्ठ, सप्तम आदि वर्णों के विषय में सूत्र में कहे गए नियम की अवहेलना नहीं होनी चाहिए। अन्य वर्ण दीर्घ या ह्रस्व दोनों में कोई भी हो सकते हैं और श्रुतिसुखद भी होने चाहिए (सुवृत्ततिलक, २/४-५)। प्रस्तुत छन्द का प्रयोग काव्य प्रारम्भ करते समय और वैराग्य-जनक उपदेश परक छन्दों के अन्त में किया जाना चाहिए और इसमें सरल शब्द ही प्रयुक्त होने चाहिए (सुवृत्ततिलक, ३/६, १६)। प्रस्तुत छन्द को "श्लोक" इस नाम से भी अभिहित किया जाता है (वृत्तरत्नाकर)।

सत्याग्रह गीता—

पण्डिता क्षमाराव ने सम्पूर्ण महाकाव्य में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया है। सत्याग्रह गीता के ६५९, उत्तर सत्याग्रह गीता के १९९८ और उत्तरसत्याग्रह गीता के १७०० पद्यों में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। काव्य के शब्द तो सरल ही हैं किन्तु वीर रस प्रधान होने के कारण इसमें वैराग्य-जनक उपदेश का कोई स्थान नहीं है। इसमें तो सर्वत्र ही उत्साह वर्धन ही किया गया है, परतन्त्रता और समाज में परिव्याप्त असमानता पर आक्रोश व्यक्त किया गया है, अपने देश के प्रति प्रेम भावना का सञ्चार किया गया है। देश-विभाजन को हानिप्रद बताया गया है, ईश्वर की शक्ति में आस्था जगाई गई है, कर्म पर बल दिया गया है, समस्त मानव के प्रति बन्धुत्व की भावना जगाई गई है। एक-दो उदाहरण देखिए—

(क) सुगमं यत्तु कार्यं स्यात्फलतो लघु तद्भवेत्।

दुर्गमं चापि सत्कार्यं पुष्णाति फलगौरवम्।।

(पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १६/४४)

(ख) अमृता सऽमृतासारैर्वचनैर्विनिता मुनिम्।

रिपेवे लोकसंसेव्यं कृष्णा कृष्णाभिरागतम्।।

(वही, उत्तरसत्याग्रह गीता, १/७)

गान्धी-गीता में अनुष्टुप्—

गान्धी-गीता में भी १०४५ पद्यों में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया है। इसमें भी सरल शब्दों का ही प्रयोग किया गया है। इस छन्द के माध्यम से महात्मा गांधी के उपदेशों को प्रस्तुत किया गया है, सत्य और अहिंसा को स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रमुख अस्त्र बताया है और इस छन्द का प्रयोग देशभक्तों की सराहना करने के लिए, नमक आन्दोलन के लिए, परतन्त्रता के प्रति खेद व्यक्त करते हुए स्वातन्त्र्योपासक बनने के प्रेरणा देने के लिए, राष्ट्र धर्म को सब धर्मों से श्रेष्ठ मानने के लिए, एकता की भावना का विस्तार करने के लिए, अंग्रेजों की कूटनीति के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए उनका पर्दाफाश करने के लिए आदि अनेक भावों की अभिव्यञ्जना के लिए किया गया है। इस छन्द के प्रयोग से काव्य अत्यधिक आनन्ददायक हो गया है। अनुष्टुप् के प्रयोग से उनके विचारों को समझने में सरलता हो गई है। दो उदाहरण देखिए—

(क) स्त्रियो नेष्यन्ति पुरुषान्स्त्रियो राष्ट्रस्य दीप्तयः।

राष्ट्रधर्मस्य माहात्म्यं स्त्रियः संवर्धयन्ति हि।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १०/५३)

(ख) अखण्ड भारतं वर्षं तिष्ठत्विति मनीषया।

सर्वतस्सीकृतं यद्यप्यन्याय्यं लाकशासनम्।।

(वही, वही, २१/४२)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में अनुष्टुप्—

प्रस्तुत महाकाव्य में २६७७ पद्यों में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। इस छन्द का प्रयोग मोहनदास के नामकर्म, संस्कारों और शिक्षा-दीक्षा के विवेचन में (भारत पारिजातम्, ३/१-८६), महात्मा गांधी की मृत्यु से दुखी जवाहर लाल नेहरु के विचारों को व्यक्त करने में (पारिजातसौरभम्, १८/१-५७), महात्मा गांधी की शव यात्रा के प्रसंग में (पारिजात सौरभम्, २०/१-१६८), स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए किए गए प्रयासों (पारिजातापहार, १९/१-१४९) आदि अन्य वर्णनों में भी इसका प्रयोग किया गया है। एक उदाहरण देखिए—

(क) स्यादिदं लाघवायैव मित्राणां परिवर्तनम्।

न न्यक्कुर्तं समर्थोऽस्मि स्वान्तरात्मध्वनिं परम्।।

(श्रीभगवदाचार्य, पारिजातापहार, १९/५३)

श्रीगान्धिगौरवम् में अनुष्टुप्—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने आठों सर्गों में इस छन्द का प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त अनुष्टुप् छन्द की संख्या १०८ है।

उन्होंने इस छन्द का प्रयोग गांधी जी के द्वारा भारतीयों के मध्य ज्ञान का सचार करने (श्रीगान्धिगौरवम्, २/४०), अधिकार प्राप्ति (वही, ५/१), कार्यों का विवरण और देश प्रेम व्यक्त करने के लिए (वही, २/४०, ४६, ३/६४), अग्रेज शासको द्वारा भारतीयों को वर्गलाने के लिए (वही, ५/८४), गाधी जी की शान्तिशिक्षा के महत्व को प्रकट करने के लिए (वही, ५/९६), तथा तृतीय सर्ग की समाप्ति पर (वही, ३/८३) किया गया है। एक श्लोक प्रस्तुत है—

(क) ज्ञात्वा गान्धिनमायातं गौरा उद्विग्निजुर्भराम्।
त्याजाच्छुपज रोगस्य विघ्न कर्तु प्रपेदिरे।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/७)

श्रीगान्धिचरितम् में अनुष्टुप्—

इस महाकाव्य में भी अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग बहुलता से हुआ है। ८३९ श्लोक इस छन्द में उपनिबद्ध हैं। इसका प्रयोग काव्य के प्रारम्भ में मगलाचरण मे (श्रीगान्धिचरितम्, १/२-२), मोहनदास के शरीरावयवों के विकास का वर्णन करने के लिए, शिष्य के गुरु के प्रति शिष्ट व्यवहार के सन्दर्भ में, वात्सल्य भाव के सन्दर्भ में, महात्मा गाधी के विद्यालय के मार्ग वर्णन में, उनके व्यक्तित्व एव जीवन दर्शन के सन्दर्भ में (श्री गान्धिचरितम्, २/१-१२४), वर्णन कौशल में (वही, ६/१-१८९), राम नाम की महत्ता स्थापित करने के लिए (वही, १०/२७-३०) और सत्य, अहिंसा, सेवाभाव, आदि धर्म के प्रतिपादन हेतु और देशसेवकों की स्तुति हेतु एव वीर रस के वर्णन हेतु (वही, १५/१-१४५) किया गया है। एक श्लोक देखिए—

(क) यथा विकसितं पद्मं दूरादायान्ति षट्पदाः।
तथोपजग्मुर्नेतारो महात्मानं तपोनिधिम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/७९)

उपजाति (क) (११ मात्राएं)

"अनन्तरोदीरित लक्ष्मभाजौ
पादौयदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु
वदन्ति जातिष्विदमेव नाम्"।।
(छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तवक से)

विद्वानों का स्पष्ट अभिमत है कि उपजाति छन्द के प्रथम चरण में उपेन्द्रवज्रा का प्रयोग किया जाना चाहिए [४]। साथ ही श्रृगाररस के आलम्बनभूत उदात्त नायिकाओं के

रूप वर्णन और षड् ऋतुओं सहित उसके अंगों के निरूपण में इस छन्द का प्रयोग होना चाहिए [५]।

गांधी गीता में उपजाति—

गाधी-गीता के केवल १८ श्लोकों में इस छन्द का प्रयोग हुआ है और वह भी द्वितीय अध्याय के ३ श्लोकों में और अन्य श्लोक सप्तदश अध्याय के हैं। इस काव्य में प्रयुक्त उपजाति में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के सम्मिश्रण के अलावा शालिनी और उपेन्द्रवज्रा का भी सम्मिश्रण है। प्रथम चरण में उपेन्द्रवज्रा का प्रयोग भी मिलता है (गांधी-गीता, २/३१)। ऐतिहासिक दृष्टान्त देकर देश के लिए प्राणार्पण की प्रेरणा देने और एकता की भावना जागरित करने के लिए इस छन्द का प्रयोग किया है (वही, २/३१, १७/३४, ३६-४१)। एक उदाहरण देखिए—

पुरा प्रसगे युधि कौरवाणां
पाण्डो सुतास्तुल्यबलास्तथासन्।
समेत्य शत्रूस्तरसा विजित्य
राज्य स्वकीयं पुनराप्तवन्त ।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गाधी-गीता, २/३४)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में उपजाति—

प्रस्तुत महाकाव्य में ७३३ पद्य उपजाति छन्द में उपनिबद्ध हैं। इस छन्द का प्रयोग महासभा की कार्यकारिणी के विचार प्रस्तुत करने के लिए, समाज में वर्ग विभाजन को समाप्त करने की सलाह देने के लिए (पारिजातापहार, २/१-४३), स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु नि-शस्त्र युद्ध पर बल देने के लिए, अहिंसा के द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करने और स्वतन्त्रता के पश्चात् भी अहिंसा का अवलम्बन लेने के लिए (पारिजातापहार, ६/१-५१), करुण रस के वर्णन में, वीभत्स रस के वर्णन में इस छन्द का अवलम्बन (पारिजात सौरभम् अष्टम सर्ग) लिया गया है। दो उदाहरण देखिए—

(क) "य कोऽपि तत्रामनि संरतः स्यात्सोपि प्रपद्येत मृतिं तथैव।
तस्मिन्परास्मिन्ननुरागभाजां स्यादात्मशुद्धिस्तत एव शान्ति

(श्रीभगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, ९/३२)

(ख) गते प्रणाश परतन्त्रतातमस्युदीयमाने निजतन्त्रभास्करे।
साम्राज्यवादप्रतिरोधने क्षमा अहिंसया स्याम वयं विनिर्दश ।

(वही, परिजातापहार, ६/३४)

श्रीगान्धिचरितम् में उपजाति—

प्रस्तुत छन्द का प्रयोग तात्कालिक शासक वर्ग की भेद बुद्धि का वर्णन करने के लिए, स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु परम्परागत अस्त्र-शस्त्रों का सहारा लेने के स्थान पर सत्य, अहिंसा का आश्रय लेने वाले महात्मा गाधी की प्रशंसा करने के लिए, महात्मा गाधी सहित अन्य नेताओं के गुणों को प्रकाश में लाने के लिए (श्रीगान्धिचरितम्, १६/१-७,

९-१९, २४-३२, ३४-३५, ३८-४४), महाकाव्य की कथा का दिग्दर्शन करने के लिए, महात्मा गांधी के जन्म स्थान, वंशज और उनके जन्म के अनुसार भावी परिणाम का विवेचन करने के लिए (श्रीगान्धिचरितम्, १/३-५९) एवं अन्य वर्णनों में भी किया गया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) यां मामदो दुर्गतिमापदुग्रा ता तामह वक्तुमलं न जातु।
न स्वेच्छया यत्र गृहेऽपि वक्तुम् न शक्ति किमु तत्र वाच्यम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम् ७/३३)

(ख) अतो हि नित्यं रघुवंशकेतोः सीतान्वितं नाम परं पवित्रम्।
तत्कीर्तिनूतं भजता जनानां स्यादिष्टसिद्धिर्मनसोऽनुकूला।।
(वही, वही, १०/३१)

वंशस्थ—

वदन्ति वंशस्थबिलं जतौ जरौ।

(छन्दोमञ्जरी, २/२)

आचार्यों का अभिमत है कि इस छन्द का सौन्दर्य सन्धि और सन्धि विसर्ग में है[६]। अतः इसमें समस्त पदों के प्रयोग से बचना चाहिए तथा द्वितीय और चतुर्थ चरणों में विसर्ग का प्रयोग अनिवार्य है तथा इस छन्द का प्रयोग नीति वर्णन में होना चाहिए[७]।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में वंशस्थ—

प्रस्तुत छन्द में ३७९ पद उपनिबद्ध है। कवि ने इस छन्द का प्रयोग मंगलाचरण, भारतवर्ष वर्णन, सुदामापुरी वर्णन, महात्मा गाधी की वंशावलि, भारतीय नीति एवं वाइसराय द्वारा प्रेषित नीति सम्बन्धी पत्र के सन्दर्भ में किया है (भारत पारिजातम्, १/५०, पारिजातापहार, ३/१-३४, २६/१-३२)।

श्रीगान्धिगौरवम् में वंशस्थ—

प्रस्तुत छन्द का प्रयोग श्रीगान्धिगौरवम् के केवल १८ पदों में हुआ है। कुछ स्थलों पर इसमें विसर्गों का प्रयोग भी हुआ है[८]। मुनिवृत्ति, शत्रु के प्रति द्वेष न रखना, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, हर्षातिरेक आदि को प्रदर्शित करने के लिए किया गया है[९]।

श्रीगान्धिचरितम् में वंशस्थ—

इस छन्द का प्रयोग मातृ भक्ति, देशभक्ति, पुत्रवत्सलता, पुतलीबाई का अन्धविश्वास, मास मदिरा और स्त्री संग से दूर रहने की प्रतिज्ञा आदि के सन्दर्भ में किया गया है और कहीं-कहीं पर विसर्गों का प्रयोग भी हुआ है[१०]।

वसन्ततिलका— उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।

(वृत्तरत्नाकर, ३/७९)

वसन्ततिलका का प्रयोग वीर एवं रौद्र रस के सम्मिश्रण में अच्छा लगता है[११]।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में वसन्ततिलका—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द का प्रयोग ३२२ पदों में हुआ है और सबसे अधिक प्रथम भाग में। इस छन्द का प्रयोग महात्मा गांधी के कारावास, उनके गुणों की प्रशंसा, उनकी दीर्घायु कामना के लिए, (भारतपारिजातम् १०/१५५-१७२), गांधी-दर्शन एवं देश प्रेम की भावना के लिए (वही, १६/१-५१), और सर्गान्त में (वही, ३/८७, ४/५१, १२/४५-४६, पारिजातापहार, २८/१) किया गया है।

श्रीगान्धिगौरवम् में वसन्ततिलका—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने इस छन्द का आधार ३२ पदों में लिया है। वसन्ततिलका का प्रयोग भक्तिभाव, विषम परिस्थितियों में भी विचलित न होना, सेवा परायणता, अध्ययनशीलता, अंग्रेजों द्वारा लगाए गए कराधिक्य के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए एवं सर्गान्त में किया गया है (श्रीगान्धिगौरवम्, १/१, १/३६, १/४४-४५, ५/१३, ६/५६)।

श्रीगान्धिचरितम् में वसन्ततिलका—

प्रस्तुत महाकाव्य में वसन्ततिलका का प्रयोग ३५ पदों में हुआ है।

श्रीगान्धिचरितम् में वसन्ततिलका का प्रयोग राष्ट्रीय-भावना, भक्तिभावना, शोक, महात्मा गांधी के चरित्र, करुण रस, गांधी जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि व्यक्त करने के लिए और सर्गान्त में किया गया है (श्रीगान्धिचरितम्, २/१२६, ३/४२, ४४, ६/३०, ८/१९०, १९/१७३-१२०, १९/१२३)।

इन्द्रवज्रा—

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।

(छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तबक से)

श्रीगान्धी-गीता में इन्द्रवज्रा—

श्री ताडपत्रीकर ने इन्द्रवज्रा का प्रयोग केवल दो पदों में किया है। एक स्थल वह है जहाँ पर महात्मा गांधी उपदेश दे रहे हैं (गान्धी-गीता, ४/५) और दूसरा स्थल वह है जहाँ पर महात्मा गांधी की सत्य, अहिंसा की स्थापना और गांधी-गीता अपने हितकारी वचनों से इस भूमण्डल पर सर्वप्रिय बनेगी ऐसी कामना की गई है (वही, २३/८१)।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में इन्द्रवज्रा—

श्रीभगवदाचार्य ने तो इन्द्रवज्रा का प्रयोग ३०६ पदों में किया है। इस छन्द के सबसे अधिक उदाहरण पारिजात सौरभम् में देखने को मिलते हैं। इन्द्रवज्रा का प्रयोग महात्मा गांधी पर रस्किन आदि का प्रभाव दर्शाने, सत्य पर उनकी आस्था (पारिजातापहार, ५/१-४१), मोहनदास के जन्म वर्णन, (भारत पारिजातम्, १/२-५०), महात्मा गांधी द्वारा अहिंसा पालन पर बल देने, ईश्वर में आस्था रखने, हिन्दू-मुसलमानों में एकता स्थापित करने और अहिंसा-सत्य की स्थापना न होने पर प्राणों को निरर्थक मानना आदि के लिए किया गया है (पारिजातसौरभम् ११/२-६७)।

श्रीगान्धिगौरवम् में इन्द्रवज्रा—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने इस छन्द का प्रयोग सभी सर्गों में कुल ७३ पदों में किया है। इसका प्रयोग पुत्रोत्पत्ति, पुत्रोत्पत्ति के अवसर पर किए गए मगलगान, दुष्प्रवृत्ति का संकेत देने, धर्म के प्रति आस्था जगाने, दृढ निश्चय-मातृभक्ति, त्यागभावना आदि को प्रस्तुत करने में किया गया है (श्रीगान्धिगौरवम्, १/८-९-११, १/१४, १/४८, २/६-७, २/३६, ३/५७)।

श्रीगान्धिचरितम् में इन्द्रवज्रा—

इस महाकाव्य में इन्द्रवज्रा के ४८ पद उपनिबद्ध हैं। इन्द्रवज्रा का प्रयोग अवतारवाद, (श्रीगान्धिचरितम्, १०/७२), देशसेवा-व्रत धारण करने के लिए (वही, १२/८१), देशभक्ति प्रदर्शित करने के लिए (१६/२०-२३) किया गया है।

द्रुतविलम्बित—

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ।।

(वृत्तरत्नाकर, ३/४९)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में द्रुतविलम्बित—

इस छन्द का प्रयोग महात्मा गाधी का चरित्रोद्घाटन करने, भाव-सन्धि, जनता का उनके प्रति आदर भाव व्यक्त करने के लिए (भारत पारिजातम्, १३/१-४२), महात्मा गाधी द्वारा वाइसराय को लिखे गए पत्र (पारिजातापहार, २७/१-३४), गाधी द्वारा कलकत्ता मे दिए गए भाषण (पारिजात सौरभम्, ५/१-५५) आदि के सम्बन्ध में किया गया है। इस तरह छन्द का प्रयोग प्रत्येक भाग के एक-एक सर्ग में ही हुआ है।

श्रीगान्धिगौरवम् में द्रुतविलम्बित—

प्रस्तुत महाकाव्य में द्रुतविलम्बित का प्रयोग केवल छ: पदों में हुआ है। इसका प्रयोग वीर रस के वर्णन में, मुसलमानों द्वारा पाकिस्तान बनाने के लिए हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के वर्णन में (श्रीगान्धिगौरवम्, ६/५४, ८/२-३) किया गया है।

श्रीगान्धिचरितम् में द्रुतविलम्बित—

श्रीसाधुशरण मिश्र ने द्रुतविलम्बित का प्रयोग वर्णन, कौशल, वास्तविकता से परिचित कराने के लिए किया है (श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ४/१-३५, १०/१७-१९)।

मालिनी—

"ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः"

(छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तवक से)

क्षेमेन्द्रानुसार जिस तरह गीत की समाप्ति पर द्रुतताल का प्रयोग किया जाता है उसी तरह सर्ग की समाप्ति पर मालिनी का प्रयोग किया जाना चाहिए[१२]। और तृतीय

एवं चतुर्थ चरणों में विसर्ग [१३] होना चाहिए तथा उनमें ही समस्त पद होना चाहिए [१४]।

सत्याग्रहगीता में मालिनी—

पण्डिता क्षमाराव ने इस छन्द का प्रयोग महाकाव्य के द्वितीय भाग उत्तर सत्याग्रह गीता के सप्तचत्वारिंश अध्याय के अन्तिम पद में महात्मा गाधी की विजय कामना और अनुप्रास अलंकारके सन्दर्भ में किया है—

जयतु-जयतु गान्धि· शान्तिभाजा वरेण्यो
यमनियमसुनिष्ठ· प्रौढसत्याग्रहेन्द्र·।
हिमरुचिरिव पूर्ण सान्द्रलोकान्धकारम्
विशदसुनयबोधैंशुजालैर्निरस्यन्॥

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, ४७/२१)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में मालिनी—

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में १०८ पदों में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। प्रस्तुत महाकाव्य के प्रथम भाग में इसका प्रयोग सबसे अधिक हुआ है। मालिनी का प्रयोग सर्ग के अन्त मे भक्ति भावना प्रदर्शित करने के लिए [१५], नमक कानून भंग करने के लिए किए गए महात्मा गाधी के दाण्डी प्रस्थान और फिर कराडी, छारवाड़ा स्थलों में दिए गए भाषण, इसी सन्दर्भ में महादेव की गिरफ्तारी और महात्मा गांधी द्वारा युद्ध विराम हेतु वाइसराय को भेजे गए पत्र [१६] आदि के सन्दर्भ में किया गया है।

श्रीगान्धिगौरवम् में मालिनी—

श्रीगान्धिगौरवम् के ३८ पदो में इस छन्द का प्रयोग हुआ है। मालिनी का प्रयोग सर्गान्त में भी हुआ है और विसर्ग का प्रयोग चतुर्थ चरण में हुआ है तथा उसमें समस्त पद [१७] भी है। प्रस्तुत छन्द का प्रयोग राजनियमों के पालन, समुद्री तूफान के दृश्य, स्वदेशानुराग और यात्रा वृत्तान्त, गाधी जी के दर्शन से जन-समूह में हुई प्रसन्नता को व्यक्त करने के लिए, स्वराज्य प्राप्ति के लिए, नमक कर के विनाश के लिए किए गए प्रयत्न १८ आदि के लिए किया गया है।

श्रीगान्धिचरितम् में मालिनी—

श्रीसाधुशरण मिश्र ने मालिनी का प्रयोग ४२ पदों में किया है। उन्होंने इस छन्द का प्रयोग सर्गान्त में (श्रीगान्धिचरितम्, २/१२७, ६/९१, ९/७५) और प्राकृतिक वर्णन एवं जीवन दर्शन में किया है, कहीं-कहीं पर विसर्ग का प्रयोग चारों चरणों में किया है कहीं पर द्वितीय-चतुर्थ चरणों में और कहीं पर प्रथम एवं चतुर्थ चरणों में भी विसर्ग का प्रयोग किया है।

शार्दूलविक्रीडित—

सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरुवः शार्दूलविक्रीडितम्।

(वृत्तरत्नाकर, ३/१००)

इस छन्द का प्रयोग वीर पुरुषों के पराक्रम की स्तुति में किया जाता है [१९]।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में शार्दूलविक्रीडित—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द का प्रयोग बहुत कम हुआ है और वह भी सर्गान्त में (पारिजातापहार, ५/४२), १२/४६-४७, २०/२६-२७, २४/१, २५/१)।

श्रीगान्धिगौरवम् मे शार्दूलविक्रीडित—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने प्रजावत्सलता, देश प्रेम की भावना व्यक्त करने के लिए शार्दूलविक्रीडित का प्रयोग कियाहै (श्रीगान्धिगौरवम्, २/४, ७/३९)।

श्रीगान्धिचरितम् में शार्दूलविक्रीडित—

प्रस्तुत महाकाव्य में भी इस छन्दका प्रयोग सर्गान्त में हुआ है (१/६५, २/१२८, ३/६५, ४/३७)। इसके अलावा अन्य प्रसगों में भी इसका प्रयोग किया गया है।

शिखरिणी—

"रसै रुद्रैश्छिन्ना यमन सभला ग शिखरिणी"

(छन्दोमञ्जरी द्वितीय स्तबक से)

इस छन्द में विसर्गान्त और दीर्घ पदों का प्रयोग ही रुचिकर लगता है साथ ही किसी विषय विशेष की सीमा निर्धारण हेतु इसका प्रयोग किया जाता है (सुवृत्ततिलक, २/३१-३२, ३/२०)।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में शिखरिणी—

अन्य छन्दों की भाँति ही इसमें भी लक्षण ग्रन्थ में उल्लिखित नियमों का पालन नहीं किया गया है। इस छन्द का प्रयोग दार्शनिकता, महाकवि के महाकाव्य सम्बन्धी विचार, गांधी जी के प्रति भक्ति प्रदर्शित करने के लिए किया गया है (भारत परिजातम्, २३/७९ एव परिजात सौरभम्, ३/३६, भारत परिजातम्, २५/६९, परिजात सौरभम्, १०/४७)।

श्रीगान्धिगौरवम् में शिखरणी—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द के नियमों पर थोड़ा-थोड़ा ध्यान रखा गया है (श्री गान्धिगौरवम्, ७/१८५)। इस छन्द का प्रयोग केवल १२ पदों में किया गया है। अफ्रीकावासियों द्वारा किया गया महात्मा गांधी का अपमान, सम्मान रक्षा और सर्ग की समाप्ति पर इसका प्रयोग किया गया है (श्रीगान्धिगौरवम्, ३/८, ३/९-१०, २/८८)।

श्रीगान्धिचरितम् में शिखरिणी—

श्रीगान्धिचरितम् में शिखरिणी का प्रयोग केवल एक स्थान पर किया गया है। जनता की महात्मा गांधी के प्रति भक्ति देखकर शासक वर्ग किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया—

परामस्मिन् दृष्ट्वा निखिलजनतानामनुपलं

प्राणदण्डनिभया न शक्यते मंगराद्रचयितुं पलायनम्।
आपदामवचं निपातित शासनेन शिरसा वहामहे।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १७/४५)

वियोगिनी—

"विषमे ससजा गुरुः समे समरा लोऽथगुरुर्वियोगिनी"।
यह छन्द सुन्दरी इस नाम से भी अभिहित किया जाता है (२४)।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में वियोगिनी—

श्रीभगवदाचार्य ने इस अप्रचलित छन्द का प्रयोग भारत पारिजातम् के सप्तम सर्ग के ६७ पद्यों में किया है और पारिजातसौरभम् के पञ्चदश सर्ग के ५५ पद्यों में और सप्तदश सर्ग के ८३ पद्यों में इस छन्द का प्रयोग किया है। इसका प्रयोग महात्मा गाधी द्वारा चम्पारन में किए गए सत्याग्रह, उसमें विजय प्राप्ति (भारत पारिजातम्, ७/१-६७) हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए किया गया उपवास और महात्मा गाधी की मृत्यु से दुःखी जवाहरलाल नेहरु के भाषण (पारिजात सौरभम्, १५/१-५५, १७/१-८३) के सन्दर्भ में किया गया है। उदाहरण देखिए—

मरण न ममास्ति दुःखद शरण तत्परम विवेकिनाम्।
मम जीवित हेतवे मनागपि चिन्ता न निषेव्यता बुधै ।।
(श्रीभगवदाचार्य, पारिजातसौरभम्, १५/१५)

न वय समचिन्तयाम यत्तदपेक्षा न कदापि विद्यते।
विधुरिच्छति कर्हिचित्र हि द्युमणे क्वापि वियोगसन्ततिम्।।
(वही, वही, १७/१९)

श्रीगान्धिगौरवम् में वियोगिनी—

इस छन्द का प्रयोग काव्य में ४ पद्यो में हुआ है। कार्य कुशलता (श्रीगान्धिगौरवम् ४/१६-१७), गाधी जी के अवसान से उत्पन्न दुःख को प्रदर्शित करने के लिए (श्रीगान्धिगौरवम्, ५/५३-५४) इस छन्द का प्रयोग हुआ है। प्रस्तुत छन्द का एक उदाहरण देखिए—

(क) निकटेऽमृतकौरवल्लभौ"
हितकृत—"पतन्महोदयो ऽपि स ।
जनता हृदि शोक वारिधौ
ज्वरधारा वहति स्म सर्वत ।।
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५४)

श्रीगान्धिचरितम् ' में वियोगिनी—

श्रीसाधुशरण मिश्र ने इस छन्द का प्रयोग एकोनविंश सर्ग में ९० पद्यो में किया है। इस छन्द का प्रयोग करुण रस, महात्मा गाधी के प्रति श्रद्धाञ्जली, शव-यात्रा, महात्मा गाधी का चरित्रोद्घाटन, जीवन दर्शन आदि के प्रसंग में किया गया है। दो उदाहरण

(क) अयि भारतभाग्यभास्करः।
करुणामूर्तिकिंचिनाश्रयः।
ननु चास्तमिते तमांसि नः
पुरतः सन्ति घनानि साम्प्रतम्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९/२२)

(ख) भवति नृणां यदा यदा
परमार्तिस्तु विभुस्तदा स्वयम्।
धृतमूर्तिरसौ कृपानिधि
र्जगदेतत् परिपाति सर्वदा।।
(वही, वही, १९/४३)

मञ्जुभाषिणी—

सजसा जगौ भवति मञ्जुभाषिणी।
(वृत्तरत्नाकर, ३/७४)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में मञ्जुभाषिणी—

मञ्जुभाषिणी का प्रयोग ऋतु वर्णन, कांग्रेस मन्त्रिमण्डल का वर्णन, और उसके द्वारा दिए गए सुझावों का वर्णन (२५/१-३४), महात्मा गांधी के दार्शनिक विचार एवं सुरक्षा सम्बन्धी सुझाव (१२/१-४५) के सन्दर्भ में किया गया है। कुछ उदाहरण देखिए—

नहि भारतीय पुरतो निरीक्षितुं क्षम एव योऽपिदपमानसंकटम्।
समपातितास्य भुवि शौर्यसत्कथा प्रचरिष्यसीति भयदातुरामनाम्।।
(पारिजातापहार, १२/४४)

तपसः प्रभावमवलम्ब्य तस्य ता विजयो बभार मुदितोनरासभाम्
चरितं हि शुद्धमनसा तपःक्षय नो फलमादधाति सुपथि प्रधावताम्।।
(भारत पारिजातम्, २५/२५)

इन्द्रवंशा—

स्यादिन्द्रवंशा ततजै रसंयुतै।
(वृत्तरत्नाकर, ३/४७)

श्रीमहात्मगान्धि चरितम् में इन्द्रवंशा—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द का ९६ पदों में प्रयोग हुआ है। इसका प्रयोग महात्मा गांधी के अफ्रीका प्रवास के समय की घटनाओं, महात्मा गांधी द्वारा अंग्रेजों के प्रति कहे गए वचनों को व्यक्त करने के लिए किया गया है (भारत पारिजातम्, ५/१-४६), पारिजातापहार, ४/१-४८)। एक उदाहरण देखिए—

हिंसानदेशात्परमस्ति सर्वथा दूरे स्थितस्तेन समादृतं भवेत्।

सर्ववचः सर्वजनस्य वा मया होरन धाहेतकथमप्युपेक्षणम्।।

(पारिजातापहार, ४/६)

श्रीगान्धिगौरवम् में इन्द्रवंशा—

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने इस छन्द का प्रयोग १६ पद्यों में किया है। इसका प्रयोग वीर रस के वर्णन में किया गया है—

यत्साम्प्रतं तस्य गृहेन दृश्यते।
आडम्बर क्वापि न दर्शनीयता।
वस्त्रेषु सैत्यं ननु केशकर्त्तनं
विधाय हस्तेन स याति पार्षदः।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/३१)

नेताओं के गुणो की प्रशसा के लिए किया गया है—

तस्या सभाया निजकार्यपद्धतिम्
ऊँचे च "नेटाल" धृता स्वभाषया।
मेने "फिरोज" स हिमालय गिरि
कृष्णञ्ज गंगा "तिल्क" च सागरम्।।

(वही, वही, २/८४)

शालिनी—

मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः।

(छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तबक से)

श्रीगान्धी-गीता में शालिनी—

गान्धी-गीता में शालिनी का प्रयोग १७वें अध्याय में ८ पदो में हुआ है। इस छन्द का प्रयोग भारत के प्राचीन वैभव, वर्णाश्रम व्यवस्था को स्पष्ट करने के लिए, एकता की भावना का विस्तार करने के लिए किया गया है (गाधी गीता, १७/१९, २१-२५, ३७)।

श्रीगान्धिगौरवम् में शालिनी—

इस छन्द का प्रयोग लगभग ५८ पद्यों में हुआ है। इसमें शिथिल पदावली और पद के अन्त में विसर्गों का प्रयोग तो हुआ है लेकिन अत्यल्प मात्रा में। विद्वत्ता, स्मरण शक्ति (श्रीगान्धिगौरवम्, २/९), निडरता (वही, वही ३/१२, वैराग्यभाव) वही, ३/१०), अपराधी के सुधार (वही, ४/१८), प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए (वही, ५/४०) इस छन्द का प्रयोग हुआ है। इसके अलावा अन्य स्थल भी है जहाँ पर शालिनी का प्रयोग हुआ है।

श्रीगान्धिचरितम् में शालिनी—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द का प्रयोग दशम सर्ग में केवल दो बार हुआ है, लेकिन वह है अत्यधिक उत्कृष्ट। इसकी पदावली अत्यधिक सरस और अनुप्रास अलकार से

से मण्डित है साथ ही इसमें महात्मा गांधी के प्रति भक्ति भाव व्यक्त किया गया है (श्रीगान्धिचरितम्, १०/७, ९)।

स्वागता—

स्वागतेति रनभाद्गुरुयुग्मम्।

(वृत्तरत्नाकर, ३/४०)

सुवृत्ततिलक में कहा गया है कि स्वागता के प्रारम्भ का अक्षर अक्षर स्वर युक्त होना चाहिए और पद के अन्त में विसर्ग होना चाहिए[२५]।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में स्वागता—

श्री भगवदाचार्य ने इस छन्द का प्रयोग पारिजातसौरभम् के १९ वें सर्ग के ८ श्लोकों में किया है। प्रस्तुत छन्द का प्रयोग महात्मा गांधी पर राजगोपालाचार्य का शोक व्यक्त करने के लिए किया गया है। उदाहरण देखिए—

भारतक्षितिरियं विकलाभ्निं क्रौञ्चविकिरं इवार्तननस्का।
आधकाव्यकविसम्मुखनेव व्याधबाणहतहृद्यमुहुस्कः॥

(श्रीभगवदाचार्य, पारिजातसौरभम्, १९/७६)

आकय स विपुल पतितानां सत्यदेवपरिरक्षक ईड्यः।
अद्य तद्विरहनाम्य निराशा हा गता विनिहता विधिनातं॥

(वही, १९/८०)

श्रीगान्धिगौरवम् में स्वागता—

प्रस्तुत महाकाव्य में स्वागता का प्रयोग केवल चार पदों में हुआ है। इसका प्रयोग महात्मा गांधी द्वारा स्थापित सत्याग्रह आश्रम का संकेत देने के लिए, हरिजनों का पार्थक्य रोकने के लिए, गांधी द्वारा किए गए आमरण अनशन को व्यक्त करने के लिए, गांधी जी की कारागृह से मुक्ति के लिए किया गया है (श्रीगान्धिगौरवम्, ५/२, ७/२१, ५/७)। एक उदाहरण देखिए—

व्योमरामनवचन्द्रमिते ऽब्दे
द्वादशानि लवरत्तनमध्ये।
"श्रीगमार्द" गलवन्तअनेके
तत्सम्भिवनदे जयहरैः॥

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ६/२)

श्रीगान्धिचरितम् में स्वागता—

श्रीसाधुशरण मिश्र ने तो त्रयोदश सर्ग के ५६ पदों में स्वागता छन्द का प्रयोग किया है। इसका प्रयोग राष्ट्रनेताओं का चरित्रोद्घाटन करने एवं उनका द्वारा किया गया महात्मा गांधी का स्वागत वर्णन कौशल, के सम्बन्ध में किया गया है (श्रीगान्धिचरितम्, १३/१-५६)। उदाहरण देखिए—

तावदेव जलधनमभूत तद् वारिधेस्तटगतं कमनीयम्।
धूमराशिमकृत परिमुञ्चत् पीयमानमिव दर्शकदृष्टिभिः।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १३/३७)

विश्वबन्धुरयमेति महात्मा दुःखितान्तरतः करुणार्द्रः।
यत्सुखे जनतासुखमेव दुःखमेव निवमस्ति तदीयम्।।
(वही, वही, १३/५४)

भुजंगप्रयातम्—

भुजंगप्रयातं चतुर्भिर्यकारैः।
(छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तबक से)

श्रीगान्धिगौरवम् में भुजंगप्रयातम्—

प्रस्तुत महाकाव्य में इस छन्द का प्रयोग ३३ पद्यों में हुआ है। इस छन्द का आधार देश के लिए सर्वस्व समर्पण की भावना, गान्धी जी की प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति आग्रह, कृषक सुधार, मजदूरों को सविनय अवज्ञा आन्दोलन आदि की प्रेरणा देने के लिए किया गया है (श्रीगान्धिगौरवम्, ३/४१-४२, ४/८७, ५/२७, २९)। इसके अलावा कुछ स्थल और हैं (५/४, ३/१७, ५/५)।

श्रीगान्धिचरितम् में भुजंगप्रयातम्—

श्रीसाधुशरण मिश्र ने इस छन्द का प्रयोग केवल एक स्थान पर आनन्दानुभूति हेतु किया है—

जना विश्वबन्धु महात्मानमेत्य प्रशान्तं सदालोक कल्याणमूर्तिम्।
तपोभिर्विभान्तं यशोभिः परीतं महानन्दपीयूषपूर्णा अभूवन्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १०/१०)

भाषा—

किसी भी कृति के लिए भाषा पर ध्यान देना बहुत ही महत्वपूर्ण है। भाषा के माध्यम से ही किसी रचना की सफलता और असफलता निर्भर करती है। भाषा भावों की अभिव्यक्ति का उत्तम एवं सशक्त माध्यम है। भाषा के माध्यम से ही हम अनेक महापुरुषों और देश-विदेश के लोगों से सम्पर्क करके उनके विचारों से लाभान्वित हो पाते हैं। यदि मानव के पास शब्दावली का अभाव होता तो उसके लिए यह संसार अंधकारमय ही होता और उसके लिए इस विशाल संसार सागर को पार कर पाना कठिन हो जाता है।

कवि अपने मनः पटल से सञ्चित अनुभवों एवं विचारों को काव्य रूप में परिणत कर पाने में समर्थता भाषा के आधार पर प्राप्त कर पाता है। वह उन विचारों को कुछ इस ढंग से प्रस्तुत करता है कि उनसे एक विशिष्ट प्रकार के रस अथवा आनन्दानन्द-सन्दोह की अनुभूति होने लगती है। कवि का कर्तव्य है कि वह ऐसी भाषा का प्रयोग करे जोकि विद्वत्समाज में तो प्रशंसा पाए ही साथ ही सामान्य ज्ञान रखने वाले लोगों को भी अपनी भावनाओं से परिचित करा सके। कवि को सदैव चमत्कार और पाण्डित्य प्रदर्शन में

पूर्तीभूतमसारं तच्छुने दास्यामि खादितुम्।।

"श्रीभगवदाचार्य, पारिजातापहार, १४/९६)

इसके अलावा उन्होने अंग्रेजों की नीति की निन्दा करने के लिए "राजनीतिशकट" का प्रयोग भी किया है। प्रस्तुत काव्य में यत्र-तत्र लोकोक्तियों, मुहावरों एवं सूक्तियों का प्रयोग भी भाषा के सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं। मैं यहाँ पर इनका उदाहरण प्रस्तुत नहीं कर रही हूँ। सूक्तियों के उदाहरण परिशिष्ट में देखे जा सकते हैं।

श्रीगान्धिगौरवम्—

श्रीगान्धिगौरवम् नामक महाकाव्य देववाणी संस्कृत में लिखा गया है। स्थान-स्थान पर समाज में सुप्रचलित उर्दू, फारसी, अरबी, आग्ल भाषा के शब्दों का प्रयोग किया गया है यथा—विलायत, फिरंगी, खाता, बैञ्चर, कानून, कापी, कतार, परवाना, दलाल, कॉलेज, काग्रेस [३२] आदि। साथ ही तत्सम शब्दों के प्रयोग से काव्य का सौन्दर्य बढ़ गया है। धीमान (दीवान, श्रीगान्धिगौरवम्, १/९), वाक्कील (वकील, वही, १/२६), जलाजः, (जहाज, वही, १/३५), त्राशस्थ (ताश, वही, १/४८), वाचिस्तरस्य (वैरिष्टर, वही, १/५०), नन्दनम्, (लन्दन, वही, २/३), क्षिप्रशिप (सिफारिश, वही, २/१९), बन्धः (बन्दरगाह, वही, २/२४, ४/४१), चन्द्रा (चन्दा, वही, २/५९), च्युद्रग्रही (चुंगी, वही, २/६५), वायतराज (वायसराय, वही, २/५९), बदशाल (बादशाह, वही, २/८१), डाक्तर (डॉक्टर, वही ३/१६), द्वाखारे (दरबार, वही, ३/६३), अस्वस्थपाल (अस्पताल, ३/१६), अक्षवार (अखबार, वही, ४/३७), शिक्षायत (शिकायत, वही, ४/४७), मुख्यतार (मुख्तार, वही, ५/३), नयपाल (नैपाल, वही ५/१२), सर्वकार (सरकार, वही, ५/२१), वसूल (वसूल, वही ५/४८), मुदगफली (मूंगफली, वही, ५/६५), हरिताल (हड़ताल, वही, ५/७३), खिलापदं (खिलाफत, वही, ५/१५१), दुःशमन (दुश्मन, वही, ६/२५), अपसरं(अफसर, वही ७/७२), महत्तरं (मेहतर, वही ८/१९), पञ्चापम् (पंजाब, वही, ८/३७) आदि। इसके अलावा एक दो स्थलों पर तद्भव शब्दों का प्रयोग ही किया है, लेकिन वह छन्दों की परिपूर्णता और भाषा के सौन्दर्य में वृद्धि करता ही करता है। यथा सर्विस—Service (वही, ८/७७) काग्रेस—Congress (वही, २/५८)।

मुहावरों [३३] और लोकोक्तियों [३४] के प्रयोग से भाषा पूर्णिमा के चन्द्र सम निखर उठी है। साथ ही भाषा में आकर्षण उत्पन्न करने के लिए और छन्द-दोष के परिहार हेतु संज्ञा शब्दों में यत्किञ्चित् परिवर्तन किया गया है यथा—जवाहरलाल नेहरु (जवहीन·, वही, ६/१) लाहौर (लवपत्तन, वही, ६/२, लवपुर, ५/११३) औरंगजेब (अवरंग, वही, ७/३८), मोहन, मोहनदास, महात्मा आदि। काव्य में अत्यधिक सरल समासरहित एवं प्रसाद गुण मण्डित पदावली का प्रयोग हुआ है। उनकी विभिन्न भाषाओं को ज्यों का त्यों ग्रहण करने की क्षमता को देखकर आशु कवि श्री हरिशास्त्री दाधीच भी मुक्त कंठ से प्रशंसा किए बिना नहीं रह सके [३५]।

श्रीगान्धिचरितम् में भाषा—

प्रस्तुत महाकाव्य की भाषा भी अन्य महाकाव्यों की भाँति अतीव मंजुल एवं प्रवाहपूर्ण है। इसमें अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है। कवि ने अपने काव्य में सीमित अलंकारों का प्रयोग किया है इससे भाषा और भी अधिक निखर उठी है—

स्वच्छाच्छौच्छलदम्बुवारिधि महारिंगतरंगोपमम्
स्वातन्त्र्याधिगमोद्भवातुलपरानन्दोर्मिमालाकुलम्।
सर्वत्राफलितोच्छ्रितध्वजमभूद् गान्ध्यर्यशोमण्डितम्
भव्यं भारतवर्षमेतदधुना सर्वांगि राजते।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १७/५९)

प्रस्तुत महाकाव्य की भाषा आडम्बरहीन है। इस महाकाव्य की सूक्तियाँ भी मन को छू लेने वाली हैं। उनका अवलोकन भी परिशिष्ट में किया जा सकता है।

समस्त महाकाव्यों के भाषा सम्बन्धी विवेचन से स्पष्ट होता है कि सभी महाकवि भाषा का यथेष्ट ज्ञान रखते हैं। उनका भाषा पर पूरा-पूरा अधिकार है। संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करने के साथ-साथ वह अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करके भाषा को सुबोधता, सरसता एवं मधुरता प्रदान करते हैं।

शैली—

शैली का तात्पर्य है ढंग या तरीका। प्रत्येक साहित्यकार की भावाभिव्यक्ति का अपना एक अलग ही ढर्रा होता है, कोई मधुरता पर बल देता है, कोई पाण्डित्य प्रदर्शन पर तो कोई सरसता पर, परन्तु काव्य को व्यावहारिक ज्ञान के उपयुक्त बनाने और स्वाभाविक आनन्द प्रदान करने के लिए और कामिनी के सदृश सरसोपदेश के अनुकूल शैली का प्रयोग ही अधिक प्रभावशाली होता है। साहित्यशास्त्रियों ने शैली को तीन भागों में विभक्त किया है— (१) वैदर्भी, (२) गौड़ी, (३) पान्चाली।

उपर्युक्त शैली विभागों के सन्दर्भ में मुझे यह कहना है कि माधुर्य वर्णों से परिपूर्ण वैदर्भी शैली में कालिदास की समता कोई कवि नहीं कर सकता है और गौड़ी शैली में भवभूति की, ठीक वैसे ही पाञ्चाली में बाणभट्ट अत्यधिक निपुण हैं।

महात्मा गांधी पर आधारित महाकाव्यों में वैदर्भी शैली की ही प्रधानता है।

सत्याग्रह गीता में शैली—

पण्डिता क्षमाराव के काव्य का पर्यावलोकन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें वैदर्भी शैली का प्रयोग किया गया है।

(क) "अयि भोः सर्वकार्येषु मानवस्यास्ति जीवने।
कार्यं मुख्यतमं नित्यं प्रार्थना जगदीशितुः।।
हिन्दुर्वा पारसी क्रैस्त सिक्खो वा मुस्लिमोऽपि वा।
प्रार्थनायाः स्वकर्त्तव्यं चिन्तयेज्जीवितादधिकम्।।

बहून्यहानि हित्वान्नं नरः शक्नोति जीवितुम्।
भगवत्प्रार्थनां हित्वा दुर्धरं तस्य जीवितम्।।
प्रतिज्ञा क्रियतां कर्तुं हिन्दुवाचैव भाषणम्।
गरीयस्तदिदं कार्यं मत्रेऽसत्याग्रहादपि।।
अपरं कथये सौम्या नास्ति धर्मे सनातने।
अस्पृश्यत्वाग्रहादन्यत्पातकं हि महत्तरम्।।"

(पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय , १४/१५-२०)

यहाँ पर पदों को पढ़ने ही अर्थ स्पष्ट हो रहा है और पदावली असमस्तयुक्ता भी है।

सम्पूर्ण काव्य में प्रसाद एवं माधुर्य का सन्निवेश है। कवयित्री ने सर्वत्र ही दुरुहता से बचने का प्रयास किया है। वैदर्भी शैली का प्रसाद एव माधुर्य गुण युक्त उदाहरण देखिए—

(ख) ग्रामीणा ये पुरा तस्य प्रवासाद्दुर्मनायिता ।
प्रफुल्लवदनास्तेऽमी बभुवुर्दर्शनोत्सुका।।
वीथयः सिक्त सम्मृष्टारचारुमल्लवतोरणा ।
गृहा राष्ट्रध्वजै रम्यैर्बभुवुश्च विभूषिता।।
प्रवेशद्वारमारभ्य स्थ्यानुभयतो जन।
श्रेणीभूय विनिष्टोऽभूद्बालस्त्री वृद्धासकुल।।
अभ्यनंदन जयालोकैर्जनास्तेजस्विनं मुनिम्।
उदयोन्मुखमारावैर्भास्वन्तमिव पक्षिणः।।
बन्धनादागते गान्धौ पुष्पाणि ववृषु जना।
अयोध्यामागते रामे वनवासादिवानराः।।
कस्तूरान्बा स्मृतिद्रव्य नानादिग्देशसंचितम्।
समर्पयितुमायाता गान्धये प्रमुखा जनाः।।
विधेयं शुभकार्यं ततस्य जन्मदिनोत्सवे।
इतिनिश्चित्यनूनं तैरासीत्सन्नितिमण्डले।।
अथ जन्मदिवसात्पूर्वं सेनाग्रामं समाययुः।
सरोजिन्यादयः स्निग्धाः केचिदेव निमन्त्रिताः।।

(वही, उत्तरसत्याग्रह गीता, ४७/२-९)

अन्य शैली के उदाहरण काव्य में कम ही मिलते हैं। मैं यहाँ पर उनके उदाहरण प्रस्तुत नहीं कर रही हूँ।

गान्धी-गीता में शैली—

गान्धी-गीता महात्मा गाधी के राजनीतिक विचारों एव राष्ट्रीय-भावना की सन्दीपिका है। इसमें भी सर्वत्र वैदर्भी शैली का ही साम्राज्य है। इससे यह नहीं कहा जा सकता है कि कवि को अन्य शैलियों का ज्ञान नहीं है अपितु उन्होंने काव्य को सर्वग्राह्य

बनाने के लिए ऐसा किया है। चाहे वीर रस का वर्णन हो या करुण रस का, रौद्र रस की निष्पत्ति हो रही हो या भयानक रस की। सर्वत्र ही वैदर्भी शैली परिलक्षित होती है। वैदर्भी शैली को प्रस्तुत महाकाव्य में प्रयुक्त दो उदाहरण देखिए—

(क) सर्वत्र ह्यामया वृत्ति सत्तवस्य प्रथमं फलम्।
देहपीडा बहुविधा मृत्युरेतं न मोचयेत्।।
मृत्युभीता हि बहवो कार्यात्प्रतिनिवृत्य च।
आहिताय स्वकीयानः प्रभवन्त्यचिरादिव।।
तस्मादपरिहार्ये ऽ" कस्माद् भीति समाश्रयेत्।
मृतस्यापि पुनर्जन्म सृष्टि चक्रे नियोजितम्।।
तस्मान्मृत्युभयं त्यक्त्वा स्वकर्त्तव्ये मति कुरु।
व्यक्तिशास्तानस शक्त्या सात्त्विकं नाशयेत्क्वचित्।।
किं तु सघै समुद्भूता मन्त्रशक्तिर्बलीयसी।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ६/३-७)

यहाँ पर एकता की भावना का विस्तार किया गया है और वीर रस का सञ्चार हुआ है।

(ख) व्यक्तिधर्माज्जाति धर्मो राष्ट्रधर्मस्ततो महान्।
महात्म्य तारतम्येन जानाति स्वकृतौ सुधीः।।
ब्राह्मणक्षत्रियविशः शूद्राश्चैवापि भारत।
चत्वार एव ते वर्णाः सदा राष्ट्रे सुनिश्चलाः।।
चातुर्वर्ण्यमिदं पश्य गुणकर्मविभागशः।
निश्चीते सदा सूरीर्जन्म नैवात्र कारणम्।।

(वही, १०/४-६)

यहाँ पर प्रसाद एवं माधुर्य गुण होने से एवं राष्ट्रीय प्रेम जागरित करने के कारण वैदर्भी शैली है। गौड़ी और पाञ्चाली के उदाहरण काव्य में नहीं मिलते हैं।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम्—

प्रस्तुत महाकाव्य में तीनों ही शैलियाँ प्रयुक्त हुई हैं लेकिन प्रधानता वैदर्भी शैली की ही है। गौड़ी और पाञ्चाली के उदाहरण अत्यल्प हैं। श्री महात्मगान्धिचरितम् में समस्त रस और भाव वैदर्भी शैली में व्यक्त किए गए हैं।

समवलोक्य चमूं च यमूपतिं हृदयवेदनयोत्पुलकावलिः।
इति मिथोवचसां परिवर्तनम् रचयति स्म तदा जनता कुला।।
अगणितैः प्रबलैः कपिभल्लुकैः प्रविचिता रघुनाथवरुथिनी।
गतवती लघुराज्य वसुन्धरा पतिजयाय समुद्रविलम्बिनी।।
इदमनीकमयेनि च कौक्सैस्त्वगभिवेष्टितकैस्तु विनिर्मितम्।
अहह सानिजगत्पर्भुतास्फुरत्प्रपतैनरयं परिमार्जितुम्।।

निशिचराधिपतेर्विजिघासया परमकोपभरेण विकम्पित ।
रघुपतिर्न दधात्युपमामिहा विशसनव्रतदीक्षितभूभुज ।।
अपि च वृद्ध इहास्तु कथं स्थितो भवभयातिनिपीडित मानस·।
मरणहेतुकभीतिजिहासया गिरिवरे निसस्तपसे चिरम्।।
सदुपमा न स कृष्ण उपाश्नुते समितिनीतिमनीतिसभाभृताम्।
अनुसरन्नत एव जगत्त्रये निरुपमोऽद्य बभूव स निष्क्रम·।।

(श्री भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १३/२९-३४)

यहाँ पर प्रसाद गुण एवं अनेक भावों का प्रदर्शन होने से वैदर्भी शैली है।

करुण रस के प्रसंग में तो वैदर्भी शैली देखते ही बनती है। महात्मा गाधी की मृत्यु से सारा संसार शोक संतप्त है। इस प्रसंग में संगीतात्मकता, मधुरता प्रसादात्मकता आदि सभी गुण देखने को मिलते हैं। उनकी शैली अत्यधिक प्रभावोत्पादक है। जे. बी. कृपलानी उनकी मृत्यु से दुःखी होकर अपने उद्गार व्यक्त करते हैं—

भवतीह तस्य न शरीरमुज्ज्वल निखिलस्य निस्स्वकजनस्य दुःखहृत।
उपदिष्टमस्य सुखवर्त्म चेदयं न कदापि सपरिहरेय श भवेत्।।
मरणं तदीयमिति बोधनक्षम न वय तद्बोधरामशिक्षणोत्सुक·।
अथ केन दुःखदमिदं कृतं भवेत्क्व च वृद्धता क्व च कृशानुगोलिका।।
यदि सत्यमस्तु शरण सदा नृणा तदहिंसनव्रतमपि श्रयन्तु ते।
ऋषिधर्म एष भविता सनातनो विपरीतता च विपदा निमन्त्रणम्।।
उपदिष्टमत्र जनतासु यन्मुनि· स्वयमप्यनिद्रमभजत्तदेव स·।
जगता परीक्षणमिदं स्म गृह्यते गतवान्स पारमिति सशय ।।
अधिजात शत्रुरपि यत्र घातितो, हतभाग्यमेव भरतक्षमातलम्।
न विदेशिराज्यमपि यत्कृत क्वचित-दकारि भारत सुतैन केनचित्।।

(वही, १९/९४-९८)

श्रीगान्धिगौरवम् में शैली—

श्रीगान्धिगौरवम् में सरल, सुबोध शैली का प्रयोग हुआ है।

(क) नृत्यादि कार्य करणं प्रति दत्तचित्तः,
तत्राप्यनेन बहुरूप्यमकारि फल्गु।
गत्वादि तत्र युवकः स्व विवाह चर्चा
कुत्रापि नैव विदधाति विहारहेतोः।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/३८)

यहाँ पर रति नामक स्थायी भाव का वर्णन किया गया है।

(ख) आसीत्रिपद्या स्वरानुजस्य, नाम्नश्च रेवायुतशंकरस्य।
तस्यां सहार्थी च नियमकोऽपि, कृतौ कृतायां स हि धर्मनिष्ठ·

(वही, वही, २/६)

यहाँ पर माधुर्य गुण युक्त व्यञ्जनों और समास रहित पदावली का प्रयोग किया गया है। भक्तिभाव से युक्त और देवदास के मन में जागरित होने वाले भावों का वैदर्भी शैली में कैसा मनभावन वर्णन है। दोनों भावों का एक-एक उदाहरण देखिए—

(ग) हसन्त खेलन्त हरिमथ हर दृष्टुमभितः,
मदीया वाञ्छेयं भवतु यदि पूर्णा कथमपि।
तदा स्वप्राणानमिह सफलता वै मनुमहे
"गुरुर्मुक्तान्दो" वदति मम नाथो मधुरिपु ।।
(वही, वही, २/१३)

(घ) यावज्जीवं भाति माता स्वजात-
मेवं स्मृत्वा "देवदासो" विरौति।
यत्रासीद् "देशायिनो" वै समाधि·
सत्सान्निध्ये तच्चिता निर्मिताऽभूत्।।
(वही, वही, ७/५१)

श्रीगान्धिगौरवम् में गौडी एवं पाञ्चाली शैली का भी प्रयोग किया गया है। एक-एक उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) रण्डा-साण्डैः पूरिता या प्रतोल्या
दुर्गन्धैस्ता दूषिताभिक्षुभूरा।
अस्या पुर्यामर्जका न्यून सख्या
दृश्यते वै पेट-पूरा महान्तः।।
(वही, वही, ३/६९)

यहाँ पर जुगुप्सा नामक भाव का चित्रण होने से गौड़ी शैली है।

(ख) तस्य स्वामी गुरुण्डः शपथदलमहो ह्यन्य गौरस्य नाम्नि।
लेखित्वा तं त्वमुच्द् यदि "गिरमिट लोक· "स्व त्यजेतस्वामिनयः
"एग्रीमेण्ट"-प्रभायान् नयगतिविधिना प्राप्यते तेन कारा ।
गाधी भूत्वा सहायो दिशि दिशि नगरे ख्यातनामा बभूव।।
(वही, २/६३)

यहाँ पर प्रसाद गुण पूर्ण और दीर्घ समास का प्रयोग होने से पाञ्चाली शैली है।

श्रीगान्धिचरितम्—

प्रस्तुत महाकाव्य में भी अन्य महाकाव्यों की हो तरह वैदर्भी शैली का बहुलता से मञ्जुल प्रयोग हुआ है। अनुप्रास अलकार एवं करुण रस के प्रसंग में तो यह अत्यधिक प्रशसनीय है—

(क) हा ता हा मातरिति प्रकामं लालप्यमानाः करुणं रुदन्तः।
रक्तोक्षिता भूपतिता लुठन्तो लोका· क्षतागोपरतास्तदासन्।।
केचित् कराभ्या परिगृह्य पुत्रान् पुत्रीश्च पत्नीरथ केऽपि बालान्।

मृताग्निजाके प्रसनीक्षमाणा प्राणान् जहु स्वान रुधिरोक्षनाणा ।
प्रान्तेऽतितप्ते परिभर्जितानि बीजानि दग्धानि यथा भवन्ति।
तथा तदस्त्राग्निशिखाभिमृष्टा विदग्धगात्रा जनता अभूवन्।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १२/३६-३८)

प्राकृतिक वर्णन के प्रसंग में प्रसाद एवं माधुर्य का अद्भुत संयोग है।

(ख) निखिलभुवन चक्षुर्मण्डले तप्तहेम—
द्युतिमुषि करजालैरञ्जिते चारुरागम्।
गतवति कनकाद्रेराशु विश्व समस्तम्।
विकसति सह पद्मैश्चेष्टते स्वक्रियायाम्।।
स्फुटितनवसरोजैरञ्जलिस्तैर्मुनीनाम्।

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो गया है कि सम्पूर्ण महाकाव्य में संगीतमयता है, मधुरता है और प्रसादमयता है।

भाषा शैली की दृष्टि से समस्त काव्य अत्यधिक सुन्दर हैं। वैदर्भी शैली की प्रधानता कालिदास की याद दिलाती है। काव्यों की भाषा शैली सरल, सहजता से बोधगम्य होने वाली, प्रसाद एवं माधुर्य गुण से परिपूर्ण है। उनमें आए हुए अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग काव्यों का सौन्दर्य वर्धन करता है, क्योंकि वह व्यावहारिक ही लगता है। सूक्तियों, मुहावरों और लोकोक्तियों के कारण वह अत्यधिक शोभा सम्पन्न हो गए हैं।

गुण—

गुण का अभिप्राय है उत्कर्ष करने वाला। जिससे काव्य के सौन्दर्य में वृद्धि हो उसे गुण कहते हैं।

गुणों के द्वारा ही व्यक्ति समाज में सम्मान और प्रतिष्ठा का भाजन होता है और सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति उसकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह पाते हैं तथा उसके गुणों के आधार पर ही यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वह व्यक्ति उत्तम, मध्यम या अधम श्रेणी का है। व्यक्ति में पाये जाने वाले इन गुणों को शूरता, वीरता, दयालुता, उदारता इन नामों से जाना जाता है। यदि ये गुण उसमें अतिशय रूप से विद्यमान हो तो वह समाज में अपनी स्थिति शीघ्र ही उच्च बना लेता है और प्रतिष्ठा पाता है, अगर किसी व्यक्ति में ये गुण अत्यल्प मात्रा में होते हैं तो समाज में उसकी उपेक्षा एवं अवमानना ही होती है। यही नियम काव्य के लिए लागू होता है। काव्य में पाये जाने वाले ये गुण माधुर्य, ओज, प्रसाद आदि के रूप में जाने जाते हैं। इन गुणों की काव्य में अतिशयता या न्यूनता ही उस काव्य को उत्तमाधम की श्रेणी में रखने में सहायता प्रदान करती है। अतः कवि के लिए यह अत्यधिक आवश्यक है कि वह काव्य रचना के समय इस बात का ध्यान रखे कि उसमें अधिक से अधिक गुणों का समावेश हो जिससे अगर उसमें कुछ दोष हों तो वह भी तिरोहित हो जाएं।

मम्मट ने गुणों के विषय में लिखा है कि—

सत्याग्रह गीता में गुण—

सत्याग्रह गीता में तीनों गुणों का प्रयोग किया गया है, लेकिन प्रसाद गुण की उसमें प्रधानता है अथवा कहना चाहिए कि प्रसाद गुण का उसमें अतिशय प्रयोग किया गया है—

अथ प्राहैकदा गान्धिरन्त्यजाना सुहृन्मणि ।
यदि स्वकर्मनिर्म्लानो वर्तते मलशोधक ।।
तदा द्विजसमान· स्याद्विशिष्येत ततोऽपि वा ।
अविद्वान् शुचिर्विनो भुवि भारो हि केवलम् ।।
विनैव ब्राह्मणं जीवेत्सुखेन मलशोधकम् ।
ब्राह्मणो सुखं जीवेद्विना तु मलशोधकम् ।।
लोकानामुपकाराय म्रियते मलशोधक· ।
तत्करोति नृणां कृत्य यन्माता कुरुते शिशो ।।

(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, २१/५६-५९)

यहाँ पर अर्थ समझने में बिल्कुल भी कठिनता नहीं हो रही है। पण्डिता क्षमाराव ने वीर रस एवं उत्साह वर्धन के लिए भी प्रसाद गुण का प्रयोग करके काव्य में नवीनता भर दी है। महाकाव्यों में जन-जन में राष्ट्रीय भावना का सञ्चार करने एवं महात्मा गाधी के जीवन एवं कार्य कलापों से परिचित कराने के लिए प्रसाद गुण का प्रयोग किया गया है "रामराज्य क्या है" इस विषय में व्यक्त किये गए विचारों के सम्बन्ध में प्रसाद गुण का सौंदर्य देखते ही बनता है—

रामराज्यमिति ख्यातं स्वराज्यं यद्युगं गतम् ।
चक्रे हरिजने व्याख्यां महात्मा तस्य तद्यथा ।।
व्याख्यातुं बहुभिलोकैराहूतेऽस्मि स्वतन्त्रताम् ।
रामराज्य दशा सेति व्याचक्षेऽथ समास्त· ।।
रामराज्य न हि स्वर्गतुल्यंमत्तीति मे मति ।
स्वर्गो हि दूरतः स्थायी तद्व्रतालोचनेन किम् ।।

(वही, स्वराज्यविजय, २३/१-३)

स्वधर्मस्य कृते प्राणांस्त्यक्तुं नेच्छति य पुमान् ।
मानुषो न स वक्तव्यं पशुरेव नराकृति ।।
ग्रामेऽस्मिन्मुस्लिमः कश्चिन्महात्मान्मपावन ।
परिकल्पितसन्धामलंकर्तुं निजालयम् ।।
पुरस्कर्तुं च तं गेहाद्बहिर्निर्मितमण्डपे ।
समेतो जनसन्दोहस्तस्य दर्शनकाङ्क्षया ।।
नागपूर्ण मञ्जुषा स्वीकृत्य व्यमजन्मुनिः ।
फलानि बालकेभ्यो ये परितस्तमवास्थिताः ।।

(वही, वही, ३८/१२/१५)

इन सभी उदाहरणों में समास रहित पदावली का प्रयोग है और शब्द ऐसे हैं कि उनसे अर्थ समझने में मस्तिष्क पर दबाव नहीं डालना पड़ता है । मैं यहाँ पर प्रस्तुत महाकाव्य में उपलब्ध अन्य गुणों के उदाहरण नहीं दे रही हूँ।

गान्धी-गीता में गुण—

गान्धी-गीता राष्ट्रीय भावों की कुञ्जी है । इसमें भी प्रसाद गुण का आधिक्य है । अतः सर्वप्रथम प्रसाद गुण के उदाहरण देकर फिर अन्य गुणों का भी एक-एक उदाहरण प्रस्तुत करूँगी । एकता की भावना का विस्तार करने में प्रसाद गुण का प्रयोग देखिए—

(क) सघशक्तिर्हितकारी राष्ट्रे सैव सदेष्यते ।
सर्वेषा यत्र चैक्यं स्यात्तत्कार्यं परय सिध्यति ।।
भेद कलहकारी च घाताय सहसा नृणाम् ।
प्रयत्नेनापहर्तव्य स स्वकीयेषु नेतृभि ।।
आचारे च विचारे च स्वकीयाना हितं सदा ।
य साधयेयथा शक्त्या स राष्ट्रीय इति स्मृत. ।।
(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १०/४०-४३)

(ख) ऐक्यमस्तु शुभं शीघ्र सर्वेषा हिन्द वासिनाम् ।
इति हेतु पुरस्कृत्य यतते म चिर सुधी. ।।
भेदो हि कलहस्यैव मूलमैक्य सुखावहम् ।
इति सामान्यतस्तत्त्वमस्मदीयेन बुध्यते ।।
महंमदीयाश्चान्येऽपि पृथग्धर्मसमाश्रिता ।
सुता मदीया. सर्वे ते बान्धवा हिन्दवासिनः ।।
(वही, वही, १८/५६-५८)

अब ओज गुण का उदाहरण देखिए—

आदौ वगेषु या हिंसा ततोऽपि भयकारिणी ।
हिंसा प्रवृत्ता पजावे घातिसारचैव लक्षशः ।।
कुटुंबीया हता बाला वृद्धा नष्टं धनं तथा ।
गृहाण्यपि प्रदग्धानि मानव्यं नष्टमेव च ।।
सर्वं त्यक्त्वा प्रधावन्ति प्राणत्राणपरायणा ।
हिन्दवस्तेऽपि वध्यन्ते मार्गे मुस्लीमबान्धवैः ।।
(वही, वही, २३/८-१०)

यहाँ पर भयानक रस का वर्णन है और ओजोगुणाभिव्यञ्जक शब्दों का प्रयोग भी हुआ है ।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में गुण—

प्रसाद गुण की प्रधानता इस महाकाव्य की विशेषता है । चाहे सुकुमार विषयों का वर्णन हो, चाहे प्रकृति का वर्णन हो, करुण रस हो या रौद्र रस । प्रत्येक विषय में सरसता ही कवि को अभीष्ट है । अतः वह प्रसाद गुण का प्रयोग अधिकाधिक करके काव्य को दुरुहता से बचाकर रखते हैं । प्रसाद गुण के कुछ उदाहरण देखिए—

(क) स्यात्कोपि हिन्दुरथवापि मुहम्मदीयः ।
स्यात्पारसीक इह कोऽप्यपरो विधर्मा ।।
सर्वस्य लाभमभिलप्य भवेत्कृतार्था ।
राष्ट्रस्य संसदिति योस्तु महाप्रतीतिः ।।

(श्रीभगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १०/२१)

(ख) भवति वगधरा न विदूषिता व्यजनि यत्र खीन्द्र महाकवि ।
अतत बंकिमचन्द्र इनप्रभो निजयशोभिवितानमनुत्तमम् ।।
निजगृहं निजधर्मं गृहाणि वा निखिलहिन्दुजना विहाय ते ।
परिपलाय्य गता इति नो कृत मतिमतामनुमोदित वर्तनम् ।।

(वही, वही, ५/३९-४०)

(ग) श्रीभारताम्बर मणिविबुध प्रमाढ्य
श्रीलोकमान्यवर ईशपदानुरक्तः ।
गंगाधरस्य तनयो विदुषा महीयाः
श्रीमन्महामहिमजुट्तिलको ऽपि बालः ।।

(वही, भारत पारिजातम्, ८/२९)

इन उदाहरणों का अर्थ भी स्वतः समझ में आने लगता है ।

एक उदाहरण और प्रस्तुत है—

श्रियः शरण्य सकलापदापगापतिप्रबुद्धातितरंगताडिता ।
समाश्रयन्ते यदिहार्तिनाशनं तदेव पादाब्जरजो ह्युपास्महे ।।
जयत्वजस्त्रं जगदम्बिकाम्बकद्वयी यया सर्वमिदं निरीक्ष्यते ।
महाघभाजोऽपि कटाक्षिता यया परा समृद्धिं नितरां वितन्वते ।।

(वही, भारत पारिजातम्, १/१-२)

श्रीगान्धिगौरवम् में गुण—

प्रस्तुत महाकाव्य भी प्रसाद गुण प्रधान है । इसमें सभी रसों और रसाभास आदि में प्रसाद गुण का ही आश्रय लिया गया है । कतिपय उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) आदौ स्मरामि गुरुपाद रजांसि चित्ते
स्थित्वा पुरः स्वकरम्पित तन्मार्गैः ।
उष्मां विधाय बहुशीतसमृद्धि शीतम् ।

ध्यायेऽङ्घ्रियुग्ममहमत्र हृदि स्वकीये ।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धगौरवम्, १/१)

(ख) ततो गतो नेतृवर- स गान्धी
पुण्यैर्भृता पूतजना तु "पूनाम्" ।
"गोपालकृष्णं" तिलकञ्च दृष्ट्वा
चकार भाण्डारकर सभापम् ।।

(वही, वही, २/८३)

यहाँ पर गाधी द्वारा भाण्डारकर को सभापति बनाने की बात है ।

(ग) नवैके नवैके शुभेऽप्रैलमासे
तिथिस्तत्र षष्ठी महापुण्यशीला ।
स्वराज्यार्थमस्या जनैर्भारते स्वे
व्रत धारित हिन्दुमोहम्मदीयै. ।।

(वही, वही, ५/७६)

प्रस्तुत उदाहरण में स्वराज्य प्राप्ति हेतु व्रत धारण करने के विषय में सकेत है ।

(घ) सेना त्वेका चागता सैनिकाना
छित्वा जाल लौहजाले कृत यत् ।
नीरदत्त्वा प्राणरक्षा व्यधत्त
गान्धे कीर्ति सारयामास लोके ।।

(वही, वही, ६/५३)

प्रस्तुत उदाहरण में बतलाया गया है कि सैनिकों ने महात्मा गाधी की रक्षा किस प्रकार की ।

(ङ) निरक्षर देशमिम विलोक्य
जवाहरोऽपि व्यथमान आसीत् ।
विनाशने तद्दुरितस्य लग्न
उत्खानयामास स मौर्ख्यमूलम् ।।

(वही, वही, ७/३३)

प्रस्तुत उदाहरण में देश प्रेम की भावना व्यक्त की गई है । साथ ही इन सभी पदों को पढ़ते ही अर्थ बिना प्रयास के स्पष्ट हो जाता है ।

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने यत्र-तत्र मनोमोहक, कर्णप्रिय माधुर्य गुण का प्रयोग करके सहृदयों के आनन्द में वृद्धि की है—

(क) रसनवसुचन्द्रे हायने त्वीशवीये
गुणमिति शारदित्थ तत्र सेवा विधाय ।
रसगमितशुभासं चाममुक्त्वा च सर्वान् ।

अचलदयमनेकैः साकमेकः स्वदेशम् ।।

(वही, वही, २/७१)

(ख) गाढाक्रान्ता सन्निपात ज्वरेण
शोकाक्रान्तान् तत्र गान्धी जगाद् ।
यास्यन्ती चेयं महादेव पार्श्वं
स्वर्गं यात्वा तेन सार्धं वसेत्सा ।।

(वही, वही, ७/४६)

(ग) न सन्ति मार्गाः न हि मार्ग दीनाः
न कोऽपि भूपोऽस्ति कुलीजनानाम् ।
धनेनहीना मलिनाश्च सर्वे
वसन्ति ते वै छुपताविहीनः ।।

(वही, वही, ४/२७)

(घ) सता पिता राष्ट्रपिता जगत्या
विमानमारुह्य दिवगतोऽभूत ।
"जवाहरो" वल्लभ "पन्त" युक्तो
वक्षो विनिघ्नश्च भृश रुरोद ।।

(वही, वही, ८/५२)

प्रस्तुत उदाहरण में से प्रथम दो उदाहरणों में कवर्गादि का अपने पञ्चम वर्ण के साथ संयोग और तृतीय एवं चतुर्थ उदाहरणों में करुण रस माधुर्य गुण की अभिव्यञ्जना करा रहा है।

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी ने कुछ स्थलों पर वीर, वीभत्स आदि रसों के वर्णन में ओजोगुणका प्रयोग भी किया गया है—

(क) अफ्रीकाया भरतकुलजान् नैकलोकान् मिलित्वा
गान्धी ज्ञाता ह्यवद्य तद्दुर्गति रगजायाः ।
सर्वेषां सम्मिलनमकरोत् पूर्णवृत्तं बभाषे
इत्थं कृत्वा धवलधवलान् सावधानाश्चकार ।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३९)

(ख) "कलकत्ता" पुटभेदेने महति यदि बंगे महाशाक्तक
श्रीकाली भवनं हि तत्र बलये छागाललायादयः ।
नीयन्ते वार्धकाश्च तत्र निरताः हस्तौ कृपाण ग्रहा
दृष्ट्वा तानवलिञ्च रक्तभरिता गान्धी स मोहनं गत ।।

(वही, वही, ३/६५)

(ग) नृप प्रतिनिधि पार्श्वे पत्रमेकं तदा तु
लिखितमिह यतीन्द्रैमे चमू बन्ध गेहे ।

यदि भरतु समग्रा, हन्तु वा गोलिभिस्ता
मथच लवणदण्डं मर्षयेच्छान्तिरात्माम ।।

(वही, वही, ६/४६)

प्रस्तुत उदाहरण में क वर्ग के ग वर्ग का अपने अन्तिम वर्ण ङ के साथ संयोग और प का प्रयोग तथा गाधी जी के उत्साह और द्वितीय उदाहरण में मोह नामक व्यभिचारी भाव होने से एव तृतीय में वीर रस होने से ओजोगुण है ।

श्रीगान्धिचरितम् में गुण—

सम्पूर्ण महाकाव्य में प्रसाद गुण की आभा विकीर्ण है । काव्य को पढ़ते ही उसका भाव समझ में आ जाता है । मनोमस्तिष्क पर किसी प्रकार का जोर नहीं डालना पड़ता है। हर तरह के प्रसग में प्रसाद गुण के दर्शन होते हैं । प्रस्तुत महाकाव्य में प्रयुक्त गुणों के उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) लोकबन्धुर्महात्मासौ विश्वकल्याणधी सदा ।
यियासति पुनर्देश भारत सानुगोऽधुना ।।
स्वपरत्वकृतो भेदो यस्य नास्ति कदाचन् ।
सुहृद सर्वभूताना दयालो शान्ति वारिधे ।।

(श्री साधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्, १५/३-४)

(ख) कस्मिन्नपि प्राणिनि भेदबुद्धिर्न वा कदाचित्त विमानगम्य
संपश्यतो लोकमिम समस्त समप्रवृत्ते स्वमिवानुकूलाम् ।
हिन्दुर्यथास्ते यवनोऽपि तद्वत् ख्रीष्टानुयायी च जनो परोऽपि
तुल्योऽस्य दृष्टौ न भिदालवोऽपि समप्रवृत्तेर्विषमा न बुद्धिः ।।

(वही, वही, १६/२९-३०)

इस प्रकार प्रसाद गुण के दर्शन सम्पूर्ण काव्य में देखे जा सकते हैं ।

श्री गान्धिचरितम् में माधुर्य गुण के दर्शन भी होते हैं । कवि महात्मा गाधी के व्यक्तित्व का वर्णन कुछ इस प्रकार से करते हैं कि एक विशिष्ट प्रकार की आनन्दानुभूति सी होने लगती है और उसमें भाषा में आकर्षण दिखाई देता है—

यस्य हर्षो न च ग्लानिः सिद्ध्यसिद्ध्योः कदाचन ।
दृश्येते हृदये सान्द्रानन्दामृतसुनिर्भरे ।।
तमदित्यमिवासाद्य पद्माकर इवाम्बपो ।
विकसद्वदनाम्भोजो जनोघः स तदाभवत् ।।
अनुद्वेगकरेणासौ तपस्वी तेजसा वृत ।
पीयूषवर्षिणा नृणा दृगम्भोजविकासिना ।।
आजानुबाहु पीनोर सुरम्यमानो नलिनेक्षणः ।
सर्वेषामपि भूतानामभयस्थानमीप्सितम् ।।
लोकानामक्षिभिः सान्द्रपक्ष्मभिः प्रेमनिश्चलैः ।

श्रद्धया पीयमानोऽभूत् दृष्टपूर्वोऽप्यदृष्टवत् ।।

(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १५/२८-३२)

प्रस्तुत उदाहरण में माधुर्याभिव्यञ्जक व्यञ्जनों का कैसा मनोमोहक समायोजन किया गया है।

श्रीगान्धिचरितम् का अधोलिखित उदाहरण कवि के ओजोगुण विषय प्रयोग कौशल को भी प्रकट करने में समर्थ है—

ओडायरो नाम महाभिमानः प्रान्तस्य तस्याथ पतिर्मनस्वी ।
प्रकोपनो विश्रुतदुष्प्रवृत्तिः क्रोधाग्निना प्रज्वलितो बभूव ।।
आहूय सेनापतिमुग्रकर्मा समादिशद् दैत्यमिवातिहिंस्त्रम् ।
शान्तान् निरस्त्रान् त्वरया जनौघान् हन्तु भुशुण्डी गुलिकाप्रयोगैः ।।
तथेति तूर्णं प्रतिगृह्य मूर्ध्ना निदेशमेतस्य ययौ चमूपः ।
तथा विधातुं सहवासिनीभिः सुसज्जितामिर्विविधैर्महास्त्रैः ।।
निरागसो सज्जनान् निरस्त्रान् स्त्रीबालवृद्धैः सहितान् समायाम् ।
प्रभाषमाणानपि श्रण्वतश्च देशोन्नतेरोपयिकं विमर्शम् ।।
स्वदेशसेवाप्रवणान् विनीतान् विद्यार्थिनः केसरविद् बलिष्ठान् ।
रामा निजाङ्के परिलालयन्तीश्चन्द्राननान् कामनिभांश्च बालान् ।।
रौद्र रस के इस प्रसंग में ओजो गुण परिलक्षित होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि समस्त महाकाव्यों में यद्यपि कुछ दोष हैं, लेकिन वह तिरोहित हो जाते हैं। सभी महाकाव्यों में प्रसाद गुण की प्रधानता काव्य की मूलभावना को सहजता से ही सम्प्रेषित करने में समर्थ है। इन काव्यों की ये विशेषता साहित्य मर्मज्ञों के लिए तो प्रशंसा का विषय है ही साथ ही सामान्य रूप से संस्कृत का ज्ञान रखने वालों को भी आकर्षित करने में सक्षम है। कतिपय काव्यों में माधुर्य एवं ओजोगुण भी यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं, लेकिन उनकी मात्रा कम ही है। सर्वत्र साम्राज्य प्रसाद गुण का ही है और इस विषय के अनुकूल है।

संवाद

यद्यपि कथोपकथन का महत्व मुख्य रूप से दृश्य काव्य अथवा नाटक में होता है, क्योंकि उसमें कवि अपनी बात को पात्रों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। उसे अपनी ओर से कुछ कहने का अवकाश ही नहीं मिलता है, साथ ही उसमें अभिनय की प्रधानता होने के कारण भी संवादों का होना आवश्यक है। परन्तु श्रव्य काव्य में कवि को संवाद-विवेचन करने का अवकाश ही नहीं मिलता है और अगर उसमें संवाद योजना की भी गई हो तो वह अत्यल्प होती है।

संवादों के माध्यम से पात्रों के सर्वांगीण व्यक्तित्व का उद्घाटन अनायास ही हो जाता है। ये पाठक के मनः पटल पर इस तरह प्रभाव लाते हैं, उसे रोचकता प्रदान करते हैं। इसीलिए साहित्य की समस्त विधाओं में संवाद-योजना का महत्व स्वीकारा जाता है।

यद्यपि संवाद का सर्वाधिक महत्त्व नाटक में होता है क्योंकि वह अभिनय प्रधान होता है अन्य विधाओं में भाव प्रधान होता है। इसलिए उसमें संवाद का महत्त्व उतना तो नहीं होता है, लेकिन जिस रूप में और जितना भी होता है उसे नकारा तो नहीं जा सकता है।

गांधी-गीता में संवाद—

सम्पूर्ण गान्धी-गीता ही संवादात्मक शैली में लिखी गई है, लेकिन ये संवाद इतने लम्बे हैं कि ये कथन न होकर वर्णन प्रधान हो गए हैं। इसमें प्राप्य संवाद अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इन सवादों में महात्मा गाधी का राष्ट्रिय-प्रेम झलकता है। मैं यहा पर केवल एक स्थल प्रस्तुत कर रही हूँ—

इस स्थल में "भारतीय नामक एक पात्र राष्ट्र धर्म के विषय में जानने के लिए महात्मा गाधी से पूछता है तब महात्मा गाधी बताते हैं कि जहाँ पर मानव का जन्म होता है, जिस स्थान के उसके माता-पिता होते हैं वही उसका राष्ट्र होता है और इस राष्ट्र की सेवा में हमें अपने माता-पिता के समान ही करनी चाहिए।" श्रीनिवास ने इस बात को इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

भारतीय उवाच—

महात्मन्राष्ट्रधर्मोऽय किंरुप. किंपरायण ।
अधिकार्यत्र को वा स्यात्कि मूलं चास्य मे वद।।

महात्मोवाच—

हन्त ते कथयिष्यामि महाश्चायमुपक्रम.।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते।।
प्रणीत सर्वराष्ट्रेषु ऋषिभिस्ते पुरातनै ।
जितानामवबोधाय जेतृणा प्रशमाय च।।
रूपे कालवशाद्भेदः किं तु मूलं सदा स्थिरम्।
यस्य राष्ट्रे परा बुद्धिस्तेनाप्यस्याहृमादरात्।।
नेहास्ति क्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।।
यत्र जन्मास्य भवति यत्र संवर्धन तथा।
स्वकीया यत्र चैवास्य तस्य तद्राष्ट्रमुच्यते।।
यत्रास्य पितरावास्ता यत्रासश्च पितामहा ।
स्वीया परम्परा यत्र तस्य तद्राष्ट्रमुच्यते।।
विशेषतः सधर्माणो यत्र देशे वसन्ति हि।
आचारोऽपि समानाश्च तस्य तद्राष्ट्र मुच्यते।।
न राष्ट्रं केवलं भूमिर्न लोकोऽप्यथ वा क्वचित्।

उभयोरेवसम्बन्धे राष्ट्रमित्यभिधीयते।।

(श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ३/७-२१)

इसी तरह सारे संवाद लम्बे-लम्बे हैं। इसमें महात्मा गाधी की राष्ट्रिय भावना परक राजनैतिक विचारों का परिपोष हुआ है और सर्वत्र वही बोलते हैं अन्य पात्रों को बोलने का अवसर कम ही मिलता है। जहाँ पर अन्य पात्रों को अवसर मिला भी है तो वह भी विवरणात्मक हो गया है। जैसे प्रथम अध्याय में धृतराष्ट्र और सजय संवाद है इसमें संजय बोलते जाते हैं और धृतराष्ट्र केवल सुनते हैं। उन्हें अपनी बात कहने का मौका भी नहीं मिलता है।

श्रीमहात्मगान्धिचरितम्—

प्रस्तुत महाकाव्य के संवाद बहुत कम हैं। ये संवाद प्रभाव पूर्ण तो नहीं कहे जा सकते हैं क्योंकि ये बहुत लम्बे हो गए हैं साथ ही ये वार्तालाप न लगकर भाषण जैसे लगने लगते हैं। इनके द्वारा संवाद का सही स्वरूप भी स्पष्ट नहीं हो पाता है। दो तीन उदाहरण देखिए—

(क) अन्नेनैव मामाशा निस्तेजस्का वय प्रजा।
अङ्गेजास्तं च कुर्वाणा राज्यमस्मासु कुर्वते।।
मांसाशनेनैव मा परय दृढाग बहुधावनम्।
मांसाहारेण नश्यन्ति शीघ्रमेत्र ज्वरादय।।
मांसाहार हि कुर्वाणा बलबुद्धि समन्विता।
वयमाङ्ग्लान्पराजेतुं शक्ताः स्यामेति निश्चितम्।।
शिक्षण अपि खादन्ति मांसमस्मत्सखे प्रिय।
भक्षणीयं त्वयाप्येतद्भवितासि ततो बली।।

(श्रीभगवद्दाचार्य, भारत पारिजातम्, ३/६२-६५)

यहाँ पर महात्मा गाधी एवं उनके मित्र की वार्ता है।

(ख) मार्गेऽसवर्णं स यदाग मोहनः कश्चिन्नागात्रिकमाऽधिकारिकः।
पाश्चात्य भागे गमनाय तद्वये श्रोवाचसत्पाग्रहिणं हठो स तम्।।
श्वेता भदेयं हि निदर्शनी यदा स्थातुं प्रभुक्षासन एव तत्कुले।
गन्तव्यमेतत्परिहाय परिचिते स प्रत्युवाचेति समाधिकारिम्।।
भूयः स तं भर्त्सयति स्म चेद्भावजा वादरिम्यदृष्यवचारेण मरा।
न्यूनं न्यौक्ष्ये पुलिनं स मोहनः कर्तुं तथेवाक्यमतनुवन्नम्।।
(वही, वही, ५/१५-१७)

(ग) राजकोटे मदीयोऽस्ति पूज्यस्य निजालयः।
राजकोट महीजाहं राजकोटं प्रियं मम।।

सा पत्नी नैव भूयाद भवति
कुतं इयं प्रापिता रक्षिता वा।"
क्रुद्धा पत्नी "किमित्थं गदति
नहि पुरे यः शिरस्तस्य कृन्तेत्"
"कृन्तेद्क्षेद् यथा स्यात् किमु
कृतिरधुना नारिजात्या विचार्यम्।
"जो जानेऽहँ तु नारी कलहतु
नितरां मरसमाना सुवीरा"
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/६६-६८)

एक स्थल पर एस्कम्ब और गाधी जी का संवाद देखिए—

क्रियता दाम एतेषु चोक्तस्तेन कृपालुना।
"क्षमा धनुः करे यस्य दुर्जन किं करिष्यति"।।
(वही, ३/१४)

महात्मा गाधी के व्यक्तित्व का उद्घाटन करने वाला महात्मा गाधी एवं एक वृद्धा का संवाद देखिए—

"श्रीमोहनो" दलमतः परिलिख्य तस्यै,
पत्नीं स्वबालहिता प्रबुबोध मित्रम्।
दत्त तया त्वरितमुत्तरमेव तस्या
आयाहि मित्र ! विदधातु विवाह वार्त्तम्।।
(वही, वही, १/४०)

श्रीगान्धिचरितम् में संवाद—

प्रस्तुत महाकाव्य में भी संवाद योजना एक दो स्थलों में ही है और ये संवाद हैं भी बहुत ही लम्बे। पुतलीबाई और महात्मा गाधी का संवाद (श्रीगान्धिचरितम्, ३/१-४०) महात्मा गाधी का मांस भक्षण करने न करने के सम्बन्ध में मित्रमण्डली से संवाद (वही, ५/१-६२)।

वाग्वैदग्ध्य—

वाग्वैदग्ध्य का अभिप्राय ऐसी वाणी-या बोलने के ढंग से है जिसमें चतुरता का समावेश हो। वाक् चतुर व्यक्ति समाज के लोगों पर ऐसी छाप छोड़ देता है कि वे प्रत्यक्ष अवस्था में तो उसकी प्रशंसा करते हैं और उसे समादर की दृष्टि से देखते हैं: लेकिन परोक्ष में भी वे उसके उस गुण को भूल पाने में सर्वथा असमर्त रहते हैं।

हमारे संस्कृत साहित्य में तो आदिकाल से ही वाक् चातुर्य का बोलबाला रहा है। अपनी इसी सामर्थ्य के बल पर श्रीकृष्ण अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरित कर पाये।

सत्याग्रह गीता में वाग्वैदग्ध्य—

पण्डिता क्षमाराव की वाणी वैभवशाली भी है। उनके काव्य में वाग्वैदग्ध्य भी दृष्टिगोचर होता है। मैं यहाँ पर एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ—

शौच सौभाग्यसम्मानरक्षा नार्थनेप्सते।
ग्राम्यत्वसनता यानि विश्वाडम्बरं पुनः।।
(पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, २३/४९)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में वाग्वैदग्ध्य—

प्रस्तुत महाकाव्य में वाग्वैदग्ध्य के उदाहरण कम ही हैं लेकिन ये कुछ उदाहरण ही कवि की वाणी का वैभव कहने में सक्षम हैं।

"महात्मा गांधी जहाज से इंग्लैण्ड को रवाना हुए" इस बात को कवि ने इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि वह जहाज मोहन को लेकर आँखों से उसी प्रकार ओझल हो गया कि मानो चोर या डाकू बहुमूल्य वस्तु चुराकर पलायन कर रहा हो। वह जहाज महात्मा गांधी जैसे बहुमूल्य रत्न की प्राप्ति की प्रसन्नता में विजय ध्वनि करता हुआ प्रतिक्षण जल बिन्दुओं को पुष्प के रूप में फैलाता हुआ सा चल रहा था। अब कवि के ही शब्दों में देखिए—

सद्रत्नमाच्छिद्य पलायमानो दधानिगो दस्युरिवाति पोतः।
आदाय तं मोहनमाशु सर्वलोकेक्षणपथान्तपरो विलुप्तः।।
हरन्नयं मोहनदीव्यरत्नं कृतार्थमात्मानमिति मन्यमानः।
जयध्वनिं चारुचकार कुर्वन्सिन्धुविमुट सुमनांस्यमोक्षत्।।
(श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ४/३-४)

उनके वाग्वैदग्ध्य का एक अतीव सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत है—

माघस्तदा प्राणिगणं निरीक्ष्य क्लान्तं स्वकीये निशि मन्दहासैः।
प्रातः समन्तुर्निकामिनेन पश्चात्तवन्तस्तेवजनैः सः दृष्टः।।
(वही, वही, २/१२)

अर्थात् माघ महिने में रात्रि अत्यधिक शीत युक्त होती है जिससे प्राणियों को अत्यधिक कष्ट होता है। इस बात से दुखी होकर वह ओस कणों के रूप में अश्रु विमोचन के द्वारा पश्चाताप करता है। इसके अलावा सुन्दर एवं मन को आह्लादित करने वाला एक स्थल और है—

आर्जीविकोपाददाति न कुर्यादस्मादयं दीनजनाधिनाथः।
तस्मादने श्रीरामचन्द्रादि न कामयानास मनाक् स दासः।।
(वही, वही, १९/६१)

यहाँ पर महात्मा गांधी को राम से अधिक श्रेष्ठ बताया गया है।

श्रीगान्धिगौरवम् में वाग्वैदग्ध्य—

श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी जी भी कुशल वक्ता हैं जिसका प्रमाण उनके द्वारा प्रयुक्त पात्रों का वाक् चातुर्य है। तो लीजिए प्रस्तुत हैं कुछ उदाहरण—

(क) उवाच वाक्यं निज सुनु साक्ष्यं, ग्राह्या सुविधा लघुतोऽपि नीति.
कुशाग्र बुद्धि पठनेच्छुरेच्छ,"श्रीमोहनो" वैश्यकुलावतंस।
वाक्कील विद्या पठनाय सोऽयं, कथं न प्रेष्येत विलायदंतु?
रोगी यदिच्छेदिहतकारिपथ्यं, तदेव दद्यात स तु वैद्यराजः।
(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, 1/25-26)

यहाँ पर भाऊ जी जोशी ने गान्धी जी के विलायत गमन के सन्दर्भ में जो सिफारिश की है और वक्तव्य दिया है वह निश्चय ही उनकी वाक् कुशलता को इंगित करता है।

(ख) शतावधानीवयं जिघृक्षुणा,
श्रीगान्धिना शब्दमयं स्वभाण्डकम्।
रिक्तीकृतं पूरितवान् स उत्तरै—
मेधाविभिर्विश्वमिदं न रिच्यते।।
(वही, वही, 2/21)

यहाँ पर आत्मज्ञानी कवि राजचन्द्र की वाक् कुशलता झलक रही है।

हमारे चरित नायक महात्मा गाधी भी कम वाक् कुशल नहीं हैं, उनकी वाणी का वैभव प्रस्तुत है—

(ग)..................यदि कारा व्रजान्यहम्।
नेतारश्च तथा व्यग्रा न भूयासुर्मशोधना।।
सर्वे नेतृत्व योग्या हि कारा भरत सैनिकैः।
चमूर्यस्माकमेषा तु धारैवात्रागमिष्यति।।
(वही, वही, 6/36-37)

इसके अलावा कुछ स्थल और हैं जहा पर वाग्विदग्धता का दर्शन होता है, किन्तु ग्रन्थ विस्तार के भय से मैं और उदाहरण नहीं दे रही हूँ।

श्रीगान्धिचरितम् में वाग्वैदग्ध्य—

श्रीसाधुशरण मिश्र के काव्य में भी वाग्वैदग्ध्य के दर्शन होते हैं। यद्यपि इस काव्य का कलेवर अधिक विस्तृत नहीं है लेकिन फिर भी अन्य तत्त्वों की भाँति इसमें वाग्वैदग्ध्य पूर्ण पदों का समावेश भी है यथा—

रत्नं यथा दुर्लभमेव पूर्वं प्राप्तस्या रक्षा कठिना ततोऽपि।
तथा स्वराज्य दुखापमेतत् रक्षास्य गुर्वीति विभावनीयम्।।
स्वल्पात् प्रमादादपि तत् करस्थं बालाञ्जलिस्थाम्बुवदाशुनश्येत्।
ततो यथाऽयं फलपुष्पशाली स्वाराज्यवृक्षोऽपि तथाभिरक्ष्यः।।
(श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, 16/52-53)

अर्थात् जिस प्रकार रत्न की प्राप्ति करना कठिन है और यदि वह प्राप्त हो भी जाए तो उसका सम्हाल पाना और भी अधिक दुरुह कार्य है उसी प्रकार स्वराज्य लाभ करना जितना अधिक कठिन है उससे भी कहीं अधिक यत्न पूर्वक उसकी रक्षा करना। थोड़े से प्रमादवश हाथ में स्थित जल की बूंद नष्ट हो जाती है। उसी प्रकार स्वराज्य प्राप्ति की आशा बिखर सी जाती है अतः जल की बूंद की भाँति उत्तम फलप्रदायक स्वराज्य रूपी वृक्ष की रक्षा करनी चाहिए।

महात्मा गांधी को नाथूराम गोडसे ने मारा। उसकी गोली से वह परलोक सिधारे इस बात को कवि ने कितनी चतुरता से प्रस्तुत किया है इसका आस्वादन कीजिए—

यथा पुरा दाशरथेः स धाम पुनरेष्यतः।
निमित्तं लक्ष्मणो जात लीलानिर्मितमायया।।
यथा हि यादवेन्द्रस्य कृष्णस्यामिततेजसः।
स्वलोकगमने हेतुर्व्याधश्चानुगतो भवत्।।
तथा महात्मनो गान्धेः स्वं लोकं गन्तुमिच्छतः।
नाथूरामो भवत्तस्य निमित्तं गोडसाह्वयः।।
(वही, वही, १८/१३२-१३४)

इसी तरह महात्मा गाँधी के अवसान से भारतीय जनता शोकाकुल हो गई है इस सम्बन्ध में कवि का कथन है कि—

अचिराद् भगवज्ज्योतिर्हृदि तस्य प्रतिष्ठितम्।
सौदामिनीव तल्लीनं घने व्योमनिरस्तके।।
निर्भेदाति कठोरवज्र पतनोदन्त हृदम्भोरुह।
प्रालेयानिलवर्षणं जनगणाः श्रुत्वाथ सम्मूर्च्छिताः।।
केचित् क्रन्दन्ते स्म वेदनतरे हा हा हतास्मो वदन्।
यातो स्तं पुनरेव भारतरविः शोकावदन्तो रदन्।।
(वही, वही, १८/२४५)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि सभी महाकाव्यों में कलापक्ष का निर्वाह कुशलता पूर्वक हुआ है। कलापक्ष भावपक्ष को तिरोहित नहीं करता है। उनमें अलंकारों का प्रयोग सीमित मात्रा में किया गया है। समस्त महाकाव्यों में अनुप्रास एवं उपमा अलंकारों का प्रयोग किया है। अन्य अलंकारों के प्रयोग में पृथक्-पृथक् कवियों ने पृथक्-पृथक् विशिष्टता का प्रदर्शन किया है। छन्दों की दृष्टि से भी वह अनुपम हैं। इसके अलावा गुण, भाषा, शैली आदि समस्त तत्त्वों में सामञ्जस्य बना हुआ है। कलापक्ष के सभी तत्त्व महाकाव्य के अनुरूप हैं।

खण्डकाव्यों में कलापक्ष—

डॉ॰ किरण टण्डन का कहना है कि "कलापक्ष का प्रयोग भावपक्ष की सार्थिका के रूप में किया जाना चाहिए"[३६]। स्पष्ट है कि कलापक्ष के समस्त तत्त्वों का निरूपण न

भी हो तब भी काव्य से आनन्द की प्राप्ति हो सकती है।

खण्डकाव्य का ही लघु रूप होते हैं अतः उनमें कलापक्ष का महत्त्व उतना ही होता है जितना कि महाकाव्यों में। लेकिन खण्डकाव्यों में कथावस्तु के अनुसार कवि हर तत्त्व को विस्तार से प्रस्तुत कर पाने में असमर्थ होता है।

खण्डकाव्यों में प्रयुक्त कलापक्ष प्रस्तुत है—

अलंकार—

खण्डकाव्यों में भी अलंकारों का समायोजन अत्यधिक हृदयावर्जक है। इनमें अलकारों को अतीव सीमित मात्रा में प्रयुक्त किया गया है। खण्डकाव्यों में प्रयुक्त अलंकार हैं—अनुप्रास, यमक, उपमा, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास, सहोक्ति, विरोधाभास, स्वभावोक्ति, विशेषोक्ति। स्पष्ट है कि खण्डकाव्यों में भी उभयविध अलंकारों का प्रयोग किया गया है। अब इन अलंकारों का खण्डकाव्यों के आधार पर विवेचन प्रस्तुत है। यहाँ पर अलंकार का लक्षण प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। महाकाव्यों के विवेचन में लक्षण दिये गए हैं।

अनुप्रास—

खण्डकाव्यों में अनुप्रास के छेकानुप्रास, अन्त्यानुप्रास और श्रुत्यनुप्रास आदि भेदों का प्रयोग किया गया है।

गान्धिगौरवम् में अनुप्रास अलंकार—

डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल ने अपने काव्य में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग करके शब्दालंकारों के प्रति अपनी रुचि का प्रदर्शन किया है। उनके द्वारा अन्तयानुप्रास का प्रयोग सर्वाधिक किया गया है—

(क) शिश्राय यो जगति धर्मधुरामहिंसा
मान्या सतामखिलशास्त्रगिराभिवद्याम्।
रक्षाक्षमामसुमता जननी समेया
शश्वत् सुधी मृदुलमञ्जुलभावभव्याम्।।

(डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य स.-२)

अनुप्रास अलंकार के प्रयोग से काव्य को सरसता प्रदान की है। प्रस्तुत काव्य में उपलब्ध अनुप्रास अलकार की मनोमोहक छटा देखिए—

(ख) जयतु-जयतु, गाँधी विश्ववंद्यो महात्मा
श्रयतु-श्रयतु लोकस्तत्पथं सत्यनिष्ठम्।
वसतु-वसतु चित्ते राष्ट्रभक्तिर्नराणां
वहतु-वहतु शश्वद् विश्वबन्धुत्व गंगा।।

(वही, वही, पद्य स.-१२५)

गान्धि-गाथा में अनुप्रास अलंकार—

प्रस्तुत काव्य के पर्यवलोकन से यह स्पष्ट हो रहा है कि उसमें सर्वत्र अनुप्रास अलंकार का साम्राज्य है। इसका कारण है कि कवि चमत्कार प्रदर्शन में विश्वास नहीं करते और गाधी के जीवन को ही प्रस्तुत करने में अपना कौशल दिखाते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त अनुप्रास अलंकार का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) गान्धि-महात्मा कोटि-कोटि-भारत-जन-लोचन-तारा
सदा प्रवहद् यस्य हृदयत स्नेहमयी रस-धारा
जन्म, कृतित्वं-वाऽपि समस्तं देश-निमित्तं यस्य,
चारु चरित्रं परम पवित्र प्रात- स्मरणीयस्य।।

(आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं.-३)

यमक अलंकार—

पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री ने एक स्थल पर यमक अलकार का प्रयोग किया है—

स "बापू" संज्ञा समलञ्चकार,
पपावजाया सततं स दुग्धम्।
"कस्तूरबा" रक्षित विग्रहोऽपि,
न विग्रही नापि पराश्रितोऽभूत्।।

(पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम्, ५/१९)

यहाँ पर विग्रह शब्द की पुनरावृत्ति है और प्रथम विग्रह का अर्थ शरीर है और द्वितीय विग्रह का अर्थ युद्ध है। अतः यहां पर यमक अलकार है।

खण्डकाव्यों में शब्दालकारों का विवेचन करने के पश्चात् अर्थालकारों को लिया जा रहा है।

उपमा—

खण्डकाव्यों में उपमा का अलंकार का प्रयोग करके काव्य को जो सौन्दर्य प्रदान किया है वह निश्चय ही अपूर्व है।

श्रीगान्धिचरितम् में उपमा—

श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल ने उपमा अलंकार का बड़ा ही रमणीय प्रयोग किया है। पुतलीबाई ने समस्त विश्व को आत्मा मानने वाले विश्व के कल्याण में निमग्न रहने वाले मोहनदास को उसी प्रकार उत्पन्न किया जैसे पार्वती ने गणेश को और देवकी ने कृष्ण को किया था—

(क) अयो गणेशं जगदम्बिकेव, श्रीकृष्णचन्द्रं खलु देवकीव।
विश्वात्मकं विश्वहिते रतञ्च, सा मोहनं पुत्रमसूत काले।।

(श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-११)

यहाँ पर मोहनदास की उत्पत्ति की तुलना गणेश और कृष्ण के जन्म से की गई है अतः उपमा अलंकार है।

एक स्थल पर कहा गया है कि मोहनदास उसी प्रकार वृद्धि को प्राप्त होने लगे अर्थात् उनके शरीरावयवों का विकास उसी तरह होने लगा जैसे कि शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कलाओं में विकास होता है।

(ख) राजोचितैः सुखैर्बालो लालितो कुरुभिर्गृहे।
क्रमशो वृद्धिमापन्नः, शुक्लपक्षे शशी यथा।।
(वही, वही, पद्य सं.-१४)

प्रस्तुत काव्य में ही प्रयुक्त उपमा का एक और उदाहरण देखिए—

(ग) तीर्त्वा भवार्णवमिवार्णवमाशु धीरो,
दुःखानि तानि विविधान्यपि नैव मत्वा।
निरशेत सौउदधिवलयं गरिमाभिरामं,
योगीव नन्दननवम् वियोगतोऽपि।।
(वही, वहीं, पद्य सं.-२८)

यहाँ पर संसार-सागर की तुलना समुद्र से की है और नन्दन की तुलना नन्दन वन से की है अतः यहाँ पर उपमा अलंकार है।

गान्धिगौरवम् में उपमा—

डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल की उपमा तो कालिदास की उपमा से साम्य रखती है। उनके द्वारा प्रस्तुत वाच्योपमा का उदाहरण द्रष्टव्य है—

(क) आज्ञामगृह्णन् सकला. सहर्ष श्रीगान्धिनो भारतभूप्रुमास ।
ते कर्मणा किञ्च हृदा च वाचा छायेव सर्वत्र समन्वगच्छन्।।
(डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं.-५१)

समस्त भारतवासी मन और वाणी से छाया की भाँति महात्मा गान्धी का अनुकरण करते हैं। यहां पर मन और वाणी उपमेय छाया उपमान और इव वाचक शब्द हैं अतः यहाँ पर उपमा है।

इसके अलावा उन्होंने एक स्थल पर उपमा अलंकार का अतीव मञ्जुल उदाहरण प्रस्तुत किया है।

(ख) मातेव रक्षित पितेव हिते नियुङ्क्ते
चेतो विनोदयति चन्द्रमुखी प्रियेव।
निःसंशयं मित्रसमास्त्वहिंसा
कस्माद् भजन्ति न जनाँमहिंसा।।

प्रस्तुत उदाहरण में कहा गया है कि अहिंसा माता की भाँति रक्षा करती है, पिता की भाँति हित कार्यों में नियोजित करती है चन्द्रमुखी प्रिया की भाँति चित्त को प्रसन्न रखती है। निःसन्देह यह मित्र के समान है। यहाँ पर पूर्णोपमा है क्योंकि अहिंसा उपमेय और जैसे माता की तरह रक्षा करना आदि में माता आदि उपमान इव वाचक शब्द है और "रक्षा करना" हित कार्यों में नियोजित करना आदि साधारण धर्म हैं।

राष्ट्ररत्नम् में उपमा—

पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री ने भी उपमा अलंकार को अपने काव्य में प्रस्तुत किया है।

रामश्चन्द्रोदितजीवने यो नीतौ च योगेश्वर कृष्ण एव।
धैर्ये च यो धैर्यधरः प्रताप नरसाहसे यः शिवराज एव।।

(पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम्, ५/२)

यहाँ पर लुप्तोपमा है क्योंकि यहाँ पर वाचक शब्द नहीं है। महात्मा गाँधी का जीवन मर्यादा पूर्ण था इसलिए वह मर्यादा पुरुषोत्तम राम के समान थे। वह कृष्ण की भाँति नीति पालक थे, राणाप्रताप की तरह धैर्य धारण करने वाले थे, वह इतने अधिक वीर थे कि शिवाजी की भाँति प्रतीत होते थे।

रूपक अलंकार—

रूपक अलंकार में भी खण्डकाव्यकार सिद्धहस्त हैं। उन्होंने उपमा की भाँति ही रूपक के प्रयोग में भी अपने कौशल का परिचय दिया है। रूपक के दो उदाहरण देखिए—

महात्मा गाँधी ने विषयवासनाओं रूपी दैत्य का वध करने के लिए अर्थात् उनको विनष्ट करने के लिए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया।

(क) यावत् प्रवृत्तिरिह हा विषयेषु लोके
तावद् भवेज्जगति नो जनता सवर्या।
तस्मात् प्रभी. विषयदैत्य निषूदनाय
जग्राह य सुललितब्रह्मचर्यम्।।

(डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं.-५)

ज्ञान, विवेक और सद्विचार रूपी दीपक के द्वारा अज्ञान रूपी अन्धकार को मानस रूपी मन्दिर से शीघ्रता पूर्वक निकाल दिया। यहाँ पर रूपक अलंकार है—

(ख) अनेक-विद्वज्जन-निरवद्य-सम्मतैः ज्ञान विवेक दीपैः।
गुप्तं तमो मानस-सदनेऽयं द्रुत निरूद्धीकृतवान् बलेन।।

(श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-४२)

अन्य खण्डकाव्यों में भी रूपक का प्रयोग किया गया है लेकिन विस्तार भय से अन्य काव्यों के उदाहरण नहीं दे रहा हूँ।

उत्प्रेक्षा अलंकार—

खण्डकाव्यकार भी उत्प्रेक्षा करने में अत्यधिक सक्षम हैं। इन काव्यों में आये हुए दो उदाहरणों ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया है—

(क) प्रमोद-पीयूष-रसाभिषिक्तो, ज्यायानमुं स्वागमपाजयकर।
असावपि नेत्रसेक मूर्ति दृष्ट्वाग्रजं प्रीतमना ननाम।।

(श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-४५)

अर्थात् काफी समय के पश्चात् मिलने के कारण ज्येष्ठ भ्राता ने प्रसन्नता पूर्वक इस तरह स्वागत किया कि मानो प्रसन्नता रूपी अमृत रस में ही स्नान किया हो और मोहनदास ने भी उन्हें अमृतरस की प्रतिमूर्ति मानकर प्रणाम किया। यहाँ पर प्रेम और अमृत में समानता के कारण उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(ख) मन्ये कबीरो व्रतिनोऽस्य देहे, प्रादुरासीज्जनसाम्यवादी।
श्रुता गुणा ये बहव कबीरे, दृष्टाः समे गान्धिनि ते तथैव।।
(पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम्, ५/७)

तात्पर्य यह है कि वह गुणों में कबीर से साम्य रखते थे इस कारण मानो वह कबीर ही थे।

दृष्टान्त—

खण्डकाव्यों में भी महाकाव्यों की भाँति दृष्टान्त दिए गये हैं। कतिपय उदाहरण प्रस्तुत है—

(क) वृषो हि भगवान् धर्मो मुनिनामिह समत·।
परिश्राम्यत्यरिव श्रान्तं यदसौ लोकहेतवे।।
(श्रीधर भास्कर वर्णेकर, श्रमगीता पद्य स०-१०३)

(ख) न क्रमागत-वित्तेन न जात्या सुप्रतिष्ठया।
पुरुष· श्लाघ्यतां याति सश्लाघ्यो य परिश्रमी।।
(वही, वही, पद्य सं०-९१)

(ग) आलस्यमस्तिबहुदोषकरंजगत्या-
मौर्घ्यं हि यज्जनयति श्रमशीलपुंसि।
सर्वत्र वात्यापरितोष समीर चण्डो
लोके भवन्ति धनिनो धनिनोऽपि रुष्टाः।।
(डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं०-८८)

अर्थान्तरन्यास—

प्रस्तुत अलंकार का प्रयोग भी सभी काव्यों में हुआ है। इसके भी कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(क) भक्तिर्भवद्भिस्त्वरया विधेया देशस्य भाषासु नितान्त शुभा।
राष्ट्रस्य हत्येव विभावनीया श्वेतागभाषाव्यवहार एषः।।
(डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं०-८३)

(ख) उत्साहसम्पत्प्रवण यदि स्यु-र्जनास्तदा स्याद्विपदा विनाशः।
क्रियाविधिज्ञस्य हि याति लक्ष्मी·, स्वयं शुभाक सुख वाञ्छयेव।।
(श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं०-७७)

अब स्वभावोक्ति, सहोक्ति, का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है—

स यत्र मार्गे चलितुं प्रवृत्त-स्तमन्वगच्छत् सहसा जनौघः।

स यानि कर्माणि विदायुकाम-स्तान्यन्वतिष्ठच्च समग्रलोकः।।

(पण्डित यज्ञेश्वर शास्त्री राष्ट्ररत्नम्, ५/२२)

यहाँ महात्मा गाधी के साथ-साथ जनता का उनका अनुकरण करना कितने स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत है। अतः स्वभावोक्ति है।

चिन्ता व्युदस्य विसृजाशु सुतं सुविज्ञे, धैर्यं धरेह गतिमीश कृतां विदित्वा
श्रुत्वेति वाचममला विससर्ज माता, गेहात्सुतं नयनतो विमलाश्च मुक्ताः।।

(श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-२४)

यहाँ पर सहोक्ति अलंकार है।

इसके अलावा आचार्य मधुकर शास्त्री ने विनोक्ति अलंकार का, पण्डित शास्त्री ने विशेषोक्ति और विरोधाभास का अत्यधिक प्रशंसनीय उदाहरण दिया है लेकिन मैं यहाँ पर उन्हें प्रस्तुत नहीं कर रही हूँ। अलंकारों का खण्डकाव्यों में समुचित उपयोग किया गया है। इनसे काव्यों का सौन्दर्य उसी प्रकार द्विगुणित हो गया है जैसे कि आभूषणों से कामिनी का कान्त-कलेवर निखर जाता है।

महात्मा गांधी परक आधारित खण्डकाव्यों में छन्द—

खण्डकाव्यों में छन्द का प्रयोग अपरिहार्य है लेकिन उनमें कोई बन्धन नहीं होता है। वैसे खण्डकाव्य में एक ही छन्द का प्रयोग उत्तम माना जाता है लेकिन कवि अपनी स्वेच्छा से अनेक छन्दों का प्रयोग कर सकता है। खण्डकाव्यों में अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवंशा, उपजाति, द्रुतविलम्बित, मालिनी, वसन्ततिलका, शिखरणी, सार, दोहा, आर्या आदि बारह छन्दों का प्रयोग किया गया है। इनमें से तीन छन्द "हिन्दी" में प्रचलित हैं।

अनुष्टुप्—

सभी खण्डकाव्यों में अनुष्टुप् छन्द का प्रथम स्थान है। श्रमगीता के समस्त पद्यों अर्थात् ११८ पद्यों में इस छन्द का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत काव्य में इस छन्द का प्रयोग श्रम का महत्त्व बताने के लिए किया गया है। गान्धि-गाथा के ७९ पद्यों में इस छन्द का प्रयोग किया गया है। इन पद्यों में महात्मा गाधी के जीवनादर्शों को प्रस्तुत किया गया है।

मैं इन काव्यों में प्रयुक्त अन्य छन्दों का विस्तार से विवरण प्रस्तुत नहीं कर रही हूँ केवल गान्धि-गाथा में प्रयुक्त "सार" नामक हिन्दी के प्रचलित छन्द का एक उदाहरण प्रस्तुत कर रही हूं। इस छन्द के विषय में स्वयं आचार्य मधुकर शास्त्री ने अपने पत्र में लिखा है [३७] जिससे इस छन्द की पुष्टि होती है। इसको देखने से लगता है कि इसमें मात्राओं का निर्धारण नहीं होता है। कवि स्वेच्छा से उसमें मात्राएं रख सकता है—महात्मा गाधी के देश-प्रेम के सन्दर्भ में एक उदाहरण देखिए—

अमर-भारती यद् गुण-गाथा-गान-सनाथा बाढं,
राष्ट्रध्रायाः कणे-कणे यत्स्मृतिः प्रदीव्यति गाढम्।
सदा व्यराजत यस्य मानसे रामराज्य-सुस्वप्नः,

स्वर्ग समं स्व देशं कर्तुञ्चासीद् यस्य सुयत्नः।।
(आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पद्य सं.-६)

भाषा—

महात्मा गाधी पर आधारित खण्डकाव्यों की भाषा सरल संस्कृत है। उनमें मे दो खण्डकाव्यों में अंग्रेजी उर्दू एवं गुजराती के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। और अन्य काव्यों में शुद्ध संस्कृत का प्रयोग है।

श्रीगान्धिचरितम् की भाषा—

प्रस्तुत काव्य की भाषा अत्यधिक सरल, सरस, गम्भीर भावों की अभिव्यक्ति में समर्थ, लघुसमास वाली, विषय के सर्वथा अनुकूल है। इसमें प्रयुक्त अलंकार काव्य के सौन्दर्य वर्धन में सहायक हैं। इसमें कहीं-कहीं पर अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों का ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत किया गया है यथा—पोरबन्दर (श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-८), अफ्रीका (वही, पद्य स.-५४), बापू (वही, पद्य स.-१०२) आदि। इसके अलावा भावाभिव्यक्ति की सरलता के लिए कवि ने कुछ शब्दों में परिवर्तन भी कर लिया है। इसमें प्रयुक्त सूक्तियों से भी भाषा हृदयग्राही बन गई है यथा—"यदि सिंह देर तक न सोता हो तो उसके समीप जाने का साहस कोई नहीं कर सकता है[३८]।

गान्धिगौरवम् की भाषा—

प्रस्तुत काव्य में अत्यधिक सरल एवं प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग किया गया है। अलंकारों के सीमित प्रयोग से उसमें निखार आ गया है। सामान्य संस्कृत का ज्ञान रखने वाले भी इसकी भाषा को आसानी से समझ सकते हैं।

राष्ट्ररत्नम् की भाषा—

इसमें भी आलंकारिक भाषा का प्रयोग किया गया है जोकि मूल भावना को सम्प्रेषित करने में सक्षम है। इसमें प्रयुक्त सूक्तियाँ भाषा को अतीव रोचकता और सहजता प्रदान करती है। यथा—"सज्जन लोग सबको समानता की भावना से देखते हैं (राष्ट्ररत्नम, ५/३)। अन्य भाषाओं के शब्द भी अनायास ही आ गये हैं जैसे "बापू", अफ्रीका आदि।

गान्धि-गाथा की भाषा—

गान्धि-गाथा में भी प्रभावशाली भाषा का प्रयोग किया गया है। अनुप्रास के प्रयोग से भाषा आकर्षक बन पड़ी है। इसमें भी सूक्तियों का प्रयोग भाषा को अनुपम रूप प्रदान करता है। अन्य भाषाओं के शब्दों का ग्रहण करने के कारण भाषा सर्वग्राह्य बन गई है। यथा—हाईकोर्ट इंग्लैण्ड आदि। इसके अलावा कई स्थानों में अन्य भाषा के शब्दों का संस्कृतीकरण करके प्रस्तुत किया गया है यथा—मुम्बई, वाक्कीलत्व, कोट आदि। इससे भाषा अत्यधिक सौन्दर्यपूर्ण हो गई है।

श्रमगीता—

इसमें वर्णेकर जी ने काफी सरल संस्कृत का प्रयोग किया है। स्थान-स्थान पर दृष्टान्त देकर और सूक्तियाँ प्रस्तुत करके कवि ने भाषा को अतीव हृदयग्राही बना दिया है।

इन तत्त्वों के अलावा खण्डकाव्यों में वैदर्भी शैली और प्रसाद गुण की प्रधानता है। शोध-प्रबन्ध के अन्य स्थलों में दिए गए उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है। उनमें संवाद का प्रयोग भी बहुत कम हुआ है। श्रीगान्धिचरितम् में महात्मा गाधी और पुतलीबाई का, श्रमगीता में राजेन्द्र प्रसाद एवं महात्मा गाधी, जवाहर लाल नेहरू और महात्मा गाधी, राधाकृष्ण और महात्मा गाधी, बल्लभ भाई और महात्मा गाधी। श्रीगान्धिचरितम् के संवाद तो वर्णनीय है भी लेकिन श्रमगीता के संवाद इतने लम्बे हैं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा उसमें आए हुए सवाद में गाधी जी ही अधिक बोलते हैं। हाँ वाग्वैदग्ध्य सभी काव्यों में है। मैं यहाँ पर इन तत्त्वों के उदाहरण विस्तार भय से प्रस्तुत नहीं कर रही हूँ।

गद्य काव्यों में कलापक्ष—

गद्य-काव्यों में भी कलापक्ष का अनुपात बना हुआ है। इन काव्यों में अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, अर्थान्तरन्यास और विरोधाभास अलंकारों का प्रयोग किया गया है। इन काव्यों की भाषा आलंकारिक, प्रसाद गुण से मण्डित और वैदर्भी शैली से युक्त है। उसमें सवाद नहीं के बराबर हैं। वर्णनात्मकता की प्रधानता है। उनकी भाषा का सौष्ठव देखिए—

(क) "तस्य तान्युत्कृष्टतमानि स्वार्थ शून्यानि निखिल विश्वोपकारिणी वन्दनीयानि कर्माणि वीक्ष्य-भारतस्यैव न समग्रस्यापि जगती जनता कृतयुगस्य कारणमिव, बीजमिव विद्वत्सृष्टेः, एकागारमिव करुणायाः, बलदर्शनमिव विदग्धताया, एकस्थानमिव मर्यादाणां, सौजन्यस्यस्मति द्वीपमिव, आवर्तनामिव, च धर्मस्य मत्वा वत्चरणयो श्रद्धया भक्त्या च नतमाला समजायत। असंयतमपि संयतं, सानप्रयोगपरमप्यवलम्बित दण्डं, सन्निहित नेत्र युगलमपि, परित्यक्तवामलोचन मेकदेशस्थितमपि व्याप्तभुवन- मण्डलमपरिमितपरिवारमप्यद्वितीयं तमवाप्य जातेयं जगती सर्वथैव सनाथा।"

(डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ.सं.-१३७)

(ख) सत्याग्रहान्दोलने अयमनेकवार कारागारमगच्छत्। तस्य कार्य कौशलं पराक्रममुत्साह हरिजनसम्मान चावलोक्य। अय निज परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

(श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरुव शिष्याश्च, पृ.सं.-११)

गद्य काव्यों में तीन काव्यों में से केवल दो काव्यों में अनुष्टुप् और वसन्ततिलका छन्द का प्रयोग किया गया है। इन काव्यों में भी विस्तार से विवेचन नहीं कर रही हूँ।

दृश्य-काव्यों में कलापक्ष—

दृश्य काव्यों में भी अन्य काव्यों की ही भाँति कलापक्ष का निर्वाह अतीव सुन्दरता पूर्वक और कुशलता पूर्वक किया गया है। अनुप्रास, उपमा, रूपक, आदि कतिपय अलंकारों का प्रयोग किया है। मैं यहाँ पर आलोच्य दोनों काव्यों से रूपक अलकार का एक-एक उदाहरण प्रस्तुत कर रही हूँ जिससे कि उन कवियों के कौशल का परिचय भी मिल जाए।

(क) "अवमानं भुंजते, अश्रूणि, पिबति च। दुर्बला एते मद्धताः ताडिता, दलिता"।

(डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय, दृश्य-५)

(ख) यश्चपेटा प्रहरता दण्डेस्तस्य प्रतिक्रिया।
मात' स्वल्पेन कालेन द्रक्ष्यस्वेतान् हतानिव।।
(मथुरा प्रसाद दीक्षित, गान्धिविजय नाटकम्, प्रथोऽङ्कः, श्लोक सं.-४)

इसके अलावा गान्धि-विजय नाटकम् में प्रयुक्त व्यतिरेक अलंकार का उदाहरण प्रस्तुत किए बिना मैं नहीं रह पा रही हूँ—

यत्त्वत्पादयुग्स्य भा प्रभवति स्वर्गे च भूमण्डले,
तत्साम्याय न चारुणः प्रतिगतोऽनूरुत्वदोषाकुल ।
गुञ्जा स्वे सितता विलोक्य वपुषि प्राप्तु मनो नो व्यधाच्
चण्डातो हयमारकस्त्विति जने दुष्कीर्तितो नाव्रजत्।।
(वही, वही, प्रथमोऽङ्कः, श्लोक स.-१)

गान्धिविजय नाटकम् में २१ पद्यों में अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया है और ४ पद्यों में शार्दूलाविक्रीडित का।

दृश्य काव्यों की भाषा अत्यधिक सरल, सहज है। उनमें पाण्डित्य प्रदर्शन नहीं किया गया है। सत्याग्रहोदयः में स्थान-स्थान पर सूक्तियों एवं दृष्टान्त के प्रयोग से भाषा निखर उठी है। इसके अलावा गान्धिविजयनाटकम् में यत्र-तत्र हिन्दी का प्रयोग भी किया गया है—

चलो चलो रि सखी मिलि दरसन करिये मोहन जग में आता है।
गीता सुनाता, भेद मिटाता, शान्तीपथ दरसाता है।
माया मोह कपट छल रिपुगण जेहि दरसन से जाता है।। चलो.
परतन्त्रता मिटावन को प्रभु चरखा चलाता है।
सोई मातुचरण बन्धन के काटन हित जग आता है।। चलो.
वैरि वाहिनी के जीतन को शम दम शस्त्र सिखाता है।
तेहि मोहन जगवन्दित पद को भारत माथ नमाता है।। चलो.
(मथुरा प्रसाद दीक्षित, गान्धि विजय नाटकम्, प्रथमोऽङ्क.)

इनमें संवाद अत्यधिक आकर्षक एवं विषय को रोचक बनाने में समर्थ हैं। उनमें महात्मा गांधी, अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों और अन्य पात्रों के चरित्र पर प्रभाव पड़ा है। इनमें जो प्रभावपूर्ण स्थल है वह इस प्रकार है—महात्मा गांधी और अब्दुल्ला संवाद, महादेव-गांधी संवाद, भारतमाता-सरस्वती संवाद, गान्धी-कस्तूरबा। मालवीय-डायर संवाद। जवाहर लाल नेहरू-क्रिप्स संवाद, (ये संवाद गान्धि विजय नाटकम् के हैं) नाविकाधिप और गांधी संवाद, अधिकारी और गांधी संवाद, कस्तूरबा और गांधी संवाद (ये संवाद सत्याग्रहोदय के हैं)।

अन्य तत्त्वों को भी दृश्य काव्य में सन्तुलित रूप से प्रस्तुत किया है।

समवेत समीक्षा—

चारों विधाओं के आधार पर कलापक्ष का विवेचन करने के पश्चात् यह स्पष्ट हो गया है कि सभी कवियों ने कलापक्ष के तत्त्वों को समुचित ढंग से प्रस्तुत किया है। अन्य पक्षों की भाँति ही कलापक्ष भी महाकाव्य में विस्तृत एवं अत्यधिक उत्तम किया है। अन्य काव्यों में भी कलापक्ष के तत्त्वों को सुन्दरता से अभिव्यक्ति मिली है हाँ उनकी मात्रा अवश्य कम है परन्तु काव्यों के कलेवर के अनुसार अपनी-अपनी जगह पर सभी काव्यों का कलापक्ष अत्यधिक अनुपम है।

सन्दर्भ

(१) वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोष पृ.सं.-१०२

(२) काव्य प्रकाश, अष्टम उल्लास, सूत्र संख्या-८७

(३) काव्यादर्श, २११

(४) उपजाति विकल्पाना सिद्धो यद्यपि संकरः।
तथापि प्रथमं कुर्यात्पूर्वपादाक्षरं लघु.।।

(सुवृत्ततिलक, २/६)

(५) श्रृङ्गारालम्बनोदार नायिकास्य वर्णनम्।
वसन्तापिसद् ङ्गञ्च सचछायमुपजातिभिः।।

(वही, २/१६)

(६) सुवृत्ततिलक, २/१७

(७) वही, वही, ३/१८

(८) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/३०

(९) वही, वही, ३/३०, ४/१९, ४/४९, ५/१२५

(१०) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, ३/१-४०

(११) वसन्ततिलक भाति उद्धरे वीररौद्रयो.। (सुवृत्ततिलक १९/१)

(१२) कुर्यात्सर्गस्य पर्यन्ते मालिनी द्रुतताल‌वत्।

(सुवृत्ततिलक, ३/१९)

(१३) विसर्गहीन पर्यन्ता मालिनी न विराजते।
चमरी छिन्न पुच्छेव वल्लीबालून पल्लवा।

(वही, २/२२)

(१४) वही, वही, २/२३
(१५) श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २१/१-६८)
(१६) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/५०, ३/१-२, ४/८९
(१७) वही, वही, २/५६, ३/१, ४/८४, ५/११३, ६/१९
(१८) सुवृत्ततिलक, तृतीय विन्यास, २२/१
(१९) रथोद्धता विभावेषु भव्या चन्द्रोदयादिषु"। सुवृत्ततिलक, ३/१८
(२०) वही, वही, २/१३
(२१) श्रीभगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १७/१-४८, पारिजातसौरभम्, ६/१-८०
(२२) वही, वही, २२/१-७३
(२३) डॉ. जौहरी लाल, नारायणीयम् काव्य का साहित्यिक अध्ययन, पृ.स.-१९६
(२४) सुवृततिलक, २/१५
(२५) पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १६/३०
(२६) वही, वही, १७/६०
(२७) वही, स्वराज्य विजय., ३/१६
(२८) वही, वही, ४९/२६
(२९) वही, वही, ५०/७
(३०) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धीगीता, १२/४,१०
(३१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/२६, २/३२, २/३७, १/४६, ६/४०, ५/७, ५/३५, ४/११, १/२३, २/५७
(३२) "वृद्धश्च हस्ती सितरंगधारी" सफेद हाथी बाँधना,
(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/१८)
(३३) "हस्ते यष्टी भवति महिषी तस्य"
जिसकी लाठी उसकी भैंस, (वही, वही, ४/२)
(३४) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, "कीर्तियस्य स जीवति . . . "शीर्षक से उद्धृत, पृ.सं.-३
(३५) डॉ. किरण टण्डन महाकवि ज्ञानसागर के काव्य एक अध्ययन, पृ.सं.-३१३
(३६) आचार्य मधुकर शास्त्री, पत्राक दिनाक- ३० दिसम्बर १९८७
(३७) श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-७९

षष्ठ अध्याय

महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत साहित्य में ऐतिहासिकता

प्रत्येक काव्य का निर्माण किसी घटना विशेष अथवा व्यक्ति को आधार मानकर किया जाता है। कवि अपनी इच्छानुसार पात्र एवं घटनाएं चुनता है लेकिन उनमें सामञ्जस्य बनाये रखता है और ये घटनाए और पात्र वह यद्यपि इतिहास से चुनता है लेकिन उनको अपने काव्य के द्वारा इस तरह प्रस्तुत करता है कि वह मात्र इतिहास न रहकर सहृदयों को आनन्द प्रदान करने वाला काव्य बन जाता है।

महात्मा गाधी पर आधारित सभी काव्य ऐतिहासिक हैं। समस्त काव्यों की घटनाएं महात्मा गाधी के जीवन में घटित हुई हैं। कतिपय काव्यों में तो उनके जन्म से लेकर मृत्यु तक का वर्णन है और कतिपय काव्यों में दक्षिण अफ्रीका में उनके द्वारा प्रारम्भ किये गए सत्याग्रह आन्दोलन की घटनाओं में प्रारम्भ किया गया है और उनके अवसान तक का उल्लेख है। कतिपय काव्यों में केवल दक्षिण-अफ्रीका की घटनाओं का ही विवरण दिया है तथा कतिपय काव्यों में उनके कुछ प्रमुख कार्यों को ही प्रस्तुत किया गया है। काव्यों में वर्णित घटनाओं के साथ स्वाभाविक रूप से पात्र भी उपस्थित हो गए हैं। इनमें आई हुई घटनाओं १८६९ से लेकर १९४८ तक के स्वतन्त्रता संग्राम की कहानी है अतः घटनाओं के साथ-साथ स्वतन्त्रता सेनानियों और तात्कालिक शासक वर्ग आदि का उल्लेख होना नितान्त सटीक लगता है। अब सर्वप्रथम काव्यों में उल्लिखित घटनाओं का उल्लेख किया जा रहा है।

घटनाओं की ऐतिहासिकता—

महात्म गाधी अप्रैल सन् १९८३ में दक्षिण अफ्रीका गए ऐसा उल्लेख आत्म-कथा में किया गया है[१]। काव्यों में भी महात्मा गाधी के अफ्रीका जाने का उल्लेख है। कतिपय काव्यों में केवल दक्षिण अफ्रीका जाने का उल्लेख है और कतिपय काव्यों में उनकी दक्षिण अफ्रीका जाने की तिथि का उल्लेख यथावत् किया गया है[२]।

वहा पहुचने पर उनका स्वागत नेटालवासी भारतीय व्यापारी अब्दुल्ला ने किया[३]। यह घटना भी सत्य है[४]।

दक्षिण अफ्रीका वासी भारतीयों को गोरे लोग अपमान एव तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखते थे। उन्हें वहाँ के लोगों के साथ सम्मिलित नहीं किया जाता था। उन्हें "कुली" नाम से सम्बोधित किया जाता था। उन्हें न्यायालय में पगड़ी पहन कर जाने की आज्ञा नहीं थी। वह सेठ अब्दुल्ला के साथ अग्रेज की कचहरी में पगड़ी पहनकर गए तब अंग्रेज ने उन्हें पगड़ी उतार कर प्रविष्ट होने के लिए कहा लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया और

इस घटना का पत्र द्वारा उद्घाटन करके आवाञ्छित मेहमान " अनवेलकम विजिटर" के रूप में प्रसिद्ध हो गए[८]। यह घटना आत्म कथा में भी इसी तरह है[६]।

भारतीय प्रथम श्रेणी का टिकट होने के बावजूद भी प्रथम कक्ष में यात्रा नहीं कर सकते थे। नेटाल धारासभा में यह नियम बना कि भारतीयों को धारासभा में सदस्यता न दी जाये। इसी बीच भारतीयों ने उनसे अनुरोध किया कि कुछ समय के लिए यहीं रुक जाएं अतः वह एक वर्ष लिए वहीं रुक गये और भारतीयों को अधिकार दिलवाकर भारत लौट आए[७]।

भारतीयों को मताधिकार की सुविधा प्रदान करवाने के लि २२ मई सन् १८९४ को "इण्डियन नेटाल काँग्रेस" नामक संस्था की स्थापना की[८]। यह तथ्य भी आत्म कथा में इसी रूप में वर्णित है[९]। अन्य काव्य में यह वर्णन है कि उन्होंने बालसुन्दरम नामक मद्रासी बालक को उसके स्वामी पर फौजदारी का मुकदमा चलाकर उसकी अधीनता से मुक्त करवाया[१०]। यह घटना भी वर्णित है[११] ट्रान्सवाल में स्मट्स द्वारा "खूनी-कानून" के पास कर दिये जाने पर (जिसके आधार पर वहाँ केवल गोरे ही रह सकते थे भारतीय नहीं।) सत्याग्रह वस्त्र का साहरा लेने वाले गाधी को जनवरी १९०८ में पकड़ लिया गया[१२]। नेटाल सरकार ने हिन्दुस्तानियों से ३७५ रुपये अर्थात् २५ पौण्ड कर लेने का निश्चय किया जिसे महात्मा गांधी ने "इण्डियन नेटाल काँग्रेस के माध्यम से ४५ रुपये अर्थात् ३ पौण्ड करवा दिया[१३]। श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी ने भी यह उल्लेख इसी तरह किया है[१४]। सन् १९०४ में "इण्डियन ओपीनियन" नामक पत्र की स्थापना हुई। इसका सम्पादन श्रीमान् सुखलाल ने किया। यह पत्र हिन्दी, सौराष्ट्री तमिल, अंग्रेजी इन चार भाषाओं में प्रकाशित होता था[१५]। आत्मकथा में भी यह उल्लेख ऐसा ही है[१६]। महात्मा गाधी ने अहमदाबाद में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की[१७]। इस आश्रम की स्थापना २५ मई सन् १९१५ में हुई थी[१८]। आत्मकथा से भी इसकी पुष्टि होती है[१९]। भारत पारिजातम् में सन् तो १९१५ है लेकिन अप्रैल माह[२०]। सन् १९१६ में काँग्रेस अधिवेशन लखनऊ में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में गांधी से नेहरू और जिन्ना की भेंट हुई[२१]। २५ जून १९४५ को शिमला सम्मेलन हुआ था ऐसा उल्लेख किया गया है[२२]। "आधुनिक भारत" नामक पुस्तक से इसकी पुष्टि होती है[२३]। हिन्दू-मुस्लिम झगड़ों से तंग आकर महात्मा गाधी ने १३ जनवरी १९४८ को प्रायोपवेश किया। यह वर्णन महात्मा गाधी जी की दिल्ली डायरी नामक पुस्तक दोनों में है[२४]।

सन् १९३९ मे द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारम्भ होने पर काँग्रेस का सारा कार्य अवरुद्ध हो गया[२५]। ८ अगस्त १९४२ को भारत छोड़ो आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ और ९ अगस्त को महात्मा गाधी को परिवार सहित पूना "आगाखाँ" नामक स्थान में बन्दी बना लिया गया[२६]।

महात्मा गाधी ३० जनवरी १९४८ को मनु और आभा के कन्धे में हाथ रखकर प्रार्थना सभा में जा रहे थे तभी नाथूराम गोड्से ने उनकी हत्या कर दी। इस घटना का उल्लेख लगभग सभी काव्यों में किया गया है[२७] तथा इसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। इस विषय में सभी जानते हैं।

पात्रों में ऐतिहासिकता—

घटनाओं में ऐतिहासिकता प्रस्तुत करने के पश्चात् अब पात्रों की ऐतिहासिकता प्रस्तुत की जा रही है।

जवाहरलाल नेहरू—

जवाहरलाल नेहरू मोतीलालनेहरू के पुत्र थे। वह पिता के ही समान देश की सेवा में तत्पर रहते थे। जवाहर लाल नेहरू ने काँग्रेस के अध्यक्ष पद को सम्भाला। वह गाधी जी की शिष्य त्रयी में अपना स्थान बनाए हुएथे। वह १९१३ में संयुक्त परिषद् काँग्रेस के सदस्य रहे। उन्होंने असहयोग आन्दोलन में भाग लिया और १९२९ में राष्ट्रिय काँग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। उन्होंने गांधी द्वारा चलाए गए अवज्ञा आन्दोलन और नमक सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया। वह भारत के प्रथम प्रधान मंत्री भी रहे। यह नाम सभी काव्यों में आया[२८]। ऐतिहासिक ग्रन्थों में भी इस नाम की सत्यता प्रमाणित होती है[२९]।

अबुल कलाम आजाद—

मौलाना अबुल कलाम आजाद महात्मा गाधी के मित्र एव भारतीय राष्ट्रिय काँग्रेस महासभा के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। वह हिन्दु-मुस्लिम एकता के पक्षपाती हैं। वह देश की स्वतन्त्रता हेतु कारागृह की यातना भी सह लेते हैं। सन् १९३० में वह अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेते हैं और मोतीलाल नेहरू एवं गाधी के कारागृह में चले जाने पर काँग्रेस कार्यवाहक अध्यक्ष के पद को संभालते हैं अगस्त में उन्हें भी छह माह का कारावास दिया गया[३०]।

विनोबा भावे—

विनोवा भावे का जन्म १८९४ में महाराष्ट्र में हुआ था। सन् १९३६ में वह इण्टरमीडिएट परीक्षा देने के बदले सूरत और बनारस में वह महात्मा गाधी का भाषण सुनने के लिए गए। उन्होंने १९२१ में साबरमती आश्रम में प्रवेश लिया। १३ अप्रैल १९२३ में सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने पर उन्हें नागपुर में पकड़ लिया। उन्होंने १९४२ में भारत छोड़ो आन्दोलन में भी भाग लिया[३१]। बी.आर. नन्दा की महात्मा गाधी नामक पुस्तक से भी इस नाम की पुष्टि होती है[३२]।

राजगोपालाचार्य—

राजगोपालाचार्य ने भी स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। वह सर स्टेफर्ट द्वारा सन् १९४२ में दिए गए सुझाव से सहमत थे। वह गांधी जी के अवज्ञा आन्दोलन से सहमत थे। वह विभाजन द्वारा ही स्वतन्त्रता प्राप्ति में विश्वास रखते थे[३३]।

दादाभाई नौरोजी—

वह सन् १८८६, १८९३ में और १९०९ में भारतीय राष्ट्रिय काँग्रेस के सदस्य चुने गए। महात्मा गाधी गान्धिपारक में भी यह उल्लेख है कि दादाभाई नौरोजी ने काँग्रेस का नेतृत्व किया[३४]।

सुरन्द्र नाथ बैनर्जी—

इन्होंने भी १८९५ में और १९०२ में कॉंग्रेस की अध्यक्षता की। उन्होंने १९०५ में बंगाल विभाजन के विरोध में किये जा रहे आन्दोलन के सन्दर्भ में नेतृत्व किया। उन्होंने बहिष्कार और स्वदेसी के प्रति अपनी सहमति व्यक्त की[३५]।

ए॰ओ॰ ह्यूम—

अलान् अक्टोबन ह्यूम कॉंग्रेस महासभा के सस्थापक थे। उनके साथ मिलकर भारतीयों ने समिति का गठन किया[३६]। "कॉंग्रेस का संक्षिप्त इतिहास" नामक पुस्तक में भी ऐसा ही वर्णन है[३७]।

बालगंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल, लाला लाजपतराय—

महाराष्ट्र में लोकमान्य बाल गंगाधर "तिलक" पजाब में लाला लाजपतराय और बंगाल में विपिन चन्द्र पाल को "लाल-बाल-, पाल नाम से जाना जाता था। श्री क्षेमेन्द्र सुमन की पुस्तक 'कॉंग्रेस का सक्षिप्त इतिहास' काव्य से आये हुए इन नामों की पुष्टि करता है। गान्धी-गीता में इनका पूरा नाम न देकर "लाल बालौच पाल. यह नाम दिया गया है[३८]।

डॉ॰ किचलू और सत्यपाल—

सन् १९१९ में सत्याग्रह प्रारम्भ होने पर आन्दोलन में भाग लेने वाले पजाब के नेता किचलू और सत्यपाल को गिरफ्तार किया गया। यह दोनों नाम सत्याग्रह गीता और श्रीमहात्मगान्धिचरितम् में आए हैं[३९]। और ऐतिहासिक पुस्तक में भी ये दोनों नाम उल्लिखित हैं[४०]।

मीरा बहन—

मीर बहन का विदेशी नाम मेडली स्टेड है। भारत के प्रति मानवता द्वारा अर्जित प्रेम और सद्भावना पैदा की। यह कार्य मीरा जैसी कर्मठ महिला के लिए ही संभव था। मीरा बहन की दृढ़ता, सात्विकता एवं कार्यकुशलता को लेखन ने अति निकट से देखा है। वह भारत प्रायः सेवाग्रम आश्रम की प्रयोगशाला में अवश्य आया करती थीं। सन् १९४२ में "भारत छोडो" प्रस्ताव के फलस्वरूप जब महात्मा गांधी नजरबन्द करके बम्बई से "आगाखॉं" पैलेस को ले जाए गये तो साथ में मीरा बहन भी थी[४१]।

जमना लाल बजाज—

गांधी युग में भारत के जिन देश सेवी लक्ष्मी पुत्रों का परिचय देशवासियों को मिला है उनमें स्व॰ बजाज अपना एक प्रमुख स्थान रखते हैं। आपका सारा जीवन ही राष्ट्र निर्माण में प्रवृत्त रहा। सन् १९३४ में बापू वर्धा में उनके ही घर पर रहे[४२]।

जय प्रकाश नारायण—

जय प्रकाश नारायण महात्मा गांधी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाले सेनानी है। "भारत छोड़ो आन्दोलन" में ये भी महात्मा गांधी के साथ थे[४३]। जमना लाल बजाज की पुस्तक में भी यह नाम दिया गया है[४४]।

लार्ड माउण्टबेटन—

लार्ड माउण्टबेटन भारत के अन्तिम वाइसराय थे। वह मार्च १९७४ में वेवल के स्थान पर भारत आए थे। उन्होंने स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में गान्धी से वार्ता की। उन्होंने जिन्ना के आग्रह पर भारत को दो टुकड़ों में बाँटकर स्वतन्त्रता प्रदान करवाई[४५]।

नाथूराम गोड्से—

जैसे महात्मा गाधी के नाम से समस्त भारतीय परिचित हैं वैसे भी उनके हत्यारे को भी सभी जानते हैं। उनके द्वारा महात्मा गांधी की हत्या का वर्णन महात्मा गान्धी परक सब काव्यों में है। इस सम्बन्ध में प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है[४६]।

अब्दुल गफ्फार खाँ—

सन् १९३० में वह पठानों का नेतृत्व करते हैं उन्हें सीमान्त गाधी के नाम से जाना जाता है[४७]।

राजकुमारी अमृत कौर—

उन्होंने महात्मा गाधी के साथ सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया[४८]। स्पष्ट है कि उनका नाम भी वास्तविक है।

रवीन्द्र नाथ टैगौर—

रवीन्द्र नाथ टेगौर "विश्वकवि" की उपाधि प्राप्त थी। उन्हें गुरुदेव के नाम से जाना जाता था। महात्मा गाधी उनके शान्ति निकेतन में रहे[४९]।

बंकिम चन्द्र—

बंकिम चन्द्र महान् साहित्यकार थे। उन्होंने राष्ट्रिय भावना का संचार करने वाले राष्ट्रीय-गीत "वन्देमातरम्" का निर्माण किया। इस विषय में भी सभी जानते हैं और ऐतिहासिकता ग्रन्थों में भी ऐसा ही वर्णन है[५०]।

फिरोज शाह मेहता—

फिरोज शाह मेहता एक अच्छे वक्ता थे। महात्मा गांधी ने आत्म कथा में लिखा है कि वह उन्हें "हिमालय" नाम से सम्बोधित करते थे[५१]।

मुहम्मद अली जिन्ना—

मुहम्मद अली जिन्ना मुस्लिम लीग के नेता थे। वह भी काँग्रेस के सदस्य रह चुके थे। बाद में उनका महात्मा गाधी से विरोध हो गया था। वह महात्मा गाधी के विचारों से असहमत थे। महात्मा गाधी द्वारा उनके साथ भारत पाक-विभाजन न हो इस सम्बन्ध में किया गया विचार-विमर्श असफल रहा। उनके दुराग्रह से विभाजन हो ही गया[५२]।

इतिहासऔर काव्यत्व का समन्वय—

महात्मा गांधी परक सभी काव्य ऐतिहासिक हैं। उनमें आई हुई घटनाएं एवं पात्र दोनों ही वास्तविक हैं। कवियों ने उन घटनाओ एवं पात्रों को काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत

करके काव्यों को अतीव रोचक बना दिया है। शोध-प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय एवं प्रथम अध्याय से इन घटनाओं और पात्रों के विषय में जानकारी मिलती है। ये समस्त पात्र एव घटनाएं ऐतिहासिक ग्रन्थों में भी मिलते हैं। कवियों ने उन्हें अलंकार, छन्द एवं सुन्दर भाषा के द्वारा सजाकर हमारे समक्ष रखा है। उन्होंने इतिहास एवं काव्यत्व में मञ्जुल समन्वय बनाये रखा है। वर्णन कौशल के अवसर पर और जीवन-दर्शन प्रस्तुत करते समय घटना पीछे छूटती सी लगती है, लेकिन उसमें काव्यात्मकता लाने के लिए भी यह जरूरी है। अतः यह कहा जा सकता है कि इतिहास काव्य में इस तरह प्रस्तुत किया गया है कि वह सहृदय को आनन्द पहुंचाने में सक्षम है।

सन्दर्भ

(१) (क) बापू, आत्मकथा, पृ.सं.-१८०
(ख) Mahatma Gandhi, B.R. Nanda, page No. ३७
(२) (क) पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता,
(ख) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्,
(ग) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,
(घ) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्री गान्धिचरितम्,
(ङ) श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्,
(च) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्,
(छ) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि गाथा,
(ज) डॉ. किशोरनाथ झा, बापू पृ.सं.-१४
(झ) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा
(ट) मथुरा प्रसाद दीक्षित, गान्धिविजय नाट्कम्,
(ठ) बोम्मकण्ठी, रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदयः,
(३) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,
(४) बापू, आत्मकथा
(५) (क) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३२-३२
(ख) बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय·, दृश्य-४, पृ.सं.-१७
(६) बापू, आत्मकथा, पृ.सं.-१८४-१८९
(७) (क) वही, वही, पृ.सं.-१९५
(ख) श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ५ सर्ग सम्पूर्ण।
(८) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/५८-५९
(९) बापू, आत्मकथा,
(१०) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/३३
(११) बापू, आत्मकथा, पृ.सं. -२५५-२५८

(१२) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/६/-६२
(१३) बापू, आत्मकथा, पृ.सं.-२५९-२६३
(१४) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २/६८/-६९
(१५) आचार्य मधुकर शास्त्री गान्धि-गाथा, पूर्वभाग, पद्य सं.-१७४
(१६) बापू, आत्मकथा, पृ.सं.-३९४
(१७) श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजात, ६/१
(१८) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ५/१-२
(१९) बापू, पृ.सं.-२८
(२०) आत्मकथा, पृ.स.-२५९
(२१) (क) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, पूर्वभाग, पद्य स.-१३७
(ख) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, गान्धिगौरवम्, ५/१४
(ग) क्षेमचन्द्र सुमन, कॉंग्रेस का संक्षिप्त इतिहास, पृ.सं.-१०१
(२२) (क) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय', सप्तम अध्याय,
(ख) आचार्य मधुकर शास्त्री, गान्धि-गाथा, प्रथम भाग, २२१
(२३) डॉ. मीनू पन्त "स्वामिभगवदाचार्य कृत भारत पारिजातम् का समालोचात्मक अध्ययन" के शोध-प्रबन्ध से उद्धृत, पृ.सं.-२७०
(२४) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/४३
(ख) गान्धी जी की दिल्ली डायरी,
(२५) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री शिवसागर त्रिपाठी, ७/४०
(ख) कॉंग्रेस का संक्षिप्त इतिहास, पृ.सं.-९६
(२६) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/४१-४३
(२७) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम्, ८/४९-५०
(ख) पण्डित क्षमाराव स्वराज्य विजयः, ५१ अध्याय।
(ग) डॉ. किशोर नाथ झा, बापू, पृ.सं.-७८
(२८) (क) पण्डित क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रह गीता, ११/३ स्वराज्य विजय ।
(ख) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धि-गीता, १४/३३
(ग) श्रीभगवदाचार्य, श्री महात्मगान्धिचरितम्, पारिजातापहार, २०/५
(घ) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/५२
(ङ) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १६/६९
(२९) (क) बी.आर. नन्दा, महात्मा गांधी, पृ.सं.-३३३-३३४
(ख) पट्टाभि सीता रमैया, कॉंग्रेस का इतिहास, परिशष्ट।
(३०) (क) बी.आर. नन्दा, महात्मा गान्धी, २७४-२७९
(ख) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,

(३१) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.स.-५२-६०

(३२) बी.आर. नन्दा, महात्मा गान्धी, पृ.सं.-२८७-२९०

(३३) (क) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १२/७९

(ख) श्री भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १९/८२

(३४) (क) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ११/५९-५७

(ख) श्रीमद भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, १९/७७-७८

(ग) आधुनिक भारत पृ.सं.-३३४-३३६

(३५) आत्मकथा, १९८

(३६) (क) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ११/१३-१४

(ख) श्रीमद् भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, २३/३

(३७) श्री क्षेमेन्द्र सुमन, काँग्रेस का संक्षिप्त इतिहास, पृ.स.-६

(३८) (क) क्षेमेन्द्र सुमन, काँग्रेस का संक्षिप्त इतिहास, पृ.स.-९

(ख) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अध्याय -१४

(३९) (क) पण्डिता क्षमाराव, सत्याग्रह गीता, १/१९

(ख) श्रीभगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ६ सर्ग।

(४०) श्री क्षेमेन्द्र सुमन, काँग्रेस का संक्षिप्त इतिहास, पृ.सं.-२४

(४१) (क) श्री ललितप्रसाद श्रीवास्तव, सेवाग्राम की विभूतियाँ, .. पृ.सं.-१२३-१२५

(ख) श्री भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २/२०, ४५, पण्डिता क्षमाराव, .. उत्तर सत्याग्रह गीता, १७/१०-११

(४२) (क) श्री ललित प्रसाद श्रीवास्तव, सेवाग्राम की विभूतियाँ, पृ.स.-४९

(ख) श्री भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्,

(४३) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, २/९१-९५

(४४) जमना लाल बजाज,

(४५) (क) श्री निवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, एकविंश अध्याय।

(ख) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, अष्टम अध्याय।

(४६) (क) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, त्रयोविंश अध्याय।

(ख) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय ,

(ग) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/४९-५१

(घ) श्रीमद् भगवदाचार्य, पारिजात सौरभम्, १६/३९

(ङ) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १८/१३४

(४७) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/११, ९/२

(ख) बी.आर. नन्दा, महात्मा गान्धी, पृ.सं.-१२६

(४८) (क) पण्डिता क्षमाराव, उत्तरसत्याग्रहगीता, १/५

(ख) सेवाग्राम की विभूतियाँ,

(४९) पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, १/१-२

(५०) पण्डिता क्षमाराव, उत्तर सत्याग्रह गीता, ३२/२३-२४

(५१) (क) आत्मकथा, पृ.सं.-२९४-२९४

(ख) श्रीशिविगोविन्द त्रिपाठी, श्री गान्धिगौरवम् २/८१

(ग) श्री भगवदाचार्य, भारतपारिजातम्, ४/२६, पारिजातापहार, १९/७७

(५२) (क) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजयः, प्रथम अध्याय

(ख) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता

(ग) इण्डियन नेशनल मूवमेण्ट डवलपमेण्ट, पृ.स.-१४०-१४२

सप्तम अध्याय

महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत काव्य में जीवन-दर्शन

प्रत्येक मनुष्य कुछ विशिष्ट परिस्थितियों और वातावरण में जन्म लेता है, विभिन्न संस्कृतियों एवं सभ्यताओं के मध्य विकसित होता है, भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है, अनेक अनुकूल एवं प्रतिकूल घटनाओं का अवलोकन करता है, समाज के बदलते मानदण्डों पर विचार करता है तरह-तरह के साहित्य का अध्ययन करता है, अपनी आर्थिक, सामाजिक धार्मिक आदि अनेक स्थितियों के अनुरूप जीवन-यापन करता है इस तरह उस पर समाज के विविध स्वरूपों एवं व्यक्ति विशेष का प्रभाव पड़ता है और उसका जीवन व्यतीत करने के सन्दर्भ में एक विशिष्ट दृष्टिकोण पनपता है और वह उसी के अनुसार अपना जीवन ढालना चाहता है। इसी को जीवन दर्शन इस नाम से अभिहित किया जाता है।

समस्त आलोच्य कवियों का जन्म ऐसे परिवार में हुआ है जिन्हें भारतीय संस्कृति, धर्म, देश आदि के प्रति विशेष अनुराग रहा है साथ ही उनका जीवन काल वह है जबकि भारतवर्ष अंग्रेजों का गुलाम था। इस गुलामी से छुटकारा दिलवाने के लिए अनेक भारतीय मनीषियों, नेताओं, स्त्री-पुरुषों ने भारत की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध रूपी यज्ञ की बलिवेदी पर अपने प्राणों की आहुति देने का बीड़ा उठाया था। ऐसे ही महापुरुषों में महात्मा गाधी भी हैं जिन्होंने अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने स्वार्थ का त्याग कर दिया और तपस्वियों के सदृश जीवन व्यतीत किया सात ही अपने नि.शस्त्र होकर अंग्रेजों से युद्ध किया। और उसमें कामयाब सिद्ध हुए। अत. ऐसे प्रतिभा सम्पन्न, उत्साही पुरुष के सम्पर्क में आनेवाले व्यक्ति पर उसके विचारों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। समस्त कवि महात्मा गाधी के जीवन-दर्शन से प्रभावित दिखाई देते हैं। अब महात्मा गांधी पर आधारित संस्कृत साहित्य में वर्णित जीवन दर्शन प्रस्तुत किया जा रहा है।

सामाजिक जीवन—

सामाजिक जीवन के सम्बन्ध में कवियों के विचार प्रस्तुत हैं यह आदर्श प्रस्तुत किया गया है कि मानव को कार्य करने का अधिकार है। अतः उसे फल की कामना को छोड़कर कार्य में तत्पर होना चाहिए[1]। कार्य की सफलता यत्न पर ही अवलम्बित होती है इसीलिए कर्मकरना चाहिए और भाग्य के भरोसे होकर हाथ में हाथ रखकर बैठ नहीं जाना चाहिए[2]। लक्ष्य की प्राप्ति तो उसे ही होगी जोकि परिश्रम पूर्वक कार्य करेगा।

कर्म करते हुए सौ वर्ष तकजीवित रहना चाहिए[3]। सुख-दु ख, लाभ-हानि, जय-पराजय आदि किसी भी स्थिति में समभाव रखते हुए कर्म करना चाहिए[4]।

सामाजिक जीवन के लिए शिक्षा भी अत्यधिक उपयोगी है। उसके माध्यम से मानवोचित गुणों का विकास होता है और व्यक्ति का उर्ध्वमुखी विकास होता है। वह ईश्वर प्रदत्त विवेक बुद्धि एव क्षमता का विकास करके बुद्धि को कुण्ठित होने से बचा लेती है। शिक्षा ही व्यक्ति को इस योग्य बनाती है कि वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है स्वयं को समाज के योग्य बना सकता है[5]।

एक ऐसे समाज की परिकल्पना की गई है कि जहाँ पर सभी का विकास हो, सब सुखी, सम्पन्न एव शोषण मुक्त हों, बुराईयों के प्रति घृणा भाव हो, सदैव न्यायपूर्ण मार्ग का अवलम्बन लिया जाये, कहीं पर और कभी भी वर्णभेद न हो, उनमें आपसी अन्तर केवल गुणों और कर्म के आधार पर हो, सब भयमुक्त रहें, उन्हें कोई चिन्ता उद्विग्न न करे, लोग परोपकार में रत रहने वाले हों, सबको समान अधिकार मिले, सब अपने अपने धर्म का पालन करते हुए दूसरे के धर्म का विरोध न करें। भारतवर्ष में कहीं कोई किसी को अपहरण आदि दुष्कृत्यों से ठगे नहीं, किसी को बुभुक्षा बाधिक न करे, कोई भी दुर्बल न हो सब स्वस्थ्य रहें। सभी दैहिक, दैवक और भौतिक ताप से मुक्त रहें, स्वराज्य रक्षा के लिए सावधान रहें। यदि व्यक्ति यह कामना करता है कि उसका सर्वांगीण विकास हो तो इसके लिए उसे समाज की बुराईयों अथवा असद् विचार से सर्वथा दूर रहना चाहिएउसमें इतनी विवेक बुद्धि होनी चाहिए कि वह अच्छी बातों को ही ग्रहण करे और बुराईयों से स्वयं को दूर रख सके[6]। महात्मा गाधी द्वारा प्रवासी भारतीयों को अधिकार दिलवाने की बात का उल्लेख करके यह बताया गया है कि सबको समान अधिकार मिलने चाहिए[7]। प्राणिमात्र का विकास हो, समस्त मानव सुखी एवं सम्पन्न हों और शोषण मुक्त हों[8]। सर्वत्र ही समता की देवी की पूजा हो अर्थात् सबको समान माना जाए एव सबका कल्याण हो, उनकी उन्नति होती रहे[9]। और जहां रामराज्य की स्थापना हो सके। महात्मा गाधी का नाम चिरकाल तक स्मरण किया जाता रहे। लोग राम नाम रूपी अमृत रस का पान करें, मन, वचन एवं कर्म से सत्य के प्रति निष्ठा रखें[10]। अपना कार्य स्वयं करना चाहिए[11]।

गान्धिविषयक संस्कृत साहित्यमें वर्णाश्रम व्यवस्था के विषय में विचार व्यक्त किए गए हैं ये वर्ण व्यवस्था भारतीय सस्कृति का प्राण है वर्ण चार हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इन वर्णों का निर्धारण गुणों और कर्मों के आधार पर किया गया है जन्म के आधार पर नहीं। सात्त्विक गुणों से युक्त ब्राह्मण कहलाता है, अपने उदात्त गुणों से ही उसे पूजनीय माना जाता है। जिसमें रजोगुण प्रधान रूप से रहता है, जो शक्ति सम्पन्न होता है अर्थात् जिसमें प्रतीकार करने की शक्ति होती है, अन्याय करने वालों को दण्ड देने की सामर्थ्य होती है उसे क्षत्रिय वर्ण का कहा जाता है। जो वस्तुओं का क्रय-विक्रय और व्यापार करता है उसे वैश्य के अन्तर्गत रखा जाता है और सेवा कार्य करने वाले को शूद्र कहा जाता है। भारतीय समाज की यह व्यवस्था है कि यदि शूद्र के गुणों का उत्कर्ष होता है तो उसे ब्राह्मण वर्ण की प्राप्ति हो सकती है। और अगर ब्राह्मण के

गुणों का अपकर्ष होता है तो उसे निम्न वर्ग का माना चाहिए। प्राचीन काल से ही वर्ग की महिमा का प्रतिपादन किया जाता रहा है[१२]।

प्रत्येक मानव को चाहिए कि वह किसी के प्रति हीन भाव न रखे, किसी को भी अपने से कम न समझे। न केवल हिन्दू लोग अपने से निम्न वर्ग के प्रति समता का व्यवहार करें अपितु हिन्दू मुसलमान दोनों को प्रेम भाव से रहना चाहिए क्योंकि राम मोहम्मद दोनों एक हैं[१३]।

सदाचार का जीवन में बड़ा महत्त्व है अत- इसकी सदैव रक्षा करनी चाहिए[१४]।

समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सबका समान महत्त्व है। अत: शूद्र को भी अन्य वर्ण के लोगों के समान ही सम्मान दिया जाना चाहिए। समाज की उन्नति को दृष्टिपथ पर रखकर उनकी अपरिहार्यता महनीय स्थान रखती है जिस तरह शरीर को क्रियाशीलता चरणों से मिलती है वैसे ही ये समाज के चरण हैं। इनके पारस्परिक सहयोग के बिना समाज का कार्य सुचारु ढंग से कदापि नहीं चल सकता है[१५]।

समस्त प्राणियों के प्रति मित्रतापूर्ण आचरण करना चाहिए। मानव का सबसे बड़ा धर्म है दीन दुखियों की सेवा करना, उन पर दया करना, यदि हमें जीवन में उन्नति करनी है तो अहंकार, छल, कपट, असत्य, क्रूरता, दुर्व्यवहार, पशुता, हिंसा आदि दुर्भावों को मन से निकाल देना चाहिए[१६]। और शत्रु के प्रति भी द्वेष भाव नहीं रखना चाहिए जिससे कि वह स्वयं ही मित्रता करने को तैयार हो जायेंगे ऐसा प्रयास करना चाहिए जिससे कि वह अन्त:करण में परिवर्तन कर सकें[१७]।

चरित्रवान् लोग अपना लक्ष्य प्राप्त करके ही रहते हैं[१८]। सत्य एवं परिश्रम के बल पर समस्त कार्य सिद्ध हो जाते हैं[१९]।

दैव विहित शुभ मुहूर्त में विद्यारम्भ करने से पूर्व राम नाम का उच्चारण करना चाहिए। विद्या प्राप्ति हेतु गुरु की सेवा और ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए तथा विषय वासनाओं से दूर रहना चाहिए क्योंकि विद्या की प्राप्ति विरोधी विषयों के सेवन से नहीं हो सकती है जिस तरह छिद्र युक्त घडे में जल नहीं ठहर सकता है। ब्रह्मचर्य के पालन से आयु और बुद्धि का विकास होता है इससे वह विद्या प्राप्ति में समर्थ होता है जैसे पैर न होने पर भी वह चलने मे समर्थ हो गया हो, दृष्टि न होते हुए भी देखने लगा हो। मानव गुरु की सेवा से समस्त विद्या प्राप्ति कर लेता है श्रद्धा पूर्वक गुरु के चरण कमलों की सेवा के द्वारा प्राप्त की गई विद्या चिरस्थाई होती है, उसकी सदा वृद्धि होती है, संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिसे विद्या के द्वारा प्राप्त न किया जा सके। विद्या दान देने वाले की अवज्ञा नहीं करनी चाहिए जो सदाचरण को छोड़कर गुरु के प्रति द्वेष भाव से ग्रस्त हो जाता है उसका इस लोक और परलोक दोनों में कल्याण नहीं होता है जिस तरह निम्न स्थल में जल विद्यमान रहता है वैसे ही विनम्र को ही विद्या प्राप्ति होती है।

गुरुकुल को जाते हुए माता और पिता को प्रणाम करना सामान्य शिष्टाचार को दर्शाता है। गुरु की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए, गुरु की कृपा से ही वह आत्मा

के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है ऐसा न होने पर उसमें पाशविक प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। अज्ञान रूपी अन्धकार से मुक्त होकर आत्मा के साक्षात्कार से मोक्षपद को प्राप्त करता है, मन, वाणी एवं कर्म से की गई गुरु की सेवा से कल्याण होता है, सद्विद्या की प्राप्ति से उन्नति होती है। प्राणों की परवाह किए बिना अपने धर्म का पालन करना चाहिए जिससे अपना एवं संसार दोनों का कल्याण हो[२०]।

महात्मा गाधी परक संस्कृत साहित्य के अध्ययन मनन मे यह भी प्रेरणा मिलती है कि व्यक्ति के जीवन में श्रम का महनीय स्थान है। श्रम से न केवल अपना अपितु परिवार का कल्याण हो होता है। श्रम का अभाव होने पर प्रजा का विनाश हो जाता है, यह अपने लक्ष्य को कभी प्राप्त नहीं कर सकता है, इसके बल पर ही सम्पत्तिशाली बनता है। श्रम विपत्ति के समय रक्षा भी करता है, इससे अभूतपूर्व शक्ति प्राप्त होती है। श्रम का महत्त्व इसलिए भी है क्योंकि यह माना जाता है कि जो श्रमपूर्वक अपने गृह में स्वच्छता एव सुव्यवस्था बनाए रखते हैं वहाँ पर निश्चय ही देवता वास करते हैं। श्रम पर आश्रित रहकर भी चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम, संन्यासाश्रम) के लोगों को सुख की प्राप्ति होती है, श्रम में आस्था रखने वाला धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूप चारों पुरुषार्थों की सिद्धि अनायास ही कर लेता है। श्रम विहीन व्यक्ति न केवल पृथ्वी के लिए बोझ है अपितु उनका शरीर धारण करना भी निरर्थक है। सदैव श्रम में तल्लीन रहने वाले का ही जीवन धन्य है, वह अपने अनुपम कार्यों से ससार को अलकृत करते हैं। ईश्वर भी उसी की सहायता करता है जोकि अपने कल्याण एवं दूसरों के कल्याण को दृष्टिपथ पर रखकर श्रम के प्रति निष्ठावान् रहकर निरन्तर श्रम करता है। यह एक ऐसा गुण है जिससे उसकी स्तुति की जाती है। श्रम से प्रतिष्ठा मिलती है। यह प्रतिष्ठा धन एवं जाति सेकदापि नहीं मिल सकती है। कवि का यह भी विचार है कि अपना कल्याण तो करना ही चाहिए साथ ही दूसरों के कल्याण की बात भी सोचनी चाहिए[२१]।

उत्साह सम्पन्नता व्यक्ति की समस्त विपत्तियों का विनाश कर देती है क्योंकि कार्य को भली-भाँति करने वाले का विजय श्री स्वयं आलिंगन करती है[२२]।

इस ससार का नियम है कि जन्म लेने वाले की मृत्यु अवश्यम्भावी है और जो मर चुका है उसका पुनर्जन्म निश्चित है[२३]। भारतीय समाज पुनर्जन्म पर यकीन करता है साथ ही अवतारवाद पर भी हिन्दू समाज का अटूट विश्वास है। जब-जब धर्म की हानि होती है, राक्षस वृत्ति बढ़ जाती है, अन्याय रूपी आरा दुर्बलों का शिर काटना प्रारम्भ कर देता है। ईर्ष्या और द्वेष का साम्राज्य स्थापित होने लगता है, मानव दैन्य और दासता के पाश में बंधने लगता है, सामारिक विषयों को जीवन का लक्ष्य माना जाने लगता है, ईश्वर प्रदत्त शक्ति का दुरुपयोग होता है। प्रबल द्वारा निर्बल को सताया जाता है, भूख से पीड़ित लोगों का शरीर निर्बल होने लगता है, रोते हुए शिशुओं और स्त्रियों का खून होता हुआ देखकर ईश्वर मनुष्य रूप धारण करके उसकी रक्षा करते हैं। भगवान् विष्णु नीच पुरुषों द्वारा भारतवर्ष को पहुँचाई गई पीड़ासे दुखी होकर महात्मा गान्धी के रूप में इस पृथ्वी पर उसकी रक्षाके लिए आते हैं। सतीत्व का लोलक देखकर, सम्पूर्ण पृथ्वी पर अधर्म का राज्य देखकर विधाता भी चिन्तित हो जाते हैं वह विचार करते हैं कि

सांस्कृतिक—

प्रार्थना भारतीय संस्कृत एवं सभ्यता के विकास का अक्षुण्ण अंग है। प्रार्थना का तात्पर्य है विशिष्ट याचना। हमारे नायक महात्मा गांधी को प्रार्थना के प्रति दृढ़ आस्था थी। उनके विचार से प्रार्थनाका जीवन से प्रगाढ़ सम्बन्ध है। प्रातः काल उठकर सर्वप्रथम धरती माता की अभिवन्दना करके तत्पश्चात् नित्य कर्म करने चाहिए। यह प्रार्थना व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों ही रूपों में महत्त्व रखती है, इसकी महत्ता भोजन से भी अधिक है। सस्कृति मानव का आभ्यान्तरिक गुण है[३३]।

भारतीय संस्कृति में नारी को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। जिस संस्कृति में नारी का सम्मान नहीं होता है उसका विनाश अवश्यम्भावी है। पुरुष एवं नारी दोनों एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। उसे महाशक्ति कहा गया है। उल्लेख है कि प्राचीन समय में नारी को पुरुष के पूर्व अधिष्ठित किया जाता था । हम सीता-राम कहते हैं राम सीता नहीं, विष्णु का लक्ष्मीपति नाम प्रसिद्ध है। शंकर की पूजा पार्वती के पति इस नाम से ही होती है। महाभारतकार ने द्रौपदी को, बाल्मीकि ने सीता को गौरवपूर्ण स्थान दिया है। यह भी कहा गया है कि प्रात काल के समय सति स्त्रियों के नाम स्मरण से शुद्धि होती है[३४]।

पुत्र का महत्त्व भी स्वीकारा गया है क्योंकि वह "पुम्" नामक नरक से छुटकारा दिलवाता है[३५]। पिता को देवता तुल्य मानते हुए उनकी आज्ञा पालन का उपदेश दिया गया है[३६]।

भारतीय सस्कृति में कहा गया है कि कोई भी कार्य पाप या पुण्य की भावना से नहीं, अपितु निष्काम भावना से करना चाहिए[३७]।

जहाँ स्त्रियों के लिए पतिव्रता होने वाली बात कही गई है वहीं यह भी कहा गया है कि पुरुषों को भी एक पत्नीव्रत होना चाहिए। जैसे पत्नी एक ही पुरुष को चाहती है वैसे ही पुरुष को भी एक ही स्त्री पर दृष्टि डालनी चाहिए। इस दाम्पत्य विधि को वेदों में भी मान्यता प्राप्त है। श्रीराम ने सीता को छोड़कर दूसरा विवाह नहीं किया उन्होंने अश्वमेध यज्ञ को सम्पन्न करने के लिए सीता की स्वर्णिम प्रतिमा बनाई वैसे ही गांधी जी ने एक पत्नी व्रत का पालन करके भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखा। यह कथन भी स्त्रियों के सम्मान की प्रेरणा देता है[३८]।

"वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना का उद्घोष किया गया है और साथ ही यह भी कहा गया है कि हमारे संस्कार एवं सभ्यता सागर से भी अधिक गहरे और हिमालय से भी अधिक उन्नत हैं[३९]।

गांधी साहित्य को पढ़ने से हमारे समक्ष यह तथ्य आता है कि उस समय बाल विवाह का प्रचलन था। महात्मा गांधी के तेरह वर्ष में हुए विवाह से इस कथन की पुष्टि होती है[४०]।

पतिव्रत स्त्रियों का पति से पूर्व मरण उत्तम माना जाता है। उल्लेख है कि कस्तूरबा पति से पूर्व ही स्वर्ग सिधार गई। उनकी मृत्यु से गांधी का स्थान सुरक्षित हो

गया। इससे स्पष्ट होता है कि स्त्री का सुहागिन ही मरना प्रशंसनीय माना जाता है[41]।

भारतीय संस्कृति में कहा गया है कि माता पिता को देवता तुल्य मानना चाहिए। अतः महात्मा गांधी अपने पिता को साक्षात् देवता मानते हुए उनकी सेवा करते थे[42]।

वेदरीति को दिव्यचक्षु माना गया है अतः महात्मा गाधी का दाह सस्कार वैदिक मन्त्रोच्चारण के साथ किया गया[43]।

धार्मिक—

गुरु के प्रति भक्ति भाव और देवी सरस्वती के प्रति की गई वन्दना कवि की धार्मिक विचारधारा को पुष्ट करती है—

आदौ स्मरामि गुरु पाद रजांसि चित्ते,
स्थित्वा पुरः स्वकरकम्पिततन्तमार्गैः।
उर्ध्वं विधाय बहुशांत समृद्धिशीतम्,
ध्यायेऽङ्घ्रि युग्मनहपत्र हृदि स्वकीये।।

X X X X X X X X X X X X

प्रणम्य भारतीं देवीं, "शुम्भुरत्न" स्वकं गुरुम्।
देववाणीं समाश्रित्य लिख्यते गान्धिगौरवम्।।

(श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/१-२)

इसी तरह अन्य कवियों ने शंकर, पार्वती, गणेश, विष्णु, राम, कृष्ण आदि की वन्दना करके धार्मिक विचार व्यक्त किया है[44]। भगवान् में अनुराग रखने से या उनके प्रति श्रद्धा से सन्तोष मिलता है, आनन्दानुभूति होती है[45]।

महात्मा गांधी परमात्मा के महान् भक्त थे। उनके चरण कमलों की सेवा के बिना वह एक क्षण भी नहीं रह सकते थे। कवि ने महात्मा गान्धी जी के जीवन को दृष्टिपथ पर रखकर यह स्पष्ट रूप से कहा है कि ईश्वर की आराधना का सबसे सहज माध्यम है हृदय की निर्मलता, सत्य व्यवहार, दीन-दरिद्रों की सेवा, समस्त प्राणियों के प्रति अपने समान आचरण करना, मानवता का संरक्षण, अन्याय का विरोध करना, निरन्तर श्रेष्ठ कर्मों में रत रहना, प्रतिपल निष्काम भाव से ईश्वर का स्मरण करना आदि है। ईश्वर की कृपा से ही अपूर्व बल की प्राप्ति होती है और मानव निर्भय होकर अनीति और दुराचारका सामना कर सकता है। निश्चय ही सत्य से असत्य का, न्याय से अन्याय का, धर्म से अधर्म का नीति से अनीति का विनाश हो सकता है[46]।

त्याग, सन्तोष, मैत्रीभाव, परोपकार में तत्पर रहना ही धर्म है। उसे किसी मन्दिर, मस्जिद या गिरजाघर में नहीं खोजा जा सकता है। प्रत्येक मानव विभिन्न परिस्थियों, सामाजिक स्थिति, सास्कृतिक परिस्थिति में जन्म लेता है। इस कारण उसकी मनोवृत्तियों, रुचियों, स्वभाव आदि में अन्तर हो सकता है किन्तु उनके आत्म साक्षात्कार या परक तत्त्व की प्राप्ति रूप एक ही लक्ष्य को प्राप्त करने में कोई भेद नहीं है, किसी का मार्ग सरल हो सकता है किसी का दुर्गम, कोई अल्लाह पर विश्वास करता है तो कोई ईश्वर पर किन्तु सभी को पहुँचना एक ही स्थल पर है। अतः महात्मा गाधी धर्म

परिवर्तन का विरोध करते हैं क्योंकि धर्म परिवर्तन कर लेने से ही समस्या का समाधान नहीं हो जाता है[४७]।

रामनाम का अत्यधिक महत्त्व है। यह एक अचूक औषधि है, किसी भी व्याधि के होने पर यदि मानव हृदय से राम का नाम ले तो शीघ्र ही उसके रोग का उपशमन हो सकता है। यदि मन और शरीर दोनों स्वस्थ रहे तो किसी प्रकार का रोग नहीं हो सकता है। एकमात्र राम ही ऐसा चिकित्सक है जोकि विपत्ति में हमारी रक्षा करता है। यदि राम नाम का स्मरण करते हुए व्याधियों को सहन कर लिया जाये तो हमारा जीवन सुखमय बन सकता है[४७]। उसकी कृपा से ही पृथ्वी, सागर, पर्वत स्थिर रहते हैं, सूर्य चन्द्रमा आदि समस्त ग्रह आकाश में विचरण करते हैं। इस संसार का सारा कार्य व्यापार उसी की कृपा से चलता है[४९]। उससे जो आनन्द रूपी अमृत आत्मा को मिलता है वह अन्य किसी वस्तु से नहीं मिल सकता है, यह राम नामक दिव्यशास्त्र अत्यधिक प्रबल है। राम का उलटा नाम जपकर ही वाल्मीकि भी प्रसिद्ध कवि हो गए, विषय वासनाओं रूपी अन्धकार में निमग्न तुलसीदास ने पत्नी द्वारा दी गई उलाहना से भगवान् शिव के मन में स्थित रामायण की रचना की[५०]।

धर्म ही समस्त विश्व को धारण करता है। अतः जो धारण करे वही धर्म है। धर्म की रक्षा सदैव करनी चाहिए। धर्म एक ऐसा साथी है जोकि मरने के बाद भी साथ देता है। धर्म के बिना जीवन निरर्थक है, धर्म मानव का मौलिक विकास करता है, सम्पूर्ण सृष्टि की रक्षा करता है। वेदों में भी यही कहा गया है कि जिससे मानव का कल्याण हो वही धर्म है। धर्म के बारह लक्षण हैं वह धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय, निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य, क्रोध, अक्रोध, देशप्रेम, समस्त प्राणियों का स्पर्श आदि। ईश्वर का गुणगान करना चाहिए, धर्म से ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है अधर्म से नहीं।

तुलसी के वृक्ष को प्रतिदिन सींचना चाहिए, गुरु एवं पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिए, धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ना चाहिए, कभी भी किसी को ठगना नहीं चाहिए, धर्म एक अन्तःप्रकृत है जोकि कार्य करने की प्रेरणा देती है। उसे धर्म नीति नियम नहीं कहा जा सकता है जोकि भूखे को भोजन न कराये। सभी धर्मों को समान मानना चाहिए, जो प्रत्येक भाग में हर समय रहता है वही धर्म है। धर्म जीवन से पृथक् नहीं है, धर्म के बिना जीवन का कोई महत्त्व नहीं है जितना सम्मान हम अपने धर्म का करते हैं उतना ही अन्य धर्मों का भी करना चाहिए[५१]।

वेदों और स्मृतियों के अनुसार अहिंसा परम धर्म है, यह माता की भाँति रक्षा करती है। यह पिता की भाँति हित कार्यों में लगाती है, चन्द्रमुखी प्रिया की भाँति मन को प्रसन्न रखती है। निःसन्देह अहिंसा मित्र की भाँति होती है, हिंसा करना पाप है, अहिंसा पुण्य है[५२]।

नैतिकता— व्यक्ति जिस समाज में निवास करता है वहाँ का वातावरण, आचार-विचार, रहन-सहन उस पर अपनी अमिट छाप छोड़ देता है। मनुष्य एक सहृदय सामाजिक प्राणी है। अतः उसे विवेक बुद्धि से उपयोगी वस्तुओं को ही ग्रहण

करना चाहिए। समाज की कुरीतियों अथवा असद् वस्तुओं से दूर रहना चाहिए। अप्रिय वचन नहीं सुनने चाहिए क्योंकि इसका प्रभाव आचरण एवं व्यक्तित्व पर पड़ता है। समाज में रहने के लिए कुछ नियमों एवं निर्देशों का पालन करना चाहिए। इन नियमों के पालन से व्यक्ति का सर्वतोमुखी विकास होता है, लेकिन अगर कुसस्कार का उदय हो जाए तो व्यक्ति के पतन के साथ ही समाज का पतन भी निश्चित है। यदि कोई हमसे अकारण दुर्वचन कहे तो उस तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए। विद्वान् वही है जोकि उपयोगी वस्तु ग्रहण करता है और बेकार की वस्तु का परित्याग करता है। जैसे कौए की वाणी हमें अच्छी नहीं लगती, बन्दरों का शब्द कष्ट पहुँचाता है। इसके विपरीत कोयल एवं मयूर आदि का मधुर स्वर अलौकिक आनन्द प्रदान करता है। हम शीघ्र ही उसकी वाणी सुनने को तत्पर हो जाते हैं। अत: सदैव प्रिय भाषण करना चाहिए। इससे समाज में उचित स्थान मिलता है, प्रतिष्ठा मिलती है, शत्रु भी उसके वश में हो जाता है, मधुर वचन से श्रोता के हृदय में एवं मस्तिष्क में आनन्द की लहरें दौड़ने लगती हैं। वह वक्ता की सराहना करने लगता है। सदैव प्रिय सत्य बोलना चाहिए, अप्रिय सत्य से बचना चाहिए, प्रिय वचन से सभी सन्तुष्ट रहते हैं अत: ऐसे वचन बोलने में दरिद्रता कैसी? प्रकृति प्रदत्त वाणी का प्रयोग समुचित रूप से करना चाहिए। सन्त कबीर के अनुसार अभिमान छोड़कर मृदुभाषी होना चाहिए। इससे मन को प्रसन्नता मिलती है, आत्मा प्रसन्न होती है और उसमें एक प्रकार का प्रकाश होता है, मिथ्या अहंकार विनष्ट हो जाता है, कर्त्तव्यशील होकर पूर्णता प्राप्त करता है। यह वह पूर्णता होती है जिसे योगी ध्यान से, विद्वान् धर्म चिन्तन से, समाज सुधारक सत्य और असत्य के उचित विवेचन से प्राप्त करते हैं। प्रिय वचन से सरस वातावरण की सृष्टि होती है। प्रियदर्शी पुरुष सुलभ होते हैं लेकिन अप्रिय किन्तु हित चाहने वाले वक्ता एवं श्रोता दोनों ही दुर्लभ होते हैं[५३]। विषयभोग को पतन का कारण बताकर उससे दूर रहने का भी संकेत दिया गया है[५४]।

दार्शनिक—

महात्मा गांधी पर आधारितसंस्कृत साहित्य में दार्शनिक जीवन-दर्शन इस प्रकार है।

जन्म और मरण शरीर का धर्म है न कि आत्मा का। आत्मा सर्वत्रगामी और नित्य है उसका कभी भी अभाव नहीं होता है जिस तरह पुराने घर को छोड़कर जीवन गृह में प्रवेश किया जाता है वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नये शरीर में प्रविष्ट होती है। अतः अन्तकाल आने पर दुखी नहीं होना चाहिए और जो मर चुका है उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। अपने कर्मों के प्रभाव से ही वह दूसरे लोक में जाता है[५४] स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जन्म एवं मृत्यु दोनों स्वाभाविक हैं[५५]। और मृत्यु को रोका भी नहीं जा सकता है, औषधि भी इसमें समर्थ नहीं होती है वह रोग का उपशमन तो कर सकती है लेकिन मृत्यु पर उसका वश नहीं चलता है।

हिन्दू धर्म का सार इन सोलहों सूत्रों में बताया गया है— (१) वेदादि विद्याएं ब्रह्म विद्या है (२) ईश्वर एक है (३) ईश्वर का कोई आकार नहीं है (४) उसका कोई नाम नहीं है (५) उसके विषय में जानना मुश्किल है। (६) उसका गुण कोई नहीं होता (७) वह एक

होते हुए भी अनेक लगता है (८) उसके अनंत रूप हैं (९) सब नाम उसी के हैं (१०) वह समस्त प्राणियों में विद्यमान रहता है (११) वह अनेक गुणों से युक्त है (१२) मोक्ष मिलता है (१३) दुःख का नाश अत्यधिक कल्याणकारी है (१४) अविद्या हानिप्रद है। (१५) आत्मा की अनुभूति होने पर उसका नाश हो जाता है (१६) वह आत्मा की प्राप्ति का अचित्र साधन है[५६]।

ईश्वर अत्यधिक दयालु है। वह विष और अमृत, पुण्य अथवा पाप का अन्तर करके ही देखता है। यदि मानव पुण्य कार्य नहीं कर सकता है तो इसकी सद्गति नहीं होती है अतः उसे पुण्य कार्य में प्रवृत्त होना चाहिए[५७]।

राजनीति—

राजा की नीति को राजनीति कहते हैं। राजनीति मानव को अपने लक्ष्य तक पहुँचाने का साधन मात्र है। ऐसा विचार किया गया है कि यदि केवल राजनीति में प्रवेश लिया जाएगा तो वह सर्प की कुण्डली की भाँति इस तरह आबद्ध कर लेगी कि उसके बन्धन से मुक्त हो पाना असम्भव हो जाएगा। महात्मा गांधी ने स्वयं भी लोकप्रिय राज्य की स्थापना करने के लिए संघर्ष किया। राजनैतिक शक्ति का अभिप्राय है जनता की स्थिति को सुदृढ़ बनाना, राष्ट्रिय प्रतिनिधियों के द्वारा राष्ट्रिय-जीवन को सुदृढ़ करना। यदि इस प्रकार के राज्य की स्थापना होगी तो वहाँ पर अराजकता नहीं रहेगी सर्वत्र प्रकाश छा जायेगा। प्रजा स्वतन्त्रता पूर्वक जी सकेगी। प्रत्येक मानव अपना शासक होगा। साथ ही राजनीति को धर्म से पृथक् करके नहीं देखा जा सकता है। राजनीति में सत्य, अहिंसा, संयम, सेवा आदि का महत्त्व अपरिहार्य है। प्रायः यह देखा जाता है कि राजनीतिज्ञ धर्म के आभ्यन्तरिक रूप को स्वीकार नहीं करते हैं, एक जाति दूसरी जाति पर अपना प्रभाव जमाना चाहती है सबल निर्बल को सताता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि वे सभी राजनीति के वास्तविक स्वरूप से परिचित नहीं हैं[५८]। वह धर्म को राजनीति से पृथक् मानते हैं जबकि महात्मा गांधी जीवन के हर क्षेत्र में धर्म के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में धर्म का राजनीति से गहरा सम्बन्ध है और यह धर्म सत्य है—

कथयति जनवर्गो राजनीतिं न धर्म्मो
भ्रमपतित मनुष्या नैव जानन्ति धर्म्मम्।
जनजनहितलग्नं गान्धिनं राजनीतौ
तमिह सपदि तस्या सत्यपूजा चकर्ष।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ८/७१)

समस्त काव्यों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि समस्त कवि राजनीति में धर्म का समावेश करने के पक्षपाती रहे हैं।

राष्ट्रीय-जीवन—

गाधी सम्बन्धी समस्त काव्य राष्ट्रियता से ओतप्रोत हैं। महात्मा गाधी का जीवन राष्ट्र के लिए समर्पित है। वह जीवनभर राष्ट्र के लिए ही लडते रहे और मरे भी राष्ट्र के लिए। अत· राष्ट्रियता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई है। इन काव्यों को पढकर निश्चय ही भारतीयों की राष्ट्रिय भावना प्रदीप्त हो उठेगी। महात्मा गाधी परक सभी काव्यकार राष्ट्रीय भावना को अपने काव्य में स्थान देते हैं[59]।

देववाणी संस्कृत में काव्य लिखकर उसके प्रति सम्मान व्यक्त किया है और इसके माध्यम से भारतीय पुनः गौरव प्राप्त करेंगे ऐसी आशा व्यक्त की है। सस्कृत भाषा के प्रति प्रेम जागरित किया गया है उसे राष्ट्रभाषा बनाने पर जोर दिया है। भारतीय सस्कृति की रक्षा करना परम कर्त्तव्य माना गया है। विदेश में रहकर भी भारतीय संस्कृति की रक्षा का प्रण किया गया है। गाधी जी का देश के प्रति प्रेम प्रदर्शित किया गया है। अफ्रीकावासी भारतीयों को अधिकार प्राप्त करवाने एवं अन्याय का विरोध करने से एवं अनेक पवित्र स्थलों का दर्शन करने से स्वराष्ट्राभिमान की भावना का प्रदर्शन होता है और भारत में हिन्दू-मुस्लिम एकता एव शूद्रों को समान अधिकार दिलवाने के लिए प्रयास करना भारतीयों में एकता को भावना का विस्तार करता है[60]।

शिक्षा राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है। यही कारण है कि जन-जन के मन में और घर-घर में शिक्षा के प्रसार पर बल दिया गया है। भारतीय धर्म सर्वश्रेष्ठ धर्म है ऐसा भी कहा जा गया है[61]।

भारतवर्ष में जब कभी भी विदेशी शासकों ने अपना प्रभुत्त्व स्थापित करने का प्रयास किया है तब-तब भारतीयों ने उनके वर्चस्व को समाप्त करने का प्रयास किया है। यह अतीव सुखद विषय है। छत्रपति शिवाजी, विवेकानन्द, दादाभाई नौरोजी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, जगदीश चन्द्रबोस, लाला लाजपत राय, मालवीय, मोतीलाल नेहरू, जवाहर लाल नेहरू, श्रद्धानन्द, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मोतीलाल घोष, चितरंजन दास, सुभाषचन्द्र बोस, अरविन्द, बाल गंगाधर तिलक, गोपालकृष्ण गोखले, बी.ए. श्रीनिवास शास्त्री, सरदार भगतसिंह, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, भारत कोकिला श्रीमती नायडू, आदि देश सेवकों द्वारा राष्ट्रोद्धार हेतु किए गए कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये समस्त भारतीयों को राष्ट्र के हित के लिए कार्य करने की प्रेरणा देते हैं[62]।

दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर अंग्रेजों द्वारा किये गए दुर्व्यवहार एवं अत्याचारों के विषय में और महात्मा गाधी द्वारा उन्हें अधिकार दिलवाने के लिए किये गये अथक् प्रयास एवं अपने प्राणों की परवाह न करना आदि के विषय में उपलब्ध वर्णन से हमारी धमनियों में राष्ट्रिय भावना का संचार होने लगता है। जब हमें यह जानकारी प्राप्त होती है कि महात्मा गान्धी ने अपना सम्पूर्ण जीवन ही देश के नाम समर्पित कर दिया। वह जिए तो राष्ट्र के लिए और उन्होंने प्राणों की बाजी लगाई राष्ट्र के लिए ही। उनका यह बलिदान आत्मगौरव की भावना जगाता है, देश प्रेम और राष्ट्र के प्रति अभिमान रखने की प्रेरणा देता है। उन्होंने एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना की थी जिसका विभाजन न हो सभी एकता के सूत्र में बँध कर रहें। उनका यह विचार हमें उनकी श्रद्धा करने को मजबूर कर देता है[63]।

विदेशी शासकों की दुष्ट नीति के परिणाम स्वरूप हिन्दू-मुसलमानों के मध्य वैमनस्य और शत्रुता के भावों का जन्म हुआ, भारत माता कई टुकड़ों में बँट गई, वह आपस में एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए, महिलाओं के साथ कुत्सित एवं निन्दनीय व्यवहार किया जाने लगा, उनके आत्म सम्मान का हनन होने लगा[६६]।

व्यक्ति समाज एव राष्ट्र की सर्वात्मना उन्नति के लिए श्रम का विशिष्ट महत्त्व है। इससे राष्ट्रिय भावना को बल मिलता है। प्रत्येक भारतीय को चाहिए कि वह श्रमशील बने। यह राष्ट्र के हित में है। इस आधार पर भारत अपने पूर्व रूप को प्राप्त कर सकता है।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, राधाकृष्णन्, सरदार बल्लभ भाई, जवाहर लाल नेहरू, राजगोपालाचार्य आदि चिरकाल से परतन्त्र भारतभूमि के स्वतन्त्र हो जाने पर भी उसकी दीन एव दारिद्र्यपूर्ण दशा से चिन्तित होकर गान्धी जी के पास जाते हैं। महात्मा गांधी जवाहर लाल नेहरू के राष्ट्रहित एव लोक कल्याण कारक विचार का स्वागत करते हैं और कहते हैं कि स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतवासियों में उत्साह एवं साहस की कमी हो गई है। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में शासन का मुँह ताकते हैं। ईश्वर भी उत्साह सम्पन्न एवं उद्यमशील व्यक्ति की ही सहायता करता है। परतन्त्र एव श्रमहीन राष्ट्र भी विनाश के गर्त में चले जाते हैं, वही राष्ट्र उन्नति करते हैं, जोकि परिश्रम करते हैं तथा खेत में परिश्रम करने वाले को देवता मानते हैं।

आलस्य का परित्याग करके श्रम की पूजा करनी चाहिए क्योंकि श्रम के सकल्प मात्र से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। श्रम से स्वर्ग मिलता है और आलस्य से नरक, श्रम सेअसूया करने वाले एवं आलस्य में मग्न रहने वाले के घर एवं राष्ट्र दोनों में दरिद्रता का वास होता है। कोई भी राष्ट्र श्रम के बिना समृद्ध नहीं हुआ है। श्रम ही जगत् को धारण करता है और श्रम से ही राष्ट्र की सुरक्षा होती है। श्रम से ही वैभव होता है और दरिद्रता एव दीनता का विनाश। श्रम विहीन भोगों में रत रहने वाला, सुख चाहने वाला काल का ग्रास बन जाता है। यह श्रम ही मनुष्य के सुख एवं ऐश्वर्य का कारण है।

गौ धान्य एव धन आदि दानों की अपेक्षा श्रमदान अधिक प्रशंसनीय है, जितेन्द्रिय एवं योगी से श्रमिक का कोई साम्य नहीं है, भस्मलिप्त साधु की अपेक्षा पंकलिप्त श्रम वन्दनीय है, श्रमिक के श्रम चिह्न मोतियों की माला की अपेक्षा अधिक शोभा पाते हैं, श्रमोत्पादित अन्न भी सागर-मंसर्गोत्पन्न एवं यज्ञाहुत अन्न की अपेक्षा पवित्र होता है, कृषक के श्रम से उत्पन्न स्वेत-कण गंगा-यमुना के जल से पवित्र होते हैं। खेत में किए गए जल-सिंचन से जो पुण्य मिलता है वह यज्ञादि की अपेक्षा श्रेष्ठ एवं अधिक होता है। बुद्धिशाली की भी श्रमवान् से कोई तुलना नहीं की जा सकती है। गेरवावस्त्रधारी परिश्रमहीन साधु की अपेक्षा श्रमजल युक्त वस्त्रधारी श्रमिक अधिक पवित्र होता है, उससे उत्पन्न थकान ध्यानावस्था से अधिक पवित्र होती है, श्रम से आनन्द मिलता है, श्रम करने वाले के अंग-अंग से इसकी अनुभूति हो सकती है, श्रम से उत्पन्न थकान का स्मरण प्रसन्नता प्रदान करता है, श्रमवीर युद्धवीर आदि सभी से अतुलनीय है, सत्कार्य करने वाला वह महायोगी है, वह कभी रोगग्रस्त नहीं होता है, ऐसे साधु का भाग्य स्वयं हो बनता है, पापगृह उसके समीप नहीं आ पाते हैं। उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचकर भी

[illegible] का परित्याग नहीं करना चाहिए, ऐसा करके वह यश रूप में विद्यमान रहता है। श्रमदान सबसे महान् है, श्रेष्ठ धर्म, ईश्वरभक्ति और मोक्ष प्रदायक है, देवताओं में भी अप्राप्य महादान है, श्रमयोगी पूजनीय, महायोगी, ब्रह्मचारी एवं शीलवान् है, श्रम में निमग्न रहने वाला वृषभ गुफाशायी आलसी सिंह की अपेक्षा वन्दनीय है, वह भगवान् है जो भी सफलता मिलती है वह श्रम के आधार पर हो। साथ ही श्रम को ही राम, कृष्ण, शम्भु, प्रभु, बुद्ध, इशु, पैगम्बर, दाता, नेता, माता-पिता और एकमात्र देवता माना गया है[६४]।

इस तरह श्रम स्वराज्य प्राप्ति का मूलाधार है। स्वराज्य से सुख मिलता है और परतन्त्रता से दुःख। अतः संगठित होकर इसको प्राप्त करना चाहिए[६५]।

जिसका जहाँ जन्म होता है, जहाँ पलता और बढ़ता है, जहाँ के उसके माता-पिता होते हैं और माता-पिता, पितामह आदि परम्परागत रूप से निवास करते हैं, एक ही धर्म और आचार-व्यवहार से युक्त जिस देश में निवास करते हैं उसे ही राष्ट्र कहते हैं। राष्ट्र का निर्माण केवल भूमि अथवा वहाँ के निवासियों से नहीं होता है, अपितु दोनों ही अन्योन्याश्रित रूप से राष्ट्र कहलाते हैं। हमारा परम कर्तव्य है कि हम अपने राष्ट्र की सेवा अपने माता-पिता एवं भगवान् की भाँति करें, राष्ट्र के उद्धार में तत्पर लोग ही राष्ट्रिय कहलाने के अधिकारी हैं, अपने राष्ट्र की कीर्ति को विस्तृत करना चाहिए, कलह से दूर रहना चाहिए, क्योंकि वह राष्ट्र घातक हैं। यदि हम चाहते हैं कि हमारे राष्ट्र की स्थिति सुदृढ़ बने तो हमें चाहिए कि विदेशियों की सहायता न करें। राष्ट्रोन्नति की कामना से सदैव राष्ट्र धर्म का पालन करना चाहिए, राष्ट्र धर्म व्यक्ति एवं जातिगत धर्म की अपेक्षा महान् होता है। राष्ट्र के हित के लिए समानता के भाव को बढ़ावा देना चाहिए, स्वदेशवासियों को अस्पृश्य मानकर उन्हें पृथक् नहीं करना चाहिए।

हमारा व्यक्तिगत एवं जातिगत धर्म पृथक् हों, चाहे हम आस्तिक हों या नास्तिक, हमें राष्ट्र धर्म का विरोध नहीं करना चाहिए, अपने धर्म का पालन करते हुए राष्ट्र धर्म का पालन करना चाहिए। राष्ट्र की उन्नति तभी सम्भव है जब हिन्दू-मुसलमान एक जुट होकर प्रयास करेंगे[६६]।

महात्मा गांधी द्वारा देश को परतन्त्रता से मुक्त करवाने के लिए किए गए कार्यों से भी राष्ट्रिय-भावना की प्रेरणा मिलती है। उन्होंने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, आदि के कारण जन्म लेने वाले दोषों का परिहार करने का प्रयास किया है। हिन्दू-मुसलमानों के मध्य एकता की भावना जागरित की, विदेशी वस्तुओं का प्रसार किया, जन-जन के मन में देश-भक्ति का संचार किया, ग्रामों की स्थिति में सुधार किया, अस्पृश्यता जैसी भावना को समाप्त करने का प्रयास किया, निम्न एवं निरीह प्राणियों के स्तर को उन्नत किया, स्त्री शिक्षा पर बल दिया, जन-जन के मन में अपनी राष्ट्रभाषा के प्रति आस्था जगाई, गाय आदि के पालन पर बल दिया, कृषकों और श्रमिकों की स्थिति में सुधार किया, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, धार्मिक राजनीतिक, औद्योगिक आदि सर्वांगीण विकास पर जोर दिया।

सबको अच्छे गुणों को ग्रहण करना चाहिए ऐसा उपदेश दिया। और कारागृह की यातना सहकर भी मातृ भूमि की सेवा नहीं छोड़ी। इन समस्त कार्यों से किसके मन में राष्ट्र प्रेम जागरित नहीं होगा? [६७]।

उन्होंने प्रवासी भारतीयों को अधिकार दिलवाने का प्रयास किया यह मानवतावादी विचारधारा का पोषण करता है, और राष्ट्रिय भावना को प्रदीप्त करता है[६८]। सम्पूर्ण भारत देश अंग्रेजों के व्यवहार से सत्रस्त है यह देखकर महात्मा गांधी जीवन भर उन्हें अधिकार दिलवाने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं और उन्हें विभाजन पसन्द नहीं था। यही कारण है कि वह स्वातन्त्र्योत्सव में भाग नहीं लेते हैं। उन्होंने यह प्रयास किया कि भारत टुकड़ों में विभक्त न हो, लेकिन जिन्ना के दुराग्रह के कारण ऐसा नहीं हो सका और यह देश दो भागों में विभक्त हो ही गया। इससे महात्मा गांधी को अत्यधिक दुःख हुआ[६९]।

परतन्त्रता को अभिशाप बताया गया है, परतन्त्रता के कारणों का उल्लेख किया है। हमारा यह भारत देश अत्यधिक वैभवशाली एवं गौरवान्वित रहा है। यहाँ पर यवन, आक्रान्ता अपनी कपटपूर्ण राजनीति से देश को महती हानि पहुँचाते रहे हैं और अंग्रेज जोकि व्यापार करने के बहाने से यहाँ आए थे, यहाँ के लोगों को आपस में लड़ता हुआ देखकर यहीं पर राज्य करने लगे[७०]। इससे प्रेरणा मिलती है कि अपने राष्ट्र की सुरक्षा के लिए प्रेम से मिलकर रहना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय—

समस्त काव्यों में न केवल राष्ट्रिय स्तर पर सुख समृद्धि की बात सोची गई है अपितु विश्व कल्याण की कामना की है। उनमें यह विचार रखा गया है कि समस्त मानव सुखी एवं समृद्धिशाली हो। हम न केवल अपने देशवासियों के साथ ही मित्रता का व्यवहार करें अपितु प्रत्येक मानव जाति के साथ मित्रता पूर्ण आचरण करें। कामना की गई है कि समस्त मानव जाति महात्मा गांधी के मार्ग का अनुकरण करते हुए विश्व बन्धुत्व की भावना का विस्तार करें[७१]।

इसके अलावा न केवल राष्ट्रिय जीवन के लिए श्रम का महत्त्व है, अपितु इसका महत्त्व अन्तर्राष्ट्रीय रूप से भी है[७२]।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समस्त काव्यों में वर्णित जीवन-दर्शन अत्यधिक प्रशंसनीय है। उनमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्र के लिए आदर्श उपस्थित किया गया है। इन विचारों को अपने जीवन में उतारकर हम निश्चय ही सफलता प्राप्त कर सकते हैं। यदि हम काव्यों में वर्णित आदर्शों पर चलें तो कभी भी परेशानियों से नहीं जूझना पड़ेगा।

सन्दर्भ

(१) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अध्यायम्, ६
(२) वही, वही, १/३२

(३) डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय, दृश्य, नान्दी पाठ से उद्‌धृत।
(४) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अथध्यानम्, पद्य सं.-८
(५) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च,
(६) (क) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,
(ख) श्रीद्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च,
(ग) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिगौरवम्, पद्य सं.-१०९
(घ) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,
(७) (क) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा,
(ख) किशोर नाथ झा, बापू
(८) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-४०
(९) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-१११
(१०) वही, वही, पद्य सं.-९४
(११) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता,
(१२) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,
(१३) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,
(१४) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-२३
(१५) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्,
(१६) रमेशचन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ.सं.-१३४-१३५
(१७) रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य सं.-४६
(१८) वही, वही, पद्य सं.-१३
(१९) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-८०
(२०) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, द्वितीय सर्ग
(२१) श्रीधर भास्कर वर्णेकर, श्रमगीता
(२२) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-७७
(२३) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९/३९-४२
(२४) (क) वही, वही, सर्ग-१८
(ख) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ.-१३१
(ग) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/
(घ) श्रीमदवदाचार्य, भारतपारिजातम्, १/
(२५) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ.-१३३
(२६) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ३/१४
(२७) वही, वही, २/१६

(२८) वही, वही, २/३८
(२९) वही, वही, ३/१९-२१, २५
(३०) भगवदाचार्य, भारत पारिजातम्, ८/१०
(३१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ४/१८-१९,३६
(३२) ये विचार सभी काव्यों में देखने को मिलते हैं।
(३३) द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च, पृ.सं.-२
(३४) वही, वही, पृ.सं.-१४
(३५) (क) श्रीशिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/५०
(ख) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/५०
(ख) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/२०१
(३६) वही, वही, २/९६, १०१, १०२
(३७) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अयध्यानम्, ६
(३८) (क) द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च, पृ.सं.१४
(ख) श्रीसाधुशरण मिश्र, गान्धिचरितम्, ५/५७
(३९) श्रीद्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव शिष्याश्च, पृ.सं.३५-३६
(४०) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, २/५८
(४१) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/५५
(४२) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिगौरवम्, २/१०२
(४३) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, ७/५३
(४४) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १/१-२, बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री १/१
(४५) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, १०६
(४६) डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल, चारुचरितम् चर्चा, पृ.सं.-१३६
(४७) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, अध्याय-१२
(४८) श्रीद्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.सं.-२५
(४९) वही, वही, पृ.सं.-२५
(५०) श्रीसाधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्,
(५१) वही, वही, पृ.सं.-१५-१६
(५२) डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्,
(५३) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.सं.-३३-३४
(५४) ब्रह्मानन्द शुक्ल, श्रीगान्धिचरितम्, पद्य सं.-१८
(५५) श्री साधुशरण मिश्र, श्रीगान्धिचरितम्, १९ सर्ग, ५ सर्ग
(५६) डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय , दृश्य ,

(५७) डॉ॰ बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री, सत्याग्रहोदय., दृश्य-७
(५८) श्री द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरव· शिष्याश्य, पृ.सं॰-२७
(५९) (क) श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, २१/१-४, १/२, १८, १५, २/३०, ८०, ७/७-२४
(ख) रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पद्य स॰-१२, ७७-८३
(६०) द्वारका प्रसाद त्रिपाठी, गान्धिनस्त्रयो गुरवः शिष्याश्च, पृ.सं.-३१
(६१) (क) डॉ॰ रमेशचन्द्र शुक्ल, गान्धिगौरवम्, पृ॰सं॰-५८-६१
(ख) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, ३/३८-४१, ११/२६-३३,५९ ७/१८-३८, अध्याय-१४
(६२) डॉ॰ किशोरनाथ झा, बापू, पृ.स॰-१४-२७,७३
(६३) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, १९/१२-२९
(६४) श्रीधर भास्कर वर्णेकर, श्रमगीता से उद्धृत।
(६५) यज्ञेश्वर शास्त्री, भारत राष्ट्र रत्नम्, ५/२५
(६६) श्रीनिवास ताडपत्रीकर, गान्धी-गीता, २/११-२१
(६७) डॉ॰ रमेश चन्द्र शुक्ल, चारुचरित चर्चा, पृ॰-१३६
(६८) (क) वही, वही, पृ.सं॰-१३५
(ख) बापू, पृ.स॰-१४-२७
(६९) (क) डॉ॰ रमेश चन्द्र शुक्ल, चारु चरित चर्चा, पृ.स॰
(ख) पण्डिता क्षमाराव, स्वराज्य विजय, अध्याय प्रथम और सप्तचत्वारिंशद।
(७०) डॉ॰ रमेश चन्द्र शुक्ल, गान्धगौरवम्,
(७१) (क) पण्डिता यज्ञेश्वर शास्त्री, राष्ट्ररत्नम, पद्य स॰-३१
(ख) डॉ॰ मथुरा प्रसाद दीक्षित, गान्धि विजय नाटकम, द्वितीयोऽङ्क· पद्य सं॰-१४
(७२) श्रीधर भास्कर वर्णेकर, श्रमगीता, स्थान-स्थान पर ये उदाहरण मिल सकता है।

अष्टम अध्याय

उपसंहार

(क) महात्मा गान्धी के प्रति संस्कृत साहित्यकारों का आकर्षण—

जैसे आकाश में अनेक तारे होते हैं लेकिन सूर्य और चन्द्रमा एक ही है, वन में अनेक पशु विचरण करते हैं लेकिन उनका राजा सिंह ही सर्वश्रेष्ठ है, आकाश में अनेक पक्षी विचरण करते हैं लेकिन उनमें से हंसराज को प्रमुख माना जाता है, मयूर का नृत्य मन को लुभा लेता है वैसे ही अनेक मानव इस भू-लोक में जन्म लेते हैं लेकिन कुछ ही मानव ऐसे होते हैं जोकि अपने अनुपम व्यक्तित्व, गुणों एवं अपने विशिष्ट कार्यों से प्राणिमात्र को, समाज को, राष्ट्र को और यहाँ तक कि विश्व को भी प्रभावित करते हैं। यह प्रभावित करने की क्षमता किसी विरले में ही होती है। प्राचीन काल से यह परम्परा रही है कि राम, कृष्ण आदि महापुरुषों को आधार बनाकर काव्य-सर्जन होता रहा है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवन से प्रभावित होकर महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की सर्जना की, भवभूति ने उत्तररामचरित का निर्माण किया और तुलसी दास ने रामचरित मानस लिखा ऐसे ही कृष्ण को लेकर अनेक कवियों ने साहित्य-सर्जन किया है। इसी तरह अर्वाचीन साहित्यकारों ने महात्मा गांधी को काव्य-सर्जन के लिए चुना है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य महान् पुरुषों की जीवन-गाथा और स्वतन्त्रता संग्राम की घटनाओं से ओतप्रोत है। इसका कारण है कि उन कवियों ने महापुरुषों के द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु किए गए प्रयासों को और उन समस्त घटनाओं को समीप से देखा है और स्वातन्त्र्य समर में स्वयं भी भाग लिया है। परिणामतः उनकी रुचि स्वभावतः अपनी रचनाओं में प्रकट होने लगी।

हमारे आलोच्य कवियों में सभी एक ऐसे युग में उत्पन्न हुए हैं जबकि भारतवर्ष संक्रान्ति काल से जूझ रहा था। एक तरफ विदेशियों के आक्रमण और उनकी दुर्नीति के परिणाम स्वरूप यहां की प्रजा आपस में लड़ने लगी थी, कुमार्गगामी हो गई थी अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठी थी। ऐसे समय में यहाँ पर अनेक महापुरुष हुए जिन्होंने देश की दशा में सुधार लाने का प्रयास किया, अपने प्राणों को दाँव पर लगाकर उसे शीघ्रातिशीघ्र स्वतन्त्र करके पुनः सगठित करने का प्रयास किया। परिणामतः अनेक कवियों ने इन महापुरुषों को अपने काव्य का आधार बनाया। कुछ कवियों ने महारानी लक्ष्मीबाई को, कतिपय कवियों ने सुभाषचन्द्र बोस को, जवाहर लाल नेहरू को और कुछ ने तिलक को अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया तो ऐसे कवि भी हुए जिन्हें अपने काव्य के लिए महात्मा गांधी सर्वाधिक आकर्षक लगे और उनका जीवन आदर्शमय प्रतीत हुआ अतः कवियों ने उनके जीवन और व्यक्तित्व का

पारूप प्रस्तुत कर दिया।

भारत को परतन्त्रता से मुक्त करवाने में महात्मा गांधी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उनका जीवन न केवल भारतीयों के लिए अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रेरणीय है। यद्यपि इस स्वतन्त्रता संग्राम में अनेक पुरुषों ने भाग लिया, अपने प्राणों को न्योछावर किया, उन्होंने अपने पारिवारिक जनों की चिन्ता छोड़कर अपना सम्पूर्ण जीवन देश के नाम समर्पित कर दिया, स्वार्थ का परित्याग किया, करागृह की यातना सही, अंग्रेजों के अत्याचारों को सहा लेकिन जो आदर्श महात्मा गांधी ने प्रस्तुत किया वह अन्य कोई नेता नहीं कर सका। भारत राष्ट्र के निर्माता महात्मा गांधी सत्य, अहिंसा की प्रतिमूर्ति थे, परोपकार करना अपना धर्म समझते थे, समस्त प्राणियों के प्रति सम व्यवहार रखते थे, शत्रु के प्रति सद्भाव बनाये रखने की प्रेरणा देते थे, वह श्रम के प्रति आस्था रखने वाले थे, वह समस्त प्राणियों की सेवा को ही ईश्वर पूजा समझते थे, जहाँ कहीं भी अन्याय होता हुआ देखते थे तो उसे दूर करने का प्रयास करते थे, वह सभी को अपने समान मानते थे, अपराधी को क्षमा करने में ही विश्वास रखते थे, वह सादा जीवन-उच्च विचार के धनी थे, उन्हें अपने भारत देश एवं देशवासियों से असीम प्यार था। वह चाहते थे कि हिन्दू-मुसलमान सभी मिल-जुलकर रहें, उनमें सेवा भाव कूट-कूट कर भरा था, वह ब्रह्मचर्य पालक थे, दयावान् थे, उनमें अदम्य उत्साह था, आत्म सम्मान एवं स्वाभिमान की रक्षा वह हर परिस्थिति में करते थे, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि असद् विचारों से सर्वथा दूर रहते थे, वह महामानव, सन्त, महात्मा, मसीहा सब कुछ थे। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन देश के नाम अर्पित कर दिया और मरे भी देश के लिए ही। व्यक्तिगत सुख की कभी परवाह नहीं की, वह तो दीन-दुःखियों एवं प्रत्येक भारतीय के सुख की खोज में रहते थे। उनके ऐसे आदर्श-जीवन से कौन प्रभावित नहीं होगा फिर कवि भी समाज का सदस्य होता है। अतः उस पर अपने सम्पर्कमें आने वाले पुरुष और घटनाओं का असर स्वाभाविक रूप से पड़ता है।

कवियों का आकर्षण महात्मा-गांधी के जीवन को काव्य का रूप देने में इसलिए भी था क्योंकि इस माध्यम से जन-जन के मन में राष्ट्रिय-भावना जागरित की जा सकती है, उनमें भ्रातृत्व का भाव भरा जा सकता है, उन्हें परतन्त्रता के दोष बताकर उससे मुक्ति पाने की प्रेरणा दी जा सकती है, देशवासियों में उत्साह एवं साहस उत्पन्न किया जा सकता है, उनमें आत्मबल एवं स्वाभिमान की भावना का संचार किया जा सकता है, अपने देश के प्रति द्रोह रखने वाले को निन्दा की दृष्टि से देखा जाना चाहिए ऐसी प्रेरणा मिलती है, स्वदेशी वस्त्र एवं वस्तुओं का प्रयोग बहुलता से करने और देश के हित को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए, ऐसा सन्देश भी मिलता है। साथ ही महात्मा गांधी जैसे महान् पुरुष के जीवन-आदर्शों पर चलकर न केवल व्यक्ति का अपितु समाज एवं राष्ट्र दोनों का कल्याण हो सकता है।

गांधी जी के जीवन की इन्हीं विशेषताओं को एवं उनसे होने वाले लाभ को दृष्टिपथ पर रखकर ही कवियों ने उनको आधार बनाकर काव्य-निर्माण करने का सद्विचार किया और अपने-अपने प्राप्त अनुभवों को कविता रूपी कामिनी के कान्त कलेवर में

सुसज्जित कर दिया।

पण्डिता क्षमाराव को अपने भारत राष्ट्र के प्रति विशेष अनुराग रहा है। वह देश की सेवा करने के लिए सदैव तत्पर रहती थीं। महात्मा गांधी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने की उनकी प्रबल आकाक्षा थी लेकिन रुग्ण रहने के कारण वह ऐसा नहीं कर पाई परन्तु उन्होंने सत्याग्रह त्रिवेणी (सत्याग्रह गीता, उत्तरसत्याग्रह गीता, स्वराज्य विजयः) नामक काव्य का सर्जन करके महात्मा गाधी के जीवन आदर्शों सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, समानता के भाव, राष्ट्रिय प्रेम का उद्‌घाटन करके उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया है। वह महात्मा गाधी से अत्यधिक प्रभावित थीं।

श्रीनिवास ताडपत्रीकर ने महात्मा गाधी के राष्ट्रिय विचारों को आधार बनाकर गाधी-गीता नामक महाकाव्य का निर्माण किया है। वह गाधी जी की इस भावना से अत्यधिक प्रभावित हुए कि व्यक्ति, जाति, धर्म की अपेक्षा राष्ट्र धर्म का पालन करना नितान्त जरूरी है और सकीर्ण विचार न रखकर सदैव विस्तीर्ण विचार रखने चाहिए और राष्ट्र की सुरक्षा हेतु प्राणों की बाजी लगाने में भी सकोच नहीं करना चाहिए।

श्री भगवदाचार्य को तो महात्मा गाधी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने का सुअवसर प्राप्त हुआ। वह महात्मा गाधी द्वारा स्थापित आश्रम में बच्चों को पढाया करते थे। उन्हें गाधी जी के त्यागमय, तपोमय एव सादे जीवन से अत्यधिक प्रेरणा मिली और वह उनके साम्प्रदायिक सद्‌भाव एवं देश के प्रति अनन्य भक्तिभाव से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके और उन्होंने "श्रीमहात्मगान्धिचरितम्" नामक विशाल महाकाव्य का निर्माण किया।

श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी भी महात्मा गाधी के गौरवमय जीवन से प्रभावित थे। उन्होंने गाधी की राष्ट्रिय भावना एवं भारतीय सस्कृति की सर्वात्मना रक्षा करनी चाहिए, प्रजा को अन्याय से मुक्त करना चाहिए, ऊँच-नीच, विषमता के भावों को नहीं पनपने देना चाहिए, इस भावना से प्रेरित होकर "श्रीगान्धिगौरवम्" नामक महाकाव्य के माध्यम से उनकी इन उत्तमोत्तम भावनाओं को सम्प्रेषित किया। इसके अलावा वह गांधी जी के प्रति अत्यधिक श्रद्धा रखते थे और उन्हें युग पुरुष के रूप में स्वीकार करते थे। इस भावना का परिणाम उपरोक्त काव्य कृति है।

इसके अतिरिक्त श्री साधुशरण को भी महात्मा गाधी का व्यक्तित्व ऐसा लगा जिससे समस्त मानव जाति शिक्षा ले सकती है। वह सत्य, अहिंसा एव सत्याग्रह को धर्मवृक्ष और परोपकार को उसकी शाखाएं मानते थे। "श्रीगान्धिचरितम्" के माध्यम से कवि ने महात्मा गाधी के राष्ट्र प्रेम को उजागर किया है। इसके द्वारा उन्होंने बताया है कि हमें ऐसेही महान् पुरुषों के चरण चिह्नों पर चलना चाहिए क्योंकि उनके द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण करके हम न केवल अपना अपितु राष्ट्र का उद्धार भी कर सकते हैं।

श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल महात्मा गांधी के बलिदानों से अत्यधिक प्रभावित हुए, उनकी राष्ट्र के प्रति अनन्य भक्ति भावना, उनके प्राणिमात्र के प्रति प्रेम भाव एवं सर्वस्व समर्पण की भावना को "श्रीगान्धिचरितम्" नामक काव्य के द्वारा प्रकट किया है। उन्होंने कहा है कि जिनके आत्म बलिदान से स्वतन्त्रता रूपी यज्ञ सम्पन्न हुआ उनके चिरस्मरणीय यश के द्वारा यह काव्य कृति सफल हो।

भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने वाले, व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास चाहने वाले, राष्ट्र कल्याण की सर्वात्मना बात सोचने वाले, विश्व के समस्त लोगों के साथ बन्धुत्व के भाव का विस्तार करने वाले, अस्पृश्यता जैसी दुर्भावना का विनाश करने वाले महात्मा गांधी की जीवन-गाथा को "गान्धिगौरवम्" काव्य का रूप देने के लिए उद्यत हुए डॉ. रमेश चन्द्र शुक्ल।

महात्मा गांधी व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की उन्नति के लिए श्रम को अतीव उपयोगी मानते हैं उनका विश्वास है कि यदि कोई भी समाज उन्नति चाहता है, समाज में अपना सम्माननीय स्थान बनाना चाहता है तो उसे श्रम के प्रति आस्था रखनी चाहिए। इसका पालन करके व्यक्ति सदैव सुख का अनुभव कर सकता है। उनके लिए श्रम अमूल्य निधि है। अतः ऐसे उत्तम विचारों को काव्य में संजोकर रखने के लिए श्रीधर भास्कर वर्णेकर की लेखनी लोभ संवरण नहीं कर सकी और वह "श्रमगीता के रूप में प्रस्फुटित हो गई।

महात्मा गांधी का कहना है कि सत्य सबसे बड़ा धन है, अस्पृश्यता मानव के लिए अभिशाप है, स्वावलम्बन आत्मोन्नति का सर्वोत्तम साधन है। स्वतन्त्रता सेनानियों और महान् पुरुषों में महात्मा गांधी भी एक दृढ़ स्तम्भ हैं। उन्होंने परतन्त्रता के बन्धन से भारत माता को मुक्त करवाने में अपूर्व सहयोग दिया है, अत. उन्हें राष्ट्ररत्न मानते हुए यज्ञेश्वर शास्त्री ने अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों की पंक्ति रूपी माला में पिरोकर "राष्ट्ररत्नम्" काव्य में पञ्चम स्थान पर अवस्थित कराया है।

उनका सामाजिक, राष्ट्रिय सम्पूर्ण जीवन ही समस्त भारतवासियों के लिए आदर्शमय है। वह अत्यधिक गुणवान्, साहसी, पूज्यजनों का आदर एवं सम्मान करने वाले हैं। उन्हें सदैव अपने देश को परतन्त्रता रूपी बन्धन के पाश से मुक्त करवाने का ध्यान रखता था। यह ऐसा कार्य करते थे जिसमें सबका कल्याण हो, सब सुखी हों और राष्ट्र उन्नति की ओर अग्रसर हो सब ऐसे नियमों का पालन करें जिससे उनका भी पतन न हो। इन उत्कृष्ट विचारों के प्रति आचार्य मधुकर शास्त्री जी का ध्यान गया और उन्होंने "गान्धि-गाथा" नामक काव्य लिखकर गांधी के प्रति अपनी रुचि को प्रकट किया है।

गांधी जी विभाजन के खिलाफ थे, उन्हें यह कभी पसन्द नहीं था कि देश टुकड़ों में बँटे। क्योंकि वह मानते थे कि संगठन में ही बल है। वह समाज में व्याप्त असमानता और कुरीतियों का भी विरोध करते थे, शत्रु के प्रति प्रेम भाव बनाये रखने में विश्वास रखते थे, वह व्यक्ति से नहीं बुराईयों से घृणा करते थे, जब तक उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो जाती थीतब तक वह कार्य में संलग्न रहते थे, वह अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए सजग रहते थे। उनके इस व्यक्तित्व को उजागर किया डॉ. किशोर नाथ झा ने बापू के

महात्मा गाधी को आधार बनाकर जितने काव्यो का निर्माण हुआ है उतना अन्य किसी महापुरुष पर नही। महात्मा गाधी पर आधृत कृतियाँ सस्कृत साहित्य की महाकाव्य खण्डकाव्य, गद्यकाव्य एवं दृश्य काव्य आदि प्रमुख चार विधाओ का प्रतिनिधित्व करती हैं।

महात्मा गाधी पर आधारित काव्य कृतियाँ सस्कृत साहित्य के लिए अनुपम देन हैं साथ ही ये परम्परा का निर्वाह करते हुए कुछ हटकर हैं। इनमें जीवन का सार है। इनसे बालक, वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी शिक्षा ले सकते हैं और उनमें निर्दिष्ट नियमो पर चलकर निश्चय ही कीर्ति स्तम्भ स्थापित कर सकते हैं। महात्मा गाधी पर आधारित इन कृतियों का पृथक्-पृथक् स्थान है। प्रत्येक काव्य अपना-अपना विशिष्ट महत्त्व रखता है। प्रत्येक काव्य कोई न कोई सन्देश, कोई न कोई प्रेरणा अवश्य देता है। अत अब क्रमशः इन काव्यो का स्थान निर्धारित किया जा रहा है।

सत्याग्रह-गीता—

सत्याग्रह गीता रचनाकाल की दृष्टि से महात्मा गाधी पर आधारित सस्कृत साहित्य में प्रथम स्थान की अधिकारिणी। है। प्रस्तुत महाकाव्य तीन भागो में लिखा गया है। इसकी रचयित्री पण्डिता क्षमाराव हैं। पण्डिता क्षमाराव ने महात्मा गाधी के जीवन को सत्याग्रह गीता, उत्तर सत्याग्रह गीता, स्वराज्य विजय इन तीनो भागो में लिखकर सत्याग्रह त्रिवेणी कहा है।

प्रस्तुत महाकाव्य को अनुष्टुप् छन्द में लिखा गया है। यह इस काव्य की सर्वप्रमुख विशेषता है। विस्तृत कथा को एक ही छन्द मे पिरोकर इस तरह रख दिया है जैसे कि स्वच्छ आकाश में तारो का साम्राज्य फैला हो।

अनुप्रास अलकार का प्रयोग काव्य को सरसता प्रदान करता है साथ ही हमें यह कहने पर मजबूर करता है जैसा कि डॉ. किरण टण्डन ने "महाकवि ज्ञान सागर के काव्य एक अध्ययन" में कहा है कि जैसे कालिदास के लिए "उपमा कालिदासस्य" की उक्ति और ज्ञान सागर के लिए "अनुप्रासो ज्ञानसागरस्य" की उक्ति न्याय सगत लगती है[1] वैसे ही पण्डिता क्षमाराव के लिए भी "अनुप्रास पण्डिता क्षमाराव" उक्ति का प्रयोग भी अक्षरश- चरितार्थ होना है।

इसमें वीर रस की स्रोतस्विनी प्रवाहित है और करुण रस एव रौद्र रस भी काव्य को उत्कृष्ट बनाने में पूर्णतया सक्षम हैं।

प्रस्तुत काव्य का कथानक ऐतिहासिक एवं स्वतन्त्रता सग्राम की घटनाओ पर आधारित होने के साथ-साथ सजीव, विश्वसनीय भी है। उसमे धर्मवीर रस का प्रयोग होने के कारण ओजस्विता प्रस्फुटित होती है। वह उत्साह वर्धक है। इसमें प्राकृतिक वर्णन अत्यल्प है लेकिन मूल भावना का तिरोभाव नहीं हो पाया है। अत यह अर्वाचीन सस्कृत साहित्य का महान् एवं उत्कृष्ट महाकाव्य कहलाने योग्य हैं।

गान्धी-गीता २४ अध्यायों में लिखा गया महाकाव्य है। इसमें महात्मा गांधी के राष्ट्रिय विचारो को अतीव सुन्दर ढग से प्रस्तुत किया गया है। इसमें जन-जन के मन में

देशानुराग की भावना जगाने का प्रयास किया गया है। वह गीता-शैली में लिखा गया अपने किस्म का नवीन महाकाव्य है।संस्कृत साहित्य मे प्रस्तुत महाकाव्य से साम्य रखने वाला अन्य कोई काव्य नहीं मिलता। सर्वत्र ही राष्ट्रिय भावना का संचार हुआ है, अतः यह विलक्षण महाकाव्य है। इसमें वीर-रस का अद्भुत प्रयोग हुआ है। इसमें अस्त्र-शस्त्रों और हिंसात्मक युद्ध का विरोध किया गया है। हिंसा पर अहिंसा की, असत्य पर सत्य,की अधर्म पर धर्म की विजय दिखाकर समस्त प्राणियों को अहिंसा के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है।

इस काव्य की एक विशेषता यह भी है कि यह गायत्री मन्त्र के अक्षरों के अनुसार २४ अध्यायों में विभक्त है। इस काव्य में प्राकृतिक वर्णन के प्रसंग में छन्द परिवर्तन किया गया है और रामायण कालीन एवं महाभारत कालीन दृष्टान्त प्रस्तुत करने के लिए भी छन्द बदला गया है और जहाँ पर महात्मा गांधी के धर्मोपदेश और राष्ट्र प्रेम को प्रस्तुत किया है वहाँ पर अनुष्टुप् छन्द को ही रखा है। यह उपदेशात्मक महाकाव्य है। श्रीनिवास ताडपत्रीकर द्वारा इस काव्य को देश भक्ति की भावना से प्रेरित होकर लिखा गया है। इसमें अलंकारों का प्रयोग सीमित मात्रा में हुआ है।

श्रीमद् भगवदाचार्य विरचित "श्रीमहात्मगान्धिचरितम्" का आलोच्य ग्रन्थों में तृतीय स्थान है। यह महाकाव्य भी वास्तविक घटनाओं पर आधृत है। जैसा कि पहले के अध्यायों से स्पष्ट है कि प्रस्तुत महाकाव्य तीन भागों में विभक्त है और तीनों ही भागों का नाम महात्मा गांधी के व्यक्तित्व के सर्वथा अनुरूप है। प्रथम भाग का नाम है "भारत-पारिजात" तो महात्मा गांधी निश्चय ही भारत रूपी उद्यान में खिलने वाला पुष्प है। द्वितीय भाग का नाम है "पारिजातापहार" इसमें महात्मा गांधी को कारागृह में डाला गया है और तृतीय भाग का नाम है "पारिजात सौरभम्" इसमें यह बताया गया है कि देश के लिए अपने प्राण दे देने वाले महात्मा गांधी की सुगन्धिमय यशोगाथा सुदूर देश में परिव्याप्त हो गई।

इसमें बार-बार छन्दों का परिवर्तन किया गया है। शब्दालंकारों में अनुप्रास और अर्थालंकारों में उपमा की इस काव्य में प्रधानता है। सर्वत्र ही प्रवाह बना हुआ है। पुतली बाई द्वारा महात्मा को गर्भ में धारण करना और षड्ऋतु वर्णन एवं मास वर्णन इसकी वर्णनात्मकता की सफलता के परिचायक हैं। जीवन के हर क्षेत्र को अतीव कुशलता से प्रस्तुत किया गया है। गान्धिदर्शन विस्तार से वर्णित हुआ है। काव्य का हर पक्ष सन्तुलित है। महात्मा गांधी के चरित्र को प्रस्तुत करने में कवि अन्य पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करना भूल सा गए हैं। इसमें भी स्थान-स्थान पर भारतीय संस्कृति की रक्षा, परतन्त्रता से मुक्ति पाने के लिए सत्य, अहिंसा जैसे साधनों के पालन पर जोर दिया गया है, विदेशियों की कूट नीति की निन्दा की गई है और देश द्रोही एवं फूट डालने वाले असामाजिक तत्त्वों को विनष्ट करने का उपाय बताया गया है जोकि हमारे मन में राष्ट्रिय-भावना भरता है। इस आधार पर यह भी हर दृष्टि से प्रशंसनीय एवं संस्कृत साहित्य की श्रीवृद्धि करने वाला विशिष्ट महाकाव्य है।

"श्रीगान्धिगौरवम्" ८ सर्गों वाला अति लघु महाकाव्य है। इसका उद्देश्य स्वतन्त्रता की प्राप्ति करवाना है। इसमें अवतारवाद का आदर्श श्रीमद् भगवद्गीता के आधार पर प्रस्तुत किया गया है—

यदा जगत्यां विपदासु मग्नान्, आलोकते स्वीयजनान् मुरारिः।
तदा स्वकीयं "पुरुष" विशेष कुत्रापि जातं नितरां करोति।।

(श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी, श्रीगान्धिगौरवम्, १/७)

इसमें महात्मा गांधी का जीवन संक्षिप्त किन्तु आद्योपान्त है। इतिहास और काव्यत्व का समन्वय चतुरता पूर्वक हुआ है।

काव्य में अनुष्टुप्, इन्द्रवज्रा, मालिनी, वसन्ततिलका आदि अनेक छन्दों का प्रयोग किया गया है। छन्दों का प्रयोग स्वच्छन्दता पूर्वक किया गया है। चतुर्थ सर्ग में प्रयुक्त छन्दों की संख्या १८ है। छन्दों की शुद्धता बनाए रखने हेतु कवि ने व्याकरण के नियमों में भी परिवर्तन कर दिया है।

अनुप्रास, उपमा, रूपक आदि अलंकारों के प्रयोग से काव्य बोझिल नहीं हुआ है। प्रत्येक सर्ग में अनेक शीर्षक हैं और एक सर्ग के अन्त में दूसरे सर्ग की घटनाओं की सूचना मिल जाती है जिससे विषय को अत्यधिक रोचकता और सहजता प्राप्त होती है।

यद्यपि प्राकृतिक वर्णन अत्यधिक संक्षिप्त है किन्तु जितना भी है वह प्रशंसनीय है। वीर रस का वर्णन निश्चय ही उत्साह भरने वाला है।

संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग, भारत देश की स्वतन्त्रता हेतु किया गया प्रयास राष्ट्रिय भावना को जगाने में सक्षम है।

इन सभी दृष्टियों से प्रस्तुत महाकाव्य अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में प्रतिष्ठा प्राप्त करने में समर्थ है।

श्री साधुशरण मिश्र का श्रीगान्धिचरितम् १९ सर्गों वाला महाकाव्य है। यह महाकाव्य पञ्चम स्थान पर अवस्थित है। इसके प्रथम सर्ग में महात्मा गांधी की जन्म कुण्डली प्रस्तुत की गई है। इसका कथानक भी इतिहास सम्मत है। इसमें महात्मा गांधी के जीवन के कुछ ही प्रमुख-प्रमुख अंशों का स्वाभाविक ढंग से विकास दिखाया गया है। इसका प्राकृतिक वर्णन भी अन्य महाकाव्यों से विलक्षण है। सूर्योदय एवं सूर्यास्त का वर्णन किसी भी सहृदय को अपनी ओर सहज में ही आकृष्ट कर लेता है। इसमें महात्मा गांधी का बाह्य एवं आन्तरिक दोनों तरह का व्यक्तित्व प्रस्तुत किया है। काव्यशास्त्र के नियमों में बंधकर छन्दोवर्णन करना उन्हें जरा भी अच्छा नहीं लगता है। इसमें हर सर्ग में पृथक्-पृथक् छन्दों का प्रयोग किया गया है। इस काव्य की सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि इसमें महात्मा गांधी के वध को एक हादसा न कहकर यह पुष्टि की गई है कि उनका अन्त राम एवं कृष्ण की तरह हुआ। इस वर्णन से नायक के वध का परिहार हो गया और महाकाव्य की आत्मा तिरोहित नहीं होने पाई। वीर रस के अतिरिक्त इसका करुण रस भी हृदयग्राही है। इस काव्य की भाषा माघ की भाषा से साम्य रखती है अतः जैसे यह कहा जाता है कि "माघे सन्ति त्रयो गुणाः" वैसे इनके काव्य में भी तीनों ही गुण देखने को

मिलते हैं। इस प्रकार यह भी राष्ट्रिय भावों को उद्दीप्त करने वाला और काव्य के हर पक्ष का यथावसर उपयुक्त वर्णन को हमारे समक्ष रखने वाला काव्य है इसलिए इसे भी अर्वाचीन महाकाव्यों के साथ ही उच्च स्थान दिया जाना चाहिए।

खण्डकाव्यों में श्रीगान्धिचरितम् का प्रथम स्थान है। इसमें राष्ट्रिय भावना की प्रधानता है। इसमें केवल उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अत्यल्प अलंकारों का प्रयोग किया गया है। इसमें दो भाव एक साथ विकसित हुए हैं—आत्म समर्पण की भावना और देश की दरिद्रता के प्रति खेद एवं आत्मग्लानि। एक ओर उत्साह भाव है तो दूसरी तरफ भक्ति भावना भी है। इसमें विश्व के कल्याण की बात कही गई है। यह प्रसाद गुण से मण्डित काव्य है। महात्मा गाधी के चरित्र को ही इस काव्य में स्थान दिया गया है। उनके माध्यम से देश के प्रति आदर भाव व्यक्त किया गया है। धर्मवीर एवं करुण रस दोनों का सुन्दर परिपाक हुआ है। स्पष्ट है कि यह संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि करने वाला, विद्वानों को ठरसाहित करने वाला उच्च कोटि का खण्डकाव्य है।

"राष्ट्ररत्नम्" में महात्मा गाधी के चरित्र को प्रस्तुत किया गया है और राष्ट्रोन्नति के लिए उत्साह भरा गया है। इसकी भाषा एवं भाव दोनों ही एक दूसरे के सर्वथा अनुरूप हैं। इसमें यह बताया गया है कि महात्मा गाधी को अपने देश के गौरव की रक्षा का सदैव स्मरण रहता था। इसमें उत्प्रेक्षा, रूपक, विशेषोक्ति, स्वभावोक्ति आदि अलकारों का प्रयोग हुआ है और महात्मा गाधी का जीवन वीर रस में सहायक है। यह काव्य भी राष्ट्रिय भावना का सचार करने वाला मुक्तक खण्डकाव्य है। आज के युग में ऐसे ही साहित्य की महत्ता है।

"गान्धिगौरवम्" डॉ. रमेशचन्द्र शुक्ल प्रणीत एक खण्डकाव्य है। इसमें भी कई छन्द प्रयुक्त हुए हैं। रूपक और अर्थान्तरन्यास अलकार इसमें विशेष रूप से देखने को मिलते हैं। इसके द्वारा नारी शिक्षा पर बल दिया गया है और अस्पृश्यता को समूल नष्ट करने की ओर ध्यान खींचा है। इस तरह कहना चाहिए कि राष्ट्रिय-भावना को ही पुष्ट किया गया है, उन्नतिशील समाज के लिए आदर्श प्रस्तुत किया गया है। इन विचारों के आलोक में इसे भी सर्वोत्तम खण्डकाव्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

"श्रमगीता" श्रीमद् भगवद्गीता के समान उपदेशात्मक शैली में लिखा गया खण्डकाव्य है। यह अनुष्टुप् छन्द में लिखा गया है। इसमें श्रम से होने वाले लाभ बताकर उसे ही समस्त सफलताओं का आधार बताया गया है और आलस्य को असफलता के द्वार पर ले जाने वाला अभिशाप बताकर श्रमशील बनने का प्रोत्साहन समाज एवं राष्ट्र की उन्नति को दृष्टिपथ पर रखकर दिया है। महात्मा गांधी द्वारा दिए गए इस उपदेश से उनकी परिश्रमशीलता ही झलकती है। इसमें श्रम की पूजा और आलस्य की निन्दा करने की बात दृष्टान्त देकर की गई है जोकि श्लाघनीय है।

"गान्धि-गाथा" आचार्य मधुकर शास्त्री द्वारा विरचित "मेघदूत" के समान पूर्वभाग और उत्तर भाग दो भागों में विभक्त खण्डकाव्य है। इसकी सर्वप्रमुख विशेषता है कि इसके पूर्व भाग में महात्मा गांधी का चरित्र वर्णित है और द्वितीय भाग में गांधी के विचारों का सार प्रस्तुत किया गया है। सम्पूर्ण काव्य में अन्त्यानुप्रास की मनोमोहक आभा विकीर्ण है। इसमें प्रयुक्त छन्द हिन्दी के प्रचलित छन्द "दोहा" एवं "सार" नामक छन्द है साथ ही महात्मा गांधी के माध्यम से देश-प्रेम की भावना जगाई गई है।

महात्मा गांधी के जीवन को आधार बनाकर लिखी गई बापू, चारुचरित चर्चा एवं गान्धिनस्त्रयो गुरुव शिष्याश्च आदि सामाजिक, धार्मिक एवं राष्ट्रिय विचारों को पुष्ट करने वाली गद्य-काव्य कृतियाँ हैं। इनमें महात्मा गांधी का चरित्र सर्वाधिक उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है। इनमें प्राकृतिक वर्णन नही के बराबर है। अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि कतिपय अलंकारों का ही समावेश है। इनमें जीवन का सार है। इनकी भाषा सरल एवं आकर्षक है। इनमें छन्दों का भी प्रयोग किया गया है। अतः इन्हें गद्यकाव्य विधा की अनुपम कृतियों में गिना जा सकता है।

"गान्धि-विजय नाटकम्" मथुरा प्रसाद दीक्षित द्वारा विरचित दो अंकों वाला नाटक है। इसमें प्रारम्भ में प्राकृत भाषा के स्थान पर हिन्दी भाषा का प्रयोग काव्य को एक नए मोड पर ले जाता है। इसमें सर्वत्र ही धर्मवीर रस प्रस्फुटित हुआ है। इस काव्य में विदेशी वस्त्रों की होली जलाकर स्वदेशी वस्त्र पहनकर राष्ट्रिय भावना को बल दिया गया है। इसका नाम सार्थक है। इसमें कारागृह की यातना सही गई है प्राणों की बलि देकर भी देश को स्वतन्त्र कराने का प्रयास किया गया है। इसमें नाटकीय तत्त्वों का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। इसमें भारतमाता का मानवीयकरण किया गया है और साथ ही कुछ पात्रों का नाम काल्पनिक है लेकिन कथावस्तु का ताना-बाना यथार्थ के धरातल पर बुना गया है। अतः यह कृति "नाटक" विधा की अमूल्य कृति है। यह भारतीयों को प्रेरणा देती है।

डॉ. बोम्मकण्ठी रामलिंग शास्त्री ने "सत्याग्रहोदय" नाम से १५ दृश्यों में नाटक का निर्माण किया है। इसके प्रथम दृश्य में यह कहा गया है कि स्वतन्त्र भारत की विजय हो और अन्त में कामना की गई है कि सबका मंगल हो। इसमें दक्षिण अफ्रीका वासी भारतीयों को अन्याय मुक्त करवाने के लिए सत्य एवं धर्म के मार्ग का अनुकरण किया गया है। इसमें भारतीयों के प्रति होने वाले अत्याचारों का अतीव मर्म स्पर्शी वर्णन है। अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए सत्य, अहिंसा एवं सत्याग्रह के मार्ग का अवलम्बन लेने की बात कही गई है। इसका कथानक ऐतिहासिक है। महात्मा गांधी का साहस अवर्णनीय है जोकि सत्याग्रहके बल पर शत्रु पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं। इसका शास्त्रीय पक्ष भी अत्यधिक सन्तुलित एवं सराहनीय है। इस आधार पर "सत्याग्रहोदय" नाटक महात्मा गांधी पर आधारित एक उत्तम "नाटक" तो है ही समस्त संस्कृत साहित्य की भी एक मूल्यवान् कृति है।

(ग) महात्मा गांधी पर आधारित संस्कृत साहित्य की उपयोगिता—

महात्मा गांधी पर आधारित संस्कृत साहित्य बहुजन हिताय एवं बहुजन सुखाय है। वह केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही अपनी उपयोगिता नहीं रखता है, अपितु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसकी महत्ता है। इस साहित्य से व्यक्ति को यह सन्देश मिलता है कि आलस्य को अपना शत्रु मानकर उसका परित्याग कर देना चाहिए और श्रम की पूजा देवता की भाँति करनी चाहिए क्योंकि आलस्य से हमारी शक्ति का हनन होता है, श्रम के बल पर हम कुछ भी प्राप्त कर सकते हैं। हमें अपने वैदिक ग्रन्थों, यहाँ की प्राकृतिक सम्पदाओं की रक्षा करनी चाहिए। इससे हमारा ही कल्याण होगा। कर्म निष्काम भाव से करना चाहिए। फल की प्राप्ति की कामना कदापि नहीं करनी चाहिए।

प्रत्येक प्राणी के साथ समानता का व्यवहार करना चाहिए। हानि-लाभ, यश-अपयश, दुख-सुख आदि प्रत्येक परिस्थिति में अपने मन पर नियन्त्रण रखना चाहिए, किसी भी वस्तु को उतना ही अपने पास रखना चाहिए जितनी की आवश्यकता हो। दूसरे के साथ अपने समान ही आचरण करना चाहिए।

इससे यह प्रेरणा भी मिलती है कि हम सौ वर्ष तक जीवित रहें, हम निरोग हों, हमें किसी प्रकार की बाधा न सताए। हम सदैव धर्म के मार्ग पर चलें, सत्य के मार्ग पर चलकर उन्नति करें, हमारा मन समान हो, सब भ्रातृत्व के भाव का अनुकरण करते हुए संगठित होकर रहें।

न केवल पुरुषों का सम्मान हो अपितु स्त्रियों का भी सम्मान हो, वह भी शिक्षित हो सकें। समाज तभी उन्नति करेगा जबकि पुरुष एवं स्त्री दोनों ही समान रूप से शिक्षित होंगे। स्त्रियों को घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर कुछ कर दिखाने का अवसर प्राप्त होगा।

समाज में बाल-विवाह एवं अस्पृश्यता जैसी दुष्प्रथाओं को स्थान नहीं देना चाहिए। अन्धविश्वास नहीं करना चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि हम समाज में अपना उन्नत स्थान बनाएं तो इसके लिए हमें आत्मनिर्भर बनना चाहिए।

हमें चाहिए कि हम सम्प्रदायवाद और जातिवाद को नहीं पनपने दें, अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग विनाश के कगार पर ले जाता है अतः उनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। अहिंसा के मार्ग पर चलकर स्वयं को और अन्य लोगों को हिंसा से होने वाले दुष्परिणाम का सामना नहीं करना पड़ता है।

इन काव्यों के माध्यम से यह प्रेरणा भी मिलती है कि सदैव आशावादी होना चाहिए। कुरीतियों एवं कुसंस्कार का विरोध करना चाहिए। महात्मा गाधी द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना चाहिए क्योंकि इससे समाज का बहुमुखी विकास हो सकता है।

व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने मन पर नियन्त्रण रखना सीखे। सबका सम्मान करना सीखे। ये काव्य प्रेम का पाठ पढ़ाते हैं, स्वार्थ का परित्याग करके परमार्थ की ओर ले जाते हैं। आत्मावलम्बी बनने की प्रेरणा देते हैं। अपराधी को दण्ड देने के स्थान पर क्षमाभाव रखना चाहिए।

उल्लेख है कि राजा को प्रजावत्सल होना चाहिए। जीवन के हर क्षेत्र में धर्म का सन्निवेश होना चाहिए। विपत्ति आने पर भी अपने कर्त्तव्य पर डटे रहना चाहिए।

हमें अपने राष्ट्र की रक्षा तन-मन-धन से करनी चाहिए और इसकी रक्षा हेतु अपनी आहुति देने के लिए भी तत्पर रहना चाहिए। ऐसा भी उपदेश मिलता है।

समाज में परिव्याप्त दुष्प्रथाओं और कुसंस्कार से होने वाले दुष्परिणामों को दृष्टिपथ पर रखकर उनसे सर्वता दूर रहने और सन्मार्ग पर चलने का प्रयास करना चाहिए। आपसी भेदभाव मिटाकर संगठित रूप से रहना चाहिए जिससे बाह्य शक्तियाँ यहाँ पर पुनः आक्रमण न कर सकें। हमें अपने राष्ट्र-गौरव को सुरक्षित रखना है और इसकी सुरक्षा तभी सम्भव है जबकि हम भारतीय वस्तुओं का प्रयोग करें और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करें।

प्रेम, परोपकार, सहिष्णुता, दया आदि उदात्त भावों को विकसित करने का प्रयास करना चाहिए। हमारा जो साध्य हो उसी के अनुरूप साधन का प्रयोग करना चाहिए।

स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और समस्त सुखों का साधन है अतः इसे खोना नहीं चाहिए। परतन्त्रता व्यक्ति के शील, चरित्र, वैदुष्य अर्थात सर्वांगीण विकास में बाधक बनता है। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपने राष्ट्र को सदैव परतन्त्रता की जंजीरों से मुक्त रखने का प्रयास करते रहें।

हमें महात्मा गांधी के जीवन से यह शिक्षा भी मिलती है कि सदाचार और सच्चरित्र हमारे जीवन की अमूल्य निधि है अतः ऐसा प्रयास करना होगा जिससे हमारा जीवन दुश्चरित्र एवं दुराचरण से सर्वथा दूर रहे।

हमारा सबसे बड़ा धर्म है अपने कर्त्तव्य का पालन, निष्ठा एवं लगन से करना, देवी-देवताओं को श्रद्धापूर्वक नित्य नमन करना चाहिए जिससे हमारा जीवन सुखमय बना रह सके। अपने गुरुजनों माता-पिता आदि का आदर एवं सम्मान करने की भी शिक्षा इन काव्यों से मिलती है।

ऐसा कार्य कभी नहीं करना चाहिए जिससे दूसरे का नुकसान होता हो, विपत्ति में पड़े हुए शत्रु की भी रक्षा करना मानव का कर्त्तव्य है। सदैव सत्य बोलना चाहिए, संग्रह की प्रवृत्ति नहीं होना चाहिए, अस्पृश्यता एवं ऊँच-नीच एवं अमीर-गरीब जैसी विभाजक रेखाओं का विरोध करना चाहिए, ऐसा प्रयास करना चाहिए जिससे विश्वबन्धुत्व की भावना का विस्तार हो सके। राम नाम को कभी विस्मृत नहीं करना चाहिए क्योंकि यह एक ऐसी शक्ति है जोकि हमें प्रत्येक परिस्थिति में सन्तुलन बनाए रखने की सामर्थ्य प्रदान करती है, हमें ढाँढस बँधाती है।

शारीरिक बल की अपेक्षा आत्मबल अधिक शक्तिशाली एवं प्रभावपूर्ण होता है यह बात महात्मा गांधी के सत्य, अहिंसा जैसे अस्त्रों से सिद्ध हो जाती है। किसी व्यक्ति विशेष से घृणा नहीं करनी चाहिए अपितु पापकृत्यों से घृणा करनी चाहिए।

महात्मा गांधी परक काव्य हमें इस ओर प्रवृत्त करते हैं कि भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवन-यापन करना चाहिए। हमें यह बात गाँठ बाँध लेनी चाहिए कि जन्म व्यक्ति की प्रतिष्ठा का कारण नहीं होता है, अपितु उसके कर्म को ही उसको प्रतिष्ठित या अपदस्त करने में निर्णायक की भूमिका निभाते हैं।

प्रथम परिशिष्ट

महात्मा गान्धी पर आधारित संस्कृत काव्य में सूक्तियाँ

भाषा को अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाने में सर्वग्राह्य बनाने में सूक्तियों का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है। सूक्तियों का अवलम्बन लेकर कवि सीमित कलेवर में प्रभूत सामग्री प्रस्तुत कर पाने में समर्थ होता है। ये व्यक्ति के मन पटल पर इस सीमा तक छा जाती है कि वह उन्हें भूल पाने में सर्वथा असमर्थ रहता है। साथ ही ये पाठक को ऐसी शिक्षा देती है जोकि अन्य किसी रूप में दे पाना दुरुह है। काव्य के प्रयोजन "कान्तासम्मितोपदेश" की सिद्धि भी इनसे होती है।

सूक्तियाँ जीवनके अन्यान्य पक्षों पर अपना प्रभाव जमाती है। ये व्यावहारिक ज्ञान कराती है, कर्त्तव्य पथ पर ले जाती है। हर परस्थिति में स्वय को एकसा बनाये रखने की प्रेरणा देती है, अपनी जाति, धर्म, और देश के प्रति स्वाभिमान की भावना भरती हैं, भारतीय संस्कृति, वेदों एवं महापुरुषों के प्रति श्रद्धा बढ़ाती है। इन सूक्तियों को स्मृति-पटल पर रखकर जीवन के हर क्षेत्र में उनके अनुसार व्यवहार करते हुए सफलता प्राप्त की जा सकती है।

प्राय देखा जाता है कि किसी कथन को प्रमाणित करने के लिए, किसी के चारित्रिक गुणों को उद्घाटित करने हेतु या किसी सद्कार्य हेतु किसी को प्रोत्साहित करने के लिए सूक्तियों का प्रयोग किया जाता है। अत व्यक्ति इन्हें अनायास ही ग्रहण कर लेता है।

महात्मा गाधी पर आधृत सूक्तियाँ भी जीवन के हर क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। यद्यपि अधिकाश सूक्तियाँ राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हैं तथापि कुछ सूक्तियाँ कर्म प्रधान, कुछ चरित्र प्रधान एव कुछ जीवन के कटु सत्य पर आधृत है। महात्मा गाधी पर आधृत साहित्य भी अन्यान्य संस्कृत साहित्य की भाँति सूक्ति-मुक्तावली से सुसज्जित एवं शोभायमान है। महात्मा गाधी पर आधृत सूक्तियों की संख्या चार सौ इकहत्तर है।

महाकाव्य

सत्याग्रह गीता—

१. निर्धनत्वाज्जनुर्भुमिः पाशत्वाच्च बान्धवा.।
तिरस्कृता भवन्तीति प्राज्ञेन किल निश्चितम्।।
(सत्याग्रह गीता, १/२४)

२. स्वधर्मः परमो धर्मो न त्याज्योऽय विपद्यपि।।
(वही, १/२९)

३. स्वातन्त्र्यादपि भूताना प्रियमन्यत्र विद्यते।।
(वही, १/३४)

४. पारतन्त्र्यमुदाराणा मरणादतिरिच्यते।।द्रुत
(वही, १/३६)

५. दास्यभावे स्थिते कष्टं सोढव्यमतिदुस्सहम्।
दासोऽश्नाति स्वमप्यन्नं काकशङ्की पदे पदे।।
(वही, १/३७)

६. खादिवस्त्रात्परं यासो नैव धार्यं कदाचन।
स्वार्थत्यागात्स्वदेशार्थ नान्यच्छ्रेयो हि विद्यते।।
(वही, २/४१)

७. करादानस्य दारिद्र्यं हेतुरासीन्न चान्यथा।
राजापि सरसः शुष्कात्पय· पातुं न पारयेत्।।
(वही, ३/८)

८. शस्त्रास्त्रबलहीनानां बलम् सत्याग्रह परम्।।
(वही, ३/२१)

९. साम्राज्यस्योपकारे हि भारतस्य हित स्थितम्।
(वही, ५/६)

१०. दारुणानामसख्याना पापाना दारुणं फलम्।
परत्र लप्स्यते दुष्ट इति शकेत को नर ।।
(वही, ५/३३)

११. अज्ञानाद्भवति द्वेषं द्वेषाद्भवति शत्रुता।
शत्रुत्वाद्विप्लवो भावी ततो नाश प्रशासितु·।।
(वही, ६/९)

१२. पारतन्त्र्याभिभूतस्य देशस्याभ्युदय· कुतः।
अत· स्वातन्त्र्यमाप्तव्यमेकं स्वातन्त्र्यसाधनम्।।
(वही, ७/४)

१३. अतः स्वार्थं परित्यज्य सात्त्विकीं बुद्धिमाश्रितः।
(वही, १०/७)

१४. स्वामिन· परमो धर्मः प्रजाना हितकारिता।।
(वही, १०/८)

१५. स्वदेशस्य विमोक्षार्थं प्राणैरपि धनैरपि।
यान्यथा मे करिष्यन्ति प्रयास प्रबलं ध्रुवम्।।
(वही, १०/१९)

१६. निर्णयश्चक्रगोष्ठ्यास्तु न प्रमाणं भविष्यति।

पारावारिक शक्तयोर्हि कुतो वादेन निर्णयः ।।

(वही, १०/२०)

१७. दुर्बला ननु मन्यन्ते शान्तिमार्गावलम्बिनः।
पर सत्याग्रहाद्विद्धि नास्ति तीव्रतरं बलम्।।

(वही, १०/२५)

१८ शान्तिमन्त्रधरोऽपि मार्गोऽयं विपन्न परम्।
न सन्दर्भ उप माध्यो भयाद्घोरतमाद्वते।।

(वही, १०/२९)

१९ देशभक्तो निजं मानात् मन्यते यन्त्रणोत्तमाम्।
ताडनात्तस्य किं दुःखं बन्धनात्तस्य किं भयम्।।

(वही, १२/२१)

२० रोगिणामनिवार्या हि चिकित्सा न त्वरोगिणाम्।।

(वही, १३/२६)

२१ लोभः परमनस्यापि व्याधिरित्येव मन्यते।

(वही, १३/२७)

२२. का प्रतिष्ठा हि धर्मस्य निर्दोषा यदि दूषिता।

(वही, १४/१७)

२३ धिग् राज्यं यत्र जनीयान् सत्यासत्यविवेचनम्।
निर्गोत्कर्षमदोन्मत्त कुतः कर्मान्तं स्मरेत्।।

(वही, १४/२५)

२४. जलमुत्क्वथितं चापि पुनर्गच्छति शीतताम्।
मनस्तु दूषितं नृणां न निवर्तेत लक्षणः।।

(वही, १५/२६)

२५. शक्यो वारयितुं चापि कथंचिद्वडवानलः।
न तु मोहयितुं शक्यः सकृज्ज्वलितो जनः ।।

(वही १५/२७)

२६. मानवीयगुणैर्नैतैर्संगरधनुष्मदैः।
न वर्तितव्यन्तु सत्कर्मो सेवति यत्नपूर्वैः।।

(वही, १६/२०)

२७. सुगमं यत्तु कार्यं स्यात्कतरो लघु तद्भवेत्।
दुर्गमं चापि सत्कार्यं पुष्णाति फलगौरवम्।।

(वही, १६/४४)

२८. पुनः पुनः कृतो मनोधाय उहापन्नम्।

न सिध्येद्यदि कर्तव्या समाजात्तद्वहिष्कृतिः।।

(वही, १६/५१)

२९. जातस्य चेदध्रुवो मृत्यु देशकार्ये वर मृति.।

(वही, १७/६०)

३० दासत्वाग्रस्तदेशस्य क्षमाया नापरा गति ।।

(वही, १७/७०)

३१. सत्यं विजयता लोके मुक्तंभवतु भारतम्।
नन्दन्तु सुखिनः सर्वे देशजाश्च विदेशजा.।

(वही, १८/१९)

उत्तरसत्याग्रहगीता—

३२. वञ्चयेय स्वदेशं चेच्छिलापातोर्हतैव माम्।
न काप्यत्र घृणा कार्या वरं वेरो न वञ्चक.।।

(वही, २/१२)

३३. जन्मभूमेः कृते सोढं शुभोदर्कं भविष्यति।
मातुरर्थे सुपुत्रस्य कः क्लेशो दुःसहो भवेत्।।

(वही, २/१५)

३४. न हि सन्तः प्रतार्यन्ते बाह्योपाधिविलोकने.।।

(वही, २/३३)

३५. परायत्त प्रतिष्ठाना परसेवा परा गति.।

(वही, ३/११)

३६. सेव्यते जन्मभूखे नष्टलब्धा प्रसूरिव।।

(वही, ३/२७)

३७. महतां हि चरित्राणि हरन्ति सुमनोमनः।

(वही, ३/४८)

३८. स्वयमेव स्व देशस्य मा भूत क्षति हेतव.।

(वही, ६/६)

३९. स्वराज्यादपि मे श्रेयो ह्यन्त्यजानां विमोचनम्।

(वही, ७/२३)

४०. न कोऽप्यस्पृश्यताख्यात्या लाञ्छनीयः स्वदेशजः।
चातुर्वर्ण्यव्यवस्थायामपि नेदं हि दृश्यते।।

(वही, ७/४३)

४१. तं विना शरणं मान्यस्तदिच्छां को निवारयेत्।

(वही, ८/४२)

४२. अमृतासार सिक्तापि किं शिलामृदुलायते।
(वही, ८/४४)

४३. युष्माभि कार्यसिद्धिश्चेत निश्चितं प्राप्तुमिष्यते।
सद्गुणो न पुनः संख्या पुरुषाणामपेक्ष्यते।।
(वही १०/१३)

४४ धिग्वलं भौतिक पुसा सत्याग्रहवल वलम्।
(वही, १३/३६)

४५ हिन्दी भाषा गिर सर्वा· समुत्कर्ष हिनेष्यति।।
(वही, १८/१७)

४६ विप्रचाण्डालयोयविषवेदलेदधीर्जन्मकारणात्।
तावद्भारतमूर्न स्यादारोग्यशमसौख्यभाक्।।
(वही, २०/६५)

४७ भारत शाक्यसिंहस्य जन्मभूमि प्रिय हि न।
(वही, २०/१०५)

४८ निष्कारण न जायेत प्रमादोऽल्पतरोऽपि सन्।
कायेन मनसा वाचा गीतार्थ परिशीलिन।।
(वही, २१/१७)

४९ मानरक्षा मनुष्यस्य न शक्येव वलं बिना।
(वही, २२/७)

५०. शौचसौभाग्यसम्मानरक्षा नार्थमपेक्षते।
ग्राम्यत्वसमता याति विमवाडम्बर पुन·।।
(वही, २३/४९)

५१ शनै पन्था शनै कन्था शनै पर्वतलघनम्।
इत्यसौ शुष्कलोकोक्तिं सोपहासमुदाहरत्।।
(वही, २५/६३)

५२ याज्ञिको भवितुं नार्ह पुरोधा मन्त्रवर्जितः।
(वही, ३१/१६)

५३. कार्ये देवप्रसादेन स्वयं शक्तिरुदेष्यति।।
(वही, ३१/३४)

५४. नाल्पीयस· समाजस्य भवदीयस्य केवलम्।
अपि त्वखिलराष्ट्रस्य श्रेयस्तावद्विचिन्त्यताम्।।
(वही, ३१/५७)

५५. राष्ट्रध्वजगता वर्णा सूचयन्त्येक भावनम्।
(वही, ३२/७)

५६. यावच्च ध्रियते राष्ट्रं भारतीयं क्षमातले।
तावद्भीतिः पताका च प्रोच्चैरुल्लसतोध्रुवम्।।
(वही, ३२/३१)

५७. नास्ति कोऽपि जगत्यस्मित् भवदन्यो नरोत्तम ।
यो निवारयितुं शक्तः समरं विश्वघस्मरम्।।
(वही, ३३/१९)

५८. बलिष्ठोऽपि नृपो लोकान्नेवं तर्जितुमर्हति।
कुर्वन्नहितमेतेषा करोत्यहितमात्मन ।।
(वही, ३४/३८)

५९. निरंकुश प्रभुत्वस्य गत कालो महीतलात्।
प्रजारञ्जनतो राजा जीवेदद्य न पीडनात्।।
(वही, ३४/४०)

६०. जन्मभूरस्मदीया हि प्रशान्तेर्धाम् वर्तते।
(वही ३५/२२)

६१. स्वतन्त्र्यमपरिच्छेद्या विश्वभोग्यम् हि वर्तते।
(वही, ३६/२९)

६२. राष्ट्रस्य सार्वभौमत्व जनतामवलम्बते।
संस्थाने राजसत्ता च जनतावशवर्तिनी।।
(वही, ३९/१२)

६३. नून देवविलासेन सान्त्वनं लभते नरः।
प्रातिकूल्य च भूताना कल्पते हि सुखाय न।।
(वही, ४०/९)

६४. भारतेऽत्र निरातका स्वातन्त्र्य श्रीविराजताम्।
(वही, ४७/२०)

स्वराज्य विजयः

६५. प्राणेभ्योऽ पि हि मे प्रेयान् मातृभूमे सुखोदय ।
(वही, २/१५)

६६. भारतादधिक कोऽपि न देशः शान्ति वत्सल ।।
(वही, २/१५)

६७. अस्ति मुख्याधिकारो न स्वराज्याप्ति स्वजन्मत।
(वही, ३/१६)

६८. उत्सेकं भजध्वं भो सास्त्ररक्षक निर्जयात्।

६९. पूर्णस्वाराज्यसम्प्राप्तिर्देशस्य परमा गति.।

(वही, ७/३)

७०. न्याय दृष्ट्वा समा: सर्वा प्रजा: सन्तीह भारते।

(वही, ११/७)

७१ भारतस्य प्रतिष्ठाहि स्थापिताऽस्ति जगत्तले।।

(वही, ११/३४)

७२ वपुर्नृणा हि सेवार्थं न तु सौख्योपभुक्तये।।

(वही, १२/१५)

७३ हृदन्तसुखमुद्भूतं त्यागात् पुष्णाति जीवितम्।

(वही, १२/१८)

७४. कुर्वन्नेवह कर्माणि जिजीविषेच्छन्त समा ।

(वही, १९/२९)

७५ दीर्घायुष्यमिद त्यागाद्विना नेवोपलभ्यते।

(वही, १९/३३)

७६ यदि जातु फलासक्तो नरो जीवेदियच्चिरम्।
तज्जीवितशवन्नस्य· सर्वेषा भार एवं स.।।

(वही, १९/३४)

७७. येषा भगवति श्रद्धा तेषा त्रासो न युज्यते।

(वही, २२/२०)

७८. ईश्वर हि विना नान्यो रक्षक· पृथिवीतले।

(वही, २५/८)

७९. न कोऽपि धार्मिक ग्रन्थो ह्यनुशास्ति मिथ कलिम्।

(वही, २७/४२)

८०. नापमान· स्पृशेद्वीरं न च धीरमनादरः ~
दुर्जनस्य स्वभावोऽयमपकारे प्रतिक्रिया।।

(वही, ३१/८)

८१. वित्त गान्धि विना कोऽपि हन्तु गान्धि न पारयेत्।
अविनश्वरमातमान को वा नाशयितुं प्रभु·।।

(वही, ३१/१०)

८२.————क्षमा हि परमो गुण ।

(वही, ३१/१३)

८३. परार्थोऽपि वितन्वन्ति मैत्रीं मित्रीभवत्सु हि।
किं ब्रूमहे मनुष्याणा चरित्र देवरपिणाम्।।

(वही, ३४/४५)

८४. कुरुते केवलं यत्नान् सप्रयासं नरोभुवि।
कार्य सिद्धि परं तस्य परमात्मनिबन्धिनी।।
(वही, ३५/२७)

८५. दासश्च पशुभिस्तुल्यः पशुत्वान्मरण वरम्।।
(वही, ३९/२७)

८६. भारतं न किलात्मानं कलकंयितुमर्हति।।
(वही, ४१/१३)

८७. न शक्यः करतालः स्यादेकेनैव हि पाणिना।।
(वही, ४९/२६)

८८. उद्योगिनमुपैति श्रीरुद्योगः शान्तिदायक।।
(वही, ५०/७)

गान्धी गीता—

८९. उर्ध्वबाहुर्विरौम्येष तच्छुणुध्वमन्द्रिता।
एक्यादबन्धस्य निर्युक्तिस्तदैक्यं किं न सेव्यते।।
(ध्यानम्, पृ०-१२)

९०. वन्दे मातरमित्येव राष्ट्रमन्त्र सनातनः।
(ध्यान्म, पृ०-१२)

९१. गतानुगतिको लोको न लोक परमार्थिक।
(वही, १/१४)

९२. कार्याकार्य विचारेषु रमन्ते न जनाःक्वचित्
(वही, १/२०)

९३ विस्तीर्णं भारतं वर्यनानाजनपदैर्युतम्।
(वही, १/२२)

९४ कार्यं सिद्ध्यति यत्नेन दैववादः सुदुर्बलः।।
(वही, १/३२)

९५ शासनं विहितं राष्ट्रे यत्नपरैस्तत्र सौख्यदम्।
(वही, १/३९)

९६ युद्ध तुल्यबलैर्युक्तं विषमैर्न सुखावहम्।।
(वही, १/५६)

९७ पारतन्त्र्यनिविष्टाना दीनानां दास्यपीडया
संशयं यास्यमानानां को लाभो जीवितेन वै।।
(२/७)

९८ पारतन्त्र्ये ह्यनर्थानां जायते हि परम्परा।।
(२/२०)

९९. यत्र जन्मास्य भवति यत्र संवर्धनं तथा।
स्वकीया यत्र चैवास्य तस्य तद्राष्ट्रमुच्यते।।
(वही, ३/११)

१००. यात्रास्य पितरवास्ता यत्रासश्य पितामहा.।
स्वीया परम्परा यत्र तस्य तद्राष्ट्रमुच्यते।।
(वही, ३/१२)

१०१. न राष्ट्रं केवला भूमिन लोकोऽप्यथ वा क्वचित्।
उभयोश्चिरसम्बन्धे राष्ट्रमित्यभिधीयते।।
(वही, ३/१४)

१०२ यथा माता तथा राष्ट्र यथा सर्वेश्वरोऽपि वा।
प्रेमणादरेण सेव्याश्च धर्म एष सनातनः।।
(वही, ३/१५)

१०३. राष्ट्रोद्धारे यत्नपरा राष्ट्रीया सर्व एव ते।
(वही, ३/१६)

१०४. कलह वे स्वकीयेषु नैव कुर्यात्कदाचन।

कलहो राष्ट्रनाशाय भवतीति सुनिश्चितम्।।
(वही, ३/१८)

१०५. राष्ट्रच्छिद्रं हि कलहो मूले त प्रशमं नयेत्।
(वही, ३/१९)

१०६. वैरिणोऽपि गुणा ग्राह्या इति प्रोक्त सतां मतम्।
(वही, ३/४७)

१०७. एक धर्मेण सम्बद्धा जन्मभूमया विहारिण ।
सर्वे वय हिन्दपुत्रा सभूमैव यतामहे।।
(वही, ३/५५)

१०८. मृतस्यापि पुनर्जन्म सृष्टिचक्रे नियोजितम्।
तस्मान्मृत्युभयं त्यक्त्वा स्वकर्तव्ये मतिं कुरु।।
(वही, ५/३)

१०९. किन्तु सघे समुद्भूता सत्वशक्तिर्बलीयसी।।
(वही, ५/७)

११०. आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मेव रिपुरात्मन।।
(वही, ५/१५)

१११. एकीभूत यदा राष्ट्र स्वा वृत्तिमनुतिष्ठति।

परकीया अपि तदा मानयिष्यन्ति तत्कृतिम्।।

(वही, ५/२०)

११२. राष्ट्रकार्यार्थमैक्यं हि सर्वेषां सुखदायकम्।

(वही, ८/४९)

११३. तावत्सेवा प्रकर्तव्या यावद्राष्ट्रविरोधिनी।

(वही, ९/२४)

११४. व्यक्ति धर्माज्जाति धर्मो राष्ट्रधर्मस्ततो महान्।

(वही, १०/४)

११५. सेवनानैर्विधर्म्याना स्पर्शमाहारमेव च।

स्वकीया अपसार्यन्ते धिगेषा भारते स्थिति ।।

(वही, १०/२८)

११६. राष्ट्र धर्मे तु भेदानामवकाशो न विद्यते।

(वही, १०/२९)

११७. समाना बन्धव: सर्वे जन्मभूमि निवासिन ।

सामान्यधर्मो यस्तेषा स राष्ट्रे प्रथम. स्मृत ।।

(वही, १०/३०)

११८. उपेक्षा नैव कर्तव्या राष्ट्रेशत्रोरणोरपि।

(वही, १०/३४)

११९. ममत्वं यस्य वै राष्ट्रे स सर्वैरपि पूज्यते।

(वही, १०/३९)

१२०. संघशक्तिर्हितकरी राष्ट्र सैव मदेष्यते।

(वही, १०/४१)

१२१. आचारे च विचारे च स्वकीयाना हितं सदा।

यः साधयेद् यथाशक्त्या स राष्ट्रीय इति स्मृत ।।

(वही, १०/४३)

१२२. राष्ट्रधर्मस्य महात्यं स्त्रियः संवर्धन्ति हि।

(वही, १०/५३)

१२३. स्वदेसो सौख्यमतुलं परराष्ट्रेषु मान्यत।

स्वराज्यफलमेतच्च अमृत स्वादु खादत।।

(वही, ११/८९)

१२४. राष्ट्रधर्मविरोधेन स्वधर्मस्यानुपालनम्।

(वही, १२/१८)

१२५. स्वधर्माचरणेनापि राष्ट्रकार्य न दुष्करम्।

परधर्मासहिष्णुत्वं तत्याज्यं सर्वथा जनैः।

(वही, १२/२२)

१२६ लोकसंग्रहमुद्दिश्य राष्ट्रकल्याणमीप्सुना।
वर्तितव्यं सदा राष्ट्रे विचार्यैव यथार्थतः।।

(वही, १३/१)

१२७. कलहेनैव राष्ट्रस्य हानिः सर्वत्र दृश्यते।
अनायासेनेरतेरा लाभस्तत्रैव सिध्यति।।

(वही, १३/१७)

१२८ नेता एव सदा स्वार्थबुद्धिर्भीत्येव वर्तते।
तदा लोका भवन्तीह स्वकर्तव्यपराङ्मुखाः।।

(वही, १३/२०)

१२९ प्रारभ्य कार्यमेवेह नान्तं किंचित्समाप्नुते।
अपूर्णं त्यजते लोकैर्विमूढैर्विघ्नसंशयात्।।

(वही, १५/४)

१३०. लोभातीतो भयातीतः स्वीकृते कृतनिश्चयः।
कार्यसिद्धिं समुद्दिश्य यतते पुरुषोत्तमः।।

(वही, १५/६)

१३१. राष्ट्रकार्यपरा बुद्धिः कर्तव्या त्यागशालिनी।
कार्यसिद्धिश्च महती तामेव स्यात्समाश्रिता ।।

(वही, १८/४३)

१३२. ऐक्ये सिद्धे हि राष्ट्रस्य कोऽन्यस्तद्दूषयिष्यति।।

(वही, १८/६६)

१३३. बलं बलवता चापि वर्धते सुतरां दृढम्।।

(वही, २०/६)

१३४. लोका अप्यनुशोचन्ति दृष्ट्वावस्थां दुरावहाम्।।

(वही, २०/५१)

१३५. अखण्डं भारतं वर्षं तिष्ठत्विति मनोरथा।।

(वही, २१/४२)

१३६. प्रतीकारो न हिंसाय हिंसाय युज्यते त्विह।

(वही, २३/२०)

१३७. अक्रोधेन जयेत्क्रोधमिति धर्मानुशासनम्।।

(वही, २३/२१)

श्रीमहात्मगान्धिचरितम्

१३८ [illegible]

अवतारदधर्मपथव्यवस्थितं विनिर्ममे नन्ततनुः पुनः पुनः।

(भारतपारिजातम् १/७)

१३९. भविष्ये प्रभविष्णूना परिपाट्या गुणागमः।

(वही, ३/२३)

१४०. शीघ्रता नैव कुत्रापि शोभाया आस्पद भवेत्।

(वही, ३/४२)

१४१. नाशयन्ति जनाः नूनं विष पीत्वा विषाशरम्।

(वही, ३/४६)

१४२. भव केन पराजित-।

(वही, ३/४७)

१४३. देशरक्षां पुरस्कृत्यं जगद्रक्षा च यो विभु ।
ईश्वरोऽत्र समायातः स कथं निष्फलो व्रजेत्।।

(वही, ३/५९)

१४४. मासाहारेण नश्यन्ति शीघ्रमेव व्रणादय·।

(वही, ३/६३)

१४५. बलं प्राप्य विदेशीय विजिगीषेव कारणम्।

(वही, ३/६७)

१४६. परन्तु देवेन विचारितं यत्कथं च तन्निष्फलता समेत।

(वही, ४/१५)

१४७. यो मानभंग सहते मनुष्यो वृथा प्रथित्यामिहि तस्य सत्ता।

(वही, ४/२५)

१४८. सहस्त्रधाऽप्यापचरितैः प्रयत्नैर्वार्या न रेखा परमत्र देवा।।

(वही, ४/३२)

१४९. तदाज्ञयैवैष उपक्रमो यत्।

(वही, ४/४४)

१५०. प्राणास्त्यजेयुर्न हि मानमीश्वराः।

(वही, ५/७)

१५१. शौर्यं तदेवातिमहत्प्रशस्यतां धत्ते यदल्पे न दधाति मूर्धनाम्।
दुष्टा न चेत्स्युर्ननु साधुपुरुषव्यक्तिः कथं स्यादथ मर्त्यभूतले।।

(वही, ५/९)

१५२. *अस्यां जगत्यां खलराजपाश्रिता दीनान्सदैव व्यथयन्ति दुर्जनाः।*
तस्मात्समुद्धारयितुं च निर्बलानीशात्पर· को दधते मनस्वितम्।।

(वही, ५/३१)

१५३. चिन्ताकुले चेतसि धीरता भृशं संजायते सत्पुरुषस्य सर्वदा।

(वही, ५/३६)

१५४. स्वार्थस्य राज्ये प्रसृते विचिन्तनं हानेः परार्थस्य न कुर्वते जना ।

(वही, ५/४४)

१५५. सत्यस्य हेतोर्वचनं गुरूणामपि प्रहेय भविता सदेति।

(वही, ६/३)

१५६. न प्राणिहिंसा च कदापि कार्या द्वेषा न कार्यः प्रतिपक्षभाग्म्य.।
प्रेम्णैव जेया निजवैरिणोऽपि सदा तदावासिभिरर्चनीयै.।।

(वही, ६/४)

१५७. हस्तेन वीतानि विनीतभावै ग्राह्याणि वासास्यखिलैः सदेति।

(वही, ६/११)

१५८ न जातिभेदा परमत्र मान्या निरर्थका हानिकराश्च सिद्धाः।।

(वही, ६/१६)

१५९ देवेन सर्वार्पितगौरवस्य तदेव रक्षा सतत करोति।।

(वही, ६/३४)

१६० पतनोन्मुखता गमिष्यतो मतिख्याकुलता भजेत नो।।

(वही, ७/१२)

१६१ जगदीशसमीहित नर. परमार्ष्टु न हि कोऽपि शक्तिमान्।

(वही, ७/४४)

१६२. हरिरेव रिपक्षियदि स्वजनकंचनबाहुभिर्निजै
परिपीडयितु न मत्पथप्रतिपन्न क्षमते पर क्वचित्।।

(वही, ७/५०)

१६३. समयं मनिमानुपस्थितं ह्युपययुके न च क समृद्धये।।

(वही, ७/५५)

१६४ या या प्रजा जगति वृद्धिपथं प्रपन्ना
सोढ्वैव दुःखनिचय बहुशोऽपि साऽपि।

(वही, ८/१७)

१६५. ये सत्यजन्ति समया स्वकृतां प्रतिज्ञां
हेया भवन्ति ननु देशनृपेश्वरेस्ते।

(वही, ८/१९)

१६६. ऊरीकृतस्य समयस्य निपालनार्थ
प्राणार्पणादिभिरपीह भवेन सज्जाः।

(वही, ८/२३)

१६७. य. स्वात्मशक्तिमनुसृत्य युधं वियत्ते-
स्यादेव तस्य नितरा विजयो महीयान्।।

(वही, ८/३४)

१६८. यो नो बिभेति मरणाद्दितास्मतत्व
स क्षत्रियः स्वजनिभूमिसुतः स एव।
(वही, ८/३५)

१६९. दुःखैर्विना न लभते मनुजोऽत्र कोऽपि
लोकोत्तर सुखमिति प्रथमं विचार्य।
(वही, ८/४०)

१७०. सत्यात्परो न परमोऽस्ति विशुद्धधर्मो
रक्ष्योऽत्र धर्मभगवानखिलैर्मनुष्यै ।
(वही, ८/४२)

१७१. ये धर्मरक्षणपरा न पराजयोऽन्ति
तेषा क्वचिन्न च विपत्ति समागमोऽपि।
(वही, ८/४३)

१७२. कस्मै स्वकल्याणवचो विशुद्धमन समेताय हि रोचते नो।
(वही, ९/३०)

१७३. साम्राज्यदोषानपनेतुकामैरस्माभिराशक्ति महाप्रयत्न
सम्पाद्य एवेति समागतोऽसौ कालोऽथ यूय भवनाथ सज्जाः।
(वही, ११/९)

१७४. अहिंसया साधयितुं च शक्यं तद्यत्र साध्य जनहिंसयाऽद्य।
(वही, ११/४९)

१७५. ज्ञात्रैव यद्दुःखमुपार्जितं स्यात्कथ च दुःखाय भवेत्तदद्धा।
समीहित काष्ठविकर्तनं चेद् दुःखाय न स्यात्तपतीति सत्यम्।।
(वही, १२/११)

१७६. स्वार्थान्धवृत्तिप्रचयार्चितानां प्राणार्पणेनापि विपत्पदैऽति।
महोपकारोऽपि कृतश्च कैश्चिन्मन प्रसादाय न बोधवीति।।
(वही, १२/१४)

१७७. यथाकथचिज्जनिजभूमि रक्षा कार्येति युष्माकमभीप्सितं स्यात्।।
(वही, १२/२५)

१७८. भंगोऽत्र शान्तेर्न कदापि कार्य सत्यम् सदा प्राणपणेन रक्ष्यन्।
(वही, १२/२७)

१७९. श्रेयः समाराधयितुं स्वजन्मभूमेरनेकं कुशला- मिलेयु-।
(वही, १२/३०)

१८०. प्राणाधिकं गौरवमेव हृद्यम्।।
(वही, १२/३९)

१८१. ये स्वार्थमेव परिपालयितुं विदन्ति

नो वा परार्थमिह ते परमा जघन्या ।।

(वही, १६/५)

१८२. यः सत्करोति वचसा प्यधमान्मनुष्या—
न्सोऽपि व्रजत्यधमतामिति निर्विवादम्।।

(वही, १६/१६)

१८३ नोदेति शक्तिरखिलेषु जनेषु तावत्
स्संवर्तिनु ह्यवनरेऽस्ति च सत्यमेतत्।

(वही, १६/२४)

१८४ कर्मकिञ्चन्न प्रोच्यते नैव कार्यमिह कैश्चिदेव तत्।
कैश्चिदप्यथ भयैः क्रियेत तत्कारकारच दुर्गतिं समाश्रयेत्।।

(वही, १७/१५)

१८५. कुतो बुद्धिरस्तु जडतानताडिये।।

(वही, १७/२२)

१८६. नैव पानरजनो विदारयेत्स्वार्थहानिनरस्य चोन्नतिम्।।

(वही, १७/४२)

१८७. विभेदभेद प्रवृत्तिरेवास्तु महाजनानाम्।

(वही, १८/११)

१८८. यत्स्वीकृतं ज्ञानपुरस्सर तद्ग्राह्यं पुनर्नैव कदापि विज्ञैः।

(वही, १८/३४)

१८९. यशोधने सन्ततसावधाने रक्ष्या स्वकीर्तिः सकलैरपायै ।

(वही, १८/५४)

१९०. जिह्वाकना तु सर्वेषामुपदेशो न दुर्लभः।
दुखाभोपदेष्टुं सा योग्यता किन्तु केवलम्।।

(वही, २०/१८)

१९१. कार्यं तदेव कर्तव्यं सर्वेषां यत्सुखप्रदम्।।

(वही, २०/४४)

१९२. क्षुधितस्तृषितो वापि ग्रामाद्ग्रामं वनाद्वनम्।
अटन्स्वराज्य कामोऽहं मृत्युमालिंगवास्म्यलम्।।

(वही, २०/६२)

१९३. निस्सन्देहं समायाता यूयं प्रेम पुरस्सराः।
परंतु परमैः स्वेष्टं विना दुःखेन चाप्यते।।

(वही, २०/९७)

१९४. अधमजनविशेषिस्वेच्छयापि प्रहारे—

रमि भवति निरुद्धं चेतदास्कन्दनं नः।।

(वही, २१/८७)

१९५. ध्वजो भवतु रक्षितोऽयमखिलैः स्वदेशाहितकामुकेर्नश्वरे।

(वही, २२/८७)

१९६. मृत्योः पूर्वं न कोऽप्यत्र सुखसाम्राज्यभोगिताम्।।

(वही, २४/५९)

१९७. अस्पृश्यत्वविनाशेन निष्कलंकं जगद्भवेत्।

(वही, २४/७६)

१९८. चरित हि शुद्ध मनसा तपः स्व नो
फलमादधाति सुपथि प्रयात्रताम्।।

(वही, २५/२५)

१९९. पर हितं न पश्यन्ति न श्रृण्वन्ति गतायुषः।
साध्वाचारं प्रपद्यन्ते नेव कालवंशं गता ।।

(पारिजातापहार, १/२२)

२००. शान्तो हि वियहन्ते नो कथितपापकदर्थितम्।

(वही, १/७५)

२०१. केनापि सार्धं सहयोगभंगो धर्मोऽस्ति सत्याग्रहिणामयं हि।।

(वही, २/३०)

२०२. स्पृश्यो भवेदेष न चैव एषा दुर्भावना सर्वजनैर्पोहया।
दुरोग एषोऽस्ति समाजहानि प्रदो नृवंशस्य महत्त्वघाती।।

(वही, २/४१)

२०३. यदेयमस्माकमुरुक्रमा भवेद्धा स्वतन्त्रता भगवत्कृपा बलात्।
यतेत विश्वस्य सुखाय शान्तये निजार्थसतुष्यति नो महाजनः।।

(वही, ३/१३)

२०४. क्षणे क्षणेदः परिवर्तते जगन्न जातु किंचित्सततं स्थिरं भवेत्।।

(वही, ३/१९)

२०५. गुरौ कदापि आक्रमणं न हि युज्यते।

(वही, ३/२१)

२०६. विरलं तिष्ठेदसतामसद्वचो खावुदीते न कुहा श्रयेस्थितं।।

(वही, ३/२९)

२०७. समे मनुष्याः समवेत्य भारतः सहैव सत्स्यन्ति यथा सहोदराः।

(वही, ३/३१)

२०८. क्षते. क्षतिः स्यादिति लोकगीतिका।।

(वही, ३/३३)

२२६. मानवीयः स्वभावोऽयं शोधितर्णऽघमर्णके।
कृतज्ञत्वप्रकाशार्थमुत्तमर्णोऽपि सोद्यम.।।
(वही, ८/८७)

२२७. अन्याय्यकृत प्रवणेषु राजता तथाविधं कृत्यमिदं कथ पुन।
विपरीतेष्वहितेष्वनुग्रहः प्रदर्शनीयो महता पथि स्थितै।।
(वही, ९/२)

२२८. विचार्य चार्वाचरिते कुतो भवेन्मनो मनागप्यनुतापसंहितम्।।
(वही, ९/११)

२२९. विवेकदृष्टिर्मदिनां न संभवेत्।।

२३०. न क्रीतदासैः विजयो भविष्यति।।
(वही, ९/२९)

२३१. न बाधके तिष्ठति मन्त्र औषधे ज्वलेच्छिखावान्व्यवसाय संचये।।
(वही, ९/३४)

२३२. देशं कालं विचार्येव कर्तव्य व्यवहृति. सदा।।
(वही, ११/३०)

२३३. स सुरो नरोपि नहि कुर्तुमीदृशं ह्रदयार्तिकृतप्रथममेतदासुरम्।।
(वही, १२/७)

२३४. न हि मानभंगगणना विचार्यते।।
(वही, १२/१३)

२३५. गलिताधिनेतिकवला वनेचरा अनुयान्ति मार्गमसता निषेवितम्।।
(वही, १२/१४)

२३६. अथ सैनिका अपि नोखिला. पशुधर्म सेवनरता गतत्रता.।
पवनाशना विषधरा न वा समा विपिणोपि दंशकुशला न चाखिला।
(वही, १२/२५)

२३७. कठिने ह्यनेहसि यदा हितैषिण कथमप्यल न परिरक्षणे तदा।
परमेश एवं कुरुते सहायता निखिल प्रविश्य जगदेक रक्षक।।
(वही, १२/२८)

२३८. यश्च स्वात्मबलं तथा प्रभुबलं स्वीकृत्य संजीवति,
श्रेयः सर्वमुपाश्नुते स नितरां सीदत्यथानीश्वरः।।
(वही, १२/४६)

२३९. शासनं परदेशानामत्यनिष्टं स्वरूपत.।
प्रजाक्षयकर चापि यद्यपि स्यात्सुशोभनम्।।
(वही, १३/६)

२४०. पारतंत्र्यं गतोऽस्माकं देशः स्वस्याद्य रक्षणम्।
संविधातुं न शक्नोति मानरक्षण पूर्वकम्।।
(वही, १३/८)

२४१. स्वातन्त्र्यं भारतस्याद्य सर्वथाऽपेक्ष्यते शुभम्।
(वही, १३/११)

२४२. पारतन्त्र्य महासर्पमहाविषविमूर्च्छिता।
भारतीभूमिरद्यानेस्वातन्त्र्यामृतद्रवम्।।
(वही, १३/१२)

२४३. यावद्विदेशि राज्यं स्यादत्र तावन्न तत्स्मृतिः।
विभज्यैव प्रजा राज्यं कर्तुमस्यास्ति पद्धतिः।।
(वही, १३/३५)

२४४. देशाधिकारः श्रमिकाणां कृषकाणां भवेदिति।
(वही, १३/४०)

२४५ स्वातन्त्र्यप्राप्ति मार्गेषु प्रसूनानि भवन्ति नो।
कण्टकेस्तीव्रशूकाग्रेरावृता सन्ति ते पुनः।।
(वही, १३/५६)

२४६ दावच्छक्त्यं प्रजाभि स्यान्नृप्य पन्थाः शमस्य हि।
(वही, १३/७५)

२४७. पराभवो निजारोणा धर्म एव नृणां मतः।
(वही, १४/१२)

२४८. येन हेतुना पतन्ति संकटानि मानवे,
नास्ति तैव तस्य तानि दूरतः क्षिपत्यलम्।।
(वही, १६/६)

२४९. अप्रतीत एवं सर्वथैव रोग आस्थितः,
स प्रतीयमानतो भयंकरो महान् खलु।।
(वही, १६/१७)

२५०. क्रान्तिधारासततम पतन्निमां समागतिः।।
(वही, १६/२९)

२५१. असत्यं वस्तु सदिति धारयतु बलादिव।
प्रयत्नः शोभते नैव सत्त्वित्वस्य कदञ्चन।।
(वही, १८/६४)

२५२. असियैषा बलं तेषां——————।
(वही, १८/९६)

२५३. शैघ्र्यं नैव विधातव्यं केषुचित्कर्मसु क्वचित्।।

(वही, १८/१५२)

२५४. मनसाखण्डशिछन्ने तस्मन्पाशे तु कर्मणा।
भूमिसात्कर्तुमुद्युंक्ते, स्वातन्त्र्यं याति स ध्रुवम्।।

(वही, १८/१६२)

२५५. अतः परं च दासोऽस्मि तवेति प्रकटाक्षरम्।
स्वामिनं वक्ष्यतीदं यः सोभयो निर्गतव्यथः।।

(वही, १८/१६३)

२५६. स्वातन्त्र्यं जीवनं प्रोक्तं पारतन्त्र्यं मृतिस्तथा।

कदाचिन्नैव जीवन्ति भीतिरीति पराहताः।।

(वही, १८/१८१)

२५७. मृत्युमालिंगितुं शक्तः समवाप्तु कला पराम्।
जीवितस्य विजानाति व्यपेताघलवय हि।।

(वही, १८/१८२)

२५८. युद्धेस्मिन्नास्ति कर्तव्यं प्रगुप्तं कर्म किञ्चन।
गोपयित्वा कृतं कर्म पापायात्र भवेदलम्।।

(वही, १८/२६१)

२५९. स्वतन्त्र्ये सज्जनैः कैश्चित्कर्म गुप्तं न किञ्चन।
क्रियेताथ क्रियेतापि पश्चात्तापेन दह्यते।

(वही, १८/२६३)

२६०. यावच्छक्यं निजां शक्तिमवियन्ब्रह्मचारिषु।
लभते नियतं सोऽत्र पवित्रं परमं पदम्।।

(वही, १८/२७३)

२६१. स्यादिदं लाघवायैव मित्राणा परिवर्जनम्।
न न्यक्कर्तुं समर्थोऽस्मि स्वन्तरात्मध्वनिं परम्।।

(वही, १९/५३)

२६२. काले विसंकटापन्ने मनुष्य प्रकृतौ स्थितौ।
सत्यं निरीक्षतुं शक्ता भद्रता भवति ध्रुवम्।।

(वही, १९/८१)

२६३. धिक्पराधीनवृत्तिम्।।

(वही, २०/४)

२६४. औषधं भवति न भ्रमाय हि।।

(वही, २२/१९)

२६५. स्वार्थसाधननिरन्तरारता· सर्वमेव वदितुं क्षमा सदा।

(वही, २२/४१)

२६६. हन्तभाग्यविपरीतता दधत्कः शिवाय कुरुतेत्र सत्क्रियाम्।।

(वही, २२/५३)

२६७. कथमंगीकृतं त्याज्य सतां विशदबुद्धिना।।

(वही, २३/२१)

२६८ सत्याग्रहं विजानाति न कदाचित्पराजयम्।

(वही, २३/४९)

२६९. सर्व एव भरस्तिष्ठेदुपक मविधातृपु।

परिणामम्नु सकलेरुपक्रान्तस्य भुज्यते।।

(वही, २३/९०)

२७० तन्निर्णयेनापि न संसदोम्या नीतौ कदाचित्परिवर्त एति।
हिंसा मता तदृशि दोषराशे सदैव पोषाय शिवाय नासौ।।

(वही, २५/२०)

२७१. शवा न कर्तुं स्वसता सहायता क्षमा इति स्यात्कथनाशयो ।
अनेकदेशान्परतन्त्रतागुणान्निबध्य कोपीह न नीतिमान्भवेत्।।

(पारिजात-सौरभम्, १/६८)

२७२. अनवरतं य इहात्मलाभलोभा—
श्चरति किमप्यथवा ब्रवीति सर्वम्।
भवति तदा नाविपादहेतु·
प्रभवति तस्य सुखाय शान्तये नो।।

(वही, १/८३)

२७३ न दुःखिनो ज्ञानपरम्परा भुज·।।

(वही, २/१)

२७४. सर्वकंप हि दैवस्य को बाधते समीहितम्।।

(वही, ३/११)

२७५. मनो हि यस्यास्ति नियन्त्रितं पर रजा विहीन च कदाप्यसमौ न हि।
निरामयत्वाच्च्युतिमेत्य संपतेदृथवाधिकारे महत्या महाबल·।।

(वही, ४/१६)

२७६. परं वियोगानल इष्टबान्धवान्दहत्यजस्त्र नियतेति पद्धतिः।।

(वही, ४/२८)

२७७. पवित्र भावेन समर्चितो महाजन फलं यच्छति देवतासिता।।

(वही ...)

२७८. हत्यतो यसता हि सता शिव यदि न लभ्यत ईहितमात्मन.।
किमपि तत्र न लोक्यत ऊर्चितं परिशुचं कटु बीजमतो हिय ।।
(वही, ५/४)

२७९. सफलतापि च निष्फलतापि चप्रभवतो मितये न कदाचन।
प्रयत्नस्य जनस्य हि कस्यांचित्रिखधिह्यथ सास्तु सहावधि.।।
(वही, ५/५)

२८०. परमनिष्ठुर मानस मानवा अचिरतो न भवन्ति दयालव ।
परमयत्नभर समपेक्षित. फलनिन्घमभीप्सितमालप्स्यते।।
(वही, ५/८)

२८१. नास्ति कोऽपि समयो विसकटस्तस्य यो न विजिहिसते परान्।
(वही, ६/१६)

२८२. ते भवन्तु पुरुषा अथ स्थियो मार्गयन्तु भगत्सहायताम्।
एक एव जगदीश्वरो महान्सर्वजीवसुहृदस्ति निर्मल ।।
(वही, ६/१७)

२८३. जाड्यतो भवति चेत्समागम स्वीय बन्धुषु विपत्पयोनिधे ।
रोधनीय इह लोखिलैर्जनैरेष एव महता महान्गुण ।।
(वही, ६/५७)

२८४. येषा तदन्त करणम् पवित्र त एव सशोधयितु परेषाम्।
मनोहि मूक्ष्म दुरघ क्षमन्ते नान्य. स्वय सन्तमसावलीढ ।।
(वही, ८/७)

२८५. सर्वान्तरात्मा परमात्मदेव शक्नोति बोद्धु जनमानसानि।।
(वही, ८/१८)

२८६. नो गौरवं चिरतरार्जितमेतु नाश
न ख्यातकीर्तिकलिका मलिनास्तु सद्य ।
देशस्य तद्धि सकलै सुविचार्य कार्य
पन्था अयं सुकृतिना च यशोधनानाम्।।
(वही, १०/३०)

२८७. हत्वा द्विपद्भ्रणमिहास्ति जिजीविषाचे
च्छक्नोति जीविनुंसुमपापमयं न कोपि।
मृत्वा प्रसन्नमनासारिहितानुबन्धी,
लोक समर्जयति पुण्यतम नितान्तम्।।
(वही, १०/३१)

२८८. आर्यत्वमेवेदमुदारभावैर्मिस्त्रायित चेद्द्विपता कुलेषु।

दुष्टेषु दुष्ट त्वमुदाहरद्मिर्महर्षिमार्गादपहीयते हि।।

(वही, ११/७)

२८९. अन्याय्यमार्येण कदापि कर्तुं शक्यं विरोधे हि पूर्वजानाम्।
स्वार्थस्य सिद्धौ रघुनन्दनीयपादाब्जयुग्मं सततं स्मरद्भिः।।

(वही, ११/८)

२९०. शत्रुष्वपि प्राणपरायणेषु कार्या दयेत्येव मनुष्यधर्मः।

(वही, ११/१८)

२९१. धर्माय धर्मोऽत्र निषेवणीयो नान्येन केनापि न कारणेन।।

(वही, ११/२०)

२९२. नासावुपाय बलिरोधनार्थं हिंसा कलेवृद्धिकरी मतास्ति।
दोषेण दोषो न भरेदुदस्य पकेन पक व्यपनीयते नो।।

(वही, ११/२७)

२९३ क्षान्ति विभूषा बलिनामपूर्वा न निर्बलाना शरण कदाचित्।

(वही, ११/३८)

२९४ राज्य विदेशीयमसह्यमेव।

(वही, ११/५३)

२९५. अस्थीनि देहस्य ममेह युष्मद्भुवो पतेयुर्यदि वान्यतोऽपि।
चिन्ता न मे चुम्बति चित्तवृत्ति सर्वत्र मे भारतमूर्तिरेव।।

(वही, ११/७६)

२९६ भवे भवेदेकजनोऽपि सत्यभाग्यभवेद्भवे तावदजस्त्ररक्षणम्।

(वही, १२/१४)

२९७ अनुकार्या हि सर्वेषाम् सद्गुणा मनीषिभि.।
दोषाः सर्वे परित्याज्या मनोमालिन्यहेतव.।।

(वही,१४/३४)

२९८. मृत्युरेवान्तियं मित्रं मृत्युदुःखविनाशक।
सत्कार्यश्च ततो मृत्युर्व्यर्थमेव तनो भयम्।।

(वही, १४/१४९)

२९९. जन्मनो मरणाच्चापि यावज्जन्तुर्न मुच्यते।
जीवन्निव मृतोऽपि स्यात्कार्यं मिद्धया असंशयम्।।

(वही, १४/१९६)

३००. मरणं न मानस्ति दुखदं शरणं तत्परमं विवेकिनाम्।
मम जीवितहेतवे मनागपि चिन्ता न निषेव्यता बुधैः।।

(वही, १५/१५)

३०१. न दया भवनामपेक्षिता परमेशोऽस्ति सहायको मम।

सकलाः सुहृदो भवन्तु चेदबला· केवलमेव रक्षकः।।

(वही, १५/२१)

३०२. गुणवद्धृदये गुणाः पदं निदधीरन्नितरा न किञ्चन।
इह चित्रमिति प्रसन्नता गुणसग्राहकता हि बन्धव·।।

(वही, १५/४०)

३०३. नियतौ विधिना विलेखितं निपुणोपि प्रतिवर्तयेत क·।

(वही, १७/१८)

३०४. विधुरिच्छति कर्हि चित्र हि द्युमणे कापि वियोगसन्ततिम्।

(वही, १७/१९)

३०५. प्रकतेरस्ति हि दुर्निवार्यता।।

(वही,१७/२६)

३०६. श्रुति सिद्धान्तचता न भिन्नता।।

(वही, १७/४३)

३०७. महता मृत्युरपीह सत्क्रियः।।

(वही, १७/५३)

३०८. अजरस्य यतो विनश्वरं न हि सतिष्ठन आशु नश्यति।

(वही, १७/६३)

३०९. चलितान्सुपथो निरीक्ष्य को निजशिष्यात्र हि खद्यते गुरुः।

(वही, १८/८१)

३१० का भीतिः सुहृदो भवेत्।

(वही, १८/३७)

श्रीगान्धिचरितम्

३११. स्वधर्मपालनं कार्यं प्राणै· कण्ठगतैरपि।
कल्याणं जगतान्चेति विद्धि मानवताफलम्।।

(वही, २/३२)

३१२. रत्नैः रत्नाकरः प्रीत्याऽपूजयन् पुलिनार्पितै ।।

(वही, २/४९)

३१३. भेषजं शमयेद् रोगं न च मृत्युमुपस्थितम्।।

(वही, २/१०३)

३१४. कण्टक कण्टकेनैव जनैरुद्ध्रियते सुखम्।
विपत्त्यापि विपत्त्याशु शमयतीति विभाव्यताम्।।

(वही, २/१२४)

३१५. जलधरे बहुवर्षति दुर्दिने भवति यस्य गर्जितमिह विघ्निता।

(वही, ४/६)

३१६. शरीरमेतत् खलु सर्वसाधनम्।

(वही, ५/५)

३१७. ततो गुणानामशितानुलक्षणः समुद्भव. सा प्रकृतिर्बलीयसी।।

(वही, ५/२२)

३१८. अतोहि रत्नेन च रत्न सगमः प्रमोदाय शरीरिणा मतः।।

(वही, ५/५३)

३१९. स्वातंन्त्र्य सदृशं नास्ति सुख किमपि भूतले।

(वही, ६/३०)

३२०. महात्मना संगतिरेव लोके, सर्वाधिकामीष्टप्रदात्री।
यत्सेविन सन्तमसं निरास्य, प्रदीपवद् ज्ञानमुदेति जन्तो·।।

(वही, ७/१८)

३२१ सहस्त्राशु विना लोके दिनकृत को हि कथ्यते।।

(वही, ८/४४)

३२२ लोकोपकारव्रतमेव धीमान् श्रेष्ठ· सता पुण्यतमोहि धर्म।।

(वही, ८/१९५)

३२३. करैरिवार्कस्य तम· प्रकाण्डं किं स्यादकार्य तितस्वानाम्।।

(वही, ९/६)

३२४. परार्थ वृत्ति परमं सुख सेत्येवं सता गूढरहस्यमस्ति।।

(वही, ९/७)

३२५. शत्रौ च मित्रे च समा प्रवृत्तिर्दयालुता चापि न पक्षपात·।
शरण्यतापन्नजनेष्वतीद महात्मना सौम्यनिसर्गसिद्धम्।।

(वही, ९/८)

३२६. पूर्व नरत्वमिह दुर्लभेव लोका·,
बह्वीषु योनिषु सतीषु पुरार्जितेन।
तत्प्राप्य पुण्यनिवहेन विवेकमूलं,
धर्मेण साधु सफलं सकलं नराणाम्।।

(वही, १०/१३)

३२७. न सत्याग्रहसम्मुखतस्ता शक्ति हिं काचिज्जगतीतलेस्यात्।।

(वही, १२/४९)

३२८.......................मक्त्येकवश्या हि भवन्ति सन्त.।।

(वही, १४/२)

३२९. सुदुर्बलान्नो बलिनो हि लोका प्रपीडयेयुर्मनसापि केचित्।
परस्त्रियो मातृवदेव पूज्या ततोऽन्यथा दण्डविधिर्नराणाम्।।

(वही, १४/२७)

३३०. धर्मेण जीवनं लोकाः सार्थकं देहिना मतम्।
तती विहीनवृत्तीनां प्राणिनां पशुता ध्रुवम्।।
(वही, १५/१५)

३३१. लोककोपानलश्चण्डो न प्रशाम्येत् कदाचन्।।
(वही, १५/११२)

३३२. पारतन्त्र्य न सोढारो निजगौरवमानिनः।।
(वही, १५/१३९)

३३३. स्वराज्यदानमैक्येभ्यः शुभोदर्क विभाति नः।।
(वही, १५/१४३)

३३४. कार्य शुभं विघनशतैवश्य विहन्यमानं भवनीति दृष्टम्।।
(वही, १६/१४)

३३५. रत्नं यथा दुर्लभेव पूर्वं प्राप्तस्य रक्षा कठिना ततोऽपि।
तथा स्वराज्य दुखापमेतत् रक्षास्य गुर्वीति विभावनीयम्।।
(वही, १६/५२)

३३६.विनेश्वर कः प्रभवेन् विधातुं सृष्टि मनसोप्यगम्यताम्।
(वही, १६/५७)

३३७. सुजन्मना स्यात् परमार्थ सिद्धिश्चान्ते च मोक्षस्त्वपुनर्भवाय।
(वही, १६/६३)

३३८. सत्यं त्वहिंसा परमोस्ति धर्म स्वय न हिंस्यात् प्रतिहिंसको वा।
सत्वास्तु हिंसाभिरुचीन् जिघासून् वीक्ष्यात्मरक्षा क्षमया विदध्यात्।।
(वही, १७/५५)

३३९. पुंसा क्षमा नाम महास्त्रमु त्तम् शान्तात्मना शेवधिरक्षयिष्णु ।
तपः पवित्र च तपस्विना सा मोक्षार्थिना मोक्षपथं सुदिव्यम्।।
(वही, १७/५६)

३४०. धर्मः साक्षाद् हरेमूर्तिः सर्वव्यापी सनातन ।
केवलेन तु शब्देन भिदा न क्रियमानयोः।।
(वही, १८/४५)

३४१. अवश्यंभाविभावस्तु परिहर्तु न शक्यते।
(वही, १८/४८)

३४२. ततो जन्मतता मृत्युर्मृताना जन्म जायते।
जन्ममृत्यु हि लोकाना भवन- सुव्यवस्थितौ।।
(वही, १८/४९)

३४३. मरणं ननु जन्मिना ध्रुवं जनुरप्यस्ति मृतात्मना पुनः।
(वही, १९/३९)

३४४. भवतीह नृणां यदा-यदा परमार्तिस्तु विमुक्तदा स्वयम्।
धृतमूर्तिरसौ कृपानिधि जगदेतत् परिपाति सर्वदा।।
(वही, १९/४३)

३४५ न हि शोषयितुं महार्णवं किमु शक्तो वनपर्णनाशकः >
(वही, १९/४९)

श्री गान्धिगौरवम्

३४६ मेधाविभिर्विरचितं न रिच्यते।।
(वही, १/११)

३४७. ग्राह्या सुविधा लघुतोऽपि नीतिः।
(वही, १/२५)

३४८ रोगी यदिच्छेद्दहनकारिष्य, तदेव दद्यात् ननु वैद्यराज ।
(वही, १/२६)

३४९ भविष्णु वृक्षस्य तु पर्णपुञ्ज मुचिक्कणं स्यादिह कोऽपि शंका।
(वही, १/२७)

३५० पर शुभे कर्मणि विघ्नरेखा आयात्यवश्यम् प्रकृतिः पुराणी।
(वही, १/२८)

३५१ बलीयसी केवल ईश्वरेच्छा,
(वही, २/२८)

३५२ सत्यवादी सदा सुखी,
(वही,२/६६)

३५३ सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्य ।
(वही, २/७०)

३५४. "क्षमा धनु करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति"।
(वही, ३/१४)

३५५ "अस्मिन् विधौ ते पशवो हि दक्षाः।
रत्नावृन्ता मनुजास्तु मूढा ।"
(वही, ३/२१)

३५६. "यो ब्रह्मचारी मुनिवृत्ति लीन
स पुष्टदेहो भवनाद् गरिष्ठ ।"
(वही, ३/२५)

३५७ यो भाविघ्न हृदये दधाति त वेत्तु नारायणमेव नान्यम्।
(वही, ३/२८)

३५८. "अहो मन्यमेतन्न ते वाव्रजन्ति

सुमार्गे च तस्मिन् गतो योह्यपूतैः।"

(वही, ३/५३)

३५९. "सुसोपान संघे गिरन्तो जना ये
कथंकारमेते सुरक्षा लभन्ते।"

(वही, ३/७०)

३६०. "कृत्यं शोध्यं कारकं नैव शोध्यो।"

(वही, ४/१८)

३६१. सत्यं सुतास्तेऽनुसरन्ति ये गुरुम्।

(वही, ४/४६)

३६२. न ह्येकदेकेति नरैः प्रतिज्ञा
त्याज्या भवेज्जीवनमेव मोच्यम्।

(वही, ५/३७)

३६३. शान्तेरनादर परो मनुजो कदापि
सत्याग्रहस्त करणे सफलो न भूयात्।

(वही, ५/४३)

३६४. "जयो ह्यस्मदीयः सदा शान्तिमध्ये।"

(वही, ५/८८)

३६५. शिक्षा तु येभ्यो ह्यभिरोचते सदा
तेभ्यः प्रदेयानहि वानरादिषु।

(वही, ५/१०१)

३६६. मनस्येव रुग्णे शरीरन्तु रुग्णं
मनो यस्य तुष्टः स तुष्ट सदैव"।

(वही, ५/१३८)

३६७. दिव्यं चक्षुर्भारते वेदरीतिः।

(वही, ७/५३)

३६८. पतिव्रताना पतिसेविकाना
पत्युः समक्षं मरणं प्रशस्तम्।

(वही, ७/५५)

३६९. अत्रापि हिंसा यदि जागृतास्ति
कुत्रापि तिष्ठेत्किमु शान्तिरार्या।

(वही, ८/३०)

खण्डकाव्य

श्रीगान्धिचरितम्

३७०. श्री शारदागीतयशः प्रशस्तिर्देशश्चिरं भातु स भारताख्यः।।

(पृ.सं.-१)

३७१. वेद-प्रभा-भासुर-भुसुरालिर्देश: स नो मंगलमातनोतु।।

(पृ.स.-२)

३७२. "अहिंसया सत्य बलेन चैव
कार्याण्य साध्यान्यपि यान्ति सिद्धिम्।।"

(पृ.सं.-३)

३७३. "सर्वोपसंस्कार संयुक्ता भूमिर्दिव्यफल प्रदा"।

(पृ.सं.-१५)

३७४. स्वल्पेन किं नहि धनेन भवन्ति तृप्ता

सन्तो विधर्मरहितेन सुवन्दितेन?

(पृ.सं.-२२)

३७५. आचारहीन-जन-जीवन-पावनाय,
वेदोऽपि नार्हतितमामिति वत्स : विद्धि।

(पृ.सं.-२३)

३७६. जानाती को वा जनकर्मबन्धे
को वा विजानाति विधेर्विलासम्।

(पृ.स.-४१)

३७७. बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा,

(पृ.स.-५१)

३७८. का गौरकृष्णात्वकृतेह भीति:?
सर्वेषु धात्मा नियत: स एक।

(पृ.सं.-६१)

३७९. "पादाहतं मूर्धनि याति धूलेजलिम"।

(पृ.सं.-६९)

३८०. "सोत्साहताऽऽस्ते विजयैकसेतु:।"

(पृ.सं.-७६)

३८१. सिंहो यदिस्याच्चिरनिद्रितो न,
को नाम तस्याभिमुखं प्रयाति?।।

(पृ.सं.-७९)

३८२. सत्यं श्रमस्या सकलार्थ सिद्धि
दिशन्ति धीरा ननु वीर धुर्या:।।

(पृ.सं.-८०)

३८३. भवतु-भवतु भूयो भारतो रामराज्यम्।

(पृ.सं.-१११)

राष्ट्ररत्नम्

३८४. "नोचोच्चभावैकदृशो हि सन्तः"।

(पृ.सं.-३)

३८५. लोकेषणातो विरतो महात्मा, राष्ट्रैषणा-पूरतमानसोऽभूत्।।

(पृ.स.-१८)

३८६. स्वतन्त्रता सर्वसुखस्य मूल पराश्रयो दुःखकर सदैव।

(पृ.स.-२५)

गान्धिगौरवम्

३८७. यावत् प्रवृत्तिरिह हा विषयेषु लोके
तावद् भवेज्जगती नो जनता सपर्या।

(पृ.स.-५)

३८८. हास्यमि नो भारतधर्ममार्ग कृत्वा निवासं परकीय देशे।

(पृ.सं.-१२)

३८९. चारित्र्यवन्तो हि न कुत्र दृष्टा-
सम्प्राप्तलक्ष्याः पुरुषा धरित्र्याम्।।

(पृ.सं.-१३)

३९०. मातेव देशक्षितिरस्ति पूज्या छेद्या तदीया परतन्त्रतान्द्।।

(पृ.सं.-४३)

३९१. प्रेमैक्य बन्धुत्व गुणान् भजन्तः
सत्साहस शौर्य शुभं श्रयन्त।
उत्साह शुभा च धृतिं व्रजन्तः
जन्ये भवन्तोऽवतरन्तु सन्तः।।

(पृ.सं.-४४)

३९२. अस्पृश्यताया यदिनो विनाशो
नृभिः कृतः क्षिप्रतयेव राष्ट्रे।
तदा न पश्येत् स्वहितं कदापि
वसुन्धरेयं मम भारतीया।।

(पृ.स.-६५)

३९३. न स्वच्छताकृन्मनुजोऽस्ति पापी
कार्या घृणाधेषु च नो श्वपाके।।

(पृ.सं.-७०)

३९४. मातेव रक्षति पितेव हिते नियुंक्ते

चेतो विनोदयति चन्द्रमुखी प्रियेव।
नि.संशयं मित्रममास्त्यहिंसा
कस्मात् भजन्ति न जननीमहिंसाम्।
(पृ.सं.-७४)

३९५. हिंसास्ति घोरं दुरितं धराया
किञ्चास्त्यहिंसा सरसं हि पुण्यम्।
धर्मोऽस्त्यहिंसा परमो धरित्र्या. . .. .
(पृ.सं.-७५)

३९६. एतद्धि सत्य बिना बिकामं नारीजनाना भरतावनीयम्।
(पृ.स.-८१)

३९७. राष्ट्रस्य हत्येव विभावनीया श्वेतागमाग्रा व्यवहार एव ।
(पृ.सं.-८३)

३९८ कर्तुं न पारयति यत्र धन हि कार्यं
तत्र क्षमो भवति सद्गुण एव शीघ्रम्।

३९९ आलस्यमस्ति बहुदोषकरं—
(पृ.सं.-८८)

४००. गच्छेच्छरीरं निवसेद् वर वा
मया तु धर्मो भुवि सेवनीय ।
(पृ.सं.-११४)

४०१ जयतु-जयतु गान्धी विश्वन्धो महात्मा।
(पृ.सं.-१२५)

४०२ श्रयतु-श्रयतु चित्ते लोकमत्तत्पथ सत्यनिष्ठम्।
(पृ.स.-१२५)

४०३. वसतु-वसतु चित्ते राष्ट्रभक्तिर्नराणाम्।
(पृ.स.-१२५)

४०४. वहतु-वहतु शश्वद् विश्वबन्धुत्व गंगा।
(पृ.सं.-१२५)

गान्धि-गाथा

४०५. सुजन-कुजन सगात को न नाम संयुक्तः।
(पूर्वभाग, प.सं.-३७)

४०६. स्वस्ति सकल मनुजेभ्य उदग्र मत्यार्थ विच परिणाशयतु.
जनो-जनो भ्रातृत्व-भावना भृत सुखं परिपश्यतु।
उच्च-नीचता-भित्तिन्त्रुटयतु नीतिः सुपथं नयन च.

गान्धि-समीहित-रामराज्य-मय भारत राष्ट्रं जयतु च।।

(वही, पृ.सं.-२४५)

४०७. गान्धि-वचन मुक्तावली,
जन-जन गले चकास्तु।
मधुकर शास्त्रि निगुम्फिता,
विश्वशान्ति सुखदास्तु।।

(उत्तरभाग, पृ.सं.-१०९)

श्रमगीता

४०८. निरुद्यमं निरुत्साहं समाजं निष्परिश्रमम्।
नैवोद्धारयितुं शक्तः साक्षाद् ब्रह्माण्ड नायकः।।

(श्लोक सं.-२४)

४०९. आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुः आत्मैव रिपुरात्मन ।
भगवानपि लोकेऽस्मिन् बन्धुरात्मावलम्बिनाम्।।

(श्लोक सं.-२५)

४१०. आलस्याभिभवाद् यानि न भजन्ते परिश्रमम्।
तानि शीघ्रं विनश्यन्ति राष्ट्राणि सुमहान्त्यपि।।

(श्लोक सं.-२७)

४११. श्रम एव मनुष्याणां कारणं हित सौख्ययोः।

(श्लोक सं.-४८)

४१२. जयन्ति ते कलावन्तः सन्तत श्रम नैष्ठिकाः।
येषां अद्भुतनिर्माणैर जगदेतत् अलंकृतम्।।

(श्लोक सं.-६९)

४१३. साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हि सः।

(श्लोक सं.-८४)

४१४. स्वर्गता अपि जीवन्ति कीर्तिरूपेण ते भुवि।
चमत्कृता हि यैर्लोका अविश्रान्त परिश्रमैः।।

(श्लोक सं.-९०)

४१५. न क्रमागत वित्तेन न जात्या सुप्रतिष्ठया।
पुरुषः श्लाघ्यतां याति स श्लाघ्यो यः परिश्रमी।।

(श्लोक सं.-९१)

४१६. श्रमो हि परमो धर्मः शाश्वतः सार्वलौकिकः।।

(श्लोक सं.-९५)

गद्यकाव्य

बापू

४१७. "सत्यं स्वतः सामर्थ्यशालि भवति कदापि नात्र प्रमदितव्यम्"।

(वही, पृ.सं.-८)

४१८. सत्यं प्रति निष्ठावता कृते मौनं शक्तिशालि शस्त्रं भवति"।

(वही, पृ.सं.-११)

४१९. सवैरं क्य विधेयम्।

(वही, पृ.सं.-२५)

४२०. सत्याग्रह आत्मशुद्धि विधेयम्।

(वही, पृ.सं.-२५)

४२१ सत्याग्रहः आत्मशुद्धिमपेक्षते।

(वही, पृ.सं.-३१)

४२२ वैधेयार्थे स्वराज्यसिद्धे परिकल्पनायां शान्तिमार्गोऽपि निवेशित।

(वही, पृ.स.-३२)

४२३. शिक्षायामधिकं महत्त्वमावश्यकत्वं च हस्तशिल्पस्य वर्तते।

(वही, पृ.स.-५४)

४२४. अहमस्मिन्नुद्योगे भवता नेतृत्वभारं वहामि। किन्तु भवता
विनितसेवकनदैवेतस्त्वीकरोमि, न तु सेनाप त्येन शासकतया वा।

(वही, पृ.सं-६०)

४२५. विरोधिना तुष्टये देशस्य विभाजनमभवत्।

(वही, पृ.सं.-७०)

४२६. प्राचीनकालादेव समागता सनातनीं नित्य नूतनां चास्माकं
मातृभूमिं भारतवर्षाख्यां प्रति सादरं श्रद्धाञ्जलिं समर्पयाम.।

(वही, पृ.सं.-७२)

४२७. धर्मान्धता जातीय विद्वेषश्च जनेषून्मादं समुत्पादयत्।।

(वही, पृ.सं.-७६)

गान्धिनस्त्रयो गुरुवः शिष्याश्च

४२८ अहं निज परो वेत्ति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

(वही, पृ.सं.-११)

४२९. "भद्रं पश्येमाक्षभि"।

(वही, पृ.स.-३१)

४३०. ब्रूते प्रियं योत्र वचो विमूढधीर्नतद्वच: स्याद्विषमेव तद्वच ।

(वही, पृ.सं.-३४)

४३१. नासदसीन्नो सदासीत्तदानीम्।

(वही, पृ.सं.-३५)

४३२. सुलभा· पुरुषा राजन् मततप्रियदर्शिन ।
अप्रियस्य न पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभ.।।

(वही, पृ.सं.-३५)

४३३. बाला· राष्ट्रनिधयो भवन्ति।

(वही, पृ.स.-४१)

४३४. ऋषि देशोऽस्ति भारतवर्ष ।

(वही, पृ.स.-५२)

४३५. भारतवर्ष लघुदेशो नास्ति।

(वही, पृ.सं.-५८)

चारुचरित चर्चा

४३६. चित्ते वाचि क्रियाया च साधूनामेकरूमता।
उदारचरिता नान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

(महात्मा गान्धी शीर्षक से, पृ.सं.-१३३)

४३७. न्यायात् पथ पविचलन्ति पदन धीरा·।

(वही, पृ.स.-१३५)

४३८. ते साध्वो भुवन मण्डल मौलिभूता ये साधुना निरुपकारिषु दर्शयन्ति।
आत्मप्रयोजनवशीकृत खिन्नदेह पूर्वोपकारिषु खलोऽपि हिंसानुकम्पा।।

(वही, पृ.सं.-१३५)

सत्याग्रहोदयः

४३९. अहिंसैव परो धर्मो हिसा गर्हणमर्हति।

(दृश्य २, पृ.स.-३)

४४०. आत्मवत् सर्वभूतेषु वर्ततेति वचो हितम्।
अहिंसामत् एवाह गान्धि धर्मपरायणम्।।

(वही, पृ.सं.-५)

४४१. पर्वतेन समास्कदन्नुरभ्रो नाशमृच्छति।
विरुध्यमानो बलिना दुर्बलो हन्त हन्यते।।

(वही, पृ.सं.-५)

४४२. पिव, विहर, रमस्व.... ....।

(दृश्य ३, पृ.स.-९)

४४३. सत्यमेव परो धर्म सत्ये लोक· प्रतिष्ठितः।

(वही पृ.सं.९)

४४४. "सर्वे धर्मा राज्यधर्म प्रतिष्ठा"।

(वही, पृ.स.-१४)

४४५. प्राणैरपि सदा रक्षेत् स्वातन्त्र्यं भारतावनेः
मृत्युरेव पारतन्त्र्यं स्वातन्त्र्यं ममृत खलु।

(वही, पृ.स.-१५)

४४६ यदा तु भारतभूमिरन्याक्रान्ता विषीदति।
तस्या पुत्रान् विदेशेषु क· समानेन पश्यति?

(वही, पृ.स.-१७)

४४७. साहस परमं श्रेय· संचार· परमफलम्।

(वही, पृ.स.-१७)

४४८. सत्य ज्ञानमनन्त ब्रह्म।

(दृश्य ७, पृ.स.-२९)

४४९ यदि मानव पुण्य कर्तुमेव न पारयति तस्य सद्गतिरेवनभवेत्।

(वही, पृ.स.-३३)

४५० "सत्यन्नास्ति परोधर्म "सत्यमेव जयते"।

(वही, पृ.स.-३६)

४५१ .. . . .सघे शक्ति कले युगे।

(दृश्य ८, पृ.स.-४१)

४५२. प्राशुस्वाता महावीरा क्षमा तेषा विभूषणम्।

(वही, पृ.सं.-४२)

४५३. भार्या रिक्त गृहं शून्यमात्मा तुच्छो व्यये व्यथा।
व्याधिकरणं या त्वा को सुखनाममेधते।।

(वही, पृ.सं.-४३)

४५३. "अद्वेष्टा सर्वभूताना मैत्र करुण एव च"।

(दृश्य १०, पृ.सं.-६१)

४५५. सम शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयो ।

(दृश्य १०, पृ.स.-६१)

४५६. "निर्बलानामायुध सत्याग्रह"।

(दृश्य १२, पृ.सं.-७५)

४५७. गंडस्योपरि स्फोट इव।

(दृश्य १३, पृ.सं.-८१)

४५८. "यस्य दृढस्तस्य महिमा"।

४५९. यावद्भूमिरियम् तिष्ठेद् यावद्भानुर्विराजते।
यावद् सत्यमिदं भाति तावद् गान्धिर्महीयते।
(दृश्य १४, पृ.सं.-८७)

(गान्धि विजय नाटकम्)

४६०. यश्चपेटां प्रहरतातं दण्डैस्तस्य प्रतिक्रिया।
(प्रथमोऽकं., श्लोक सं.-४)

४६१. चारैः पश्यन्ति राजानः चक्षुर्भ्यामितरे जना ।
(वही, पृ.स.-३)

४६२. कूपे वा गिरितो विषे ण दहने नो दर्शयिष्ये मुखम्।।
(वही, श्लोक सं.-५)

४६३. "सत्यमेव जयते नानृतम्"।
(वही, श्लोक स.-६)

४६४. अनिर्वचनीये हि सत्यप्रभाव .
(वही, पृ.सं.-७)

४६५. अनुताप एव परमं प्रायश्चित्तम्।
(वही, पृ.स.-७)

४६६. मिथ्यात्मनिन्दा धिक्कार देशदौरात्म्य दुर्गतिम्।
श्रुत्वा नौद्विजते कस्य चेत, शोध चिकीर्षया।।
(वही, श्लोक सं.-७)

४६७. निरस्त्रेष्वथ शान्तेषु प्रहारः सर्वतोमुखात्।
व्यथायि यत्र तच्छौर्य क्रौर्यमेवोच्यते बुधै.।।
(वही, पृ.स.-५)

४६८. सत्योक्ति को नाम न प्रमाष्यति।
(द्वितीयो ऽकः पृ.सं.-१६)

४६९. सर्वदा सत्यस्यैव जयः।
(वही, पृ.स.-१८)

४७०. "शठे शाठ्यं समाचरेत्"।
(वही, पृ.स.-१९)

४७१. नहि मूषिकास्त्रेणापि मार्जारो वध्यते।
(वही, पृ.स.-२१)

सन्दर्भ

डॉ. किरण टण्डन, महाकवि ज्ञानसागर के काव्य का अध्ययन,
पृ.स.-४३९

(३०) काव्य मीमासा, राजशेखर, केदार नाथ झा, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना-४ सं. द्वितीय, १९६५।

(३१) काव्यादर्श, महाकवि दण्डी, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, स. द्वितीय, १९७१।

(३२) काव्यालकार-भामह, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, सं. प्रथम, १९२८

(३३) काव्यालंकार, रुद्रट, रामदेव शुक्ल, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, सं. प्रथम, सं. २०२३।

(३४) गान्धी अभिनन्दन ग्रन्थ, सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, सं. चतुर्थ, १९५८।

(३५) छन्दोऽनुशासन, आचार्य हेमचन्द्र सूरि, अधिष्ठाता सिन्धी जैन शास्त्र शिक्षापीठ, भारतीय विद्याभवन, बम्बई, स. प्रथम, १९६१।

(३६छन्दोलकार परिचय, सम्पा. टीकाकर्त्री, डॉ. किरण टण्डन, स.-प्रथम, १९७९।

(३७) छन्दो मञ्जरी, श्री गंगा दास, पं. हरिदत्त शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस वाराणसी, स.-षष्ठ,२०२७।

(३८) छन्द शास्त्रम्, श्री पिंगल नाग, परिमल पब्लिकेशन्स, ३३/१७ शक्तिनगर दिल्ली-११०००७, सं.-प्रथम, १९८१।

(३९) तिलकमञ्जरी एक समीक्षात्मक, अध्ययन, डॉ. हरिनारायण दीक्षित, भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली-न्यू जवाहर नगर, बैंगलो-रोड दिल्ली-११०००७ स. प्रथम, १९८२।

(४०) दशरूपक, धनञ्जय, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, सं. चतुर्थ, १९७३।

(४१) ध्वन्यालोक, आनन्दवर्धन, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, स.-तृतीय, २०२४।

(४२) नाट्य दर्पण, रामचन्द्र गुण चन्द्र, आचार्य विश्वेश्वर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली। सं.-प्रथम, १९६१।

(४३) नाट्य शास्त्रम्, भरत मुनिः भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली-वाराणसी, स. प्रथम-१९८३

(४४) नारायणीयम् काव्य का साहित्यक अध्ययन, डॉ. जौहरी लाल १९/ए रामनगर लोनी रोड, शाहदरा, दिल्ली-११००३२। सं.-प्रथम, २० अगस्त, १९८४।

(४५) पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परम्परा, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. सावित्री सिन्हा, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, सं. तृतीय १९७२।

(४६) प्रताप रुद्रीयम्, श्री विद्यानाथ, आचार्य मधुसूदन शास्त्री, कृष्ण दास अकादमी के. ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन वाराणसी-२२१ ००१।

(४७) प्राचीन भारतीय कला एवं संस्कृति, डॉ. राजकिशोर सिंह, डॉ. राजकिशोर सिंह, डॉ. ऊषा यादव, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा। सं. चतुर्थ, १९८२।

(४८) प्राचीन भारतीय संस्कृति का इतिहास, डॉ. एम.एस. पहाड़िया, संजीवन प्रकाशन, लाल कुर्ती मेरठ कैण्ट, (उ.प्र.) स. प्रथम।

(४९) बापू की प्रेम प्रसादी : खण्ड-२-४:घनश्यामदास बिड़ला, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, सं.-प्रथम, १९७७।

(५०) भक्तिरसामृत सिन्धु, आचार्य विश्वेश्वर, डॉ.नगेन्द्र, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. विजयेन्द्र, स्नातक, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, स. प्रथम—१९६३

(५१) भारतचरितामृतम्, आचार्य रमेश चन्द्र शुक्ल, शारदा सदनम्, मुजफ्फर नगर, सं. प्रथम, १-७-१९७४।

(५२) भवभूति के नाटक, डॉ. ब्रज बल्लभ शर्मा, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल। सं.-प्रथम, १९७३।

(५३) भारतीय दर्शन की रूपरेखा : डॉ. वात्स्यायन, सरस्वतीसदन मसूरी, स. प्रथम, १९६६।

(५४) भारतीय संस्कृति, नारायण प्रसाद वलूनी,

(५५) भारतीय संस्कृति और कला,वाचस्पति गैरोला, उ.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ सं. प्रथम। १९७३।

(५६) भारतीय संस्कृति के आधार तत्व : डॉ. कृष्ण कुमार, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, १९७२-७३।

(५७) भारतीय साहित्य का इतिहास, सुभद्रा झा, मोती लाल बनारसी दास सं. प्रथम, १९७८

(५८) महाकवि अश्वघोष, हरिदत्त शास्त्री, साहित्य निकेतन, कानपुर, सं. प्रथम, १९६३।

(५९) महाकवि ज्ञान सागर के काव्य एक अध्ययन : डॉ. किरण टण्डन, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर दिल्ली-११०००७। स. प्रथम, १९८४

(६०) महात्मा गान्धी और विश्वशान्ति, राममूर्ति सिंह, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ।

(६१) महात्मा गान्धी, डॉ. प्रफुल्ल चन्द्र घोष, पि: प्रकाश, प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबदा-३।

(६२) महात्मा गान्धी, श्रीयुत बानूराम चन्द्र वर्मा, गान्धी हिन्दी पुस्तक भण्डार, कालका देवी, बम्बई, सं. द्वितीय १९७८।

(६३) महात्मा गान्धी, सौ वर्ष, एस॰ राधाकृष्णन् आर आर दिवाकर, सर्वोदय साहित्य प्रकाशन, बुलानाला, वाराणसी (भारत) सं॰ प्रथम, १९६९

(६४) लोक जीवन की सीता, डॉ॰ रामशरण सिंह, अभिव्यक्ति प्रकाशन, ८४७ यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद-२ स॰ प्रथम, फरवरी, १९६९

(६५) वक्रोक्ति जीवितम्, आर॰ कुन्तक, चौखम्बा सस्कृत सिरीज आफिस, वाराणसी, १९६७।

(६६) वाल्मीकि रामायण एवं सस्कृत नाटकों में राम, डॉ॰ कु॰ मञ्जुला सहदेव, विमल प्रकाशन, ४३१-ए रामनगर, गाजियाबाद, २०१००१, सं॰ प्रथम, १९७९

(६७) विभिन्न युगों में सीता का चरित्र-चित्रण : डॉ॰ सुधा गुप्ता, प्रज्ञा प्रकाशन, नई दिल्ली,, १०००३।

(६८) वृत्तरत्नाकर, श्रीभट्ट केदार, संस्कृत परिषद्, स॰ प्रथम, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, सं॰ प्रथम १९६९ ई॰।

(६९) सस्कृत नाटक, ए॰बी॰ कीथ, मोतीलाल, बनारसीदास सं॰ द्वितीय, १९७१

(७०) सस्कृत वाङ्मय में नेहरू, मधुबाला, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली-११०००९ सं॰ प्रथम, जनवरी १९७७।

(७१) संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, सत्यनारायण पाण्डेय, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार-मेरठ। सं॰-१९८०।

(७२) संस्कृत साहित्य का इतिहास, ए॰बी॰ कीथ, मंगलदेव शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, सं॰ द्वितीय, १९६९

(७३) संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा संस्थान, वाराणसी, सं॰ दशम् १९७८।

(७४) संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास · डॉ॰ बाबूराम त्रिपाठी, सं॰ द्वितीय, १९७९।

(७५) संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, डॉ॰ कपिल देव द्विवेदी, साहित्य सस्थान-४ मोतीलाल नहरू रोड, इलाहाबाद-२११००२, सं॰ द्वितीय-१९७९

(७६) संस्कृत साहित्य का सरल इतिहास, डॉ॰ देवीचन्द्र शर्मा, डॉ॰ रणजीत शर्मा, ज्ञान प्रकाश, मेरठ, सं॰-प्रथम।

(७७) संस्कृत साहित्य का सुबोध इतिहास, श्री राम बिहारी लाल, साहित्य निकेतन, कानपुर सं॰ प्रथम, सितम्बर-१९५३

(७८) संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, स्व॰ पाण्डेय एवं व्यास, साहित्य निकेतन, कानपुर, सं॰ त्रयोदश, १९७८।

(७९) संस्कृत सुकवि समीक्षा, बलदेश उपाध्याय, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, स॰ द्वितीय, १९७८।

(८०) संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना, डॉ. हरिनारायण दीक्षित, देव वाणी परिषद्-दिल्ली-६ वाणी विहार, नई दिल्ली-११००५९।

(८१) संस्कृत साहित्य में सादृश्यमूलक अलंकारों का विकास : डॉ. ब्रह्मानन्द शर्मा, देव नगर प्रकाशन-जयपुर।

(८२) संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, केदारनाथ सिंह, उदयांचल राष्ट्रकवि दिनकर पथ, राजेन्द्र नगर, पटना-सं. द्वितीय-१९७७।

(८३) सरस्वती कण्ठाभरण, महाराज भोज रत्नेश्वत्र जगद्धार विश्वनाथ भट्टाचार्य, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, शोध प्रकाशन, स.-प्रथम, १९७९

(८४) साहित्य दर्पण, विश्वनाथ, डॉ. सत्यव्रत सिंह, चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, स. षष्ठ १९८२।

(८५) साहित्य सुधा सिन्धु, आचार्य विश्वनाथ राम प्रताप, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, वाराणसी, सं. प्रथम-१९७८

(८६) सेवाग्राम की विभूतियाँ, श्री ललित प्रसाद श्रीवास्तव, राष्ट्रीय प्रकाशन, मण्डल, मधुआटोली-पटना। सं. प्रथम, १९४८

(८७) सौन्दरनन्द साहित्यिक एवं दार्शनिक गवेषणा, डॉ. ब्रह्चारी ब्रजमोहन पाण्डेय, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी। सं. प्रथम, १९७२

(८८) स्वामि भगवदाचार्य शताब्दी स्मृति ग्रन्थ

(८९) हिन्दी अभिनव भारती : अभिनव गुप्त, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय-दिल्ली। सं. द्वितीय, १९७३।

(९०) हृदय मन्थन के पाँच दिन, यशपाल जैन, बी.ए.एल. बी., सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली-१९४८।

अंग्रेजी सन्दर्भ ग्रन्थ—

(1) Gandhi Greatest Man of the World.

(2) History of classical Sanskrit Literature, M.Krishna Maeharior. Motilal Banarsi Das, Benglow Road, Jawahar Nagar Delhi. First Edition,1970.

(3) Mahatma life of Mohandas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri,Volume-One.

(4) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri,Volume-Seconds.

(5) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K.

Jhaveri, Volume-Third.

(6) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri, Volume-Fourth.

(7) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri, Volume-Fifth.

(8) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri, Volume-Six.

(9) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri, Volume-Seven : 1945-1947

(10) Mahatma Life of Mnahndas Karam chand Gandhi, D.G.Tendulkar, Vithal Bhai K. Jhaveri, Volume-Eight, 1947-1948.

(11) Sanskrit Drama's of Twentieth Century. usha Satyavrat, Meharoband, Lachmandas.

Daryaganj, Delhi, Idnia.

(12) TheSanskrit Drama, A.B. Keith. Offord University perss, Fifth Edition, 1970.

(13) To the Hindu and Muslim, Gandhi, Anand T. Hingorani, Karachi, First Edition, 1942.

अप्रकाशित शोध प्रबन्ध—

(१) आचार्य ब्रह्मानन्द शुक्ल कृत नेहरू चरित्र एवं गोस्वामी कन्हैया प्रसाद शास्त्री कृत नेहरू यश. सौरभम् महाकाव्यों का तुलनात्मक तथा समीक्षात्मक अध्ययन, शोधार्थी मनीषी देवी, कु.वि.वि. नैनीताल, १९८० ई.।

(२) महाकवि डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर कृत शिवराज्योदयम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन, सुरेन्द्र कुमार शर्मा, कु.वि.वि. नैनीताल, १९८५ ई.।

(३) महाकवि [illegible] द्विवेदी : व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व, [illegible], कु.वि.वि. नैनीताल १९८९ ई.।

(४) महाकवि [illegible] की काव्य सम्पदा का समीक्षात्मक अध्ययन, [illegible] [illegible]

(५) महाकवि श्री विश्वनाथ केशव छत्रे के महाकाव्योंका आलोचनात्मक अध्ययन, भगवती प्रसाद उप्रेती, कु.वि.वि. १९८३ ई.।

(६) महाकवि वीरनन्दि प्रणीत चन्द्रप्रभचरित महाकाव्य एक साहित्यिक मूल्यांकन, कु. गीता टण्डन, कु.वि.वि. १९८५ ई.।

(७) संस्कृत साहित्य में श्रीमती इन्दिरा गान्धी एक समीक्षात्मक अध्ययन, श्रीमती शोभा मिश्रा, कु.वि.वि. नैनीताल, १९८६ ई.।

(८) स्वामि भगवदाचार्य कृत भारत पारिजातम् का समालोचनात्मक अध्ययन, कु.मंजू पन्त, कु.वि.वि., १९८० ई.।

शब्द कोष

(१) संस्कृत हिन्दी कोष, वामन शिवराम आप्टे, मोतीलाल बनारसी, दिल्ली पटना, वाराणसी,

अनुक्रमणिका